Prakrit Jain Institute Research Publications Series

Volume III

General Editor

DR. NATHMAL TATIA, M.A., D.LITT.,

Director, Research Institute of Prakrit, Jainology and Ahimsa, Vaishali

SUDAṂSAṆACARIU

of

MUNI NAYANANDĪ

Edited by

DR. HIRALAL JAIN, M.A., D.LITT.

RESEARCH INSTITUTE OF PRAKRIT, JAINOLOGY AND AHIMSA, VAISHALI

1970

Price Rs. 10.60

PUBLISHED ON BEHALF OF THE RESEARCH INSTITUTE OF PRAKRIT, JAINOLOGY & AHIMSA, VAISHALI, BY DR NATHMAL TATIA, M.A., D.Litt., DIRECTOR AND PRINTED AT THE TARA PRINTING WORKS, VARANASI.

प्राकृत जैनशास्त्र शोध-संस्थान शोध-ग्रन्थमाला

अंक ३

प्रधान संपादक

डा० नथमल टाटिया, एम.ए., डी.लिट्.,

निदेशक, प्राकृत जैन-शास्त्र और अहिंसा शोध-संस्थान, वैशाली

मुनि नयनंदी

विरचित

सुदंसणचरिउ

[भूमिका, हिन्दी अनुवाद एवं संस्कृत टिप्पण आदि सहित]

संपादक

डा० हीरालाल जैन, एम.ए., एल.एल.बी., डी.लिट्.,

अध्यक्ष : संस्कृत-पालि-प्राकृत विभाग, जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर

भूतपूर्व निदेशक . प्राकृत, जैन-शास्त्र और अहिंसा शोध-संस्थान, वैशाली (बिहार)

प्रकाशक

प्राकृत, जैनशास्त्र, और अहिंसा शोध-संस्थान

वैशाली (बिहार)

१९७०

The Government of Bihar established the Research Institute of Prakrit, Jainology and Ahimsa at Vaishali (Muzaffarpur) in 1955 with the object, *inter alia*, to promote advanced studies and research in Prakrit, Jainology and Ahimsa, and to publish works of permanent value to scholars. This Institute is one of the five institutions planned by this Government as a token of their homage to the tradition of learning and scholarship for which ancient Bihar was noted. Apart from the Vaishali Research Institute, four others, namely, the Mithila Institute of Post-Graduate Studies and Research in Sanskrit Learning at Darbhanga, the K P Jayaswal Research Institute at Patna, the Bihar Rashtra Bhasha Parishad for Research and Advanced Studies in Hindi at Patna and the Nalanda Institute of Research and Post-Graduate Studies in Buddhist Learning and Pali at Nalanda have been established and have been doing useful work during the last few years.

As part of this programme of rehabilitating and re-orientating ancient learning and scholarship, this is the Research Volume III, which is a critical edition of Nayanandī's *Sudaṃsaṇacariu* prepared by Dr. H. L. Jain, an eminent scholar of Prakrit and Jainology. The Government of Bihar hope to continue to sponsor such projects and trust that this humble service to the world of scholarship would bear fruit in the fulness of time.

प्राक्कथन

डा० हीरालाल जैन द्वारा सम्पादित नयनंदी-विरचित सुदंसणचरिउ पाठकों के सम्मुख रखते हुए हमें अतीव हर्ष हो रहा है।

प्रस्तुत ग्रन्थ एक चरित काव्य है जिसका उद्देश्य धर्माचरण का सुफल दिखलाना है। पंचनमोकार मंत्र के जाप के फलस्वरूप सुभग नामक ग्वाला सुदंसण श्रेष्ठी के रूप में जन्म लेता है। इस भव में भी वह वासनाओं के प्रलोभन से विचलित नहीं होता है। फलतः देवता आकर उसकी रक्षा करते हैं। और वह राजा के द्वारा दिए गए मृत्यु-दण्ड से बच जाता है। अन्ततः अपने धर्माचरण से वह चार घातिया कर्मों को नष्ट कर केवल ज्ञान तथा सिद्धत्व प्राप्त करता है।

धर्माचरण का सुफल दिखलाने वाले अन्य चरित काव्यों की तरह इसमें भी आश्चर्य तत्त्व की बहुलता है। विद्याधर, यक्ष, देव आदि सहज रूप से प्रकट हो पात्रों की सहायता करते हैं। तंत्र-मंत्र में विश्वास, मुनियों की वाणी में श्रद्धा तथा स्वप्नफल और शकुनों में विश्वास भी इस ग्रन्थ के पात्रों में सामान्यतया पाये जाते हैं। एक सीमित उद्देश्य को लेकर चलने के कारण ऐसे काव्यों में कवि प्रायः जीवन के विविध पहलुओं को नहीं छू सकता और भावनाओं का अन्तर्द्वन्द्व भी नहीं दिखला सकता है। इनमें प्राधान्य घटनाओं का रहता है और विचारतत्त्व क्षीण रहते हैं।

कथा में नायक और नायिका का प्रेम और फिर नायक के प्रति अन्य महिलाओं का प्रेम केन्द्रस्थानीय है। अतः प्रस्तुत काव्य में शृङ्गार रस बहुलता से मिलता है। वीर रस का भी अभाव नहीं है। लेकिन अन्त में सदाचार की स्थापना और वैराग्य की प्रवृत्ति होती है अतः रसों का पर्यवसान शान्त रस में होता है।

नयनंदी का यह चरित काव्य आलंकारिक काव्यशैली की परम्परा में है। जहां तहां वर्णनों में समासों की शृङ्खलाएं एवं अलंकारों के जटिल प्रयोग पाठकों को बाण और सुबन्धु की याद दिलाते हैं। अर्थालंकारों के साथ शब्दालंकारों का प्रयोग भी बहुलता से हुआ है। भाषा को अनुरणनात्मक बनाने के लिए शब्दों की और शब्दसमूहों की आवृत्ति के अनेक उदाहरण मिलते हैं। लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा में स्वाभाविकता और लालित्य आया है। ग्रन्थ का एक अत्यन्त ही आकर्षक तत्व छन्दों की विविधता है। इसमें सन्देह नहीं है कि अपने साहित्यिक गुणों से ग्रन्थ पाठकों का चित्ताकर्षण करेगा।

पुस्तक की प्रस्तावना में डा० जैन ने ग्रन्थ और ग्रन्थकार के परिचय के साथ ही सम्बन्धित कथा की पूर्व परम्परा की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। इस प्रसंग में संस्कृत, प्राकृत तथा पालि साहित्य से अनुरूप कथाओं का उल्लेख किया गया है। काव्य में प्रयुक्त छन्दों की सूची लक्षण उदाहरण के साथ दी गई है जो कि एक स्वतंत्र कोश ही हो गया है। प्रस्तावना का यह अंश विविध छन्दों के जिज्ञासुओं के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। डा० जैन ने पुस्तक के साथ हिन्दी अनुवाद संलग्न कर इसे और भी अधिक उपादेय बना दिया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत ग्रन्थ डा० जैन द्वारा सम्पादित णयकुमार चरिउ, करकण्ड चरिउ, सावयधम्म दोहा, पाहुड दोहा और मयणपराजय चरिउ आदि ग्रन्थों की भांति ही अपभ्रंश साहित्य के पाठकों के लिए अत्यन्त ही उपादेय सिद्ध होगा।

वैशाली
७-३-७० नथमल टाटिया

सुदंसणचरिउ

विषय-सूची

१. *प्रस्तावना*

आदर्श प्रतियों का परिचय ... ... पृ० ११–१३

ग्रन्थकार परिचय ... ... पृ० १३–१४

कथावस्तु ... ... पृ० १४–१७

कथा की पूर्व परम्परा ... ... पृ० १७–२६

भाषा, शैली और काव्य गुण ... ... पृ० २६–२७

छंद-विश्लेषण ... ... पृ० २७–४४

२. *मूलपाठ विषय सूची* ... ... पृ० ४५–४८

३ *सुदंसणचरिउ का मूलपाठ* ... ... पृ० १–१५१

४. *हिंदी अनुवाद* ... ... पृ० १५३–२६४

५. *संस्कृत टिप्पण* ... ... पृ० २६५–३०२

६. *शब्द-कोश* ... ... पृ० ३०३–३२२

प्रस्तावना

आदर्श प्रतियों का परिचय

'सुदंसण चरिउ' के मूल माठ का प्रस्तुत संस्करण निम्नलिखित प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों के आधार से तैयार किया गया है तथा प्रत्येक पृष्ठ के अंत में उनके पाठांतर भी अंकित किये गये हैं।

क *प्रति* : यह प्रति कारंजा के सेनगण भंडार की है। और उसके हाशियों पर प्रचुर टिप्पण लिखे हुये हैं। ये टिप्पण प्रस्तुत संस्करण के परिशिष्ट में उद्धृत किये जाते हैं। पत्र संख्या ८३, पंक्तियां प्रति पृष्ठ १० से १३ तक। अक्षर प्रति पंक्ति ३२ से ४० तक। आकार ११½"×५½"। ग्रंथ के अंत में लेखक की निम्न प्रशस्ति पायी जाती है।

ग्रंथ २००० संख्या। संवत् १६०५ वर्ष आषाढ़ वदि १०, शुभे श्री मूलसंघे *श्री सरस्वती गच्छे श्री बलात्कारगणे भ० श्री विद्यानंदिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री मल्लिभूषण* देवास्तत्पट्टे भ० श्री लक्ष्मीचंद्र देवा, भ० श्री वीरचंद्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्री ज्ञान भूषण देवा। एतेषां मध्ये। भ० श्री लक्ष्मीचंद्राणां शिष्य आ० सकलकीर्तिना स्वपरोपकारार्थं लिखितं। श्री प्रभाचंद्रः ब्र० गुणराजाय प्रदत्तं। श्रीरस्तु। आ० श्री गुणनंदिनां पुस्तकमिद।

इस प्रशस्तिसे स्पष्ट है कि यह प्रति संवत् १६०५ आषाढ़ बदी १० को लिखकर पूर्ण की गई थी तथा उसकी गुरु परंपरा निम्न प्रकार है :—मूलसंघ सरस्वती गच्छ, बलात्कारगण, भ० विद्यानंदि, मल्लिभूषण, लक्ष्मीचंद, वीरचंद, ज्ञानभूषण। अन्यत्र प्राप्त पट्टावलियों से ज्ञानभूषण का काल संवत् १६०० से १६१६ तक पाया जाता है (देखिये : भ० संप्रदाय)। प्रस्तुत पट्टावली में भ० लक्ष्मीचंद्र के शिष्य तथा प्रतिलेखक आ० सकलकीर्तिका नाम नया है। प्रशस्ति के अंत में जो इस प्रति के प्रभाचन्द्र द्वारा गुणराज को दिये जाने का उल्लेख है, वह किसी अन्य हाथ से अन्य स्याही में अन्य समय पर जोड़ा गया है, जो उचित ही है; क्योंकि भ० प्रभाचन्द्र का काल सं० १६२५ से अर्थात् प्रति के लिखे जाने से २० वर्ष पश्चात् पाया जाता है।

ख *प्रति* : यह प्रति अतिशयक्षेत्र महावीरजी के शास्त्रभंडार की है। पत्र संख्या ६५। पंक्तियां प्रति पत्र १०। अक्षर प्रति पंक्ति ३६। आकार ११" + ५"। अंत में प्रतिकार की निम्न प्रशस्ति अंकित है :—

संवत् १५६७ वर्षे माघमासे कृष्णपक्षे *द्वितीयायां तिथौ बुधवासरे* पुष्यनक्षत्रे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वती गच्छे नंद्याम्नाये श्री कुंदकुंदाचार्यान्वये भ० श्री पद्मनंदिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री शुभचन्द्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्री जिनचंद्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्री प्रभाचंद्रदेवास्तच्छिष्य मंडलाचार्य श्री धर्मचन्द्रदेवा तोडागढमहादुर्गात् राजाधिराज

सोलंकीराय श्री सूर्यसेन विजयराज्ये तदाम्नाये खंडेलवालान्वये साहगोत्रे साह तेजा भार्या करमइती द्वितीय भार्या लोचमदे। प्रथमभार्या करमइती तत्पुत्र साह दूल्ह। द्वितीय भार्या लोचमदे तत्पुत्र साह श्रीपाल। साह दूल्ह भार्या दूल्हदे। तत्पुत्रौ द्वौ साह आखा, द्वितीय पुत्र साह हेम। आखा भार्या अहंकारदे द्वितीया कनौलादे। साह हेमभार्या हर्षमदे। साह श्रीपाल भार्या सरस्वती। तत्पुत्रौ साह होला, द्वितीयः साह लाला। होला भार्या हुलसरी तत्पुत्र साह सुरतान। लाला भार्या ललितादे, पुत्र साह रत्नसी भार्या रयणादे। एतेषां मध्ये साह रतनसी इदं पुस्तक सुदर्शनचरित्रं लिखापितं पल्लिविधानव्रतनिमित्तं। आ० श्री अभयचन्द्रदेवा तत्शिष्य मुनि पद्मकीर्ति समर्पितं।

ज्ञानवान् ज्ञानदानेन निर्भयोऽभयदानतः।
अन्नदानात् सुखी नित्यं निर्व्याधिर्भेषजाद् भवेत्॥

इस प्रशस्तिसे ज्ञात होता है कि उक्त प्रति संवत् १५६७, माघ वदी द्वितीया बुधवार को लिखकर पूर्ण हुई थी तथा उसके लिखाने वाले साह रतनसी खंडेलवाल वंश के थे और वे तोडागढ़ में निवास करते थे जहां सोलंकी राजा सूर्यसेन का राज्य था। उन्होंने यह ग्रंथ पल्लिविधानव्रत के निमित्त से लिखाया था और उसे आ० श्री अभयचंद्र के शिष्य मुनि पद्मकीर्तिको समर्पित किया था। प्रशस्ति में साह रतनसी के वंश का विस्तार से परिचय दिया गया है और मूलसंघ, बलात्कार गण, सरस्वतीगच्छ नंद्याम्नाय, कुंदकुंदाचार्यान्वय, भ० पद्मनंदी, शुभचंद्रदेव, जिनचंद्रदेव और प्रभाचंद्रदेव तथा उनके शिष्य मंडलाचार्य धर्मचंद्रदेव का उल्लेख है। भ० पद्मनंदी से प्रभाचंद्र तक के आचार्यों का उल्लेख बलात्कारगण की दिल्ली जयपुर शाखा की पट्टावलियों में पाया जाता है तथा शुभचंद्र से लेकर प्रभाचंद्र तक संवत् १४५० से १५८० तक के उल्लेख मिलते हैं।

ग प्रति: यह प्रति भी अतिशयक्षेत्र महावीर जी के शास्त्रभंडार की है। पत्र संख्या १००, पंक्तियाँ प्रति पृष्ठ ६। अक्षर प्रति पंक्ति लगभग ४१-४२। पत्रों का आकार १०½″ × ३⅞″। हाशिया दाहिने बायें ¾″ तथा ऊपर नीचे ½″ है। दोनों हाशियों पर कुछ टिप्पण भी लिखे हैं, जो बहुत अशुद्ध हैं। प्रति की अंतिम पुष्पिका निम्नप्रकार है:—इति सुदर्शनचरित्रं समाप्तं शुभमस्तु। सर्व ग्रंथाग्र २ लो सं० २७७७ अथवा संवत्सरे संवत् १५१७ वर्षे माघवदी पडिवा शनिवासरे।

इस पुष्पिका में लिपिकार का कोई उल्लेख नहीं है। किन्तु इतना स्पष्ट है कि प्रति संवत् १५१७ माघ वदी १ शनिवार को लिखकर पूर्ण की गई थी।

घ प्रति: इस प्रति की पत्र संख्या १०६ है। पंक्तियाँ प्रति पृष्ठ ८,१० और अक्षर प्रति पंक्ति लगभग ३३, ३४। आकार १०¾″ × ३½″। हाशिया दाहिने बायें १½″ व ऊपर नीचे ½″। ग्रंथ के अन्त में लिपिकार की निम्नलिखित प्रशस्ति पायी जाती है:—

समाप्तमिदं अशुभकर्मक्षयकारकं सुदर्शनचरित्रं। संवत् १५९८ वर्षे चैत्र सुदी ५ शुक्रवारे श्री गोपाचलदुर्ग निकटस्थ नरेले नाम नगर शुभस्थाने श्री नेमिजिनचैत्या-

लये श्री मूलसंघे पुष्करगच्छे सेनगणे वृषभसेन गणधराम्वये भ० श्री देवभद्र देवाः तत्पट्टे भ० श्रीमत् त्रैविद्य सोमसेन भट्टारकाः तत्पट्टे भ० श्रीमदभिनव गुणभद्र-भट्टारक देवाः तत् शिष्य आचार्य मानिकसेनेन लिखितं सुदर्शनचरित्रं स्वपठनाथ स्व-लिपिशक्त्या। शुभं भवतु लेखक-पाठकयोः। सुरत्राण साहि आलम सूरवंश पठानान्वयेश श्री साहि आलमराज्ये लिखितं।

इस प्रशस्ति से स्पष्ट है कि उक्त प्रति संवत १५६८ चैत्र सुदी ५ शुक्रवार गोपाचल अर्थात् ग्वालियर के समीप नरेले ग्राम के नेमिनाथ जैन चैत्यालय में लिखकर पूर्ण की गई थी। उस समय वहाँ सूरवंशी पठान सुलतान शाह आलम का राज्य था। इतिहास से सुज्ञात है कि मुगलवंशीय सम्राट हुमायूँ की अफगान शेर-खान के द्वारा सन् १५३९ में पराजय हुई थी और वह पश्चिम की ओर भाग गया था। प्रस्तुत प्रति के लेखनकाल सन् १५४१ में संभवतः इसी अफगान या पठान वंश का सुलतान शाह आलम ग्वालियर के प्रदेश में शासक पद पर आरूढ़ था। यह उल्लेख उस काल के इतिहास के लिए महत्वपूर्ण है।

इन पूर्वोक्त चार हस्तलिखित प्रतियों में से प्रथम क प्रति के आधार से ही मूल ग्रंथ की प्रथम प्रतिलिपि की गई थी। किंतु संपादन में इन चारों प्रतियों का मिलान कर जो पाठ उचित प्रतीत हुआ वही मूल में रखा गया है व अन्य पाठान्तर पाद टिप्पणियों में अंकित कर दिये गये हैं। यों तो चारों प्रतियाँ अपनी-अपनी स्वतंत्रता रखती हैं, किंतु सामान्यतः कहा जा सकता है कि एक ओर क और ख तथा दूसरी ओर ग और घ के पाठ परस्पर मिलान खाते हैं और अपनी दो प्रति-परपराओं को सूचित करते हैं।

ग्रन्थकारपरिचय

ग्रंथ की बारहों संधियों की पुष्पिकाओं में कवि ने अपना व अपने गुरु का नाम अंकित कर दिया है। जिससे ज्ञात होता है कि इस काव्य के रचयिता नयनंदी और उनके गुरु माणिक्यनंदी त्रैविद्य थे। ग्रंथ की अंतिम संधि के नौवें कडवक में कवि ने अपनी गुरु परपरा कुछ और विस्तार के साथ वर्णन की है। तदनुसार महावीर तीर्थंकर की महान् आचार्य परंपरा में महान कुंदकुंदान्वय हुआ और उसमें क्रमशः सुनक्ष, पद्मनंदी, विष्णुनंदी, नंदिनंदी, विश्वनंदी, विशाखनंदी रामनंदी, माणिक्यनंदी और नयनंदी (प्रस्तुत कवि) नामक आचार्य हुए। इनमें उन्होंने विश्वनंदी को अनेक ग्रंथों के कर्ता व जगत्प्रसिद्ध कहा है, विशाखनंदी को सैद्धांतिक की उपाधि दी है, एवं रामनंदी को एक महान् धर्मोपदेशक, निष्ठावान् तपस्वी एवं नरेन्द्रों द्वारा वंदनीय कहा है। अपने गुरु माणिक्यनंदी को उन्होंने महापंडित की उपाधि दी है और कहा है कि वे समस्त ग्रंथों के पारगामी, अंगों के ज्ञाता एवं सद्गुणों के निवासभूत थे। यहां स्वयं नयनंदी के संबंध में कहा गया है कि वे एक निर्दोष जगद्विख्यात मुनि थे तथा उनके द्वारा रचित इस सुदर्शनचरित का विद्वानों द्वारा अभिनंदन किया गया था।

ग्रंथ के संबन्ध में कवि ने कुछ और विशेष महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है। यहाँ उन्होंने कहा है कि अवंती देश की धारा नगरी में जब त्रिभुवन नारायण श्रीनिकेत नरेश भोजदेव का राज्य था, तभी उसी धारा नगरी के एक जैन मन्दिर के महाविहार में बैठकर उन्होंने वि० संवत् ११०० में इस सुदर्शनचरित्र की रचना की। स्पष्ट ही यह उल्लेख मालवा के परमार वंशी सुप्रसिद्ध नरेश भोजदेव का है, जिनके राज्यकाल के शिलालेख ई० सन् १०२० से १०४७ अर्थात् संवत् १०७७ से ११०४ तक के पाये जाते हैं तथा जिनका राज्य राजस्थान में चित्तौड़ से लेकर दक्षिण में कोंकण व गोदावरी तक विस्तीर्ण था। इनकी ख्याति विद्वन्मंडली के संरक्षण तथा संस्कृत-प्राकृत भाषाओं के साहित्य सृजन के लिए विशेष रूप से पायी जाती है। वे स्वयं सरस्वतीकंठाभरण जैसे विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों के रचयिता हैं। उनके राज्यकाल में अनेक जैन ग्रंथों की रचना हुई पायी जाती हैं।

कथावस्तु

प्रस्तुत सुदंसणचरिउ कथात्मक काव्य है, जिसकी रचना विशेष रूप से जैनधर्म के सुप्रसिद्ध पंचनमोकार मंत्र के जाप का पुण्य-प्रभाव प्रगट करने के लिये हुई है। ग्रंथ में बारह संधियां हैं। प्रथम संधि में नमोकार मत्र का पाठ करके उसके द्वारा एक ग्वाले के सुदर्शन सेठ के रूप में जन्म पाने का वर्णन करने की प्रतिज्ञा की गयी और महावीर जिनेन्द्र की वंदना के पश्चात् जंबूद्वीप, मगधदेश, राजगृह नगर तथा वहां के राजा श्रेणिक का वर्णन किया गया है। तदुपरांत विपुलाचल पर्वत पर भ० महावीर की समोशरण रचना, राजा द्वारा उनकी वंदना-यात्रा स्तुति एवं गौतम गणधर से तीर्थंकर, त्रेसठशलाका पुरुषों संबंधी प्रश्न किये जाने पर गणधर द्वारा उनके समाधान का वर्णन है। (संधि—१)।

राजा श्रेणिक ने गौतम गणधर से दूसरा प्रश्न पंचनमोकार मंत्र के फल के संबंध में किया। इसके उत्तर में गौतम गणधर ने त्रैलोक्य का वर्णन करके अंगदेश चंपानगरी, राजा धाईवाहन तथा वहां के निवासी सेठ ऋषभदास उनकी पत्नी अर्हद्दासी तथा उनके सुभग नामक ग्वाले का वर्णन किया। इस ग्वाले को एक बार वन में मुनिराज के दर्शन हुए और उनसे उसने नमोकार मंत्र का उपदेश पाया उस मंत्र को वह निरंतर उच्चारण करने लगा। सेठ ने उसकी बात सुनकर उसे मंत्र का माहात्म्य समझाया और धर्मोपदेश भी दिया। एक बार वह गोप गंगा नदी में जल क्रीड़ा कर रहा था, तभी एक ठूंठ से आहत होकर उसी मंत्र का स्मरण करते हुए उसका देहावसान हो गया। (संधि—२)।

इधर सेठानी ने एक स्वप्न देखा, जिसका फल जानने के लिये पति-पत्नी जिन मंदिर को गये। वहां एक मुनिराज ने उस स्वप्न के फलस्वरूप उन्हें पुत्र प्राप्ति का शुभ समाचार सुनाया। यथासमय सेठानी ने एक अति सुंदर व शुभ लक्षणों से युक्त पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम सुदर्शन रखा गया। जन्मोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। बाल-क्रीड़ा करता हुआ सुदर्शन कुछ बड़ा हुआ।

उसने नाना विद्याएं और कलाएं सीखीं और कामदेव जैसा यौवन प्राप्त किया। उसे देख नगर की नारियां उस पर मोहासक्त होने लगीं। (संधि—३)।

सुदर्शन का एक घनिष्ठ मित्र कपिल था। उसके साथ नगर में भ्रमण करते हुए सुदर्शन ने मनोरमा नामक युवती को देखा और वह उस पर कामासक्त हो गया। मनोरमा भी उस पर मोहित हो गयी। इस प्रसंग में यहाँ कामशास्त्र प्रणीत देश-देश की नारियों की प्रकृति आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। (सन्धि—४)।

सुदर्शन और मनोरमा की कामपीड़ा से उनके माता-पिता को चिन्ता हुयी। दोनों पिताओं ने मिलकर अपने पुत्र-पुत्री का परस्पर विवाह करने का निश्चय किया। विवाह की लग्न शोधी गयी और विवाहोत्सव मनाया गया। विवाह के समय की ज्योनार का भी अच्छा वर्णन किया गया। तदुपरान्त सूर्यास्त वर्णन, रात्रि वर्णन, वर-वधू की काम-क्रीड़ा एवं प्रभात वर्णन के साथ सन्धि समाप्त होती है। (सन्धि—५)।

सुदर्शन के पिता सेठ ऋषभदास ने मुनि दर्शन किया, जिनसे उन्होंने मद्य, मांस और मधु के दोषों तथा अहिंसादि अणुव्रतों व गुणव्रतों, पात्र-दान, रात्रि-भोजन के दोष आदि का उपदेश पाया। अन्त में मुनि ने मधुबिन्दु का दृष्टान्त देकर समझाया। यह समस्त धर्मोपदेश सुनकर सेठ ऋषभदास को वैराग्य उत्पन्न हो गया, और उन्होंने अपने पुत्र को गृहस्थ मार्ग की शिक्षा देकर व उसे कुटुम्ब का सब भार सौंपकर मुनि दीक्षा धारण की और यथासमय स्वर्ग गति प्राप्त की। (सन्धि—६)।

सेठ सुदर्शन सुख से रहने लगे। किंतु उन पर उनके मित्र की पत्नी कपिला मोहासक्त हो गयी। उसने छल से सुदर्शन को अपने यहां बुलाया और उनसे काम-याचना की। किन्तु धार्मिक सेठ ने स्वयं नपुंसक होने का बहाना करके अपने प्राण छुड़ाये। वसंत ऋतु का आगमन हुआ, जिसका उत्सव मनाने राजा और प्रजा ने उपवन यात्रा की। इस यात्रा में रानी अभया ने सुदर्शन की पत्नी मनोरमा को देखा और उसकी प्रशंसा की, विशेष रूप से इस कारण कि वह पुत्रवती थी। जबकि रानी स्वयं पुत्रहीन थी। इस बात पर कपिला ने आपत्ति की कि जब उसका पति षंढ है तो उसे पुत्र प्राप्ति कहां से संभव है? कपिला के मर्म की बात जानकर रानी ने उसका उपहास किया और स्वयं प्रतिज्ञा की कि वह सुदर्शन सेठ को अपने वशीभूत करके रहेगी। उद्यान क्रीड़ा की रंगरेलियों के पश्चात् राजा और प्रजा सब नगर को लौट आये। (संधि—७)।

अभया रानी तभी से विरह वेदना में रहने लगी। उसकी दयनीय अवस्था देखकर उसकी पंडिता नामक सखी ने उसके हृदय की बात जानने का प्रयत्न किया और जानकर रानी को बहुत समझाया एवं शील की प्रशंसा की, किंतु रानी का हठ न छूटा और अंततः विवश होकर पंडिता को अभया की कामवासना तृप्त कराने के लिए वचनबद्ध होना पड़ा। सीधे उपाय से दृढ़व्रती सुदर्शन को फुसलाना असंभव

जानकर पंडिता ने एक कुटिल चाल चली। उसने कुम्हार से मनुष्याकृति के मिट्टी के सात पुतले बनवाये। वह प्रतिपदा से लेकर सप्तमी तक क्रम से एक-एक पुतला ढक कर अपने साथ लाती, प्रतोली द्वार पर द्वारपाल से झगड़कर पुतला फोड़ डालती तथा द्वारपाल को रानी का भय दिखलाकर आगे के लिए उसे चुप करा देती। इस प्रकार उसने महल के सातों द्वारपालों को अपने वश में करके अपने लिये अंतःपुर का प्रवेश निर्बाध बना लिया। अष्टमी के दिन सुदर्शन श्मशान में कायोत्सर्ग किया करता था। उस दिन जब वह सायंकाल श्मशान जाने लगा तब उसे नाना अपशकुन हुए, जिनकी चिंता न कर वह श्मशान में जाकर ध्यान करने लगा। पंडिता ने उसके पास जाकर पहले तो उसे ध्यानच्युत व प्रलोभित करने का प्रयत्न किया, किंतु जब वह अपने इस असत्प्रयास में सफल न हुई तो वह उसे उसी प्रकार उठाकर राजमहल में ले गयी जिस प्रकार वह उन मिट्टी के पुतलों को ले जाया करती थी। रानी के शयनागार में सुदर्शन को बहुत प्रलोभित किया गया, किंतु वह अपने व्रत से लेशमात्र भी विचलित नहीं हुआ। रात्रि बीती जा रही थी। अतएव रानी ने निराश होकर दूसरा कपट जाल रचा। उसने अपने शरीर को स्वयं नोच-नोचकर क्षत-विक्षत कर डाला और यह पुकार मचा दी कि सेठ सुदर्शन ने बल पूर्वक अंतःपुर में प्रवेशकर उसका शील भंग करने का प्रयत्न किया। यह समाचार राजा तक पहुंच गया और उसने बिना सोचे समझे सेठ को प्राण दंड का आदेश दे दिया। राजपुरुष उसे पकड़कर श्मशान ले जाने लगे। नगर में हाहाकार मच गया और सुदर्शन की पत्नी मनोरमा ने बड़ा हृदयद्रावक विलाप किया। श्मशान मे राजपुरुषों ने सुदर्शन को अपने इष्टदेव का स्मरण करने की बात कही। सुदर्शन तो पहले से ही धर्मध्यान में लीन था, ज्योंही उसके ऊपर शस्त्रों का प्रहार हुआ त्योंही एक व्यंतर देव ने आकर उनको स्तंभित कर दिया और इसप्रकार धर्म के प्रभाव से सुदर्शन के प्राणों की रक्षा हुई (संधि—८)।

व्यंतर देव का राजा की सेनाओं से भयानक युद्ध हुआ। राजसेना के परास्त होने पर स्वयं नरेश उस व्यंतर से युद्ध करने आये, किंतु अंततः राजा को अपनी पराजय स्वीकार करनी पड़ी और उस व्यंतर देव के आदेशानुसार सुदर्शन की शरण में जाना पड़ा। राजा ने सुदर्शन से क्षमा याचना की तथा उसे अपना आधा राज्य समर्पण करना स्वीकार किया। सुदर्शन ने राजा को तो अभयदान दिया, किन्तु स्वयं राज्य वैभव स्वीकार नहीं किया। वह संसार की भीषणता व जीवन की क्षणभंगुरता से विरक्त हो गया और उसने मुनि-दीक्षा धारण करने का निश्चय कर लिया। राजा ने सुदर्शन की स्तुति की। उधर राजा के लौटने से पूर्व ही अभया रानी ने आत्मघात कर लिया और मरकर वह पाटलिपुत्र नगर में व्यंतरी होकर उत्पन्न हुई। पंडिता भी पाटलिपुत्र भाग गयी और वहां देवदत्ता गणिका के घर रहने लगी। (संधि—९)

जीवन संकट से मुक्त होकर सुदर्शन जिन मंदिर में गया। वहां इसे विमल-वाहन मुनि के दर्शन हुए, जिनसे उसने अपने भवांतर पूछे। मुनि ने उसके क्रमशः

व्याघ्र नामक क्रूर भील, श्वान तथा सुभग गोपाल इन तीन पूर्वभवों का वर्णन किया और बतलाया कि किस प्रकार वह नमोकार मंत्र के प्रभाव से सुदर्शन सेठ हुआ है। उसी प्रकार जो व्याघ्री भील की पत्नी थी, वह एक धोबी की पुत्री हुई और विधवा होकर निशि-भोजन त्याग व्रत के फलस्वरूप वह उसकी मनोरमा नामक भार्या के रूप में जन्मी। मुनि का धर्मोपदेश सुनकर सुदर्शन ने मुनि के महाव्रत धारण किये। (संधि—१०)।

सुदर्शन के पूर्वभव तथा मुनि-दीक्षा लेने का समाचार सुनकर चम्पा के राजा धाईवाहन को भी वैराग्य हो गया और उन्होंने भी अपने पुत्र को राज्य देकर मुनि-व्रत धारण किये। इसी प्रकार उनकी रानियों तथा नगर की अन्य नारियों ने भी व्रत धारण किये। सुदर्शन मुनि कठोरता से व्रत पालन करने लगे। वे विहार करते हुए पाटलिपुत्र पहुँचे, जहाँ पंडिता ने देवदत्ता गणिका को उनका परिचय कराया। गणिका ने छल से उन्हें अपने गृह में प्रवेश कराकर कपाट बन्द कर दिये और मुनि को प्रलोभित करने की गणिकाने सुलभ समस्त चेष्टाएँ कीं। अन्त में निराश होकर उसने उन्हें श्मशान में जा डाला। वहाँ जब वे ध्यानस्थ थे, तभी एक देवांगना का विमान उनके ऊपर आकर अचल हो गया। देवांगना रुष्ट हुई। और मुनि को देखकर उसे अपने अभया रानी के पूर्वजन्म का स्मरण हो आया। उसने अपनी वैक्रियिक ऋद्धि से मुनि के चारों ओर घोर उपसर्ग करना आरम्भ किया। भूतों और बैतालों की कुत्सित लीलाएँ होने लगीं, किन्तु फिर भी सुदर्शन मुनि स्थिर रहे। इसी बीच एक रक्षक व्यंतर ने आकर उस व्यंतरी को ललकारा और उसे पराजित कर भगा दिया। (सन्धि—११)।

कुछ समय पश्चात् सुदर्शन मुनि के चार घातिया कर्मों का नाश हो गया। और उन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। देवलोक से इन्द्र ने आकर उनकी स्तुति की और कुबेर ने समोशरण की रचना की। केवली के अतिशय तथा उनके उपदेश को देख सुनकर उस व्यंतरी को भी वैराग्य भाव हो गया और उसने तथा अन्य नर-नारियों ने सम्यक्त्व भाव धारण किया। इस प्रकार पंच नमोकार मंत्र के पुण्य-प्रभाव का वर्णन कर गौतम स्वामी ने राजा श्रेणिक से कहा कि कोई भी अन्य नर-नारी इस मन्त्र की आराधना द्वारा सांसारिक बैभव व मोक्ष भी प्राप्त कर सकता है। यह सुनकर मगधेश्वर ने जिनेन्द्र की स्तुति की और विपुलाचल से उतरकर अपने राजभवन को गमन किया। (संधि—१२)।

कथा की पूर्व परम्परा

प्रस्तुत ग्रन्थ के कथानक से स्पष्ट है कि उसकी केन्द्रीय घटना एक स्त्री के पर-पुरुष के ऊपर मोहासक्त होकर उसका प्रेम प्राप्त करने का एक उत्कट प्रयत्न करना है। यह कथातत्त्व सांसारिक जीवन का प्राय एक शाश्वत अंश है और उसके दृष्टान्त प्राचीनतम ग्रन्थों से लेकर वर्तमानकालीन साहित्य तक में पाये जाते हैं। यहाँ ऐसे ही कुछ आख्यानों की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है।

स्त्री की ओर से अनुचित प्रेम के प्रस्ताव और पुरुष द्वारा उसके निषेध के कुछ प्रसंग हमें प्राचीनतम भारतीय साहित्य में भी दिखायी देते हैं। इस विषय का सबसे प्रसिद्ध ऋग्वेद का वह सूक्त (१०, ११) है जिसमें यम और यमी का संवाद पाया जाता है। यमी अपने जुड़वां भ्राता यम से प्रेम का प्रस्ताव करती है और यम उसे अनुचित समझकर अस्वीकार करता है। वह वार्तालाप इस प्रकार है—

यमी—विस्तृत समुद्र के मध्य द्वीप में आकर, इस निर्जन प्रदेश में, मैं तुम्हारा सहवास व मिलन चाहती हूँ, क्योंकि गर्भावस्था से ही तुम मेरे साथी हो। विधाता ने मन ही मन समझा है कि तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा वह हमारे पिता का एक श्रेष्ठ नाती होगा।

यम—यमी, तुम्हारा साथी यम तुम्हारे साथ ऐसा सम्पर्क नहीं चाहता, क्योंकि तुम सहोदरा भगिनी हो, अगन्तव्या हो। यह निर्जन प्रदेश नहीं है, क्योंकि बली प्रजापति के द्युलोक का धारण करनेवाले वीर पुत्र (देवों के चर) सब देखते हैं।

यमी—यद्यपि मनुष्य के लिए ऐसा संसर्ग निषिद्ध है, तो भी देवता लोग इच्छा पूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं। इसलिए मेरी जैसी इच्छा होती है, वैसे ही तुम भी करो। पुत्र-जन्मदाता पति के समान मेरे शरीर में पैठो।

यम—हमने ऐसा कर्म कभी नहीं किया। हम सत्य-वक्ता हैं। कभी मिथ्या-कथन नहीं किया है। अन्तरिक्ष में स्थिर गन्धर्व वा जल के धारक आदित्य और अन्तरिक्ष में ही रहने वाली योषा (सूर्य की स्त्री सरण्यू) हमारे माता-पिता हैं। इसलिए हम सहोदर बन्धु हैं। ऐसा सम्बन्ध उचित नहीं।

यमी—रूपकर्ता, शुभाशुभ प्रेरक, सर्वात्मक, दिव्य और जनक प्रजापति ने तो हमें गर्भावस्था में ही दम्पति बना दिया है। प्रजापति का कर्म कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इस सम्बन्ध को द्यावा-पृथिवी भी जानते हैं। जैसे एक शय्या पर पत्नी पति के पास अपनी देह का उद्घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे पास, यम, मैं अपने शरीर को प्रकाशित कर देती हूँ। तुम मेरी अभिलाषा करो। आओ, एक स्थान पर दोनों शयन करें रथ के दोनों चक्कों के समान हम एक कार्य में प्रवृत्त हों।

यम—देवों के जो गुप्तचर हैं, वे दिन रात विचरण करते हैं, उनकी आँखें कभी बन्द नहीं होतीं। दुखदायिनी यमी, शीघ्र दूसरे के पास जाओ, और रथ के चक्कों के समान उसके साथ एक कार्य करो। इत्यादि।

ऋग्वेद के वृषाकपि सूक्त (१०.८६) में जो इन्द्राणी और वृषाकपि के उत्तर-प्रत्युत्तर पाये जाते हैं तथा इन्द्राणी ने उसके विरुद्ध इन्द्र से जो शिकायत की है उसमें भी प्रेम के प्रस्ताव, अस्वीकार और बदले में विनाश की भावना पायी जाती है। यथा—

इन्द्राणी—मुझ से बढ़कर कोई स्त्री सौभाग्यवती नहीं है, सुपुत्रवाली भी नहीं है। मुझ से बढ़कर कोई स्त्री पुरुष के पास शरीर को नहीं प्रफुल्ल कर सकती इत्यादि।

वृषाकपि—माता इन्द्राणी, तुमने सुन्दर लाभ किया है। तुम्हारा अंग, जंघा, मस्तक आदि आवश्यकतानुसार हो जायेंगे। प्रेमालाप से कोकिलादि पक्षी के समान तुम पिता को प्रसन्न करो। इन्द्र सर्वश्रेष्ठ हैं।

इन्द्र—सुन्दर भुजाओं, सुन्दर अंगुलियों लम्बे बालों और मोटी जाँघों वाली, वीर पत्नी इन्द्राणी, तुम वृषाकपि पर क्यों क्रुद्ध हो।

इन्द्राणी—यह हिंसक वृषाकपि मुझे पति-पुत्र-विहीना के समान समझता है। परन्तु मैं पति-पुत्र वाली इन्द्रपत्नी हूँ। मेरे सहायक मरुत् लोग हैं।

इन्द्र—इन्द्राणी, अपने हितैषी वृषाकपि के बिना मैं नहीं प्रसन्न रहता। वृषाकपि का ही प्रीतिकर द्रव्य देवों के पास जाता है। इन्द्र सर्वश्रेष्ठ हैं।

पुरुषों पर कामासक्त होकर स्त्रियों द्वारा उनके फुसलाये जाने की अनेक कथायें पालि जातकों में पायी जाती हैं। सांमिद्धि जातक (१६७) के अनुसार एक बार बोधिसत्व के सुन्दर शरीर को देखकर एक देव कन्या उन पर आसक्त हो गयी और बोली कि आप बिना भोग विलास का सुखानुभव किये भिक्षु बन गये यह उचित नहीं। सुख भोग कर ही भिक्षु बनना उचित है। इस पर बोधिसत्व ने उसे-यह कह कर चुप कर दिया कि कौन जानता है मृत्यु कब आ जाय? अतः जितने शीघ्र हो सके, बिना भोगविलास में समय खोये प्रव्रजित होकर अपना कल्याण करना उचित है।

महापद्म जातक (४७२) में यह प्रवृत्ति एक और चरण आगे बढ़ी पायी जाती है। यहाँ न केवल पर-पुरुष पर किन्तु अपने ही सौतेले पुत्र पर कामासक्त होकर उसे प्रेरित करने और असफल होकर उसे मरवा डालने का भी प्रयास पाया जाता है। बोधिसत्व वाराणसी के राजा के पुत्र रूप में उत्पन्न हुए। मुख की अपूर्व शोभा के कारण उनका नाम पद्मकुमार रखा गया। माता की मृत्यु हो गयी और राजा ने दूसरी पटरानी बनायी। एक बार राजा विद्रोह को शान्त करने के लिए राजधानी से बाहर गया। अवसर पाकर रानी ने पद्मकुमार से प्रेम का प्रस्ताव किया जिसे उसने सर्वथा ठुकरा दिया। निराश होकर रानी ने उसका सिर कटवा डालने की भी धमकी दी। तो भी कुमार नहीं माना। रानी ने अपने शरीर को अपने ही नखों से नोंच डाला और मैल कुचैले वस्त्र पहन कर शय्या पर पड़ रही। राजा के आने पर उसने कहा पद्मकुमार ने उस पर कामासक्त होकर उसकी यह दुर्दशा की है। राजा ने रुष्ट होकर पद्मकुमार को चोर-प्रपात से गिराकर मार डालने का आदेश दिया। वनदेवी ने उसे गिरते हुए अपनी हथेली पर लेकर बचाया। कुमार प्रव्रजित हो गया। राजा को पता चला और उसने कुमार को मनाकर राज्य में वापिस लाने का प्रयत्न किया। किन्तु कुमार ने नहीं माना। सच्ची बात जानकर राजा ने उस रानी को उलटे पैर चोर-प्रपात से गिरवा कर उसकी जीवन-लीला समाप्त कर दी।

इसी प्रकार की एक और कथा बन्धनमोक्ष जातक (१२०) में आयी है। बोधिसत्त्व ने पुरोहित के घर जन्म लिया और यथासमय स्वयं राजपुरोहित बना। एक बार राजा विद्रोह-दमन के लिए बाहर गया। अवसर पाकर रानी ने राजपुरोहित से प्रेम की माँग की। उसके अस्वीकार करने पर रानी ने अपने शरीर को नोंच खसोट डाला और मलिन वस्त्र पहन कर पड़ रही। राजा के आने पर उसने राज-पुरोहित को दोषी ठहराया। राजा ने उसे बाँधकर वध स्थान पर ले जाकर सिर काट डालने का आदेश दे दिया। पुरोहित ने राजा से मिलने की इच्छा प्रकट की और उन्हें सप्रमाण सच्ची बात बतला दी और रानी के प्रति राजा के क्रोध को यह कहकर शान्त किया कि स्त्रियों में स्वभावतः ही कामुकता अधिक होती है।

संस्कृत बौद्ध साहित्य में भी इस प्रकार का एक आख्यान ध्यान देने योग्य है। दिव्यावदान नामक ग्रंथ के शार्दूलकर्णावदान नामक ३३ वें अवदान में कहा गया है कि—

एक बार भगवान बुद्ध के प्रधान शिष्य आनन्द श्रावस्ती नगरी में भिक्षा के लिये गये। लौटते समय उन्हें प्यास लगी। एक कुएँ पर कोई युवती पानी भर रही थी। उससे आनन्द ने पानी माँगा। युवती ने अपनी जाति चाण्डाल बतलायी। आनन्द ने कहा मैं तुम्हारी जाति नहीं पूछता, पानी पीना चाहता हूँ। कन्या ने पानी पिला दिया। वह आनन्द के रूप और गुणों पर मोहित हो गयी। घर आकर अपनी माता से आनन्द को स्वामी के रूप मे पाने की अपनी इच्छा प्रकट की। माता महाविद्याधारी थी, उसने मंत्र के प्रभाव से आनन्द के चित्त को भ्रान्त कर दिया और वह उस चाण्डाली के घर जा पहुँचा, चाण्डाल कन्या प्रकृति ने शय्या तैयार कर आनन्द को अपने पास बुलाया। यह देख आनन्द रोने व भगवान् बुद्ध का स्मरण करने लगा। बुद्ध ने अपनी मंत्र-विद्या से चाण्डाली के मंत्र प्रभाव को दूर कर दिया। और आनन्द अपने विहार में लौट आया, किन्तु प्रकृति का मोह दूर नहीं हुआ और वह प्रतिदिन भिक्षा के समय आनन्द का पीछा किया करती थी। बुद्ध ने उस कन्या को अपने पास बुलवाया और भिक्षुणी की दीक्षा दे दी। इससे नगर के ब्राह्मणों में बड़ा क्षोभ उत्पन्न हुआ। राजा प्रसेनजित को भी यह खबर मिली और वे अन्य ब्राह्मण-क्षत्रिय आदि नागरिकों सहित बुद्ध के पास गये। बुद्ध ने उन्हें चाण्डाल नरेश त्रिशंकु की कथा सुनायी जिसके अनुसार उसने अपने पुत्र शार्दूलकर्ण का विवाह पुष्करसारी नामक ब्राह्मण की कन्या से कराना चाहा। स्वभावतः पुष्करसारी ने इसका विरोध किया। किन्तु जब त्रिशंकु ने जाति-भेद की निरर्थ-कता तथा कर्म-सिद्धान्त की अनिवार्यता का व्याख्यान किया, तब पुष्करसारी ने त्रिशंकु के ज्ञान से प्रभावित होकर उक्त विवाह के लिए अपनी स्वीकृति दे दी। बुद्ध ने यह भी बतलाया कि पुष्करसारी की वही कन्या इस जन्म की चाण्डाल-कन्या प्रकृति है। शार्दूलकर्ण ही आनन्द है और वे स्वयं भी वही त्रिशंकु हैं।

पुराणों में अनेक ऐसे आख्यान पाये जाते हैं जहाँ कामिनी स्त्रियों की ओर से अनुचित प्रेम के प्रस्ताव किये गये और नीतिमान् पुरुषों ने उन्हें ठुकरा दिया,

जिसके फलस्वरूप उन्हें कभी-कभी जीवन का संकट भी भोगना पड़ा। इस सम्बन्ध में विष्णुपुराण (५,२७) का यह आख्यान उल्लेखनीय है:—

कामदेव ने कृष्ण और रुक्मिणी के पुत्र प्रद्युम्न कुमार के रूप में जन्म लिया। जन्म से छठे दिन ही कृष्ण के शत्रु शम्बरासुर ने बालक का अपहरण कर उसे लवण समुद्र में पटक दिया। वहाँ उसे एक मत्स्य ने निगल लिया। वह मत्स्य मछुओं द्वारा पकड़ा गया और शम्बर के ही भोजनालय में पहुँच गया। मत्स्य के उदर से निकले कुमार को देखकर आश्चर्य चकित हुई शम्बर की पत्नी मायावती को नारद ने उसका सब वृत्तान्त बतला दिया। उसने उसे पुत्रवत् पाला। किन्तु जब वह युवक हुआ तो मायावती उस पर मोहित हो गयी और उसने नाना प्रकार से उसे प्रेरित करने की चेष्टा की। तथापि प्रद्युम्न किसी प्रकार भी उसके अनुचित प्रस्ताव को स्वीकार करने को तैयार नहीं हुआ। तब मायावती ने उसे उसके कृष्ण-रुक्मिणी का पुत्र होने तथा शम्बर द्वारा अपहरण आदि का सब वृत्तान्त सुना दिया। इस पर प्रद्युम्न बहुत क्रुद्ध हुआ। उसने काल शम्बर को मार डाला और मायावती को लेकर अपने पिता के घर आ गया, क्योंकि मायावती ने उसे यह भी बतलाया कि वह उसकी पूर्वजन्म की पत्नी रति ही है। यही कथानक भागवत (१०,५५ आदि) में भी आया है।

यह कथानक वसुदेवहिंडी (पढ़िया) में निम्न प्रकार पाया जाता है। प्रद्युम्न कुमार के जन्मते ही उसे पूर्व जन्म का वैरी धूमकेतु नामक ज्योतिषी देव उठा ले गया और भूतरमण नामक अटवी में शिलातल पर यह सोच कर छोड़ गया कि वह सूर्य की गर्मी से झुलसकर मर जायगा। किन्तु कालसंवर और कनकमाला विद्याधर पति-पत्नी वहां से निकले और बालक को उठा ले गये। उन्होंने उसका नाम प्रद्युम्न रखा। युवा होने पर कनकमाला उस पर आसक्त हो गई। प्रद्युम्न के अस्वीकार करने पर वह रुष्ट हो गयी और कंचुकी से राजा को कहलवाया कि प्रद्युम्न दुष्ट है, मेरा उल्लंघन करना चाहता है, अत उसे दण्ड दिया जाय। राजा को प्रद्युम्न के विषय में भरोसा था, अतः उक्त बात सुनकर भी कुपित नहीं हुआ। तब कनकमाला ने अपने पुत्रों से कहा कि वे उस दुराचारी का शीघ्र विनाश करें। दोनों पुत्रों ने स्वीकार किया। उन्होंने कालाम्बुक वापी में एक शूल गड़ाया और प्रद्युम्न से कहा चलो उसमें स्नान करें। प्रद्युम्न ने कहा भाई तुम लोग जाओ और मज्जन करो, जननी के द्वारा दूषित मेरे मज्जन से क्या? उन्होंने कहा देवी द्वारा रोष में कही बात पर कौन विश्वास करेगा चलो स्नान करें। यह कहकर वे उसे ले गये और उसे बीच में करके वापी में गिरा दिया। प्रद्युम्न शूल में छिदकर रह गया। उसने प्रज्ञप्ति विद्या का स्मरण किया जिससे उसका शूल से उद्धार हो गया। उसने वापी से निकल कर घर जाते हुए भाइयों को ललकारा और युद्ध में उन्हें मार गिराया। पुत्रवध की बात सुनकर राजा कुपित हुआ, किन्तु मंत्रियों ने समझा-बुझाकर उसे शान्त किया। इधर भ्रातृ-वध के शोक से वर्य

व्याकुल हुए प्रद्युम्न कुमार को नारद मुनि ने आकर संबोधन किया और वे उसे उसकी सच्ची माता रुक्मिणी के यहां ले गये।

यही कथानक जिनसेन कृत हरिवंश पुराण (४३-४७) में इस प्रकार वर्णित है। प्रद्युम्न का जन्म होते ही उसे उसके पूर्व जन्म का बैरी धूमकेतु नामक असुर हरकर ले गया और खदिरावटी में तक्षशिला के नीचे छोड़कर चला गया। अकस्मात् मेघकूट नगर का राजा कालसंबर नामक विद्याधर अपनी स्त्री कनकमाला के साथ वहां से निकला और उस बालक को देखकर वे उसे उठा ले गये। उन्होंने उसका नाम प्रद्युम्न रखा। उसके युवक होने पर कनकमाला उस पर मुग्ध हो गयी और प्रेमदान की प्रार्थना करने लगी। किन्तु प्रद्युम्न कुमार ने यह स्वीकार नहीं किया। इस पर क्षुब्ध होकर कनकमाला ने अपने कक्ष वक्ष स्थल व स्तनों को नखों से नोच डाला और पति से प्रद्युम्न के दुराचार की शिकायत की। कालसंवर ने रुष्ट होकर अपने पांच सौ पुत्रों को आज्ञा दी कि प्रद्युम्न को चुपचाप मार डाला जाय। वे उसे कालाम्बु नामक वापिका पर ले गये और वहां जलक्रीड़ा करने का उससे आग्रह करने लगे। प्रद्युम्न ने प्रज्ञप्ति विद्या द्वारा सब बात जान ली और स्वयं वापी में न जाकर एक अपने मायामयी शरीर से वापी में कूद पड़ा। उन पांच सौ कुमारों ने उसके ऊपर कूदकर मार डालने का बहुत प्रयत्न किया, किंतु वे सफल नहीं हुए, प्रत्युत प्रद्युम्न ने उन सभी को वहीं कील दिया, केवल एक को घर खबर देने को भेजा। समाचार पाकर कालसंबर अपनी समस्त सेना सहित वहां आया, किंतु प्रद्युम्न ने अपनी विद्या के प्रभाव से उसे बांध कर एक शिला पर रख दिया। उसी समय वहां नारद मुनि आ उपस्थित हुए और उन्होंने सब को समझा-बुझा कर शांति करायी। प्रद्युम्न ने सबको बन्धन-मुक्त किया और कालसंवर की अनुमति लेकर अपने माता-पिता के दर्शन निमित्त प्रस्थान किया। यही कथानक गुणभद्र कृत उत्तर पुराण (७२) व महासेन कृत प्रद्युम्न चरित (८) में भी आया है। इस कथानक में और बातें तो प्रायः विष्णुपुराण के समान हैं, किंतु प्रेमासक्त रानी की प्रद्युम्न को मरवा डालने की कुचेष्टा नयी है।

हरिभद्र-कृत समरादित्य कथा (५वें भव) में एक उपाख्यान आया है। सेतविया नामक नगरी के राजा यशोवर्मा का पुत्र सनत्कुमार एक बार अपने पिता से रुष्ट होकर घर से चला गया। ताम्रलिप्ति के राजा ईशानचन्द ने उसका स्वागत किया और उसे अपने नगर में रखा। एक बार सनत्कुमार अपने मित्र वसुभूति के साथ राजकुमारी विलासवती के भवन के समीप से निकला। उसे देख राजकुमारी उस पर मोहित हो गई और वह राजकुमारी पर। यह प्रेम-प्रसंग चल ही रहा था कि एक दिन रानी अनंगवती ने उसे अपने पास बुलवाया और स्वयं उससे प्रेम याचना की। सनत्कुमार ने इसे स्वीकार नहीं किया और वह अपने निवास को लौट आया। कुछ काल पश्चात् राजा का विशेष विश्वासपात्र नगर-रक्षक विनयंधर उसके पास आया और बोला कि वह सनत्कुमार के पिता के ही राज्य में रहने वाले एक कुलीन शूरवीर वीरसेन का पुत्र है और मेरे पिता के ऊपर तुम्हारा और तुम्हारे

पिता का एक विशेष उपकार है, जिसके कारण मैं तुम्हारा कुछ प्रत्युपकार करना चाहता हूं।

आज जब राजा ईशानचन्द्र रानी अनंगवती के महल में गया तो उसने देखा कि रानी का मुख नखों से नुचा हुआ है और अश्रु जल से उसके कपोलों की पत्र-लेखा धुल गई है। पूछने पर रानी ने बतलाया कि कई दिनों से सनत्कुमार उससे प्रेम याचना कर रहा था, जिसे उसने स्वीकार नहीं किया, किंतु आज सनत्कुमार ने स्वयं आकर व अपनी मनमानी कर उसकी यह दुर्दशा की है। यह सुनकर कुपित हो राजा ने मुझे आदेश दिया कि मैं तुम्हें चुपचाप मार डालूँ, किन्तु तुम मेरे पिता के उपकारी हो और मैं तुम्हें कदापि मारना नहीं चाहता, अतएव तुम्हीं बतलाओ अब मैं क्या करूँ? विनयंधर की बात सुनकर सनत्कुमार ने पहले तो उसे राजा के आदेशानुसार करने को कहा। किन्तु उसके यह बात न मानने पर सनत्कुमार ने ताम्रलिप्ति से भाग जाना ही उचित समझा। अतएव उसने विनयंधर से विदा लेकर अपने मित्र वसुभूति सहित स्वर्ण द्वीप को जाने वाले जहाज द्वारा वहाँ से प्रस्थान कर दिया। विनयंधर ने जाकर राजा से कह दिया कि सनत्कुमार मार डाला गया।

उक्त प्राचीन आख्यानों में हमें प्रायः वे सभी कथानक दृष्टिगोचर हो जाते हैं जो सुदर्शनचरित कथा के अभिन्न घटक हैं। जहाँ तक इस कथा के नायक का वैयक्तिक सम्बन्ध है, सुदर्शन नामक वणिक् के अनेक उल्लेख अर्द्धमागधी आगम ग्रंथों में पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ पाँचवें अंग व्याख्याप्रज्ञप्ति (भगवतीसूत्र) के अनुसार सुदर्शन नामक वणिक् राजगृह निवासी एक धनी थे, तथा तीर्थंकर महावीर के समकालीन व्यक्ति थे। वे एक आदर्श श्रावक थे और उन्होंने भगवान् महावीर को अनेक बार आहार-दान दिया था। उन्होंने श्रमण निर्ग्रंथ धर्म की दीक्षा भी ली थी, और इस सम्बन्ध में उनके पूर्व ऋषभदत्त श्रावक का भी उल्लेख किया गया है। उन्होंने कठोर तपश्चरण किया, संपूर्ण अंगों का अध्ययन किया और केवल ज्ञान प्राप्त किया (भग० सू० ९, १३, ३८२; ११. ११, ४२४-४३२; १५, १ ५४१ आदि)। इन उल्लेखों में प्रस्तुत कथानक से केवल कथानायक के नाम, उनके धार्मिक व धनी गृहस्थ होने तथा मुनि-दीक्षा धारण कर केवल ज्ञान प्राप्त करने मात्र बातों का साम्य है। इतनी बात और ध्यान देने योग्य है कि उन्हीं के समान ऋषभदत्त श्रावक भी थे और उन्होंने भी मुनि-दीक्षा ली थी। प्रस्तुत कथानायक सुदर्शन के पिता का नाम ऋषभदास है। इतनी विषमता भी है कि वहाँ सुदर्शन सेठ राजगृह के निवासी हैं, जब कि यहाँ चम्पा नगरी के।

सातवें अंग णायाधम्मकहा—के पाँचवें अध्ययन में शुक परिव्राजक की कथा आयी है। शुक वेदों का ज्ञाता व धर्म-प्रचारक और सुदर्शन नामक एक गृहस्थ उसका अनुयायी था। पश्चात् सुदर्शन तीर्थंकर के सम्पर्क में आकर जैनधर्म का अनुयायी बन गया। इस पर शुक परिव्राजक ने उसको पुनः अपने धर्म में लाने हेतु कहा कि हम तुम्हारे धर्माचार्य से मिलना चाहते हैं। यदि वे हमारे प्रश्नों

का उचित समाधान कर सकेंगे तो मैं उनका शिष्य हो जाऊँगा। हुआ भी यही और शुक उन जैनाचार्य का शिष्य हो गया।

तृतीय सूत्र ठाणांग में जो नमि, मातंग आदि दश अन्तकृत् केवलियों के नाम पाये जाते हैं, वे प्राय. वे ही हैं जो अकलंककृत तत्त्वार्थराजवार्तिक (सूत्र १.२०) में पाये जाते हैं। अन्तकृत् उन्हें कहते हैं जो दारुण उपसर्गों को जीतकर समस्त कर्मों का क्षय करके संसार से मुक्त हो जाते हैं। इनमें पाँचवें अन्तकृत् का नाम सुदर्शन है। ये दशों केवली महावीर तीर्थंकर के तीर्थ में कहे गये हैं। वर्तमान में उपलब्ध नवमें अंग अन्तकृद्दशा में यद्यपि उक्त प्रकार से अन्तकृत् केवलियों के नाम नहीं पाये जाते, तथापि वहाँ एक प्रसंग में सुदर्शन का नाम आया है। इस अंग के छठें वर्ग के मुद्गरपाणि नामक अध्ययन में अर्जुनमाली के विषय में कहा गया है कि उसने मुद्गरपाणि नामक यक्ष की मूर्ति की निष्फल आराधना से रुष्ट होकर मूर्ति के हाथ से मुद्गर छीन लिया और उस मार्ग से जाने वालों पर प्रहार करने लगा। राजा श्रेणिक ने नागरिकों का उस मार्ग से यातायात निषिद्ध कर दिया। संयोगवश उसी समय वहाँ भगवान् महावीर का आगमन हुआ। अर्जुनमाली के भय तथा राजा के मार्ग-निषेधादेश के कारण कोई नागरिक उनकी वन्दना को नहीं जा सके। किन्तु भगवान् महावीर का एक परम भक्त सुदर्शन नामक युवक किसी प्रकार भी अपने माता-पिता द्वारा रोके जाने पर भी नहीं रुका। अर्जुनमाली ने उस पर आक्रमण किया। किन्तु उसकी धर्मनिष्ठा और शान्त प्रकृति से प्रभावित होकर वह उसका मित्र बन गया, उसके साथ वह भी भगवान् के दर्शन करने गया और उसने भी मुनि-दीक्षा लेकर सिद्धि प्राप्त की।

निश्चय ही ये सुदर्शन पाँचवें अन्तकृत् केवली हुए हैं, और वे ही प्रस्तुत काव्य के कथा-नायक हैं, क्योंकि ग्रन्थ के आदि के द्वितीय कडवक में भी स्पष्टतः कह दिया गया है कि आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ से लेकर सभी तीर्थंकरों के तीर्थ में भी दस-दस अन्तकृत् केवली होते हैं। उनमें अन्तिम तीर्थंकर महावीर के तीर्थ के पाँचवें अन्तकृत् सुदर्शन हुए। उन्हीं का यह चरित्र प्रारम्भ किया जाता है।

सुदर्शन की कथा का एक अन्य प्राचीन संकेत हमें शिवार्यकृत मूलाराधना या भगवती आराधना की निम्न गाथा में मिलता है जो निम्न प्रकार है—

अण्णाणी वि य गोवो आराधित्ता मदो णमोक्कारं।
चंपाए सेट्ठि-कुले जादो पत्तो य सामण्णं॥ (गाथा ७६२)

इस गाथा में यद्यपि सुदर्शन का नाम नहीं आया, तथापि उनके पूर्व भव में एक अज्ञानी ग्वाल होने और नमोकार मन्त्र की आराधना द्वारा मरकर चंपा के श्रेष्ठिकुल में उत्पन्न होने एवं श्रमणधर्म स्वीकार करने का स्पष्ट उल्लेख होने से उसके कथानायक सुदर्शन ही होने में कोई संदेह नहीं रहता।

सुदर्शन की पूरी कथा हमें प्रथम बार हरिषेण-कृत बृहत्कथाकोष (६०) में उपलब्ध होती है। यहाँ १७३ संस्कृत श्लोकों में सुदर्शन-चरित्र की वे सभी घटनाएँ

समाविष्ट पायी जाती हैं जिनका विस्तार से काव्य-शैली में वर्णन प्रस्तुत ग्रन्थ में किया गया है। बृहत्कथाकोष का रचनाकाल सम्वत् ९८९ अर्थात् प्रस्तुत रचना से १११ वर्ष पूर्व पाया जाता है।

प्रस्तुत रचना से २७ वर्ष पश्चात् अर्थात् विक्रम सम्वत् ११२७ के लगभग विरचित श्रीचन्द्रकृत अपभ्रंश कहकोसु (कथाकोष) सन्धि २२ में भी यह कथानक १६ कडवकों में पाया जाता है।

सुदंसणचरिउ की रचना से लगभग एक शताब्दी पश्चात् रामचन्द्र मुमुक्षु ने अपने पुण्यास्रव कथाकोष (१७) में भी इस कथा को समाविष्ट किया है। यहाँ कथानक की रचना संस्कृत गद्य में हुई है।

डॉ० हरि दामोदर वेलंकर कृत जिन-रत्न कोष (पूना १९४४) में प्रस्तुत अपभ्रंश रचना के अतिरिक्त पाँच अन्य सुदर्शन-चरित नामक ग्रन्थों का उल्लेख है, जिनके कर्ता हैं ब्रह्मनेमिदत्त, सकलकीर्ति, विद्यानन्द और विश्वभूषण। एक के कर्ता का नाम अज्ञात है। सकलकीर्ति की रचना को तो कोशकार ने संस्कृत भाषात्मक कहा ही है। विद्यानन्द की रचना को मैंने देखा है और वह भी संस्कृत में है। अनुमानतः शेष ग्रन्थ भी संस्कृत में हैं और प्रस्तुत अपभ्रंश काव्य से शताब्दियों पश्चात् की रचनाएँ हैं।

प्रस्तुत रचना की आठवीं संधि के ११वे आदि कडवकों में पण्डिता द्वारा सात दिन के लिए सात मनुष्याकार पुतले बनवाना और उनके द्वारा राजप्रासाद के सात द्वारपालों को क्रमशः आश्वस्त करके आठवे दिन सेठ सुदर्शन को उनकी अनिच्छा से भी अन्तःपुर में प्रवेश कराने का वर्णन है। जान पड़ता है यह पुतलों की सूझ कवि को उस अभय कुमार व चण्डप्रद्योत के कथानक से प्राप्त हुई जिसका संकेत नन्दीसूत्र (७९) में तथा विवरण आवश्यक चूर्णि (२ पृ० १५९ आदि) में पाया जाता है। राजगृह के राजा श्रेणिक व राजकुमार अभय और अवन्ती के राजा प्रद्योत में तनातनी और परस्पर छल कपट द्वारा जय-पराजय की परम्परा चल रही थी। अभय को प्रद्योत ने बन्दी बनाया तथा छूटने पर अभय ने प्रद्योत को बाँध कर राजगृह ले जाने की प्रतिज्ञा की। वह एक वणिक् का वेष बनाकर उज्जैनी में रहने लगा। दो वेश्याओं के द्वारा उसने प्रद्योत को उनकी ओर आकर्षित कराया व सातवें दिन मिलने का आश्वासन दिलाया। फिर उसने एक मनुष्य का प्रद्योत नाम रख कर व उसे पागल घोषित कर प्रतिदिन खाट पर बाँधकर वैद्य के यहाँ ले जाने और उसके प्रद्योत-प्रद्योत चिल्लाने का ढोंग रचा। ऐसा छः दिन तक किया गया जिससे नगरवासियों को विश्वास हो गया कि उस वणिक् का एक भाई प्रद्योत नामक पागल है और वह जब उसे बाँधकर वैद्य के यहाँ उपचारार्थ ले जाता है तब वह 'मैं प्रद्योत हूँ, मैं प्रद्योत हूँ' कहता हुआ चिल्लाता है। सातवें दिन जब राजा प्रद्योत अकेला उन वेश्याओं के निवास स्थान पर आया तब वह अभयकुमार के पुरुषों द्वारा खाट पर बाँध कर ले जाया गया। राजा बराबर चिल्लाता रहा

'मैं प्रद्योत हूँ, मैं प्रद्योत हूँ' किंतु लोगों ने समझा वह उस वणिक् का पागल भ्राता होगा जो प्रतिदिन की भाँति वैद्य के यहाँ ले जाया जा रहा होगा। इस कारण किसी ने कोई रोक टोक नहीं की, और अभयकुमार अपनी प्रतिज्ञानुसार चण्ड प्रद्योत को बन्दी बनाकर राजगृह ले गया। यहाँ जिस प्रकार एक पागल मनुष्य के ढोंग द्वारा नगरवासियों को आश्वस्त करके अभयकुमार प्रद्योत को बन्दी बना ले गया, उसी प्रकार यहाँ पण्डिता ने पुतलों द्वारा द्वारपालों को लापरवाह बनाकर सुदर्शन का अन्त:पुर में प्रवेश कराया।

भाषा, शैली और काव्यगुण

सुदंसणचरिउ की रचना भारतीय आर्य भाषा के मध्ययुगीन तृतीय स्तर की उसी विशेष भाषा में हुई है जो अपभ्रंश नाम से प्रसिद्ध है तथा जिसका विकास-काल पांचवीं से दशमी शती ईस्वी के बीच माना जाता है। काव्य शास्त्रों में बहुधा अपभ्रंश को संस्कृत और प्राकृत से भिन्न भाषा-प्रकार माना गया है। किन्तु वैयाकरणों ने उसे अपने प्राकृत व्याकरणों में उसी प्रकार स्थान दिया है जैसा शौरसेनी, मागधी व पैशाची को और इस प्रकार यह सूचित किया है कि वह प्राकृत का ही एक भेद है। गत अर्ध शताब्दी में अपभ्रंश का प्रचुर साहित्य प्रकाशित हो चुका है तथा उस भाषा के अध्ययन व साहित्य के इतिहास पर भी अनेक लेख व ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। इस भाषा के प्राचीन और प्रकाण्ड कवि स्वयंभू और पुष्पदन्त की रचनाओं में इस भाषा और इसकी काव्यशैली का स्वरूप बहुत स्पष्टतया हमारे सम्मुख आ चुका है। प्रस्तुत रचना में भी वही टकसाली भाषा का स्वरूप व काव्यशैली पायी जाती है।

अपभ्रंश की ध्वनियां तथा शब्द-भण्डार वे ही हैं जो अन्य प्राकृतों में पाये जाते हैं। शब्द तत्सम, तद्भव और देशी इन तीनों प्रकार के विद्यमान हैं। देशी शब्दों की मात्रा यहां अन्य प्राकृतों की अपेक्षा अधिक पायी जाती है। किन्तु काव्य शैली की यहां अपनी विशेषता है। चरित काव्य या कथा का विभाजन संधियों में और प्रत्येक संधि का विभाजन कडवकों में किया जाता है। कडवक की रचना अधिकता से पज्झटिका और अलिल्लह छंदों में की जाती है जिनके अन्त में एक घत्ता छंद रहता है। प्रसंगानुसार विविध छंदों का उपयोग किया जाता है जिनका एक सामान्य लक्षण है पादान्त यमक या तुकबन्दी जो इन छंदों को संस्कृत प्राकृत के छन्दों से पृथक् निर्दिष्ट करता है। प्रस्तुत रचना में छन्दों का विपुल वैचित्र्य है। कवि को इस कला में अच्छा सौष्ठव प्राप्त है। उन्होंने अनेक स्थलों पर तो अपने विलक्षण छन्दों के नाम निर्दिष्ट कर दिये हैं। ग्रंथों के समस्त छन्दों का परिचय यहां अलग से दिया जा रहा है। जहां लगभग एक सौ छन्दों का निर्देश प्राप्त होगा। इनमें कवि द्वारा प्रयुक्त विषमपदी छंद विशेष ध्यान देने योग्य है। मात्रिक और वर्णिक छंदों का यहां अच्छा प्रतिनिधित्व पाया जाता है।

कवि ने स्वयं विविध प्रसंगो में काव्य के विषय में जो बातें कही हैं उनसे परोक्ष रूप से उनके काव्य के गुणों का संकेत मिलता है। वे आदि में ही कहते हैं

कि भुवन में यश की वृद्धि तीन उपायों से ही हो सकती है, अच्छे कवित्व से, दान व पौरुष से (१, १, १४), 'महाकवि का कथाबंध अर्थ-प्रचुर होता है' (२, ५, ८) 'सुकवि की कथा जनमनहारी (२, ६, ३) और लक्षणों अलंकारों से संयुक्त होती है (८, १)। सरस, व्यंजन सहित, मोदकसार व प्रमाणसिद्ध भोज्य और काव्य-विशेष विरले ही होते हैं (६, १)। कोमल पद, उदार, छन्दानुवर्त्ती, गंभीर, अर्थ-समृद्ध तथा हृदयेच्छित सौन्दर्ययुक्त कलत्र और काव्य संसार में कभी किसी को प्राप्त होते हैं, (८, १)।

यह काव्य विशेष रूप से छन्द और अलंकार-प्रधान कहा जा सकता है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक आदि अलंकारों का पद-पद पर उपयोग पाया जाता है और ये अलंकार बहुधा श्लेषाधारित हैं जिनसे कवि की कल्पना और शब्द-चातुरी का अच्छा परिचय प्राप्त होता है। मगध देश के वर्णन में कवि ने श्लेषात्मक विशेषणों द्वारा कामिनीमुख, धूर्तकुल, वेश्या, पथिक स्त्री, नन्दनवन आदि उपमानों का (१, ३,) राजगृह नगर के वर्णन में त्रिदशेन्द्र, मन्मथ व अमथित उदधि की उपमाओं का (१, ४), विपुलाचल पर्वत संबधी उत्प्रेक्षाओं का चम्पापुर के वर्णन में रामायण, महाभारत, छंद (१, ८) मन्दरपर्वत आदि उपमानों का (२, ३) राजा धाईवाहन के वर्णन में मेघ, सूर्य, विभीषण, इन्द्र, अर्जुन, भीम, बाहुबलि, राम, कार्तिकेय, ब्रह्मा, विष्णु आदि से वैशिष्ट्य-दर्शक व्यतिरेक अलंकारों का वर्णन कवि की अलंकार-शैली के अच्छे उदाहरण हैं। उसी प्रकार राजश्रेष्ठी ऋषभ दास (२, ५) सेठानी तथा गोप के वर्णन (२, ६) भी अलंकार-योजना के अच्छे द्योतक हैं। वर्णन-शैली का सौन्दर्य खाद्य पदार्थों (५, ६) वादित्रों (७, ६), प्रमोद वन के वृक्षों (७, ८) मनुष्याकार माटी के पुतलों (८, ११) के वर्णनों में देखने योग्य है। संधि ४ में कवि ने स्त्री जाति के लक्षणों का व संधि ६ में युद्ध का जो विस्तार से वर्णन किया है वह उनके पाण्डित्य और कला-प्रावीण्य का उत्तम द्योतक है।

छन्द-विश्लेषण

यों तो अपभ्रंश के काव्य में छन्दों का अपना वैशिष्ट्य रहता ही है, 'सुदंसण चरिउ' में छन्दों का वैचित्र्य अन्य काव्यों की अपेक्षा बहुत अधिक पाया जाता है। वैसे तो कवि ने आदि में ही इस रचना को 'पद्धडिया बन्ध' कहा है। किन्तु यह अपभ्रंश छन्दशैलियों का सामान्य नाम प्रतीत होता है। यथार्थतः तो जान पड़ता है कि कवि ने अपना छन्दकौशल प्रगट करने का इस काव्य में विशेष प्रयत्न किया है। अनेक अपरिचित छन्दों का तो नामोल्लेख भी कर दिया है तथा कहीं-कहीं उनके लक्षण भी दे दिये हैं। उन्होंने स्वयं कहा भी है कि काव्य की विशेषता उसके 'छन्दानुवर्ती' (२.६.७) अर्थात् नाना छन्दात्मक होने में है। ग्रन्थ में प्रयुक्त छन्दों का कुछ परिचय उनके नाम, प्रत्येक चरण की मात्रा-संख्या या वर्णसंख्या, अन्य लक्षण, सन्दर्भ और उदाहरण क्रम से प्रस्तुत किया जाता है। आदि में

मात्रिक छन्दों, तत्पश्चात् वर्णिक छन्दों, फिर विषमपदी, मात्रिक व वर्णिक छन्दों तथा अन्त में घत्ता छन्दों का परिचय प्रस्तुत है।

खण्ड क—मात्रिक छन्द

१. *आनन्द*—मात्रा ५ अन्त लघु सं० ४. १२; ११. २२.

उदा०—मा रमसु परिहरसु।
इय छन्दु आणंदु।

१. *करिमकरभुजा*—मात्रा ८ अन्त ल ग सं० २.११।
(द्विपदी)—

उदा०—बहुदिणहि पुणो संतुट्ठमणो।
सो घरहे तओ सुरसरिहे गओ।
करिमयरभुया दुवई भणिया।

३. *कुसुमविलासिका*—मात्रा ८ आदि न गण (⏑⏑⏑) अन्त ल ग सं० ९.३।
(द्विपदी)

उदा०—कुणइ परिमलं रुणइ अलिउलं।
दुवइ भासिया *कुसुमविलासिया*।

४. *चन्द्रलेखा*—मात्रा ८ अन्त ग ल सं० ५ ७; ६.१२; ८ २६; १२.४।
(द्विपदी)

उदा०—रविकणयकुंभु लहसियउ सुसुंभु।
दुवई वि एह फुडुचन्द*लेह*।

५. *मदनविलासा*—मात्रा ८ अन्त ग ग सं० ४.१।
(द्विपदी)

उदा०—हरिमविसट्टो छुड्डु जि पयट्टो
जा ता अग्गे आवणमग्गे।
तणु सोमाला दिट्ठा बाला
दुवई एसा *मयणविलासा*।

६. *मदन*—मात्रा ८ सं० ४.७; ५.१६; ८.२८; ९ १३।
उदा०—सच्चें विणएँ दाणे पणएं।
मा कि पि वि भणु तहे घिप्पइ मणु।
छंदु पवुत्तउ *मयणु* निरुत्तउ।

७. *मधुभार*—मात्रा ८ सं० ६.२: ६.१५।
उदा०—तिहुवणरम्महुँ तो वि ण धम्महुँ।
लग्गहि मूढिउ पावपरूढिउ। (६.१५; १७-१८)
चउमत्त वे वि *महुभार* एवि (प्रा० पि० १७५)

८. *अमरपुरसुन्दरी*—मात्रा १० अन्त ल ग सं० ६.१०; ६.११।
(द्विपदी)

उदा०—निसहिं छुडु भोयणं करइ मणमोयणं।
अमरपुरसुंदर नाम छंदोवरं (६.१०.१२-१३)

९. चारुपदपंक्ति– मात्रा १० अन्त ल सं० ८ २५; ६.१२।
(द्विपदी)

उदा० खंडियउ धणु छत्तु महिवीढे संपत्तु।
वर दुवइ णउ भंति इय *चारुपयपंति*।
(६.१२.११-१२)

१० *तोमरेखपुष्पमाला*—मात्रा १२ अन्त ग ल सं० ६ ३।

उदा०—धम्मु मंसभक्खणेण के वि भणंति पसुवहेण
एम छंदु हे गुणाल *तोमरेहपुप्फमाल*।
(६.३.११-१२)।

११. *विसिलोयछन्द*—मात्रा १५ अन्त न गण (⏑⏑⏑) सं० ९.६।
(पद्धडिया)

उदा०—तरवारिवारिपूरे विसम सरजालणिविडकोट्टिमसुगम।
परिसोहइ रुहिरतरंगणिय *विसिलोयछन्द* पद्धडि भणिय।
(९.६ ७-८)

१२. *अलिल्ल* (*अडिल्ल*)—मात्रा १६ अन्त ल ल सं० १.३, ८,१०; २ १,२,४-६, १५; ३ ३,७, ४ २,३,६,८,१०; ५.२,३,८,१०; ६ ४,८,१७, १८; ७.२, ३, ५, ६, १३, १६; ८.२, ३,५,७,८,१०,१४,१७, १९,२१,३५,३८ से ४०; ६.२,४,५,१६,१९,२३; ११.४, ५,७,१०,११; १२.५।

टिप्पण : मूल में ८.२ को पद्धडिया तथा ८.५ व ८ १०, ८.१७, ३८ से ४० एवं ९.१६ को पारंदिया अथवा पारंदिय-पद्धडिया कहा गया है।

उदा०– जहिं सुसरासए सोहियविग्गहं कयसमरालीकेलिपरिग्गह
रायहंस वरकमलुक्कंठियं विलसइँ बहुविहपत्तपरिट्ठिय।
(१.३.७-८)

१३. *त्रोटनक*– मात्रा १६ अन्त ल ग सं० ४.४।
उदा०—सिक्खावय चारि अणत्थमियं जो जंपइ जीवहियं सुमियं।
जो कम्ममहीरुहमोहणवं छंदो इह वुच्चइ *तोडणउ*।
(४.४.९-१०)

१४. *पद्धडिया* (*पज्झटिका*)—मात्रा १६ अन्त ज गण सं० १. १, २, ४, ९; २. ३, १२, १४; ३. २, ८, ११, १२; ४. ११, १५; ५. १, ६; ६. १, ७, ६, १३; ७. १०, ११, १४, १५, १७; ८. ९; ६. १७, १८, २१, २२; १०. ६, ८ से १०; ११. ३, ८, ९, १३, १५; १२. १, ७, ८, १० ।

टिप्पण : इनके अतिरिक्त ८. १८, ३० से ३४, ४२, ४३ तथा ९ ८ में भी यही छन्द है, जिसे वहां 'रयडा' नामक पद्धडिया कहा गया है ।

उदा०—जसु केवलनाणें जगु गरिट्ठु
करयल-आमलु व असेसु दिट्ठु ।
तहो सम्मइ जिणहो पयारविंद
वंदेप्पिणु तह अवर वि जिणिंद ।।

(१. १. ११-१२)

१५. पादाकुलक—मात्रा १६

(क) सर्व लघु सं० १. ५.

उदा०—परियणहिययहरणु गुणगणणिहि
दहहहसयलु लहु य अविचलदिहि ।

(१ ५. ८)

(ख) अन्त गुरु० सं० १, १२; ४. ५ ।

उदा०—अवरे दोसें को तहि कलओ
ऐसो छंदो पायाउलओ ।

(४. ५. २३)

(ग) अन्त ल ग स० ८. ११, १२, २२ ।

उदा०—किं पि वि सकज्जु विरयंतियहे
तुह काइँ हुयउ पइसंतियहे ।
जइ किंपि दोसु इस संभवइ
तो अम्हहँ राणउ णिग्गहइ ।

(८. १२. ९-१०)

१६. *विलासिनी*—मात्रा १६ अन्त ल ग सं० ७. १६; ८. १६; ९. १; १०. २; ११. १२ ।

उदा०—पत्थिउ व्व कुवलयविराइयं
पुंडरीयनियरेण छाइयं ।
करिहंसारंगभासियं
छंदयं *विलासिणि* पयासियं ।

(७. १६. ९-१०)

१७. *मत्तमातंग*—मात्रा १८ अन्त ज गण (—–—) सं० ३ ५

उदा०—बालु सोमालु देविंदसमदेहु
लेवि भत्तीए आएवि जिणगेहु ।
तीए पेच्छियउ पुच्छियउ मुणिचंदु
मत्तमायंगु णामेण इय छंदु ।

(३.५.८-९)

१८. *आवली*—मात्रा २० अन्त ल ग सं० ८.२६

उदा०—जइ इच्छसि मणोज्जचंचलाइया
णिज्झरवंतउत्तुंगसइलोवम-गया ।
कंचणमणिमऊहचिंचइय रहवरा
सेवागय असेस पणवंति किंकरा ॥

(८.२६. ११-१२)

१९. *उर्वशी*—मात्रा २० अन्त र गण (—–—) सं० ७.७ ।

उदा०—चलिय तुच्छोयरी पोमवत्तच्छिया
कविलणामप्पिया तासु णं लच्छिया ।
चलिउ णिस्सेसलोओ मणे तोसिओ
सहइ छंदो इमो *उव्वसी* भासिओ ।

(७.७.९-१०)

२०. *चप्पइ (चउपही)*—मात्रा २० अन्त ल ल सं० ५ ४ ।

उदा०– दोहिं वि घरहिं विविहु आहरणु लइज्जइ
दोहिं वि घरहि लडतरुणिहिं णच्चिज्जइ ।
सच्चुवहाणु एहु णारिहिं दिहिगारउ
कलहु दुद्धु जामाइउ तूरु पियारउ ।

(५.४ ९-१०)

२१. *मन्दयार*—मात्रा २० अन्त ल ग सं० ६.६ ।

उदाः—पुणु दुइज्जम्मि गुणवए रइभंजणं
भोयउवभोयपरिणामपरिछंजणं ।
तइयगुणवए पयासेमि जं जुत्तउ
मंदयारु त्ति छंदो इमो वुत्तउ ।

(६.६.१५-१८)

२२. *मदनावतार*—मात्रा० २० अन्त ल सं० ४.९; ६.२०; ७.६; ८ २७; १२.६ ।

उदा०—दीहुण्हणीसास पुणु पुणु वि मेल्लंति
परिहरिवि कुलमग्गु उम्मग्गे चल्लंति ।
तिक्खयरभावेण णारीउ कंपंति
सच्छंदु *मयणावयारं* पयंपंति ।

(४.९.७-८)

२३. *शशितिलक*—मा० २० सर्व लघु सं० १.११ ।

उदा०—जय अमरणरखयरबिसहरहि अहिमहिय ।
जय परमपरसयलअइसयहि णिरुसहिय ।

(१.११.१५-१६)

२४. *सारीय*—मात्रा २० अन्त ग ल सं० ८.२० ।

उदा०—भणु कस्स तुट्ठो देसि ठाणस्स
लइ अज्ज जायं फलं तुज्झ झाणस्स ।
तुहुं माणिणीचित्तअंभोरुहे मित्तु
*सारीय*णामेण छंदो इमो वुत्तु ।

(८.२० ६-७)

२५. *मंजरी (गुणमंजरी)*—मात्रा २१ अन्त र गण (–⏑–) सं० ४ १४ ।

उदा०—उद्धरेह चक्कंकुसकुंडलराइया
अद्धइंदुभालंकिय-णहमुच्छाइया ।
जा सणिद्धमुत्ताहलसणिय सुंदरी
सा हवेइ चक्कवइहे पिय *गुणमंजरी* ।

(४.१४.१–२)

२६. *रासाकुलक* मात्रा २१ अन्त न गण (⏑⏑⏑) सं० ८.४१ ।

उदा०—सुमरमि चारुकवोलहिं पत्तावलिलिहणु
ईसि ईसि थणपेल्लणु वरकुंतलगहणु ।
तो वि ण फुट्टु महारउ हियडउ वज्जमउ
वुत्तु छंदु सुपसिद्धउ इय *रासाउलउ* ।

(८.४१.१७-२०)

२७. *मागधणकुडिया* मात्रा २२ सं० ७-४ ।

उदा०—पर कसु वि म अक्खसु जाणहि संढउ मईँ इह ।
बाहिरे परसुंदरु इंदवारुणीफलुजिह ।
सहसत्ति विरत्तिय कपिलय मुक्कु वणिंदो ।
मागहणकुडिया णामें एसो छंदो

(७.४.१६ २२)

२८. *हेला द्विपदी*—मात्रा २२ अंत ग ग सं० ६.५ ।

उदा०—

जीववहं ण कीरए इय मुणेवि सम्मं ।
परु अप्पं सामाणयं दीसए णिसम्मं ।
तसु पुणु काइँ सीसए जो करेइ हिंसा ।
हेला णाम दुवइया वुत्त जवर एसा ।

(६.५.१५-१८)

२९. *कुवलयमालिनी*—मात्रा २४ अन्त ग सं० ११. १६-१९।

उदा०—अण्णइँ वि किलिण्णइँ मलयचलिण्णइँ रडियाइँ।
अण्णइँ गयवत्थइँ पसरियहत्थइँ एडियाइँ।
अण्णइँ सयवयणइँ पिंगलणयणइँ बहुभुअइँ।
अण्णइँ किमिवड्ढइँ बहुदुग्गंधइँ लहु मयइँ। (११.१६.११-१४)

३०. *शालभंजिका*—मात्रा २४ अन्त ल ग सं० ७.१२।

उदा०—मयरकेउ सुहदंसणु जइ ण रमेमि हउँ हले।
तो मरेमि ओलंबेवि पासउ कंठकंदले।
जइ पइज्ज णउ पालमि तो हउँ कंचिले लंजिया।
छंदु एउ सुपसिद्धउ णामें *सालहंजिया*।
(७.१२.१५-१८)

३१. *कामलेखा*—मात्रा २७ अन्त ल ल सं० ७.८।
(पद्धडिया)

उदा०—कंचणवंत सुमंड कोइललिलियालावसुहासिणि।
तरुराइय वणे तेत्थु दिट्ठिय राएं णाइँ विलासिणि;
इय गुणेहिं परउण्ण कासु ण हियवउ हरइ णिरुत्तिय।
कामलेह णामेण पद्धडिया फुडु एस पवत्तिय।
(७. ८. १३-१६)

३२. *भ्रमरपदा*—मात्रा २७ १०+८+९ अन्त ल ल सं० ८.२६.५-८।
(षट्पदी)

उदा०—जइ इच्छहि बालउ अलिणिहवालउ कुवलयसामलिउ।
मयरद्धयलोलिउ भुंभुरभोलिउ किसलयकोमलिउ॥
थणभारक्कंतिउ जियससिकंतिउ कुलिसकिसोयरिउ।
ओलंबियहारउ जणमणहारउ रइहे सहोयरिउ॥

३३. *द्विपदी*—मा० २८ अन्त ल ग सं० ४. १४ १०-११;
(गाही कडवक) ५.१ आदि (प्रत्येक कडवक के प्रारम्भ में)

उदा०—गमणुत्तावलीय सव्वंगसमुट्ठियरोमराइया।
सा फुडु होइ पुत्तभत्तारविओयदुहेण झाइया॥
(४.१४. १०-११)

३४. *रचिता*—मात्रा २८ अन्त ल ग सं० ११.१ आदि (प्रत्येक कडवक के आदि में)

उदा०—तहो तवचरणु णवर णिसुणेप्पिणु णासइ भाइवाहणो
अणिमिसणयणु पुणु वि पुणु चित भवमयतसियणियमणो।
(११.१.२-३)

३५. *विज्जुला*—(द्विपदी) रचिता के समान ९. ७।

३६. *षट्पदी*—मात्रा २८ (१०+८+१०) पदांत स गण (⏑⏑–)सं० ११. ६ ।

उदा०—जो हुंतउ वणिवरु सो हुउ मुणिवरु किं वण्णिज्जउ पइं ।
जे जे गज्जिज्जिय ते ते रंजिय कवण ण कवण मइं ।
(११. ६. १५-१६)

३७. *आरणाल*—मात्रा २९ (१२+८+६) सं० ६.१ आदि (प्रत्येक कडवक के (षट्पदी) आदि में)

उदा०—साहुसमाहिगुत्तओ छुडु पहुत्तओ ताम रिसहदासो ।
वंदणहत्तिए गओ करिविलग्गओ जिणहो णं सुरेसो ।
(६.१.५-६)

३८. *मदिरा*—अथवा लताकुसुम—मात्रा ३० अन्त स गण (⏑⏑–)सं० ११.२ ।

उदा०—इत्थितिरक्खणउंसयउज्झिए ठाणे वसेइ करेइ दमं ।
एहु वि जो *मइरा* किर छंदउ के वि भणंति *लयाकुसुमं* ।
(११.२.२१-२२)

खण्ड ख—वर्णिक छंद

३९. *मध्यम*—वर्ण ३ त गण (––⏑) सं० २ ७ ।

उदा०—वंदेवि वण्णेवि
तत्थाउ हं आउ
एयस्स छंदस्स
तो णामु मज्झम्मु । (२.७.६)

४०. *कामबाण*—वर्ण ४ र (–⏑–) ल सं० ३.९, ६. ११ ।

उदा०—णत्थि ताण माणवाण ।
कामबाण छंदु जाण । (६. ११. २१-२२)

४१. *सिद्धक*—वर्ण ५ र (–⏑–) ल ग सं० ९. ९ ।

उदा०—कंपवज्जिया देवपुज्जिया ।
छंदु *सिद्धओ* सुपक्खिबद्धओ । (६. ६. ११-१२)

४२. *मौक्तिकदाम*—वर्ण ६ ज (⏑–⏑) ज (⏑–⏑) सं० ६. १४ ।

उदा०—मणम्मि परिट्ठुं पयासिउ छंदु ।
सुमोत्तियदामु जणे अहिरामु ।
(९. १४. १५-१६)

४३. *सोमराजी*—वर्ण ६ य (⏑––) य (⏑––) सं० १०-५ ।

उदा०—किवाणेण भीसं हयं तस्स सीसं ।
णरिंदो पहिट्ठो पुरे सो पइट्ठो ।
(१०.५. १८-१९)

४४. *उष्णिका*—वर्ण ७ र (–⌣–) ज (⌣–⌣) ग सं० ८.२३।

उदा०—जो ण कामखंडिओ सो सलग्घु पंडिओ।
उण्हिया णिरुत्तओ एसु छंदु वुत्तओ।
(८.२३.११-१२)

४५. *प्रमाणिका*—वर्ण ८ ज र ल ग सं० १.७

उदा०—णराहिवाणुराइणी खिवेसये विलासिणी।
इमो सुछंदु उत्तओ *पमाणिया* णिरुत्तओ।
(१.७.१३–१४)

४६. *विद्युन्माला*—वर्ण ८ सर्व गुरु सं० १२ ३।

उदा०—सव्वेसि साहूणं सामी दुल्लंभे लोयग्गे गामी।
तं सव्वण्हू भव्वाणंदो *विज्जूमालो* एसो छंदो।
(१२.३.७.२)

४६. (क) अनुसारतुला वर्ण ८ सर्वलघु सं० १२.२

४७. *समानिका*—वर्ण ८ र ज ग ल सं० ३.१०; ९.२०

उदा०—कुम्मयार हेमछाय दीहअंगुलिल्लपाय।
भासए णहाण पंति छंदओ *समाणियं* ति।
(३.१०.१६–२०)

४८. *रसारिणी*—वर्ण १० र ज र ल सं० २.८।

उदा०—तं सुणेवि सिट्ठिणा पवुत्तु दुल्लहो जयम्मि एसु मंतु।
भाई चित्ते वज्जिऊण तंदु जाणिमो *रसारिणी* वि छंदु।
(२.८ ७-८)

४९. *इन्द्रवज्रा*—वर्ण ११ त त ज ग ग सं० ४.१३ (एक पद्य)

उदा०—कायस्स जंघोरुजुयं अभइं
कायस्स दिट्ठी तह कायसद्दं।
पायंगुली काउ समाउ जीए
जाणेहि दीहाउसु णत्थि तीए
(४.१३.५–८)

५०. *उपजाति*—वर्ण ११ इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा का मिश्रण सं० ४.१३ (एक पद्य)

उदा०—सुवेणु वीणाकलहंसवाणी
सुवित्तणाहीथणचारुपाणी।
मायंगलीलागइ सुद्धसामा
सा होइ पुत्ताइयलच्छिधामा॥
(४.१३.६-१२)

५१. उपेन्द्रवज्रा—वर्ण ११ ज त ज ग ग सं० ४.१३ (एक पद्य)

उदा०—पसत्थजंघोरु थणग्गविता
पईहहत्थंगुलिणक्खणेत्ता।
मुणास हेमच्छवि उक्खमाला
तिउत्तरंती स हवेइ बाला॥
(४.१३.१-४)

५२. आख्यानक—४.१३-१६ उपेन्द्रवज्रा के समान।

५३. दोधक—वर्ण ११ भ भ भ ग ग सं० ३.६

उदा०—वड्ढइ णं वयपालणे धम्मो
वड्ढइ णं पियलोयणे पेम्मो।
वड्ढइ णं णवपाउसि कंदो
एसु पयासिउ दोहय छंदो॥
(३.६.७-८)

५४. *निःश्रेणी*—वर्ण ११ र ज र ल ग सं १०.१

उदा०—जं वणु व्व यंत जंत सावयं
जं वणु व्व मोक्खमग्गदावयं।
तं णियच्छिऊण सो पहिट्ठओ
छंदओ *णिसेणि* णाम सिट्ठओ॥
(१०.१.१४-१५)

५५. *कामावतार*—वर्ण १२ त त त त सं० ८.१३।

उदा०—एवं सुणेऊण चित्तम्मि भीएहिँ
णावंत सीसेहिँ ता भासियं तेहिँ।
अम्हाण णो एरिसं कारिउं जुत्तु
छंदो वि *कामावयारो* इमो वुत्तु॥
(८.१३ ७-८)

५६. त्रोटक (तोटनक)—वर्ण १२ स स स स सं २.१३

उदा० तुह गाविउ जोविउ जंतियउ
परतीरे गहीरे पहुत्तियउ।
णिसुणेवि धुणेवि सिरं चलिओ
इय छंदु वि *तोडणउ* भणिओ॥
(२. १३. ७-८)

५७. *रमणी*—त्रोटक के समान सं० ३.१

उदा० —भणिओ *रमणी* इय छंदु मुणी।
(३.१.१७)

५८. *भुजंग प्रयात*—वर्ण १२ न (⌣ ⌣ ⌣) न न न सं० १.६; १२.९

उदा०—गया मेहसारीए उत्तुंगदेहा
विरेहंति विज्जुज्जला णाइँ मेहा।
जिओ चल्लिओ लीलए णं सुरिंदो
भुजंगप्पयाओ इमो णाम छंदो ॥

(१.६.९-१०)

५६ *मौक्तिकदाम*—वण १२ ज ज ज ज सं० ५.५; ८.४४

उदा०—पईवउ खट्ट रईहरवण्णु
समप्पइ दाइजयं सहिरण्णु।
वहूय वराहँ वियंभइ कामु
पयासिउछंदउ *मोत्तियदामु*।

(५.५ १४-१५)

६० *वसन्तचत्वर*—वर्ण १२ ज र ज भ सं० ५ ६;८.१

उदा०—सुदंसणो णहेहि घाउ दावए
मणोरमाहि अंगे सेउ धावए।
पुणो रयं रमंति बे वि सुंदरं
इयं पि छंदयं *वसंतचच्चरं* ॥

(५.६.६-१०)

६१ *वंशस्थ*—वर्ण १२ ज त ज र सं० ७ १; तथा सन्धि ७ के प्रत्येक कडवक का आदि वद

उदा०—कया वि णाणाविहकज्जगुत्तओ
अणेयसंकप्पवियप्पजुत्तओ।
समीहए छेलहए वणिदओ
इमो वि वंसत्थु हवेइ छंदओ ॥

(७.१.११-१२)

६२ *स्रग्विणी*—वर्ण १२ र र र र सं० ११.१४

उदा०—केण णिव्वाणसेलो समुच्चालिओ
केण मूढेण कालाणलो जालिओ।
को णिरुंभेइ चंडंसुणो संदणं
को विमाणं वि एयं मणाणंदणं ।।

(११.१४.९-१०)

६३ *तोणक*—वर्ण १५ र ज र ज र सं० ६.१५

उदा०- रक्खसेण णायवासु पेसिओ णईहरो
धाइवाहणेण वाणु भासुरो खगेसरो।

तो णिसायरो णिवस्स संगरे पलाणओ
तक्खणेण झत्ति पत्तु वुत्तु छंदु *तोणओ* ।
(९.१५.२१-२४)

६४ *मन्दारदाम*—वर्ण १५ र र र र र सं० ११.१८
उदा० ताए कल्लोलमालाए वोमंगणं बोलियं
ताए चंदक्कतारावली झत्ति झंकोलियं ।
एम महारकालो अकाले वि णं पत्तओ
एम *मंदारदामोत्ति* छंदो फुडं वुत्तओ ।
(११.१८. १६-२२)

६५. *मालिनी* वर्ण १५ न न म य य सं० ३.४
उदा०—खलयणसिरसूलं सज्जणाणंदमूलं
पसरइ अविरोलं मग्गणाणं सुरोलं ।
सिरणिवियजिणिंदो देइ चायं वणिंदो
वसहुयजइजुत्तो मालिणीछंदु वुत्तो ।। (३.४ ७-८)

६६. *चित्रा*—वर्ण १६ र ज र ज र ल सं० ८.२४
उदा०—थूलसण्हपाणभूय जीवसत्तदारणेहि
लोलचक्खुसोयघाण जीहफासपेरणेहि ।
एम चिंतिऊण लेइ सुप्पइण्ण सो वणिंदु
वुत्तु अद्धजाइया य एस *चित्तु* णाम छंदु ।।
(८.२४.१३-१६)

६७. *पंचचामर*– वर्ण १६ ज र ज र ज ग सं० १०.३
उदा०—महाकसाय-णोकसायभीमसत्तुतोडणो
अहिंसमग्गु धीसु णग्गु कम्मबन्धसाडणो ।
कुतित्थपंगु मुक्कसंगु तोसियाणरामरो
लगुत्तिसोल अक्खरेहि छंदु *पंचचामरो* ।।
(१०.३.१८-२१)

६८. *पृथिवी*—वर्ण १७ ज स ज स य ल ग सं० ८.३७
उदा०—हुयास अहि वेरिणो चउर जार उपेक्खए ।
ण सो सुइरु णंदए गरुवआवयं पेक्खए ।।
सुदुट्ठणरणिग्गहं सुयणपालणं जुत्तयं ।
णिवस्स जइ भूसयं पुहइछंदयं वुत्तयं ।। (८.३७.१७-२०)

६९. *मन्दाक्रान्ता*—वर्ण १७ म भ न त त ग ग सं० ३ १ (एक पद्य)
उदा०—णो संजादं तरुणिअहरे विद्दुमारत्तसोहे ।
णो साहारे भमियभमरे णेव पुंडुच्छुदंडे ।

णो पीऊसे णहि मिगमदे चंदणे णेव चंदे।
सालंकारे सुकइभणिदे जं रसं होइ कव्वे।
(३.१. १–४)

७०. *दिनमणि* (धवला)—वर्ण १९ न न न न न न ग सं० ७.१८।

उदा०—कहि मि कवि रमणि तहिं लहिवि पियफरिसणं।
बहलहुयपुलय परिहरइ मणे रणरणं।
कहि मि मणिकडय तणुघडण णिवडिय जले।
सहहि पडिफुरिय ससहररत्ति व णहयले।
(७.१८–१८.१५)

७१. *शार्दूलविक्रीडित*—वर्ण १६ म स ज स त त ग, सं० ३.१ (एक पद्य)
उदा०—रामो सीयविओयसोयमहुरं संपत्तु रामायणे।
जादा पडंव धायरट्ठ सददं गोत्तंकली भारहे।
डेड्डाकोडिय चोररज्जणिरदा आहासिदा सुद्धए।
णो एकं पि सुदंसणस्स चरिदे दोसं समुब्भासिदं।
(३.१ ५–८)

७२. *शशितिलक*—वर्ण २० सर्व लघु सं० ११.१७।

उदा०—पुणु कलइँ गिलिगिलइँ णहि मिलइँ णिरु रसइँ।
अइपबल हलमुसल पुणु पुणु वि खल दिसइँ।
णउ तइ वि णियखणहो मुणि चलइ गुणणिलउ।
इय भणिउ दहदहहि लहुकलहि *ससितिलउ* ॥
(११.१७.१५-१८)

७३. *चंडपाल* (दंडक)—वर्ण ५० न स य (८ बार) ल ग सं० ८.२६.१–४।
उदा०—देखिये मूल।

खण्ड ग—विषम मात्रिक छंद

७४. *मुखंगलीलाखंडक*—मात्रा ७+२७ अन्त र (–⏑–) गण सं० ८. २६. ९·१०
उदा०— वरराउलं उब्भियविविहछत्तसिरिगिरिधयवडेहिं समाउलं।
जणपेसलं जइ इच्छहि वणिद णिच्चुच्छवेहिं रइय मंगलं।

७४. (क) विद्युल्लेखा (पद्धडिया) मात्रा ८ + १६ सं० २, १०

७५. *गाथा*—

[क]—मात्रा ८, १४; ८.१४ सं० ६.१, ३–४।
उदा०—अह तहिं अवसरे परिमिउ संघेण असेसें।
उववणे पत्तउ तवपुंजु णाइँ मुणिवेसें॥

७६. [ख] मात्रा १२, १८; १२ १५ सं० ६.१, १-२

उदा०—सरसं विंजणसहियं मोयसारं पमाणसिद्धं खु।
भोज्जं कव्वविसेसं विरलं सहि एरिसं लोए॥

नोट : ८४.३-४ में इसी को पथ्या कहा गया है।

७७. [ग]—मात्रा १२, १६; १२.१६ सं० ८.४.१-२।

उदा०—अव्वो जेणोवाएं सूहवो एइ तेण आणेहि।
घरि घरिणिए णिवडंती विरहमारि कि णिट्ठुरा होहि॥

७८. [घ]—मात्रा १२, १८; १२, १८ सं० ४.१४. ५-६।

उदा०—थोरसुमंथरणासा लंजिय अह होइ थोव धणवंती।
जा वायसगइसद्दिट्ठी सा दुक्खभायण कण्णा॥

७९. [ङ]—*परपथ्या*—मात्रा १२, १८, १२ १५ सं० ८.४. ५-६, ११-१२।

लक्षण:—प्रथम यति शब्द के मध्य में पड़ती है।

उदा०—विरयइ डाहो अदंसणेण जसु दंसणेण पासेओ।
तस्सोवरि सुविरत्ती माए इह कस्स णिव्वहइ।
(८.४.५-६)

८०. [च] विपुला (i) मात्रा १२, १८; १२, १५ [प्रथम और तृतीय चरणों की यतियाँ शब्द के मध्य में] सं० ८.४.७-८।

उदा०—कोमलबाहुलयालिंगणेण तं सोक्खं जइ वि ण्ड हवइ।
इह तो वि सुवल्लहदंसणेण कि कि ण पज्जत्तं।

८१. विपुला (ii) मात्रा १२, १८ १, १८ [प्रथम और तृतीय चरणों की यतियाँ शब्द के मध्य में] सं० ८.४.१५-१६।

उदा०—अभया वयणं णिसुणेवि पंडिया भणइ पुत्ति जं कि पि।
कीरइ कज्जं परिभाविऊण तं सव्वं सुंदरं होइ॥

८२. *रत्नमाला*—मात्रा १३, ५ अन्त ल ल सं० ६.१४ १३-१४।

उदा०—करइ कील सहुँ सहयरिहि मणहरिहि।
इय रयणमाल पद्धडिय पायडिय।

८३. *दोहा*—मात्रा १३, ११, १३, ११ सं० ८.६ (अष्टक)

उदा०—जाणमि वणि गुणगणसहिउ परजुवईहि विरत्तु।
पर महु अंबुले हियवडउ णउ चिंतेइ परत्तु॥
(८.६.१-२)

८४. *सेंढिका*—मात्रा १४, १६ अन्त स गण (⏑ ⏑ —) सं० ४.१४.३-४।

उदा०—तित्तिरसद्दालावणिया पारेवय सम णरभोयणिया।
मिच्छियभउह कुलक्खणिया सा छिज्जइ छेयल्लहिं भणिया॥

८५. वस्तु —मात्रा १५ + २७ + २६ + दोहा सं० ८.३६ तथा सन्धि १० में प्रत्येक कडवक के आदि में।

उदा०—थोमि विहयहँ सलिले जलयरहँ।
गमणागमणायरहँ पायमग्गु जइ कह व दीसइ।
आदंसणे पडिबिंबु हत्थगेज्झु जइ कह व सीसइ।
पारयरसु जइ सुइमुहे इह थिरु होई णिरुत्तु।
तियहो चित्तु पुरिसहो उवरि तो ण चलइ अणुरत्तु॥
(८.३६.१–५)

८६. *चित्रलेखा*—मात्रा १६ + ८ अंत ज गण (⏑ – ⏑) स० २, ६, ८. १५।
(पद्धडिया)

उदा०—तहो सोक्ख वि को वण्णेवि सक्कु सक्कु वि असक्कु।
पद्धडिया णामें *चित्तलेहं* पयविसम एह।
(२६.११-१२)

८७. *पादाकुलक*—मात्रा १६ + १० अंत ग सं० ६.१६।

उदा० - सो झत्ति वि उड्ढम्मुहुजाओ' णिसुणिवि तहो राओ
विसमपओ इय *पायाउलओ*' सोलह-दह-कलओ।
(६.१६.१३-१४)

८८. *मणिशेखर*- मात्रा २० + १० अंत ल ग सं० ११.२१

उदा०—दुसहजलतिसए फुट्टेइ जीहादलं सरइ जणु तरुतलं।
भणिउ इय छंदु णामेण *मणिसेहरो*' विसमपयमणहरो
(११.२१.११-१२)

८९ *विषमवृत्त*—मात्रा ३० + ६ अंत ग ल सं० १०४।

उदा०—उद्धकेसु भीमवेसु आहवे अजेउ कूरचित्तुणं कयंतु।
पीणपीवरत्थणीकुरंगिणीए जुत्तु दुण्णिवारु मोट्टियारु।
(१०.४.१४-१५)

(खण्ड घ--विषमवृत्त वर्णिक

९०. *विषमवृत्त* वर्ण ३ + १२ सं० ११.१।
ज (⏑ – ⏑) + ज ४

उदा०—विचित्तु' ण देव वि जाणहिं णारिचरित्तु।
अयाणुं अहं किह जाणमि ताहे पमाणु।
(११.१.५-६)

९१. *मानिनी*—वर्ण ८ + ४ सं० ११.२० ।

र ज ग ग + र ल

उदा०—णं असालिया समत्थं दिव्व सत्थ
एस माणिणी णिरुत्तु छंदु वुत्तु

(११.२०-२२-२३)

९२. *विषमवृत्त*—वर्ण १२ + ६ सं० १०.७ ।

ज ४ + ज २

उदा०—पमत्तु समांसलगत्तु मयंगु करंतु पसंगु ।
घणम्मि णिबद्धु वणम्मि असज्झें झसो जलमज्झे ।

(१०.७.६-७)

खण्ड ङ—सन्धि व कडवक क्रमानुसार छन्द-योजना

सन्धि-क्रमानुसार छन्द-योजना

सन्धि *कडवक व छन्द नाम*

१. १, २, ४, ९ पद्धडिया (१४): ३, ८, १० अलिल्लह (१२); ५ पादाकुलक (१५क), ६ भुजंगप्रयात (५८); ७ प्रमाणिका (४५): ११ शशितिलक (२३); १२ पादाकुलक (१५) ख ।

२. १, २, ४, ५, ६, १५ अलिल्लह (१२); ३, १२, १४ पद्धडिया (१४); ७ मध्यम (३६); ८ रसारिणी (४८); ९ चित्रलेखा (८६); १० विद्युल्लेखा (७४ क); ११ करिमकरभुजा (२); १३ त्रोटक (५६) ।

३. १ रमणी (५७); मन्दाक्रान्ता (६९), शार्दूलविक्रीडित (७१); २, ८, ११, १२ पद्धडिया (१४); ३, ७ अलिल्लह (१२), ४ मालिनी (६५), ५ मत्तमातंग (१७) ६ दोधक (५३), ९ कामवाण (४०); १० समानिका (४७) ।

४. १ मदनविलास (५), २ ३, ६, ८, १० अलिल्लह (१२), ४ त्रोटनक (१३), ५ पादाकुलक (१५), ७ मदन (६), ९ मदनावतार (१२), १२ आणंद (१), १३ इन्द्रवज्रा (४९); उपजाति (५०); उपेन्द्रवज्रा (५१), १४ मंजरी (२५); खंडिका (८४); गाथा (७८) ।

५. १, ६ पद्धडिया (१४); २, ३, ८, १० अलिल्लह (१२); ४ चप्पइ (२०); ५ मौक्तिकदाम (५९); ७ चन्द्रलेखा (४); ९. वसन्तचत्वर (६०) ।

६. १, ७, ९, १३ पद्धडिया (१४); २, १५ मधुभार (७); ३ तोमरेख (१०); ४, ८, १७, १८ अलिल्लह (१२); ५ हेला (२८); ६ मंदयार (२१); १० अमरपुरसुंदरी (८); ११ कामवाण (४०); १२ चन्द्र-

लेखा (४); १४ रत्नमाला (८२); १६ पादाकुलक (८७); १९ मदन (६); २० मदनावतार (२२)।

७ १ वंशस्थ (६१); २, ३, ५, ९, १३, १६ अलिल्लह (१२); ४ मागधन-कुडिया (२७); ६ मदनावतार (२२), ७ उर्वशी (१६), ८ कामलेखा (३१), १०, ११, १४, १५, १७ पद्धडिया (१४), १२ शालभंजिका (३०); १६ विलासिनी (१६), १८ दिनमणि (७०),

८. १ वसन्तचत्वर (६०), २, ३, ५, ७, ८, ६, १०, १४, १७, १८, १९, २१, ३० से ३५, ३८, ३६, ४०, ४२, ४३ पद्धडिया (१४), ४ गाथा (७७), ६ दोहा (८३), ११, १२, २२ पादाकुलक (१५), १३ कामावतार (५५), १५ चित्रलेखा (८६), १६ विलासिनी (१६), २० सारीय (२४), २३ उष्णिका (४४); २४ चित्रा (६६), २५ चारुपद-पंक्ति (६), २६ भ्रमरपदा (३२), आवली (१८); २७ मदनावतार (२२), २८ मदन (६) २६ चंडपालदंडक (७३), २६ चन्द्रलेखा (४); ३६ वस्तु (८५); ३७ पृथिवी (६८), ४१ रासाकुलक (२६), ४४ मौक्तिक-दाम (५६)।

६. १ विलासिनी (१६; २, ४, ५, १६, १६, २३ अलिल्लह (१२); ३ कुसुम-विलासिनी (३), ६ विसिलोयछंद (११); ७ विज्जुला (३५); ८, १७, १८, २१ २२ पद्धडिया (१४); ६ सिद्धक (४१); १० मुखंगलीला खंडक (७४); ११ अमरपुरसुन्दरी (८), १२ चारुपदपंक्ति (६); १३ मदन (६); १४ मौक्तिकदाम (४३); १५ तोणक (६३); २० समानिका (४७)।

१०. १, निःश्रेणी (५४); २ विलासिनी (१६); ३ पंचचामर (६८); ४ विषमवृत्त (८६); ५ सोमराजी (४३); ६, ८, ६, १० पद्धडिया (१४); ७ विषमवृत्त (९२)।

११. १ विषमवृत्त (६०); २ मदिरा (३८); ३, ८, ९, १३, १४, १५ पद्धडिया (१४); ४, ५, ७, १०, ११ अलिल्लह (१२); ६ षट्पदी (३६); १० स्रग्विणी (६२); १२ विलासिनी (१६); १६, १६ कुवलयमालिनी (२६); १७ शशितिलक (७२); १८ मदारदाम (६४); २० मानिनी (६१); २१ मणिशेखर (८८); २२ आणंद (१)।

१२. १, ७, ८, १० पद्धडिया (१४); २ अनुसारतुला (४६ क); ३ विद्युन्माला (४६); ४ चन्द्रलेखा (४); ४ अलिल्लह (१२); ६ मदनावतार (२२); ६ भुजंगप्रयात (५८)

खण्ड च—कडवकों के आदि अन्त पद्य (ध्रुवक या घत्ता द्विपदी आदि)।

संधि	कडवकों के आदि में	मात्रायें	कडवकों के अन्त में	मात्रायें
१	×	×	घत्ता चतुष्पदी	१५ + १२ = २७
२	×	×	षट्पदी	६ + ८ + १२ = २६
३	×	×	चतुष्पदी	१५ + १२ = २७
४	×	×	,,	,,
५	द्विपदी	१६ + १२ = २८	षट्पदी	१३ + ७ + १४ = ३४
६	आणाल	१२ + ८ + १० = ३०	चतुष्पदी	८ + १४ = २२
७	वंशस्थ	ज त ज र	,,	९ + १२ = २१
८	×	×	,,	१३ + १४ = २७
९	×	×	,,	१३ + १६ = २९
१०	वस्तु	देखो (८५)	षट्पदी	६ + ६ + १२ = २४
११	रचिता	१६ + १२ = २८	द्विपदी	२३
१२	×	×	षट्पदी	१२ + ८ + १२ = ३२

मूलपाठ-विषयसूची

सन्धि १

(१) पंच नमोकार मन्त्र (२) कवि-विनय व जम्बूद्वीप-भरतक्षेत्र (३) मगध देश का वर्णन (४) राजगृह नगर वर्णन (५) राजा श्रेणिक का वर्णन (६) विपुलाचल पर महावीर का समोसरण (७) राजा की वंदन-यात्रा (८) विपुलाचल-दर्शन (९) समोसरण वर्णन (१०) राजा श्रेणिक का सद्विचार (११) जिनेन्द्र-स्तुति (१२) त्रैसठ शलाका पुरुष।

सन्धि २

(१) राजा श्रेणिक का गौतम गणधर से प्रश्न (२) अंगदेश का वर्णन (३) चंपानगरी का वर्णन (४) राजा धाईवाहन की प्रशंसा (५) ऋषभदास सेठ की गुण-गाथा (६) अर्हद्दासी सेठानी तथा सुभगगोप का गुण-वर्णन (७) गोप का मुनिराज-दर्शन (८) पंचनमोकार मंत्र की प्राप्ति (९) णमोकार मंत्र का प्रभाव (१०) व्यसनों के दुष्परिणाम (११) चोरी के कुफल (१२) गंगानदी का वर्णन (१३) गोप-क्रीड़ा (१४) नदी में एक खूंट से फंसकर सुभगगोप की मृत्यु (१५) पंच णमोकारमंत्र की महिमा।

सन्धि ३

(१) सेठानी का स्वप्न (२) स्वप्न-फल (३) सुदर्शन का जन्म (४) सेठ के घर पुत्र-जन्मोत्सव (५) प्रकृति ने भी जन्मोत्सव मनाया (६) पुत्र का नामकरण (७) बाल क्रीड़ा (८) बालक का विद्यारंभ (९) नाना विद्याएँ और कलाएँ (१०) शरीर के सुलक्षण (११) युवक सुदर्शन के प्रति नगर की नारियों को मोह (१२) नारियों का अनुराग।

सन्धि ४

(१) सुदर्शन का मित्र कपिल ब्राह्मण (२) मनोरमा-दर्शन (३) मनोरमा का सौन्दर्य (४) मनोरमा का परिचय (५) कामशास्त्रानुसार स्त्रियों के लक्षण (६) देश-देश की स्त्रियाँ कैसी होती हैं (७) नारी प्रकृति (८) नारी के संकीर्ण भाव (९) स्त्री की भाव-दृष्टियाँ (१०) स्त्री का अशुद्ध भाव (११) इंगित वर्णन (१२) त्याज्य स्त्रियों के लक्षण (१३) सौभाग्यशाली स्त्रियों के लक्षण (१४) स्त्रियों के शुभ और अशुभ लक्षण (१५) मनोरमा की काम-दशा।

सन्धि ५

(१) मनोरमा की कामपीड़ा (२) सुदर्शन के पिता की पुत्र-विवाह सम्बन्धी चिंता (३) वर-कन्या के पिताओं की बातचीत (४) ज्योतिषी द्वारा लग्न-शोध और

विवाह (५) विवाहोत्सव (६) मध्याह्न भोजन (जेवनार) (७) सूर्यास्त-वर्णन। (८) रात्रि वर्णन (९) वर-वधू की काम क्रीड़ा (१०) सूर्योदय-वर्णन।

सन्धि ६

(१) ऋषभदास का मुनि-दर्शन (२) मद्यपान के दोष (३) मांस भक्षण के दोष (४) मधुपान के दोष (५) जीवों के भेद व हिंसा से पाप (६) असृषा आदि व गुणव्रत (७) सामयिक आदि शिक्षा व्रत (८) पात्र-दान का स्वरूप और फल (९) रात्रि भोजन के दोष (१०) रात्रि-भोजन से अन्य सब साधनाओं की निष्फलता (११) रात्रि-भोजन के कुपरिणाम (१२) रात्रि भोजन का फल दरिद्रता (१३) रात्रि भोजन त्याग से उत्पन्न सुख (१४) स्त्रियों के रात्रि-भोजन के सुफल (१५) स्त्रियों के रात्रि भोजन से दुष्परिणाम (१६) मधु बिन्दु दृष्टान्त (१७) दृष्टान्त संसार का रूपक (१८) सेठ का स्वपुत्र को लोक-व्यवहार का शिक्षण (१९) राजसभा योग्य आचरण (२०) ऋषभदास की सुदर्शन को गृहभार सौंपकर मुनि दीक्षा और स्वर्ग-गमन (२१)।

सन्धि ७

(१) सुदर्शन का सुखी जीवन (२) सुदर्शन पर कपिला का मोह (३) कपिला की विरह वेदना (४) सुदर्शन से कपिला की भेंट और निराशा (५) वसन्त का आगमन (६) नाना वादित्रों की ध्वनि (७) राजा और प्रजा की उपवन-यात्रा (८) वन की वृक्षावली का विलासिनी सदृश सौंदर्य (९) रानी द्वारा मनोरमा की प्रशंसा (१०) रानी द्वारा कपिला का भर्म ज्ञान (११) कपिला का मर्म-प्रकाशन व रानी का उपहास (१२) रानी की कुत्सित प्रतिज्ञा (१३) उद्यान की रगरेलियाँ (१४) कानन और कामिनी विलास (१५) प्रेमियों की वक्रोक्तियाँ (१६) सरोवर की शोभा (१७) रमणियों की जलक्रीड़ा (१८) जलक्रीड़न में आसक्त नारियों की शोभा (१९) अभया रानी का साज श्रृङ्गार।

सन्धि ८

(१) राजमन्दिर की शोभा (२) अभया की विरह-वेदना (३) पंडिता का रानी को सम्बोधन (४) रानी का उन्माद (५) पंडिता का रानी को पुनः हितोपदेश (६) रानी का प्रत्युत्तर (७) पंडिता द्वारा शील की प्रशंसा (८) स्त्री-हठ दुर्निवार है (९) भवितव्यता टल नहीं सकती (१०) दुर्भावना की जीत (११) पंडिता द्वारा पुतलों की कल्पना (१२) द्वारपालों से संघर्ष (१३) द्वारपालों को पंडिता की धमकी (१४) द्वारपालों का वशीकरण (१५) सुदर्शन को अपशकुन हुए (१६) श्मशान का दृश्य (१७) सायंकाल का दृश्य (१८) कामिनियों की काम लीलाएँ (१९) वेश्याएँ और उनके प्रेमी (२०) पंडिता का सुदर्शन को प्रलोभन (२१) अभया के प्रेम का दर्शन (२२) पंडिता का सुदर्शन को जबर्दस्ती राजप्रासाद में ले जाना (२३) रानी के शयनागार में सुदर्शन का धर्म-संकट (२४) सुदर्शन की धर्म-भावना व भीष्म-प्रतिज्ञा

(२५) अभया का प्रेम-प्रस्ताव (२६) उसके प्रेम को स्वीकार करने के सुख (२७) देवों में काम विकार के पौराणिक दृष्टान्त (२८) अभया की लुभाऊ काम-चेष्टाएँ (२९) अभया की सुदर्शन को भर्त्सना (३०) अभया का अन्तिम प्रलोभन और धमकी (३१) सुदर्शन और अभया की विरोधी मानसिक दशाएँ (३२) सम्यक्चारित्र की दुर्लभता (३३) अभया का पश्चात्ताप (३४) अभया का कपट-जाल (३५) पुरुष और स्त्री का चित्तभेद (३६) स्त्री क्या नहीं कर सकती ? (३७) राजा को खबर और उसका रोष (३८) भटों की अपनी-अपनी डींग (३९) खबर पाने पर मनोरमा की दशा (४०) मनोरमा विलाप (४१) वह सुख-संस्मरण (४२) इधर मनोरमा और उधर सुदर्शन का चिंतन (४३) व्यन्तर देव द्वारा सुदर्शन की रक्षा (४४) धर्मध्यान का प्रभाव।

सन्धि ९

(१) व्यंतर देव की युद्धलीला (२) भट-भार्याओं की वीरतापूर्ण कामनाएँ (३) राजा के सैन्य का भीषण संचार (४) राजा और निशाचर की सेनाओं का संघर्ष (५) संग्राम में उठी धूलिरज का आलंकारिक वर्णन (६) रुधिरवाहिनी का आलंकारिक वर्णन (७) हस्त युद्ध (८) राक्षस और नरेश की परस्पर गर्वोक्तियाँ (९) दोनों मल्लों का युद्ध (१०) निशाचर राजा के हाथी पर आ कूदा (११) फिर दोनों रथारूढ़ हुए (१२) दोनों का रथ युद्ध (१३) निशाचर की पराजय व मूर्छा (१४) निशाचर की विक्रियाएँ (१५) निशाचर और राजा का विक्रियायुद्ध (१६) निशाचर के दुगने-दुगने मायारूप (१७) सुदर्शन द्वारा राजा की रक्षा (१८) राजा द्वारा सुदर्शन से क्षमा याचना (१९) राजा का अर्द्धराज्य समर्पण व सुदर्शन द्वारा अस्वीकार (२०) राजा द्वारा प्रलोभन तथा सुदर्शन का वैराग्य (२१) सुदर्शन द्वारा जीवन की क्षणभंगुरता का निरूपण (२२) संसार की क्षणभंगुरता से पूर्व महापुरुषों में विरक्ति के उदाहरण (२३) राजा द्वारा सुदर्शन की स्तुति।

सन्धि १०

(१) जिन मन्दिरों का आलंकारिक वर्णन (२) जिनेन्द्र स्तुति (३) विमलवाहन मुनि का वर्णन (४) व्याघ्र भील का वर्णन (५) व्याघ्र भील से संग्राम (६) सुदर्शन के पूर्व जन्मों का वृत्तान्त (७) इन्द्रियों की लोलुपता के दुष्परिणाम (८) इन्द्रियों के वशीभूत हुए देवों व महापुरुषों की विडम्बना (९) इन्द्रियविजय के महा सुफल (१०) नरजन्म और धर्म की दुर्लभता।

सन्धि ११

(१) राजा धाईवाहन का वैराग्य (२) गोचरी के समय नगर में सुदर्शन मुनि की चर्चा (३) मुनिधर्म का पालन (४) सुदर्शन मुनि की साधनाएँ (५) पंडिता ने देवदत्ता को सुदर्शन का पूर्ववृत्त सुनाया (६) देवदत्ता की भीषण प्रतिज्ञा (७) सुदर्शन मुनि विहार करते हुए पाटलिपुत्र पहुँचे। (८) पंडिता ने देवदत्ता को

सुदर्शन का परिचय कराया। (९) रत्न खचित कपाटों को देख सुदर्शन मुनि का वैराग्यभाव (१०) विलासिनी द्वारा मुनि को प्रलोभन (११) विलासिनी की कामलीला व मुनि की निश्चलता (१२) देवांगना के विमान का वर्णन (१३) मुनिराज के ऊपर आकर विमान कैसे स्थिर हुआ (१४) देवांगना का रोष (१५) व्यंतरी का पूर्वजन्म स्मरण व मुनि का उपसर्ग (१६) भूतों और वेतालों की उद्वेगकारिणी माया (१७) महान् उपसर्गों के बीच सुदर्शन मुनि की स्थिरता (१८) व्यंतरी का घोरतर उपसर्ग और मुनि की वही निश्चलता (१९) सुदर्शन का पूर्व उदाहरणों का स्मरण और स्वयं दृढ़ रहने का निश्चय। (२०) रक्षक निशाचर व्यंतरी को ललकारता है। (२१) शिशिर और ग्रीष्म बाणों का प्रयोग। (२२) निशाचर द्वारा वर्षा बाण का प्रयोग व व्यंतरी का पराजय।

संधि १२

(१) माया गज का निर्माण और उस पर आरूढ़ हो सुरेन्द्र का आगमन (२) इन्द्र द्वारा सुदर्शन केवली की स्तुति। (३) इन्द्र की स्तुति हो जाने पर कुबेर द्वारा समोसरण की रचना। (४) केवली भगवान के विशेष अतिशय (५) सुदर्शन केवली का उपदेश व व्यंतरी का वैराग्यभाव (६) व्यंतरी व नगरजनों का सम्यक्त्वधारण व मुनिराज का मोक्षगमन (७) पंचनमोकार का महात्म्य (८) इस कथा की श्रुत परम्परा। (९) कवि नयनन्दी की गुरु परम्परा (१०) काव्य रचना का स्थान, राज्य व काल।

णयणंदि-विरइयउ

सुदंसण-चरिउ

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥
इय[1] पंच-णमोकारइँ लहेवि गोउ वि[2] हुवउ[3] सुदंसणु ।
गउ मोक्खहो अक्खमि तहो चरिउ वर-चउवग्ग-पयासणु ॥ ध्रुवकं ॥

जसु रूउ णियंतउ सहसणेत्तु हुउ विंभियमणु णउ तित्ति[4] पत्तु ।
जसु चरणंगुट्ठें सेलराइ टलटलियउ[5] चिरजम्माहिसेइ ।
महि कंपिय उच्छलिय[6] समुद्द डोल्लिय गिरि गलगज्जिय गइंद[7] ।
ओसरिय[8] सीह जग्गिय फणिंद उद्धसिय[9] झत्ति णहे ससि-दिणिंद ।
उत्तसिय ल्हसिय गुरु दिक्करिंद आसंकिय विज्जाहर सुरिंद ।
जसु सिद्धि-पुरंधिए रत्तियाइँ[10] तव-सिरि दूई पट्ठविय णाइँ ।
जसु केवलणाणें[11] जगु गरिट्ठु करयल-आमलु व असेसु दिट्ठु ।
तहो सम्मइ-जिणहो पयारविंद वंदेप्पिणु तह अवर वि जिणिंद ।

घत्ता—अह एक्कहिँ दिणि वियसिय-वयणु मणे णयणाणंदि वियप्पइ ।
सुकवित्तें[12] चाएँ पोरिसेण जसु भुवणम्मि[13] विढप्पइ ॥ १

२

सुकवित्तें ता हउँ अप्पवीणु चाउ वि करेमि किं दविण-हीणु ।
सुहडत्तु तह व[1] दूरें णिसिद्धु एवंविहो वि हउँ जस-विलुद्धु ।
णिय-सत्तिए तं विरयेमि कव्वु पद्धडिया-बंधें जं अउव्वु ।

---

१ १ क ख इह । २ क गोवउ, ग घ गोविउ । ३ ग घ हुअउ । ४ ग घ तेत्ति । ५ ख टलटलिअ य । ६ ख उच्छिळ्ळिय । ७ ख मइंद, ग घ गयंद । ८ ग घ ओरसिय । ९ ख ओसरिय, ग घ ओरसिय । १० ख ग घ रत्तियाए । ११ ख °ताए । १२ क सुकहत्तें । १३ ग घ भुवणयले ।

२. १ ख तवहो ।

छुडु कीरइ जिण-संभरणु चित्ते ता सइं जि पवट्टइ[2] मइ कवित्ते ।
जल-विंदु उ णलिणीपत्तजुत्तु कि सहइ ण मुत्ताहल-पवित्तु[3] ।
अंतयड सुकेवलि सुप्पसिद्ध ते दह दह संखए गुणसमिद्ध ।
रिसहाइ[4]-जिणिंदहँ तित्थे[5] ताम इह होंति चरिमतित्थयरु जाम ।
तहो तित्थे जाउ कयकम्महाणि पंचमु जो तहिँ अंतयडणाणि ।
णामेण सुदंसणु तहो चरित्तु पारंभिउ आयण्णहु पवित्तु ।
वरतिरिय[6]लोए पिहुजंबुदीवे सोहायमाण रविससि-पईवे ।
दक्खिणदिसाहे सुरमहिहरासु अत्थत्थि[7] भरहु जयसिरि-णिवासु ।
देवुत्तर-कुरुपाविय-विसेसु तत्थ वि[8] सुपसिद्धउ मगहदेसु ।

घत्ता – जहिँ णइउ पओहर[9] मणहरिउ[10] दीसहिँ मंथरगमणिउ ।
णाहहो सायरहो सलोणहो जंतिउ[11] णं वरमणिउ ॥२॥

३

जहिँ पंडुच्छुवणइँ कयहरिसइँ कामिणिवयणाइँ व अइसरसइँ ।
दलियइँ पीलियाइँ पय[1]मलियइँ धुत्तउलाइँ णाइँ मुहगलियइँ[2] ।
जहिँ वेस व कलरवमुह रत्तिय णित्तु सुकरइ धण्ण[3] सुयपंतिय ।
जहिँ छेत्तइँ णं पहियकलत्तइँ वणमासइँ मि[4] ण मेरए चत्तइँ ।
उववणाइँ सुरमणकयहरिसइँ भद्दसाल णंदणवणसरिसइँ ।
कमलकोसे भमरहिँ महु पिज्जइ महुयराहँ अह[5] ण उ जि[6] छज्जइ ।
जहिँ सुमरासण[6] सोहियविग्गह[7] कयसमरालीकेलिपरिग्गह[7] ।
रायहंस वरकमलुक्कंठिय विलसइँ[8] बहुविहपत्तपरिट्ठिय ।

घत्ता—तहिँ पट्टणु णामें रायगिहु अत्थि सुरहँ णावइ णिलउ[9] ।
महि-महिलए णियमुहि णिम्मविउ णाइँ कवोलपत्तु तिलउ ॥३॥

---

२ २ घ पयट्टइ । ३ ख घ मुत्ताहलु विचित्त । ४ घ रिसिहाइ° । ५ घ तेत्थ । ६ ख तिरियए, घ तिरय° । ७ ख अत्थीह, घ अत्थीहु । ८ ख तेत्थ । ९ क पवहइ । १० ख मणहरउ । ११ क भंतिउ ।

३. १ ख पइ° । २ घ मुहगुलियइ । ३ क घ धण्णु । ४ ख घ वि । ५ घ एहओ । ६ ख घ ससरासण° । ७ ख हु° । ८ ख घ विलसहि । ९ क सुरहं वि णाहि णिलउ, टि° सुराणामपि न निलय. एवंभूत , ख सुरहि वण्णह, घ सुरहि वण्णाहि ।

४

उज्जाणवणु व उत्तुंगसालु उल्लसियसोणपेसलपवालु ।
तियसिंदु व विबुहयणहो[1] मणिट्ठु रंभापरिरंभिउ सईं गरिट्ठु ।
वम्महु जिह रइपीईसमिद्धु णहयल[2] परिघोलिरमयरचिंधु ।
वम्महु जिह णिम्मलधम्मसज्जु उप्फुल्लियकुसुमसरु[3] मणोज्जु ।
अणमंथियउअहि व रयणठाणु मणहरणसुरालउ सिरिणिहाणु ।[4]
अणमंथियउअहि व अपयखोहु[5] तह दिव्वतुरयकरिवरससोहु ।[6]
अणमंथियउअहि व अमयजुत्तु परमहिहरिंदउक्कंपचत्तु[7] ।
अणमंथियउअहि व सुरहिवासु असमच्छर[8] जणविरइयविलासु ।
घत्ता —तहि अत्थि कित्ति[9] धवलियभुवणु रिद्धिए हसियसुरेसरु ।
चेल्लणमहएवी[10] परियरिउ सेणिउ णाम णरेसरु ।।४।।

५

णहमणिकिरणअरुणकयणहयलु भुयबल-तुलिय-सवल दिस[1] गयउलु ।
असरिस[2]-कमलणयणु सिरिवहुवरु इहणसउणअणुणियफलु जिह तरु[3] ।
छणससिवयणु कुसुमसर-गुणहरु विसहर-मणुय तियस-तियमणहरु ।
वरकलनिवहहसिय-छण-ससहरु कणयगउरु अहिणवजलहरसरु ।
णियपहविजियदुसहतवरवियरु[4] अणुदिणु णवियपरमपहुजिणवरु ।
अलिउलचिहुरु अमरकरिकरकरु थिरयरगुणहिं विजियसुरमहिहरु ।
जिणवरकहियपवरतिरयणहरु
परियणहिययहरणु गुणगणणिहि दहछहसयलु[5] लहु य अविचलदिहि ।
घत्ता—मरगयमए रयणणियरजडिए थिउ णरवइ सिहासणे ।
णं णिम्मलतारासंवलिए छणमयंकु गयणंगणे ।।५।।

---

४. १ क ख विवुहयण, घ बुहयणहो । २ घ णहयर । ३ ख घ कोमुमसर । ४ यह पंक्ति क मे नही है । ५ क ग पयरबोहु । ६ ग °तियहु सोहु, घ तहिदिट्ठउ रयकरि तियहुसोहु । ७ क उवकंपचत्तु, व उक्कंपवित्तु । ८ ग घ असमच्छुर । ९ क कंति । १० ग घ महएविए ।

५. १ ग घ दिसि° । २ ख असरिसु कमलणयणु, घ असरिस-कमल णयण° । ३ ख अहण सउण अणुणिय जिह फलतरु, ग घ अहण° । ४ क णियपह विजय°; ख ग घ °णवरवियरु । ५ प्रतिषु 'सयल' इतिपाठ. ।

६

तहिं अच्छए जाम रायाहिराओ णरो को वि ता णं[1] मणाणंदु आओ।
णमंसेवि सो जंपए लद्धमाणो अहो देव पत्तो जिणो वड्ढमाणो।
सहालंकिओ सोहए सेलसीमे[2] मयंको व्व नक्खत्तमज्झम्मि वोमे।
तमायण्णिऊ उट्ठिओ जाम राओ तओ झत्ति अत्थाणसंखोहु जाओ।
उरेणं उरो हारसोहाधरेण[3] समुप्पेल्लिओ सेहरो सेहरेणं।
मऊरो व्व मेहागमे हिट्ठु[4] राया हयाणंदभेरी गओ सत्त पाया।
णमंसेवि वीरं गइंदे णरिंदो वलग्गो णवे[5] मेहि णं पुण्णिमिंदो।
रहा जाण जंपाण भिच्चा तुरंगा पयट्टा समुद्दे चला णं तरंगा।
गया मेहगारीए[6] उत्तुंगदेहा विरेहंति विज्जुज्जला णाइं मेहा।
णिओ चल्लिओ लीलए ण सुरिंदो भुयंगप्पयाओ[7] इमो णाम छंदो।

घत्ता—करिमयरछत्तफेणावरिउ तुरयतरंगरहल्लिउ[8]।
धयमालाचलकल्लोलयरु ण समुद्दु उच्छल्लिउ ॥६॥

७

दिणेस-अस्सचंचलो खुरग्गखुण्णभूयलो।
कहिं पि आहओ हओ जवेण णिग्गओ तओ।
सुरिंददंतिभेसओ गलंतगंडगंडओ।
करेणु[1] फाससंगओ कहिं पि धाइओ गओ।
सुरगणाण दुल्लहा चलच्छिलच्छिवल्लहा।
सुणग्गखग्गउब्भडा कहिं पि चल्लिया[2] भडा।
मरालल्लीलगामिणी कहिं पि का वि कामिणी।
जिणिंदभत्तिपेल्लिया हसंति संति चल्लिया।
कहिं पि सेलसंकडे वणे महातरुब्भडे।
धओ धए विलग्गओ रहो रहेण भग्गओ।
गओ गएण पेल्लिओ भडो भडेण वोल्लिओ।

६. १ ग घ 'तो ण'। २ क सीलसीमे। ३ क सोहावरेणं। ४ क हिट्ठ। ५ घ णवो। ६ क सारीस। ७ क भुयंगप्पहाओ। ८ क रहवल्लिउ।

७ १ क ग करेणु। २ ख खोल्लिया, ग खुल्लिया।

अहो भडप्पिमापरो[3]　　णसेइ[4] एस वेसरो।
णराहिवाणुराइणी　　खिवेसए विलासिणी।
इमो सुछंदु उत्तओ[5]　　पमाणिया णिउत्तओ[6]।
घत्ता—जिणदंसणम्मि अणुरत्तु जणु हरिसें कहिँ मि ण मंतओ।
रेहइ चंदुग्गमे मयरहरु णं कल्लोलहिँ जंतओ॥७॥

८

दीसइ पत्थिवेण जणमणहरु　　तुंगसिहरु[1] विउलइरि महीहरु।
करिगज्जियहिँ पडहु[2] णं वायइ[3]　　कोइलकलरवेहिँ णं गायइ।
वरहिणीहिँ[4] णडियहिँ णं णच्चइ　　णं कुरंगउड्डाणहिँ[5] वच्चइ।
तिणरोमेहिँ णाइँ पुलइज्जइ　　णिज्झरेहिँ णं बहुलु पसिज्जइ।
इय चाडुय करेइ जगवंदहो　　णं दरिसंतु भत्ति जिणइंदहो[6]।
तिहुयणसिरिहे णाहु कहिँ आवइ　　आयओ[7] वि कहिँ खणु वि चिरावइ।
हउँ कयत्थु जिणरिद्धिविसेसें　　पभणइ[8] महिहरिदु हरिघोसें[9]।
अह को संपयाए णउ गज्जइ　　विरलउ णियगुणेहिँ पर लज्जइ।
घत्ता—सक्काणए धणयविणिम्मियउ समवसरणु महिवालें।
दीसइ गयणयले परिट्ठियउ माणससरु व मरालें॥८॥

९

धणुसहस पंच महि परिहरेवि　　थिउ जोयणेक्कु णहि[1] वित्थरेवि।
जहिँ चउदिसु मंदर छाय दिंति　　सोहइ सुवण्णसोवाणपंति।
महि इंदणीलमाणिक्कबद्ध　　जोयणपमाण गयणयल सुद्ध।
चउमाणथंभ जिणकेयणाइँ　　परिहा वल्ली वणउववणाइँ।
धयकप्परुक्ख सुरहर महंत　　कोट्टय मणिथूह[2] परिप्फुरंत।
मंगलदव्वट्ठ पवित्त दित्त　　चउ जक्ख धम्मचक्केण जुत्त[3]।

---

७. ३ क ख फरो। ४ ख ग घ तसेवि। ५ ख ग घ इमो वि छंदु वुत्तओ। ६ ग घ णिरुत्तओ।

८. १ क सिहरि। २ क ख पयडु। ३ क वाहइ। ४ ख वरहिणेहि। ५ ख उड्डाणेहि। ६ ख जिणयंदहो। ७ क आगओ। ८ ख भणइ व। ९ क कयघोसें।

९. १ ग घ महि। २ क थूवह; ग घ थूव। ३ क ग घ चउसट्ठि जक्ख चक्केण जुत्त।

मेहलउ तिण्णि हरिवीढु रुंदु तहि सहसवत्तु कणयारविंदु ।
तहो उवरि परिट्ठिउ वड्ढमाणु अंगुलचउक्क अच्छिज्जमाणु ।
पुव्वासासम्मुहु णिहयतंदु सण्णाणवंतु इंदाइवंदु ।
अणिमिसअरोसणीरायणेत्तु णहकेसविड्ढितणुछाहिचत्तु ।

घत्ता—सियचमरछत्तदुंदुहिसहिउ कुसुमवाससंवलियउ ।
जिणु सहइ सिद्धिवहु डोलियहे णाइँ विवाहहँ चलियउ[4] ।।९।।

१०

पेच्छिवि जिणवरु सेणियराएँ चिंतिउ णियमणम्मि अणुराएँ ।
मणुयत्तहो फलु धम्मविसेसणु[1] मित्तहो फलु हियमिय[2] उवएसणु ।
विहवहो फलु दुत्थियआसासणु तक्कहो फलु वरसक्कय[3] भासणु ।
सुहडहो फलु भीसणरणमंडणु[4] तवचरणहो फलु इंदियदंडणु ।
सम्मत्तहो फलु कुगइविहंसणु[5] सुयणहो फलु परगुणसुपसंसणु ।
पंडियमइफलु पावणिवत्तणु मोक्खहो फलु पुणरवि अणिवत्तणु ।
जीहाफलु असच्चअवगण्णणु मुकइत्तहो फलु जिणगुणवण्णणु ।
पेम्महो फलु सब्भावणिहालणु सुपहुत्तहो[7] फलु आणापालणु ।
णाणहो फलु गुरुविणयपयासणु लोयणफलु जिणवरपयदंसणु ।

घत्ता—इय चिंतिवि पारद्धउ थुणहुँ संतुट्ठेण णरिंदेँ ।
कइलाससेलसिहरम्मि ठिउ जिह पुरएउ सुरिंदेँ ।

११

जय अमरगिरिण्हविय सयमहिण जगतिलय ।
जय भविय-सरकमल[1]दिवसयर सुहणिलय ।।
जय अणह चउदिसु वि पडिफुरिय[2] चउवयण ।
जय गलियमलपडल कमलदलसमणयण[3] ।।

---

९ ४ क विवाहहुं चल्लिउ ।

१०. १ ख धम्मु विसेसणु । २ ख हिउ मिउ, ग हि समिय° । ३ क सक्कइ° । ४ क भीसण नर मंडणु । ५ ग घ विहडणु । ६ क °वत्तणु । ७ ग घ सपहुत्तहो ।

११. १ ख कमलसर° । २ ख पडिफुडिय । ३ ग घ दलकमल ।

जय अरुह कुसुमसरइसुपहरअवहरण ।
जय जणणजरमरणपरिहरण सुह-चरण ॥
जय धणयकयसमवसरणागयजणसरण ।
जय विमलजसपसरभुवणयलसियकरण[4] ॥
जय विगयभय विसयरइजलणणवजलय ।
जय सहसयरसरिसपरिफुरियजुइवलय[5] ॥
जय रसियसुरभुयबुहजणियमणहरिस ।
जय चरमजिण[6] तियसकयकुसुमघणवरिस ॥
जय अमय[7] झुणि-समय-परसमय-उवसमण[8] ।
जय चलिय-चलचमर सिवणयर-कय-गमण ॥
जय अमर-णर-खयर-विसहरहि[9] अहिमहिय ।
जय परमपर सयल-अइसयहि णिरु सहिय ॥
(ससितिलओ णाम छंदो)

घत्ता—इय समवसरणे सेणिउ ससिरे कयकरमउलि पहिट्ठउ[10] ।
चिरु भरहु व जिणवरु संथुणिवि णरकोट्ठम्मि वइट्ठउ ॥११॥

१२

पुणु कयसुरणरविसहरसेवं पुच्छइ सेणिउ गणहरएवं ।
जिण चक्कवइ सिरीहरि राया पडिहरि इह केत्तिय[1] संजाया ।
तो वीराणए जणियाणंदो अक्खइ गणहरु सुणइ णरिंदो ।
रिसहो अजिओ संभवणाहो अहिणंदणु सुमई पउमाहो ।
पुणु सुपासु चंदप्पहु संसो पुप्फयंतु सीयलु सेयंसो ।
वासुपुज्जु पुणु भवतरुदंती विमलु अणंतो धम्मो संती ।
कुंथू अरु मल्ली मयणासो मुणिसुव्वउ णमि णेमी पासो ।
वड्ढमाणु चरिमिल्लु जिणिंदो भरहो-सयरो महव[2]णरिंदो ।
सणकुमारु संती कुंथु यरो णिवइ सुभउमो पउमो पवरो ।

---

११. ४ क सिवकरण । ५ ग घ जुइविलय । ६ ख चरिमजिण । ७ ख अमिय । ८ घ उवसवण । ९ ग घ विसहरिहि । १० क °मउलिय हिट्ठउ ।

१२. १ क कित्तिय । २ क मघव ।

जयसेणो[३] हरिसेणो जाओ बंभदत्तु[४] चक्की विक्खाओ ।
हलहरु विजओ अचलो धम्मो सुप्पहु तह य सुदंसणु णामो ।
नंदी नंदिमित्तु पुणु रामो पउमो णवमो[५] चिंतहि रामो ।
हवइ हरी वि तिविट्ठु दुविट्ठो पुणु सुयंभु[६] पुरुसोत्तमु[७] सिट्ठो ।
णरसीहो पुंडरिओ दत्तो णारायणु कण्हो मयमत्तो[८] ।
आसग्गीओ तारो मेरो महुकीडो णिसुंभु कयवेरो ।
पल्हाओ बलि रामणु[९] सजमो[१०] चरमु[११] जरासंधो[१२] पडिहरिसो ।
इय तिसट्ठिपुरिसहँ सुपवित्तं[१३] अणुकमेण णिसुणेवि चरित्तं[१४] ।
मज्झिम[१५] लोयाणं णिरु[१६] वंदो पायाउलओ एसो छंदो ।

घत्ता—णयणंदियसयलमहीयलेण सेणियराएँ गणहरु ।
कर मउलि करेप्पिणु णयसिरेण[१७] पणविउ भत्तिए गणहरु[१८] ॥१२॥

एत्थ सुदंसण चरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए असेससुरसंथुअं णवेवि वड्ढमाणं जिणं तओ विसओ पट्टणं णयरपत्थिओ पव्वयं समोसरणसंगयं[१९] महापुराण आउच्छणं इमाण कयवण्णणो णाम पढमो संधी सम्मत्तओ ।

संधि ॥ १ ॥

---

१२ ३ ग घ विजयसेणु । ४ ख बंभयत्तु । ५ ख णउमो । ६ क सयंभु । ७ घ पुरिसोत्तमु । ८ घ मयवंतो । ९ क रावणु ख राम्वणु । १० ख जमसो । ११ ख चरिमु । १२ ख ग घ जरासिंधो । १३ ख ग घ सुविचित्ते । १४ ख ग घ चरित्ते । १५ क घ मज्झे । १६ ख °लोया णिय णरु । १७ क ग घ मणहरिए । १८ क जिणवरु । १९ ख संथुई ।

संधि २

१

गुण भरियइँ णाणाचरियइँ णिसुणेवि राएँ वुत्तउ।
पंचपयहँ फलु कहि भवियहँ लहु[1] जेण जेम[2] संपत्तउ। ध्रुवकं।

तं णिसुणेवि वयणु जणमणहरु उल्लवेइ सिरिगोत्तमु गणहरु।
अहो सेणिय णरिंद जगसुंदर जिणचरणारविंदइंदिंदिर।
संपयाए उवहसियपुरंदर णियजसेण पूरियगिरिकंदर।
जिह णिरु अप्पमाणु सायरजलु तिह पुणु पंचणमोक्कारहँ[3] फलु।
एहउ जइवि नो वि णउ रक्खमि संखेवेण कि पि तं अक्खमि।
ईरिउ अरिहंतें[4] दयगेहें जगु चउदह रज्जुय[5] उच्छेहें।
गयणें[6] अणंताणतए थक्कउ तिपवणवलयहिँ वेढिवि मुक्कउ।
हेट्ठए[7] मज्झुप्परि सोहइ इमु वेत्तासणझल्लरिमद्दलकमु।
हेट्ठए णरयविलहिँ अवरुंडिउ मज्झए दीवसमुद्दहिँ मंडिउ।
उप्परि कप्पविहूइविहूसिउ लोयग्गु वि सिद्धहिँ[8] उब्भासिउ।
मज्झलोए नहि अत्थि पहिल्लउ जंबुदीउ अंबुहिवलइल्लउ[9]।
एक्कु[10] लक्ख जोयण वित्थारें सहइ पुण्णससिबिंबायारें।
तहिँ वि मज्झे मंदरु केहउ[11] थिउ णं जगहरहो थंभु विहिणा किउ।

घत्ता—सुरमेलहो तासु जि सेलहो दाहिणदिसहिँ[12] सुमणहरु।
गुणभासुरु थिउ कोडीसरु[13] भरहखेत्तु णं धणहरु[14] ॥१॥

२

तहिँ मणोज्जु रिद्धीए समिद्धउ अत्थि देसु अंगउ सुपसिद्धउ।
निविडण्णोण्णु[1] भिडिय गुरुअज्जुण[2] दुज्जोहणसुभीमगयकयरण।

---

१. १ ख ग घ मे नही। २ ख जेव। ३ क णमोयारहं। ४ ग घ अरहंति। ५ क रज्जउ। ६ ग घ गयणु। ७ ग घ हिट्ठए। ८ ग घ सिद्धिहि। ९ क जंबूदीवंबुहि। १० घ एक्क। ११ ख मज्झि सुंदरु मंदरु। १२ ग घ दिसिहि। १३ घ कोडीभरु। १४ क धणुवरु, घ धणुहरु।

२. १ ग घ णिविडोणोएणु। २ क °अज्जुण।

सरहभीसवाणवलिछाइय भारहसरिस जेत्थु वणराइय ।
सुविसालाइँ सिसिरसाहालइँ अविरलसुरहिपसवसोहालइँ ।
तरुणिकायलग्गिरपोमरयइँ[3] जहिँ उववणइँ व गोउलणियरइँ ।
खत्तसारपरिसाहिय[4] खेत्तइँ बहु करिसणइँ ललियकरजुत्तइँ ।
णियवइरक्खियाइँ[5] दिढकच्छइँ जहिँ गामइँ सामंतसरिच्छइँ ।
सुरयणपरियंचियकल्लाणइँ जहिँ जिणवरसरिसइँ पुरठाणइँ[6] ।

घत्ता—रयणायरु णावइ सायरु तहिँ चंपापुरु छज्जइ ।
बहुसुरहरु विबुह[7]-मणोहरु अह सुरवइपुरु णज्जइ ॥२॥

३

जलपरिहसालगोउरमहल्लु णं समवसरणु धयसंकडिल्लु ।
रामायणु व्व कइयणपगामु लक्खणसमेय[1]रामाहिरामु ।
अह भारहु व्व गुरुकण्णमाणु वावरियपत्थु[2] कणभरियदोणु ।
अह सहइ जाइवित्तेहिँ[3] रुंदु जइगणहिँ अलंकिउ णाइँ छंदु ।
महणत्थिय[4]मंदरतुल्लसोहु चउदिसु अणंतपयजणियखोहु ।
अहवा गयणयलु व भमियमित्तु[5] तमहरमंगल[6]बुहगुरुपवित्तु ।
अहवा पायालु व णायवंतु मणहर[7] पोमावइसोह दितु ।
अहवा वण्णिज्जइ काइँ तेत्थु मणिरयणाइयहुँ ण संख जेत्थु ।

घत्ता—तहिँ राणउ अत्थि सयाणउ धाईवाहणु णामेँ ।
मणहरणउ जणवसियरणउ णं सरु सज्जिउ[8] कामेँ ॥३॥

४

जो अहिणवमेहु[1] वि णउ जलमउ[2] जो सोमु वि अदोसु[3] उज्झियमउ ।
सूरु वि णउ कुवलयसंतावणु वज्जियरयणियरु वि ण विहीसणु ।

---

२. ३ ख पोमारइ । ४ ख परिसोहिय । ५ क णियणिय वइरक्खिय° ।
६ ग घ सुरठाणइं । ७ क विविह ।

३. १ ख समेउ । २ क पंथ । ३ घ जाम° । ४ ग घ मणहत्थिय । ५ क भमइमित्तु । ६ क °बुहु, ख तमहरु मंगलु । ७ ख मणहरु । ८ ख सधिउ ।

४. १ ग घ अहिणउ मेहु । २ क ग घ जडमउ । ३ क अदोस ।

विबुहवइ वि जो सुर ण णिहालउ　　अज्जुणगुणु वि ण गुरुपडिकूलउ।
णरजेट्ठु वि इच्छियं[४]धयरट्ठउ　　बाहुबलि वि जो भरहगरिट्ठउ।
जो रामु वि हलहरु णउ[५] भणियउ　　परवंसग्गि वि णउ अविणीयउ।
जो सामि वि णउ ईसरसंगउ　　सारंगु वि पुंडरियसमग्गउ[६]।
णायवियारणो वि ण मयाहिउ　　सायरो वि णउ झससंखोहिउ[७]।
चउरासु वि जो अक्खरहियकरु　　जो विवक्खं[८]वहणु वि णउ[९] सिरिहरु।
णीसु वि कमलच्छीआलिंगणु　　सगुणधणु वि ण परम्मुहमग्गणु।

घत्ता—तहो रायहो जगविक्खायहो अभया णामें राणी।
रइ कामहो सीया रामहो णं इंदहो इंदाणी ॥४॥

५

अह तहिँ रायसेट्ठि धणरिद्धउ　　रिसहदासु णामें सुपसिद्धउ।
चंदु व सयलउ[१] कुवलयकंतउ　　जिणसमउ[२] व्व सहइ णयवंतउ।
अहवा माहउ[३] व्व सवियाणउ　　अमरेसरवारणु व सदाणउ।
दिणयरउग्गवणु व णिद्दोसउ　　सिसिरयालु णं जणियपओसउ।
माहिसखीरु व सव्वसणेहउ　　वामारत्तु व उण्णयमेहउ।
सव्वाउलु णं पुरवरआवणु　　भोयवंतु फणिवइ व सुहावणु।
सोहइ वायरणु व बहुलक्खणु　　अज्जुणु इव कण्णंतणिरिक्खणु।
चडियसरासणु व्व सुगुणड्ढउ　　महकइकहबंधु व अत्थड्ढउ।

घत्ता—बहुलक्खण तहो सुवियक्खण अरुहदासि णामें पिय।
सइ इंदहो रोहिणि चंदहो सहइ मुरारिहे णं[४] सिय ॥५॥

६

दीहरच्छि रयणावलिभासिय　　णं धम्महँ णयरी आवासिय।
अइपसण्ण कंतिल्ल सुहावह　　ससिरेहा इव कुवलयवल्लह।

---

४. ४ क पत्थिव। ५ ग घ वि ण। ६ क समुग्गउ। ७ क सजल संखोहिउ। ८ ख विवक्खु। ९ ख णय।

५. १ क ख सयल सु°। २ क गणिसमउ। ३ क माहवो, ख नारायणो। ४ ग घ णाइ।

लक्खणवंति य सालंकारिय सुकइकहा इव जणमणहारिय ।
कुंकुमकप्पूरेण पसाहिय वणराइ व तिलयंजणसोहिय ।
उग्गयदिणेससंझ जिह रत्तहुँ दोहिँ वि तहु अण्णोण्णासत्तहुँ ।
तहो सुहओ णामेँ गोवालउ णवकलत्तु जिह भुंभुर[1] भोलउ ।
णिरु छंदाणुवट्टि कइकव्वु व किंपुरिसहँ पिउ मेरुणियंबु व ।
णरवइ व्व गोमहिसीपालणु रमइ भमइ काणणे कयकीलणु ।
कइ[2] जिह तरुपालंबहिँ झुल्लइ हरिणु जेम[3] उड्डाणइ मेल्लइ ।
भमररवाइं व[4] घोरइं मुयइ हरिसोल्लिउ मऊरु जिह णच्चइ ।

घत्ता—तंबागणु वणे चारेविणु आवइ घरहो मणिट्ठहो ।
पहगियमुहु गोवालहिँ सहुँ वासुएउ णं गोट्ठहो ॥६॥

७

ता तम्मि गेहम्मि अच्छंतु पेच्छंतु खेलंतु मल्हंतु जुम्भंतु रुम्भंतु ।
सोवंतु चेवंतु[1] चेट्ठंतु उट्ठंतु णच्चंतु वच्चंतु भासंतु[2] णासंतु ।
तूसंतु रूसंतु[3] सो मंतु अच्चंतु घोसेइ रूसेइ तो सेट्ठि सद्दिट्ठि ।
कोक्केइ[4] हक्केइ गोत्तेण बप्पेण संचत्तअप्पत्त णिक्किट्ठ रे धिट्ठ[5] ।
संसारणित्थार जे कंत ते मंत तं केण कज्जेण जित्थेव[6] तत्थेव ।
घोसेहि दोसेहि[7] णम्मंतु तो वुत्तु गोवेण भावेण भो णाह आराह ।
माहम्मि मासम्मि भीमम्मि रण्णम्मि संझाए वेलाए णिग्गंथु णं पंथु[8] ।
सोक्खस्स मोक्खस्स जोग्गेण[9] मग्गेण[10] जा दिट्ठु हं हिट्ठु सो साहु आराहु ।
वंदेवि वण्णेवि तत्थाउ[11] हउँ[12] आउ एयस्स छंदस्स तो णामु मज्झम्मु[13] ।

घत्ता—सुमहंतरु महु मणिचिंतए रयणिहिँ णिद्द ण ढुक्किय ।
हिंडंती असइ दुचित्ती णं संकेयहो चुक्किय ॥७॥

---

६. १ घ भंभर । २ क क वि । ३ ग व जेम्व । ४ ख वि, ग घ मि ।

७ १ ख चेयतु । २ क भावतु । ३ क रोसंतु । ४ क काकेइ । ५ ग घ रे धिट्ठ णिक्किट्ठ । ६ ख अत्थेव । ७ ख ग घ दोसेहि । ८ क णिपंथु । ९ क जोएण । १० ग घ जोग्गेण । ११ क तत्थाहु । १२ ख हं । १३ क मज्झिम्म, ख मज्झिमु ।

८

संभरंतु साहु णाणसुद्धु[1]　　राइच्छेएण[2] जामए विउद्धु[3] ।
लेवि वण्हि[4] पक्खलंतु संतु　　पत्तओ पएसु तं तुरंतु ।
जाम[5] उण्ह हत्थ बे करेमि　　वारवार तासु अंगि देमि ।
ताम[6] झत्ति उग्गओ दिणेसु　　तो[7] गओ णहेण सो मुणीसु ।
पंचतीसअक्खरा भणेवि　　तत्थ हं पुणो इमे सुणेवि ।
तेण एत्थ तत्थ उच्चरेमि　　किं पि णोवहासणं करेमि ।
तं सुणेवि सिट्ठिणा पवुत्तु　　दुल्लहो जयम्मि एसु मंतु ।
झाइ चित्ते वज्जिऊण तंदु　　जाणिमो रसारिणी वि छंदु ।

घत्ता — झायहि वर पणतीसक्खर सोलह पंच दु एक्कु वि ।
सिरि मुहि गले तह वच्छत्थलि णाहिकमले कमसेण वि ॥८॥

९

एयहं फलेण गुणमणिणिहाण　　चउरंससठाण ।
वरवज्जरिसहणारायणाम　　संहणण[1]धाम ।
अट्ठोत्तरसयलक्खणणिवास　　हयकम्मपास ।
चउतीसातिसय विसेससोह　　उप्पण्णबोह ।
देविंदमउडमणिघट्ट[2]पाय　　गयरोसराय ।
सोमत्तजित्त[3]लछणयंदकंति　　जिणवर हवंति ।
चक्कवइ चउदहरयणसिद्ध　　णवणिहिसमिद्ध ।
बलएव वासुएव वि महल्ल　　पडिवक्खमल्ल ।
कप्पामर सोलहविह महंत　　गुणइड्ढिवंत ।
णवअणुदिसपंचाणुत्तरिल्ल　　तिहुयणि महल्ल ।
तहो[4] सोक्ख वि को वण्णेवि सक्कु　　सक्कु वि असक्कु ।
पद्धडिया णामें चित्तलेह　　पयविसम एह ।

---

८. १ ख °सुद्धु । २ क रायच्छेयए; ख राएच्छिय; ग घ राइच्छेय । ३ ख विउद्धु । ४ क वएहु । ५ ख जाव । ६ ख ताव । ७ क भो ।

९. १ क संहयण, ग घ संहणय । २ ख घ घिट्ठ, घ मउडणिघट्ठ । ३ क सोमत्तजुत्त; ख सोमित्तजित्त । ४ क तहुं ।

घत्ता—पंच वि गुरु छुडु सुमरइ णरु अइसय भत्तिए जुत्तउ।
ण चिरावइ मोक्खु वि पावइ णहे गमु केत्तियमित्तउ ॥९॥

१०

आयणि[1] पुत्त जइ[2] आगमे सत्त वि वसण वुत्त।
सप्पाइ दुक्खु इह दिंति एक्क भवे दुण्णिरिक्खु।
विसय वि ण भंति जम्मंतरकोडिहिँ दुहु जणंति।
चिरु रुद्ददत्तु णिवडिउ णरयण्णवे विसय[3]जुत्तु।
वड्डु आयरेण जो रमइ जूउ बहुडप्फरेण।
सो च्छोहजुत्तु आहणइ जणणि सस घरिणि पुत्तु।
जूयं रमंतु णलु[4] तह य जुहिट्ठिल्लु विहुरु पत्तु।
मंस[5]ासणेण वड्ढेइ दप्पु दप्पेण तेण।
अहिलसइ मज्जु जूउ[6] वि रमेइ बहुदोससज्जु।
पसरइ अकित्ति तें कज्जें कीरइ तहो णिवित्ति।
जंगलु असंतु वणु रक्खसु मारिउ णरए[7] पत्तु।
मइरापमत्तु[8] कलहंपिपणु हिसइ इट्ठमित्तु[9]।
रच्छहे पडेइ उब्भियकरु[10] विहलंघलु[11] णडेइ।
होता सगव्व गय जायव मज्जें खयहो सव्व।
साहीण व वेस रत्ताघारसण[12] दारसइ सुवेस।
तहो[13] जो वसेइ सो कायरु[14] उच्छिट्ठउ असेइ।
वेसापमत्तु[15] णिद्धणु हुउ इह वणि[16] चारुदत्तु।
कयदीणवेसु णासंतु परम्मुहु छुट्टकेसु।
जे सूर होंति सवरा हु वि सो ते णउ हणंति[17]।
वणे तिण चरंति णिसुणेवि खडक्कउ णिरु डरंति।
वणमयउलाइं[18] किह हणइ मूढु किउ तेहिँ[19] काइँ।

---

१०. १ क आयएए। २ ख जिह, ग घ जहि। ३ ख विसये। ४ क जलु। ५ क ग घ मामा°। ६ क जूइ। ७ क नरय। ८ ख मइराइ मत्तु। ९ घ इट्ठु मित्तु। १० क उब्भिवि करु, ख उज्झवि करु, ग घ उब्भवि कर। ११ क विहिघंघलु। १२ ख ग घ परिसए। १३ ग तहे। १४ ख घ कारुय। १५ ख वेसाए मत्त, ग घ वेसाए सत्तु। १६ ख ग घ चिरु। १७ ग घ गणंति। १८ क मउकुलाइं। १९ ग घ तेए।

पारद्धिरत्तु चक्कवइ णरए गउ बंभयत्तु।
चलु चोरु धिट्ठु गुरुमायबप्पु माणइ[20] ण इट्ठु।
णियभुयबलेण वंचइ ते अवर वि सो छलेण।
भयकूवि[21] छूढु णउ णिद्दभुक्खु पावेइ मूढु।
पद्धडिय एह सुपसिद्धी णामें विज्जलेह[22]।

घत्ता — पावेज्जइ बंधेवि णिज्जइ वित्थारेवि रहे[23] चच्चरे।
दंडिज्जइ तह खंडिज्जइ मारिज्जइ पुरवाहिरे ॥१०॥

११

परवसुरयहो अंगारयहो[1] सूलिहिँ भरणं जायं मरणं।
इय णिएवि जणो[2] तो वि मूढमणो[3] चोरी करइ णउ परिहरइ।
जो परजुवइ इह अहिलसइ सो णीससइ गायइ हसइ।
विरहे[4] णडिओ अच्छइ पडिओ णउ रइ लहइ मित्तहो कहइ।
जा जाहि तुहुँ पत्थेवि[4] लहु सा आणि घरे महु लाइ उरे
उवयारसयं जुंजेइ मयं क वि होइ सई णेच्छइ जुवई।
ण लहेइ सुहु[5] अइदीणमुहु दावेइ जणे जूरेइ मणे।
अह का वि चला इच्छइ अबला देउलसिहरे तह सुण्णहरे।
गंतूण मयं किर रमइ रयं सो सुणिवि सरं उव्वहइ डरं।
छरहरियमणू कंपंततणू णिहुयउ[6] दडइ णासइ पडइ।
को वि धरइ[7] करे आरुहिउ[8] खरे वित्थारणयं तह मारणयं।
सहिऊण जए णिवडइ णरए होऊ अवुहा रामण[9]पमुहा।
परयाररया चिरु खयहो गया सत्त वि वसणा एए कसणा[10]।
गहिऊण वयं[11] परिवज्जि[12] तुमं इय वणिहे गिरा कय[13] समणि थिरा।
बहुदिणीहि पुणो संतुट्ठमणो सो घरहो तओ सुरसरिहे गओ।

---

१०. २० ख ग घ मएणइ। २१ क भव°। २२ ग घ चंदलेह। २३ ख रहु।

११. १ घ पसुयरहो अंगाइयरहो। २ ख जणे। ३ ख मणे। ४ क ग घ पेच्छेवि। ५ ख णो लहइ सुहं। ६ क णिहुओ। ७ क धरेइ। ८ ख आरुहिय। ९ ख राम्वण। १० क कमणा, ख कसिणा। ११ ख ग घ गहिऊणियमं। १२ ख परवज्जि। १३ ख किय।

घत्ता—सुंदरपयलक्खणसंगय विमल पसण्ण सुहावह ।
णावइ तिय सहइ[14] सइत्तिय णइ अहवा सुकइहे कह ॥११॥

१२

पप्फुल्लकमलवत्तेँ हसंति[1] अलिवलयघुलियअलयइँ कहंति ।
दीहरझसणयणहिँ[2] मणु हरंति[3] सिप्पिपउडोट्ठउडहि[4] दिहि जणंति ।
मोत्तियदंतावलि दरिसयंति पडिबिंबिउ[5] ससिदप्पणु णियंति ।
तडविडविसाह बाहहि[6] णडंति पक्खलणतिभंगिउ पायडंति ।
वरचक्कवाय थणहर णवंति गंभीरणीरभमणाहि वंति ।
फेणोहतारहारुव्वहंति उम्मीविसेसतिवलिउ सहंति[7] ।
सयदलणीलंचलसोह दिंति जलखलहलरसणादामु लिंति ।
मंथरगइ लीलए संचरंति वेसा इव सायरु अणुसरंति ।

घत्ता - हरिसियमणु गजोलियतणु सुहउ णियच्छिवि सुरसरि ।
कयरोलहिँ सहुँ गोवालहिँ कीलइ चिरु णावइ हरि ॥१२॥

१३

खणे लिहक्कइ थक्कइ देइ झडा खणे लोट्टइ पेट्टइ गोवथडा[1] ।
खणे णासइ तासइ एइ[2] अहो खणे कीडइ पीडइ णाइँ गहो ।
खणे संकइ ढंकइ आणणयं खणे मोडइ लुडइ[3] काणणयं ।
खणे धावइ आवइ णाइँ मणो खणे दीसइ णासइ णाइँ घणो ।
अह एक्कु चमक्कु वहंतु मणे इल[4]-रक्खु सभक्खु पहुत्तु खणे ।
णिरु कपइ जंपइ सो सहसा अहो चल्लि म खेल्लि महंतजसा ।
तुह गाविउ जोविउ जंतियउ परतीरे गहीरे पहुत्तियउ ।
णिसुणेवि धुणेवि[5] सिरं चलिओ इय छंदु वि[6] तोडणउ कहिओ ।

---

११. १४ क साहिय ।

१२ १ ख ग घ सहंति । २ क दीहरक्खमीणहि । ३ ख मणुहरंति ।
४ मिप्पियउडेहि णह । ५ क पडिबिंबिय । ६ क बाहडे । ७ ख बहंति ।

१३. १ क गोडवडा । २ ग घ एह । ३ ख लूडइ मोडइ । ४ क लइ ।
५ क वलेवि । ६ ख छंदउ ।

घत्ता—सो गोवउ आउसुथोवउ[7] सुमरेवि पयपरमेट्ठिहिँ ।
विसभरियहिँ णं णाइणियहिँ[8] णिवडिउ णं जमदिट्ठिहिँ ॥१३॥

१४

तहिँ जलमज्झि हि[1] थिउ थाणु एक्कु जिह गयणु तेम सो उद्धसुक्कु ।
जिह गयणु तेम सो मीणजुत्तु जिह गयणु तेम कक्कडविचित्तु ।
जलि वुड्डु[2] सो केरिसु विहाइ तहो पाणहरणु थिउ कालु णाइँ ।
कयझंपहो तं तहो हियए जाइ वम्मइ[3] लुणंतु खलवयणु णाइँ ।
भिदइ उरु भक्खइ पुट्ठिमांसु खंटुँ[4]वि तहो कम्मे हुउ पलासु ।
उव्विविरु सो णिउँ धुणइ[5] अंगु जले जालि[6] वडिउ णं मीणसंगु ।
पय[7]-कर वि ण चल्लहिँ तासु केम कुणरेसहो उज्जडि गाम जेम ।
तहिँ कालि विवज्जेवि देहसोउ बंधइ णियाणु लहु[8] एस गोउ ।

घत्ता—पंचपयहँ फलु जइ आयहँ अत्थि होउ तो वणिकुलु ।
बहुसोक्खहो गच्छमि मोक्खहो जेण विणासिय[9]-कलिमलु ॥१४॥

१५

जिह पंचिंदियहिँ सोहइ मणु पंचवण्ण[1]कुसुमहिँ जिह उववणु ।
पंचसिलीमुहेहिँ जिह वम्महु पंचहिँ पंडवेहिँ जिह भारहु ।
पंचाणुव्वयहिँ जिह भवियणु पंचमहव्वयहिँ जिह मुणिगणु ।
पंचपंच भावणहिँ वयक्कमु[2] पंचायारहिँ जिह रिसिपुंगमु ।
पंचमहाकल्लाणहिँ जिह जिणु पंचत्थियकायहिँ जिह तिहुयणु ।
पंचहिँ मंदरेहिँ जिह महियलु पंचच्छरियहिँ जिह दाणहो फलु ।
पंचंगे मंते जिह महिपहु पंचविहहिँ जोइसयहिँ जिह णहु ।
पंचसयहिँ पमाणु जोयणु जिह पंचणमोक्कारहिँ मरणु वि तिह ।

घत्ता—मणु खंचेवि जे पय पंच वि इय झायहिँ आणंदिय ।
सिद्धालउ अट्ठगुणालउ ते लहंति णयणंदिय ॥१५॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए तिलोउ विम्हउ पुरं णिवइ सेट्ठि तहो गेहिणी पुणो सुहयगोवहो मुणिसमासे पुण्णज्जणं तरंगिणि-महाजले तसु खुंटउरभेयणेण मरणं इमाण कयवण्णणो दुइज्जओ संधी सम्मत्तओ ।

संधि ॥२॥

---

१३. ७ ग घ गोविउ आउसुथोविउ । ८ ग घ णाइ णाइणिहे ।
१४. १ ख जलहो मज्झे । २ क जलवुड्डउ । ३ घ वम्मह । ४ क खंडु, घ खंदु । ५ क धुणइ । ६ ख घ जाल° । ७ क ख पए । ८ क सुहु, ग घ सहु । ९ ख विणासेवि ।
१५. १ ख °वण्णु, ग घ पचवण्णजिह । २ क भावणहि जिह वयकमु ।

संधि ३

१

णो संजादं तरुणिअहरे विद्दु[1]मारत्तसोहे।
णो साहारे भमियभमरे णेव पुंडुच्छुदंडे।
णो पीऊसे णहि मिगमदे[2] चंदणे णेव चंदे।
सालंकारे सुकइभणिदे जं रसं होइ कव्वे। मदाक्रांता।

रामो सीयविओयसोयविहुरं संपत्तु रामायणे।
जादा[3] पंडव धायरट्ठ सददं गोत्तंकली[4] भारहे।
डेडाकोडिय[5]चोररज्जणिरदा आहासिदा सुद्दए[6]।
णो एकं पि सुदसणस्स चरिदे दोसं समुब्भासिदं[7]॥ शार्दूलविक्रीडितं॥

सुतरंगहे गंगहे गोउ किर जाव[8] जम्मि णउ गच्छइ।
ता सुहमइ जिणमइ सयणयले सुत्तिय सिविणय पेच्छइ।
सुरचित्तहरो सिहरी पवरो गवकप्पयरू अमरिंदघरू[9]।
पवरंबुणिही पजलंतु सिही सुविराइयओ अवलोइयओ।
पसरम्मि सई वरसुद्धमई गय सिग्घु तहिं थिउ कंतु जहिं।
णिसि लक्खियउ तसु[10] अक्खियउ पभणेइ पई पिय हंसगई।
लइ[11] जाहुँ वरं जिणचेइहर अविलंबमुणी भयवंतमुणी।
पयडंति अलं सिविणस्स हलं[12] चलहारमणी चलिया रमणी।
भणिओ रमणी इय छंदु मुणी।

घत्ता गय जिणहरु मुणिवरु परिणवेवि जिणदासिए णिसि दिट्ठउ।
गिरिवरु तरु सुरहरु जलहि सिहि इय सिविणंतरु सिट्ठउ॥१॥

---

१. १ क बिंबि। २ क हलिसहिए तं, ख हलसहिए तं, ग सेलसिहरे। ३ ख जादव। ४ क गोभूकला, ख गोत्तकले। ५ ग घ कोलिय। ६ ख सुदए; ग घ सुद्दए। ७ ख समुब्भाविदं। ८ ख जाम्व। ९ क देवाए घरू। १० क तहो। ११ ख लहु। १२ क फलं।

२

किं फलु इय सिविणयदंसणेण होसइ परमेसर कहि खणेण ।
इय णिसुणिवि णवजलहरसरेण सुणि सुंदरि पभणिउ मुणिवरेण ।
उत्तुंगें भरभारियधरेण होसइ सुधीरु सुउ गिरिवरेण ।
कुसुमरयसुरहियमहुअरेण चाइउ लच्छीहरु तरुवरेण ।
सुररमणीकीलामणहरेण[1] सुरवंदणीउ वरसुरहरेण ।
जललहरीचुंबियअंबरेण गुणगणगहीरु रयणायरेण ।
अइणिविडजडत्तविणासणेण कलिमलु णिड्डहइ हुआसणेण ।
सुंदरु मणहरु गुणमणिणिकेउ जुवईयणवल्लहु मयरकेउ ।
णियकुलमाणससररायहंसु णिम्मच्छरु बुहयणलद्धसंसु ।
उवसग्गु[2] सहेवि हवेवि साहु पावेसइ झाणें[3] मोक्खलाहु ।
जिणु मुणि णवेवि हरिसियमणाइँ णियगेहु गयइँ बिण्णि वि जणाइँ ।
गोवउ वि णियाणें तहिं मरेवि थिउ वणिपियउयरए अवयरेवि ।

घत्ता—तहिं गब्भए अब्भए णाइँ रवि कमलिणिदले णावइ जलु ।
सिप्पिउडए णिविडए[4] ठिउ सहइ णं णितुल्लु मुत्ताहलु ॥२॥

३

परहो रिद्धि पेच्छेवि णं दुज्जण कसणवण्ण जाया बिण्णि[1] वि थण ।
सोहइ वयणु ताहे जियससहरु णं णंदणजसेण आपंडुरु ।
गइ मथर हवेइ चल्लंतिहे तहे[3] पुणु सुहुम वाणि बोल्लंतिहे ।
खणे खणे जणियपयडतणुभंगइँ जायइँ सालसाइँ अट्ठंगइँ ।
दोहलाइँ संजायइँ एयइँ जिणण्हवणाइँ सुदाणविवेयइँ ।
पोसे पुहुत्ते सेयपक्खए हुए[4] बुहवारए चउत्थितिहिसंजुए ।
सयमिसरिक्खे जोए वरियाणए पढमे करणे वउणामपहाणए[5] ।
अंसइँ पंच मेल्लि[6] णवमासहिँ जणिउ ताए सुउ पुण्णविसेसहिँ ।

---

२. १ क कीलमणोहरेण, ग कीलणमणहरेण । २ ख उवसग्ग । ३ क काले । ४ ग घ णिउडए ।

३ १ ख दोणिए । २ क वेएं । ३ क तिहे, ख तह । ४ क घ हए । ५ ख उव° । ६ क अंसए पढमेल्लि ।

घत्ता—पायालए विउलए जीवगणु णिवडंतए पेच्छेविणु।
दुहपावणिसुंभणु[7] धम्मु सइं णं थिउ णरु होएविणु ॥३॥

४

तहिँ वणिवरगेहे चारु लच्छीसुसोहे　अइ पहसियवत्ता पुण्णकुंभेण जुत्ता।
मणहरपयराई घोममाणा समाई[1]　मिलेवि बहुपयट्टा आगया[2] चट्टभट्टा।
पडपडहरवालं डक्ककंमालताल　करडटिविलसालं[3] वेणुवीणावमालं।
णडियपुरमऊरं दिम्मुहासेसपूरं　गयवइमणजूरं वज्जए तत्थ तूरं।
स रि ग म प ध णी यं किण्णरामंसणीयं　अमियरसुवमेयं गायणाढत्त[4]-गेय।
दुरयगइ सुमंदं[5] सण्णियं[6] वम्मि रुदं　पिहुथणमुहयदं णच्चये णारिविंदं।
खलयणसिरसूलं सज्जणाणंदमूलं　पसरइ अविरोल मग्गणाण[7] सुरोल।
सिरणवियजिणिंदो देइ चायं[8] वणिंदो　वसुहयजइजुत्तो[9] मालिणीछंदु वुत्तो।

घत्ता—वणिजेट्ठें तुट्ठें णियगुयहो[10] किउ जम्मुच्छउ जेहउ।
साणंदें इंदें जिणवरहो जइ परकीरइ तेहउ ॥४॥

५

तेण पुत्तेण जणु तुट्ठु　खे महंतेहिँ मेहेहिँ जलु वुट्ठु[1]।
दुट्ठपाविट्ठपरत्थगणु नट्ठु[2]　णंदि आणंदि देवेहिँ णहे घुट्ठु।
दुंदुहीघोसु कयतोसु हुउ दिव्वु　फुल्ल पप्फुल्ल मेल्लेइ वणु सव्वु।
मंदु आणंदयारी हुओ वाउ　वावि[3] कूवेसु अब्भहिउ जलु जाउ।
गोसमूहेहिँ विक्खित्तु थणदुद्धु　एतजंतेहिँ पहिएहिँ पहु रुद्धु।
तो दिणे छट्ठि उक्किट्ठ[4]कमसेण　दाविया छट्ठिया उक्कत्ति वइसेण।
अट्ठ दो दिवह वोलीण छुडु जाय　ताम जा णाम जिणयासि[5] सणुराय।

---

३. ७ ख ग घ सुहपावणु पावणु।

४. १ ख सुमाई। २ क आनया। ३ ख लालं। ४ क गायणा तत्थ। ५ क दुरगदयसमुद्दं, ग घ सुरयगुइसुमंद। ६ ख सुण्णियं। ७ ग घ मागहाणं। ८ ग घ चावें। ९ घ जुइजुत्तो। १० ग घ वणिसुअहो।

५. १ ख पुट्ठु। २ ग घ तुट्ठु। ३ घ ववि सु। ४ ख उक्किट्ठि। ५ क जिणयास, घ जिणयासु।

बालु सोमालु देविंदसमदेहु[6] लेवि भत्तीए जाएवि[7] जिणगेहु ।
तीए[8] पेच्छियउ पुच्छियउ मुणिचंदु मत्तमायंगु[9] णामेण इय छंदु ।
घत्ता—मंदरु जिह थिरु तिह बुहयणहिँ कुंभरासि पभणिज्जइ[10] ।
महुतणउ तणउ एरिसु मुणिवि मुणिवर णामु रइज्जइ ॥५॥

६

तं सुणिऊण पणट्ठ[1]रईसो मेहणिघोसु भणेइ जईसो ।
दिट्ठु तए[2] सिविणंतरे सारो पुत्तिए तुग्गु सुदंसणमेरो ।
किज्जउ तेण सुदंसणु णामो सज्जणकामिणिसोत्तहिरामो[3] ।
तो जिणयासे णविवि जईसं चित्ते पहिट्ठ गया सणिवासं ।
सोहणमासे[4] दिणे छुडु दित्तं[5] बद्धउ पालणयं सुविचित्तं[6] ।
देवमहीहरि णं सुरवच्छो वड्ढइ तत्थ परिट्ठिउ वच्छो ।
वड्ढइ णं वयपालणे धम्मो वड्ढइ णं पियलोयणे[7] पेम्मो ।
वड्ढइ णं णवपाउसि[8] कंदो एसु पयासिउ दोहयछंदो ।
घत्ता—जगतमहरु ससहरु मयरहरु जिह वड्ढंतउ भावइ ।
मणवल्लहु दुल्लहु सज्जणहँ पुरएवहो[9] सुउ णावइ ॥६॥

७

तरुणिहि हुरुहुल्लरु बुल्लंतउ घणथणसिहरोवरि मुल्लंतउ ।
पाणियलहिँ किउ चुंबिज्जंतउ एत्तहि पुणु एत्तहिँ णिज्जंतउ ।
करयलु वयणकमलि घल्लंतउ काइँ वि लेवि झत्ति मेल्लंतउ ।
गयहिँ सत्तमासहिँ बोटिज्जइ संवच्छरजुएण मुंडिज्जइ ।
अच्छइ घरपंगणे खेल्लंतउ अपरिप्फुडु[1] वयणइँ बोल्लंतउ ।
मंद मंद पय धरहिँ धरंतउ णेउरसर झणझणिय करंतउ ।

---

५. ६ ख °णिहदेहु । ७ ख जाएवि भत्तीए । ८ ख तियए वि ।
९ क मत्तमातगु । १० क ग घ भणिज्जइ ।

६. १ क ग पइट्ठु । २ ग घ ताए । ३ क ख सोअहिरामो । ४ ख ग सोहणु मासु । ५ ख ग घ दिणं छुडु वित्तं । ६ क सुरचित्तं । ७ ख मेलणे । ८ ख पाउसु । ९ क तिह एयहो ।

७. १ क अपरिप्फुडु ।

घग्घर[2]-घवघवरवेण सहंतउ मम्मणगिरहिँ डिंभ मोहंतउ ।
कंचणकडिदोरय णासंतउ[3] किंकिणिकणिउ सुणेवि विहसंतउ ।
चलइ वलइ पडिखलइ सुहावहु जिणजम्माहिसेए णं सयमहु[4] ।
उट्ठइ पडइ रडइ सुणडइ किह वासारत्ते पत्ते सिहिगणु जिह ।

घत्ता—इय लीलए कीलए तहो सुयहो अट्ठ वरिस गय जावहिँ[5] ।
मगहरगिए घरिणिए सहुँ चवइ सहरिसु वणिवइ तावहिँ[6] ॥७॥

८

किं वित्थरेण[1] हले कहमि तुज्झु पडिहाइ एहउ मंतु मुज्झु ।
पाढणहो णिमित्तेँ गंथसत्थ[2] देविणु सहसा परिहाणवत्थ ।
मुणिवरहो समप्पमि पुत्तु ताम सहत्थवियक्खणु होइ जाम ।
गुरुसिक्खालाव सिसुत्ते दिण्ण लग्गहिं जिह घडए अपक्कि कण्ण ।
सामग्गिरइयवज्जियअवज्जु[3] भणु पुण्णहिँ को सिज्झइ ण कज्जु ।
सोहइ परिमिउ[4] माणंसणीहिँ सिसु रायहंसु णं हंसणीहिँ ।
गंपिणु चेईहरि मुणिवरिंदु पुज्जिउ णं इंदेँ जिणवरिंदु ।
उवणिय छत्तय चोल्लय मणोज्ज वसुभेय रइय जिणसुयहो पुज्ज ।
पुणु[5] लिहिवि सिद्धमाइयकमेण घोसाविउ सो मुणिपुंगमेण ।
लीलए पढंतु सुंदरु विहाइ कुंभेण भरिज्जइ कुंभु णाइ ।

घत्ता – पइसियमणु अणुदिणु मुणिपवरु वणिवरिंदअंगरुहहो ।
सुपसत्थइं सत्थइं वज्जरइ[6] रिसहणाहु जिह भरहहो ॥८॥

९

संधि चंग धातु लिंग ।
लक्खणेक्क कव्व तक्क ।
छंद देसि णाम रासि ।
दिण्ण दिट्ठि[1] लुक्क मुट्ठि ।

---

७. २ ख घुग्घुर । ३ क भासंतउ । ४ °सए सयसंमहु । ५ ख जामहि । ६ ताम्वहि ।

८. १ घ वित्थरेमि । २ ख सुण्णत्थ । ३ ख ग घ वज्जियउवज्जु । ४ क ख ग घ °मउ । ५ क मुणि । ६ क गंथइ बहु कहइ ।

९. १ क इट्ठि ।

णायकील डंभसील ।
गंधजुत्ति रायणित्ति ।
ए पढेइ तो गुणेइ ।
पत्तछेय णट्टगेय ।
पट्टवज्ज वीणवज्ज ।
खग्गकुंत बूहयंत[2] ।
चंदवेज्झ मल्लजुज्झ ।
सुद्दुरम्म कट्ठकम्म ।
चित्तयम्म लेययम्म[3] ।
धाउवाय चुण्णजोय ।
अग्गिथंभ वारिरुंभ[4] ।
इंदजाल पुप्फमाल ।
णारिलक्ख हत्थिसिक्ख ।
जाणमाणु थक्कु सुणु ।
छंद जाणु कामबाणु ।

घत्ता कयहरिमहिँ वरिसहिँ सोलहहिँ सो णवजोव्वणे चडियउ ।
महु भावइ णावइ हिययहरु सुरवइ[5] सग्गहो पडियउ ॥९॥

१०

जस्स णीलणिद्धु केसु आयवत्त[1]वित्तु सीसु ।
दिव्वउण्णयं विमालु अद्धयदतुल्लभालु ।
सुंदराउ भूलयाउ णं दुहंडु कामचाउ ।
चंचलच्छिदंदु[2] रम्मु कीलर व मच्छ[3]जुम्मु ।
कुंडलेहिँ जुत्त कण्ण सोह दिति का वि अण्ण ।
चंपहुल्लणासवंसु मच्चलोयमज्झि संसु ।
सुद्ध णिद्ध दंतपंति मोत्तियाण दिण्णभंति ।

९. २ क दंत । ३ ग्व लिप्पयम्म चित्तकम्म. ग घ लेपककम्म । ४ ग घ वारिथंभ ।
५ क सुक्खए ।

१०. १ ख घ आयवत्तु । २ घ दुंदु । ३ ग घ मच्छि ।

पक्कबिंबवण्ण होट्ठ कि ण होंति लच्छिइट्ठ ।
आणणं विहाइ रुंदु णं णिरब्भपुण्णमिंदु ।
कंठमज्झु सुट्ठु भाइ तिण्णिरेहसंखु णाइ ।
सुप्पयंड बाहुदंड णं सुरिंदहत्थिसुंड ।
जित्तसोयवत्त हत्थ वज्जचूरणे समत्थ ।
वच्छु चक्कल[4] विहाइ लच्छिकीलहम्मु णाइ ।
मज्झएसु मुट्ठिगेज्झु णाइँ वज्जदंडमज्झु[5] ।
सुग्गहीरु णाहिवेहु णं अणंगसप्पगेहु ।
सण्णियबु सोहगीढु णाइं कामरायपीढु ।
दो वि पीण जंघियाउ ऊवमाविवज्जियाउ ।
गूढगुप्फया सहंति णाइँ कामरायमंति ।
कुम्मयार[6] हेमछाय दीहअंगुलिल्ल पाय ।
भासए णहाण पंति छंदओ समाणियं ति ।

घत्ता – बहुभेयइँ णयइँ लक्खणइँ अवरइँ जाइँ वि गयमलइँ ।
इह दीसहिँ सीसहिँ कइयणहिँ ताइँ णाइँ धम्महो फलइँ ॥१०॥

११

सुहिसहिउ णयरे हिंडंतु भाइ उडुगणसमाणु ससि गयणि णाइ ।
ता सरइ समुह तहो तरुणिजूहु सुरकरिहिं णाइँ करिणीसमूहु ।
क वि अद्धुग्घाडिय थण करेइ मणइगिउ कहइ ण करे धरेइ ।
क वि भणइ सुहय थिरु थाहि ताम महु णयणरंक धवलिंति[1] जाम ।
काहिँ वि रइसुहु हुउ दंसणेण पुणुरुत्तत्थें कि फंसणेण ।
क वि भणइ मणहरहरण लेहि बोल्लावंतिहि पडिवयणु देहि ।
क वि गिरविमुक्क पल्लिउ करेइ पवणहय केलि जिह थरहरेइ ।
क वि भणइ रक्खि मइँ पक्कयार विरहि मारंतिहिँ णिक्कियार[2] ।
सिहितविय सिला इव हउँ जि तत्त परकज्जु व तुहुँ सीयलउ गित्त ।
आहरण का वि विवरीय लेइ दप्पणे णियबिंबए तिलउ देइ ।

१०. ४ ख ग घ चक्कलो । ५ ख ग घ दंडवज° । ६ ख कुम्मराय ।
११ १ ख धवलेंति, घ धउलिंति । २ ख विरहेण मरतिह ।

घत्ता - हउँ वण्णमि मण्णमि सो जि पर जं णिएवि ण विरावइ[3]।
रइ लुद्धहँ मुद्धहँ[4] लोयणहँ मच्छुच्छल्लणु दावइ ॥११॥

१२

पेक्खेवि सुदंसणु पुरउ झत्ति काए वि णियकंतहो किय णिवित्ति।
मेल्लंती लोयण चलझलक्क क वि लज्जए कुड्डंतरिय थक्क।
भुयमूलपओहरणाहिदेसु क वि पयडइ मोडइ तणु असेसु।
क वि मयणपरव्वस भणइ बाल हउँ सहवि ण सक्कमि विरहजाल।
अवियाणंतिए[1] विरहाउराए अणहियए हियउ मइँ दिण्णु माए।
किं अण्णहिँ भवि वरतउ ण चिण्णु[2] जें एहउ पइ दइवें[3] ण दिण्णु।
क वि णिवसणु ल्हसियउ णउ मुणेइ इयरउ विरहिणियउ धीरवेइ।
अह सच्चु जि णियपयतले जलंतु जणु णियइ[4] ण उम्मग्गें[5] चलंतु।
जिह मणु पसरइ पियवयणु[5] जेत्थु तिह जइ कर पसरहिं[6] कहव तेत्थु।
तो हेलए आलिंगणु करेइ जणु सयँलु[7] णिरंकुसु को धरेइ।

घत्ता - हे मुहमइ णरवइ वणिसुयहो णयणंदिय जणगणहरे[8]।
सा णवि तिय रत्तिय जा ण तहो हिंडतहो चंपापुरे ॥१२॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीस-णयणंदिणा। रइए सुदंसणहो जम्मणं सरसबालकीला पुणो कलाणियरसिक्खणं मणहिरामयं जोव्वणं असेसपुरसुंदरीजणियक्खोहकामिगियंदं इमाए कव्वण्णणो तइयउ संधी सम्मत्तउ।

संधि ॥३॥

---

११. ३ ख ग घ °वहि। ४ घ रइलुद्धइ मुद्धइ।

१२. १ क अविमाणतिए। २ ख अएणभवे चिर तउ। ३ क ग घ ललियए। ४ ख जियए। ५ ख पिय वसइ। ६ क पसरइ। ७ क मयं। ८ ख जगु गुणहरे, ग घ जणगुणहरे।

संधि ४

१

कुलु बलु पगुणु पंडित्तगुणु   रूवलच्छि जसु णिम्मलु ।
आरोगत्तणु सोहग्गु पुणु   इय महंतधम्महो फलु ॥ ध्रुवकं ॥
पुरि हिंडंतो जिणमइपुत्तो   पेच्छइ कविलं गुणगणविमलं ।
अइसयरम्मं कयछक्कम्मं   वेयवियाणं[1] णिवसुण्हाणं ।
वंदियसोत्तं दियगुरुभत्तं   पुज्जियसिहिणं तिलजवहुअणं[2] ।
चंदणलित्तं पड्डुरगत्तं   खंधे तिसुत्तं कयसिरछत्तं ।
मुणियणिमित्तं दयदमचित्तं   पियरायत्तं[4] धम्मासत्तं ।
वियसियवत्तं णेहलणेत्तं   इय गुणजुत्तं दिट्ठं मित्तं ।
वणिवइउत्तो भूमियगत्तो   णेहणुलग्गो कंठविलग्गो ।
हरिसविसट्टो छुडु जि पयट्टो   जा ता अग्गे आवणमग्गे ।
तणुसोमाला दिट्ठा बाला   दुवई एसा मयणविलासा ।

घत्ता—जा लच्छिसम तहे का उवम जाहे गइए[5] सकलत्तइँ ।
णिरु णिज्जियइँ णं लज्जियइँ हंसइँ माणसि पत्तइँ ॥१॥

२

जाहे चरण सारुण अइकोमल   पेच्छेवि जले पइट्ठ रत्तुप्पल ।
जाहे पायणहमणिहिँ विचित्तइं   णिरसियाइँ णहे ठिय णक्खत्तइँ ।
जाहे गुप्फगूढिमए विहप्फइ[1]   उवहसियउ विसेसमइविप्फइ[2] ।
जाहे लडहजंघहिँ ओहामिउ   रंभउ णीसारउ होएवि थिउ ।
जाहे णियंबविंबु अलहंते[3]   परिसेसियउ अंगु रइकंते[3] ।

---

१. १ क विणयविनाणं । २ ख हवण । ३ क मुणिय । ४ क ग घ पियरा-सत्तं । ५ ख जाहि गयइ ।

२. १ क वियप्पइं, ग घ णिप्फइ । २ ख उवहसियइ । ३ क ख विप्पइ ।

जाहे चारुतिवलिहे ण पहुच्चहिँ[4] जलउम्मिउ सयसक्करु वच्चहिँ[5] ।
जाहे णाहिगंभीरिमजित्तउ[5] गंगावत्तु ण[6] थाइ भमंतउ ।
जाहे मज्झु किसु अवलोएवि हरि णं तवचरणचित्तु गउ गिरिदरि ।
जाहे सुरोमावलिए परज्जिय णाइणि बिले पइसइ णं लज्जिय ।

घत्ता—अयसइँ[7] कलिय[8] रोमावलिय जइ णवि विहि विरयंतउ ।
तो मणहरेण गुरुथणहरेण मज्झु अवसु भज्जंतउ ॥२॥

३

जाहे णिएविणु कोमलबाहउ बिस वि करहिँ तग्गुणउम्माहउ ।
जाहे पाणिपल्लवइँ सुललियइँ कंकेल्लीदलहिँ वि अहिलसियइँ ।
जाहे सद्दु णिसुणिवि अहिहवियए णं किण्हत्तु धरिउ[1] माहवियए ।
जाहे कंठ रेहत्तयणिज्जिय संख समुद्दे बुड्डु णं लज्जिय ।
जाहे अहरराएँ विद्दुमगुणु जित्तउ तेण धरिउ कढिणत्तणु ।
जाहे दसणकंतिए जिय णिम्मल सिप्पिहिँ तेँ पइट्ठ मुत्ताहल ।
जाहे साससुरहिम णउ पावइ पवणु तेण उव्वेविरु[2] धावइ ।
जाहे विमलमुहयंदसयासए णियडणखप्परं व ससि भासए ।
जाहे णासवंसेँ ओहासिय[3] तेँ सवंक पयडइ सुउ णासिय ।
जाहे णयण अवलोएवि हरिणहिँ विभिएहिँ रइ बद्धी[4] गहणहिँ ।
जाहे भउहवंकत्तेँ सुरधणु जित्तउ हवइ तेण सो णिग्गुणु ।
जाहे भालजिउ किण्हट्ठमिससि हवइ खीणु अज्जु वि खेयहो वसि ।
केसहिँ जाए जित्त अलिसत्थ वि रुणरुणंत रइ करहिँ ण कत्थ वि ।

घत्ता—सोमालियहे तहे बालियहे रूउ णियच्छिवि सुहयरु[5] ।
विभियमणेण सुहदंसणेण[6] पुणु आउच्छिउ सहयरु ॥३॥

४

किं तार तिलोत्तम[1] इंदपिया कि णायवहू इह एवि[2] थिया ।
किं देववरंगण कि व दिही कि कित्ति अमी[3] सोहग्गणिही ।

२. ४ ग घ °इ । ५ ख जुत्तउ । ६ ख गंगावुत्तु णु । ७ प्रतिषु 'अहमई' । ८ ख कलि ।
३. १ ख घ धरइ । २ क थिविरू । ३ क ओहामिय । ४ ख बंधिय । ५ क मुहयरु, ख वणिवरु । ६ ख सहंसणेण ।
४. १ क तिलोत्तिम । २ क वेइ । ३ ग घ उम्मी ।

किं कंति सुबुद्धि कइंदथुआ कि रोहिणि रण्ण[४] सुकंतिजुया।
कि मंदोअरि कि जणयसुआ कि वा दमयंती चारुभुआ।
कि पीइ रई अह[५] खेयरिया कि गंग उमा तह[६] किण्णरिया।
आयण्णेवि जंपइ ता कविलो हे सुहि मत्तउ[७] कि तुहुँ गहिलो।
जो सायरदत्तु णिहाणवरो जो कुंजरइब्भु[८] जणत्तिहरो।
जो पालइ पंच अणुव्वयइं अण्णाइँ मि तिण्णि गुणव्वयइं।
सिक्खावय चारि अणत्थमिय जो जंपइ जीवहियं सुमियं।
जो कम्ममहीरुहमोहणउ छंदो इह वुच्चइ तोडणउ।

घत्ता – उत्तुंगथणा तहो अत्थि घणा सायरसेण अणोवम।
तीए जणिया ण सुरगणिया णामे एह मणोरम ॥४॥

५

तहो हियय वम्महसरवणियं गुणिवि तेण सुहिणा[१] नो भणियं।
हवइ दुलक्खु[२] जुवइअहिप्पाओ जाणेविणु कीरइ अणुराओ।
कामीयणमणजणियहियत्थे तं जाणिज्जइ विडगुरुसत्थे।
जाइ असय सत्तइँ[३] देसिउ पयइ भाव इंगियइँ[४] विमिस्सिउ।
एयाणं जो जाणइ लक्ख भुंजइ सो रमणीरइसोक्खं।
भद्दा मंदा तह लय हंसी चउविह जुवईजाइ अहासी।
भद्दा सव्वंगेहि सरूवी मंदा थूलंगी जाणेवी।
लय दीघर लया इव तणुआ हंस समसल दह अणुआ।
रिसिविज्जाहरजक्खकुलंसउ रक्खसअसउ होंति असंसउ।
अणु परिवाडिए जाणसु णूणं उज्जुअभावो[५] तावसियाणं।
खेयरियाणं मइरावाणं[६] भावइ कमलामोयसमाणं।
दविण इट्ठं[७] जक्खिणियाणं दुच्चरित्तं लइ[८] णिसियरियाणं।

---

४. ४ क रत्त। ५ ख इह। ६ ख अह। ७ ख मित्त हुअउ। ८ ख ग घ हिहाण। ९ ख कुजरदत्तु।

५. १ ख सहिणो। २ ख अलक्खु। ३ क ग घ संतइ। ४ ख एव भाव मगिगयहि। ५ क °भावं, ख अज्जवभावो। ६ ख मयरावाणं। ७ ख देविणइच्छं। ८ ख दुच्चरियाणं।

कहियइँ चउ अंसयइँ णिरुत्तइँ　　अट्ठविहइँ आयण्णहि सत्तइँ ।
सारसि मिगि रिट्ठी ससि हसी　　महिसी खरि मयरी गुणभसी ।
ताण मज्झे इच्छियफास[9]　　सारसि णउ छंडइ पियपासं ।
उज्जुअसीला कीलयगेहे　　झिज्जिवि मरइ णडिय पियविरहे ।
मिगि ईहइ पिययमसंजोयं　　वंधवसम्माण णिरु गेयं ।
ण मुयइ ठाणं रिट्ठी दीणा[10]　　जंपइ फरुसं दुक्खणिहीणा ।
ससि णिग्घिण[11] परछिद्दणिहाली　　भीलियणयणा[12] हिडणसीली ।
कमलायरकीलणि धयरट्ठी　　अइकोवाउर महिसी सिट्ठी ।
खरि मेल्लइ हसंति गुरुगायं　　महइ चवेडं करकमघायं ।
मयरी दिढगाहामिसलुद्धा[13]　　साहसमारा अप्पडिरुद्धा[14] ।
अवरे दोसे को वहि कलओ　　एसो छंदो पायाउलओ ।

घत्ता—भो मित्त पुणु देसीउ सुणु मालविणी[15] सगुणायर ।
कीलाहरहि गिरिसरिसरहि वाराणसिय कयायर ॥५॥

६

अब्भुयवामिणि[1] तिय[2] धणु लेप्पिणु　　सुरउ रमइ दिणमाणु[3] करेप्पिणु ।
सिंधवि आमत्ती पियगेयहे[4]　　देइ दव्वु णियपाण वि दइयहो ।
कोमलि कुडिलवत्त[5] मणु अप्पइ　　सिंहलि गुणविसेसि पर रप्पइ ।
दिविडि दंतरसु[6] दिंति ण लज्जइ　　अंगिय वर[7] सुरयहो वि ण भज्जइ[8] ।
लाडिय ललिया लावहिँ[9] रज्जइ　　विण्णाणेण[10] गउडि रइ भिज्जइ ।
कालिंगी उवयारहिँ रक्खु वि[11]　　रज्जइ किं ण मणुउ पक्खु वि ।
सोरट्ठिहे चुंबणरसु[12] सल्लइ　　गुज्जरि णियकज्जहो णउ[13] भुल्लइ ।
धुत्ति होइ मरहट्ठि विलासिणि　　उवयारहिँ वसि कोंकणवासिणी ।

---

५. ९ ख ताण मज्झे इत्थिय कयफासं, घ °भासं । १० क °खणा रिट्ठी परलीणा । ११ घ णिग्घिणि । १२ क पोलियमयणा । १३ ख लुद्धी । १४ ख बुद्धी । १५ घ मालिविणी ।

६. १ ख घ पच्चुय° । २ क ते । ३ घ दिणि° । ४ क °गेहहो, ख मिउ गेहहो, घ मिउगेयहु । ५ घ कुडिलचत्त । ६ ख दिविडरत्त असु, घ दिविडिरत्तअसु । ७ ख धार । ८ क जि वि पुज्जइ । ९ घ लाडि ललिय आलावहि । १० ख विण्णाणें । ११ ख रक्ख वि । १२ घ चुंबणु । १३ ख वि ण ।

गोल्ली आयारे[14] णिम्मच्छर रइविलासे कण्णाडी कोच्छर ।
पाडलिया णियगुण वित्थारइ पारयत्ति पुरिसायउ सारइ ।
जाणइ हिमवंतिणि वसियरणइँ कोमलमउअफणसतिय करणइँ ।

घत्ता—अण्णु वि कहमि एहु सयलहँ मि पयइपहाण अणुक्कम ।
सा तिविहकय णरजम्मे[15] थिय वाय[16] पित्तसिभलसम[17] ॥६॥

७

मारुयपणइणि चल बहुभोयणि ।
बहुयपलाविणि कक्कस फरुसणि ।
अइकिण्हंगी णाइँ भुयंगी ।
हिंडणसीलिय गोजीहालिय ।
सइगहीरहिँ कढिणपहारहिँ ।
सा सेविज्जइ संक ण किज्जइ ।
जा पुणु पित्तल सा णहपिंगल ।
गोरिय काए कडुय पसेए[1] ।
अइउण्हंगी[2] णाइँ कुरंगी ।
रूसइ खणे खणे धुत्तिय दिणे दिणे[3] ।
संतोसेवी पिउभासेवी ।
तहे आलिंगणु गंधविलेवणु ।
सीयलु दिज्जइ सुरउ रमिज्जइ ।
घणु घणु जेत्तिउ भावइ तेत्तिउ ।
सिंभलपयई णिसुणहि जुअई ।
कयलीकोमल वण्णे सामल ।
अइ वि सणेहल मउसोणीयल ।
साहारणकए दिहि जायए रए ।
दिट्ठे दोसे कंपइ रोसे ।

६. १४ क °आरणारो । १५ घ घर जम्मे । १६ घ वाइय ।
१७ ख घ सिलेसम ।

७. १ क घ गोरीकायं कडुयपसेयं । २ क ग घ उण्हाएहंगी । ३ ग घ धुत्ति दिणे जि दिणे ।

झत्ति विरप्पइ अंगु ण अप्पइ ।
सच्चे विणएँ दाणे पणएँ ।
मा कि पि वि भणु तहे घिप्पइ मणु ।
छंदु पवुत्तउ मयणु णिरुत्तउ ।

घत्ता—जिह लक्खियउ तिह अक्खियउ पयइउ जाउ विहिण्णउ[४] ।
गुण गंथियउ एक्कहिँ थियउ[५] ताओ होंति संकिण्णउ ॥७॥

८

संकिण्णउ जिह पयइउ[१] भासिउ जाइ अंस सत्तइ तिह[२] देसिउ ।
चाउरंगसेण्णे जिह राणउ होइ तिह वि तयभावपहाणउ ।
सो वि तिविहु संखेवें वुत्तउ सुद्धअसुद्धमिस्सगुणजुत्तउ ।
सो विसुद्धभाउ वि तिपयारउ जाणहि मंदु तिक्खु तिक्खयरउ ।
ईसि ईसि लज्जंकमणिट्ठिए मंदभाउ जाणिज्जइ दिट्ठिए ।
दिट्ठि वि तिविह मउल तह लुलिया अवर कडक्खवलिय परिकलिया ।
हिययविहियवरगुणउक्करिसें पियमाणसें[३] जा पेल्लिय हरिसें ।
मउलिय पुणु वित्थरहो ण वच्चइ[४] मउला णाम दिट्ठि[५] सा वुच्चइ ।

घत्ता—मणजाएण अणुराएण वियसइ पिययमे वच्चइ ।
जले मच्छु जिह जा ललइ[६] लुलिय दिट्ठि सा वुच्चइ ॥८॥

९

गुरुयणहँ मज्झम्मि लज्जंकुसंकुसिय करिणि व्व अणुसरइ पिउ पेम्मभरवसिय ।
सुकडक्खविक्खेव करिऊण जा वलइ सुकडक्खवलिय त्ति बुहलोउ[१] सा कलइ[२] ।
वियसइ ण संदेहु पिए दिट्ठे मुहु मलिणु दिवसयरउग्गमणे कमलसरे[३] जिह णलिणु ।
उट्ठउडु[४] परिफुरइ थरहरइ मणु केम खरचटुलपवणहउ देवउलधउ[५] जेम ।
धावइ पसेओ वि गंडयले सुहि जाणु सो तिक्खभावेण मयगलहो णं दाणु ।

---

७. ४ ख पयई जाइ वि दिएणउ । ५ क तो तडियउ ।

८. १ ख पयएं । २ क तह; घ तिहि । ३ ख पियसमाए, ग घ वियसमाए । ४ ख वुच्चइ । ५ ख मउल दिट्ठि णामे । ६ घ जले मज्झ जिहं जा ललइ ।

९. १ क कोउ । २ ख संकलइ । ३ ख दिवसयरि उग्गवणिए सरि कमलि । ४ ख हउट्ठवडि । ५ ख हउपवण देवलह ।

मुणि जेम भयलोहगुरुलज्ज वज्जंति   बहुलम्मि ससि जेम[६] अणुदियहु खिज्जंति।
दीहुण्हणीसास पुणु पुणु वि मेल्लंति   परिहरिवि कुलमग्गु उम्मग्गे चल्लंति।
तिक्खयरभावेण णारीउ कपंति   सच्छंदु मयणावयारं[७] पयंपति।
घत्ता—बुहसंसियउ इह भासियउ सुद्धभाउ तिहिँ भेयहिँ।
दुइजउ कहमि णउ तुह रहमि भाउ असुद्धउ एयहिँ[९] ॥९॥

१०

अणंगदेसंगममणेण गुरुक्कें[१]   धगलोहेँ दुट्ठमइवियक्केँ।
दुसहेण वि सवत्तिपयणभणेँ[२]   वार वार कय अंतोगमणेँ।
अइपसंगँ अईईमाकरणेँ[३]   कयपच्छण्णदोससभरणेँ।
एयहिँ कारणेहिँ चंचलमणु[४]   वहइ असुद्धभाउ जुवईयणु।
तेँ वयणारविंदु विसमावइ   ढोयइ हत्थु णाहि थणु दावइ।
झंपइ पुणु कलेणँ उग्घाडइ   छोडइ केसबंधु तणु मोडइ।
आसत्तउ[६] भणेवि णरु लक्खइ   ओसरेवि[७] अप्पाणउ रक्खइ[८]।
सो वि वियक्खणेहिँ जाणिज्जइ   बुद्धिहि संकिण्णत्तहो[९] णिज्जइ।
घत्ता—वरणिवसणहिँ सुविहूसणहिँ चाडुयवयणहिँ भोयहिँ[१०]।
तणुरूवेण पड्डूढएण विप्पइ एह[११] उवायहिँ[१२] ॥१०॥

११

भो जिणवरपयपंकयदुरेह   मुणि[१] गमणणिहभयरोसणेह।
अण्णमणदुक्खभुक्खासकाम   णिक्काम एस इंगियहिँ णाम।
गमणिंगिए मुण्णालाउ होइ   वलियाणणु[२] चारु जि परिणिएइ।
णिद्दिंगिए जभाइय हवेइ[३]   लोयण मउलइ गीवा णवेइ[४]।

९. ६ क जेंमि। ७ ग घ छंदो वि मयणावयारो। ८ क ग घ बहु°।
९ ग घ एमहि।

१०. १ घ °दोस°। २ ख णवणे। ३ ख अइवसग। ४ ख चंचलु मणु।
५ ख करेण। ६ क आसएणउ। ७ ग घ ऊमरेइ। ८ घ लक्खइ। ९ ग घ °हे।
१० ख भोयणहिं। ११ ग घ एहि। १२ ख एय उपावहिं।

११. १ क मुणि (टि० जानीहि) २ ख ग घ वलियासणु। ३ ख जभावइ हवेइ।
४ क मउलंगी माणवेइ (टि० ज्ञायते), ग घ मउलहिं गीया णवेइ।

भयइंगिए हवइ सुदीणवयण   वेविरतणु तह तरलंति णयण ।
रोसिंगिए डंसियाहरु सुखेउ   अरुणच्छि फुरियणासा सुसेउ[5] ।
णेहिंगिए पयडइ हिययगुज्झु   पप्फुल्लावइ मुहु सुहय बुज्झु ।
अण्णमणिंगिए मुहु रायवत्तु   गिर सुण्ण[6] जि दरपिहियंसु[7]णेत्तु ।
दुक्खिगिए[8] णासइ पुव्वछाय   णीसरइ मुहाउ ण वियडवाय ।
भुक्खिगए[9] खाम कवोल होंति   वियलइ मइ[10] तह पाय ण वहंति ।
कामिंगिए[11] छोडइ चिहुरभारु   णिस्सेसु वि दावइ तणुवियारु ।
णिक्कामिंगिए[12] दोसाइँ लेइ   गुण झंपइ सेच्छए संचलेइ ।

घत्ता—धूमें अणलु फुल्लेण फलु जिह किर संभाविज्जइ ।
बुहसंथुयहिँ[13] तह इंगियहि[14] जणभाउ वि भाविज्जइ ॥११॥

१२

गुणजुत्त   भो मित्त ।
जाईहिँ   पयईहिँ ।
सत्तेहिँ   भावेहिँ ।
भासियहिँ   देसियहिँ ।
अंसयहिँ   इंगियहिँ ।
वरदेह   कयणेह ।
जाणेसु   माणेसु ।
बहुभमणु   अण्णमणु ।
कयरोल   धणलोल ।
खलसंग   दुमियंग[1] ।
वियराल   णिद्दाल ।
अवियड्ढ   सोयड्ढ ।

---

११. ५ ख °च्छवि फुरइ णासावमेउ, ग घ घुलिय णासा । ६ ग घ गिरि सुएह । ७ ग घ °पिहियंसु । ८ ख दुक्खगें, ग घ दुक्खंगिए । ८ घ भुक्खंगिए । १० क मय । ११ ख ग घ कामगिए । १२ ग घ णिक्कामंगिए । १३ ख संधियहिं; ग घ संधियहि । १४ ख आलिंगियहि ।

१२ १ क दमियंग; ग घ दुमिइंग ।

णिल्लज्ज हयकज्ज ।
जा हवइ सा जुवइ ।
मा रमसु परिहरसु[2] ।
इय छंदु आणंदु ।

घत्ता—करिकरभुयहो[3] वणिवरसुयहो दियवरु पणएँ जुत्तउ ।
रहसु ण रहइ अवरु वि कहइ थीलक्खणु संखित्तउ[4] ॥१२॥

१३

पसत्थजंघोरु थणग्गवित्ता[1] ।
पईहहत्थंगुलिणक्खणेत्ता ॥
सुणास हेमच्छवि उच्चभाला[2] ।
तिउत्तरंती[3] स हवेइ बाला ॥ (उविदवज्जा)
कायस्स जंघोरुजुयं अभद्दं ।
कायस्स दिट्ठी तह कायसद्दं ॥
पायंगुली काउ[4]-समाउ जीए ।
जाणेहि दीहाउसु णत्थि तीए ॥
सुवेणुवीणाकलहंसवाणी ।
सुवित्त णाहीथण चारुपाणी ॥
मायंगलीलागइ मुद्ध सामा ।
सा होइ पुत्ताइयलच्छि धामा ॥ (उवजाई)
सव्वे वि रत्तुप्पलच्छाय जाया[5] ।
मुहं णहुट्ठाहरहत्थपाया ॥
णासुच्चओ सिंधुरदिट्ठि जीए ।
हवेइ णूणं सुहवत्तु तीए ॥ (अक्खाणए)[6]

१२. २ क 'गयतंदु जाणेहि' इतना अधिक पाठ जोडा गया है। ३ ख ग घ करिवर कर भुयहो। ४ क संकित्तउ (टि० प्रशस्ता॰)।

१३. क चित्ता। २ क °ओ विसाला। ३ ख ग घ तिपुत्तवंती। ४ ख ग घ पायंगुलीयाउ°। ५ क सव्वे रत्तु वि छाय जाय। मुहं नहाहर°, ख सुहत्थ उंचेहर°। ६ क ग घ पक्खीणई।

घत्ता—विस[7] झस दाम सिल द्धय पोम गिरि गोउर बामए करे।
जा उव्वहइ सा सुहु लहइ चिरु अहिणंदइ णियघरे ॥१३॥

१४

उद्धरेह चक्कंकुसकुंडलराइया अद्धइंदुभालंकिय णहसुच्छाइया।
जा सणिद्धमुत्ताहलदसणिय सुंदरी सा हवेइ चक्कवइहे पिय गुणमंजरी ॥ (मंजरी)
तित्तिरसद्दालावणिया[1] पारेवयसम णरभोयणिया[2]।
मिलियभउह कुल[3]लंछणिया सा छिज्जइ छेयहिं[4] भणिया ॥ (खंडिया)
थोरसुमंथरगामा लंजिय अह होइ थोवधणवती।
जा वायसगइसद्ददिट्ठी सा दुक्खभायणा कण्णा ॥ (गाहा)

(इय तिभंगियणाम छंदो)।

जा कुम्मुण्णयचलण विसमंगुलि खरिलंबोट्ठि खोसला।
सिरे फरु[6]सुद्धकेस चललोयण करजंघोरुमंसला ॥
गमणुत्तावलीय सव्वंगसमुट्ठियरोमराइया।
सा फुडु होइ पुत्तभत्तारविओयदुहेण छाइया ॥दुवई॥ (गाहीकडवयं)
[7]मुहमंसुर कडिउरणाहिलोमकरि कढिणफास कढिणंगी।
सा रक्खसि पच्चक्खं वज्जसु हे सुहय कि बहुत्तेण[7] ॥

घत्ता—इय गिर सुणेवि तहो गुण थुणेवि कामाणलसंतत्तउ।
तो सुण्णमणु झिज्जंततणु वणिसुउ णियघरु पत्तउ ॥१४॥

१५

तहिं सुंदरि मंदिरि[1] जइवि पत्त सुकुमाला बाला रत्तचित्त।
कर मोडइ छोडइ केसभारु गले घल्लइ मेल्लइ तारु हारु।
भूभंगइँ तुंगइँ खणे करेइ सयणीयलु कोमलु परिहरेइ।
सइँ अलियउ[3] ललियउ दरहसेइ सा झायइ गायइ णीससेइ।

---

१३. ७ क विसि।

१४. १ क तित्तिरच्छि दालिहिणिया, ख °सद्दा लक्खणिया। २ ख ग घ पारेवय णर°। ३ क कुडिलं, ग घ कुलिलं। ४ क छिज्जइ जइ छेअहिं। ५ क ख जा पुणु। ६ क फुरु; ख सिरफुर। ७ क गाथा नहीं।

१५. १ क मंदरि। २ ख ग घ °त्तु। ३ क खलियउ।

खणे गाढिउ दाढिउ आलवेइ[४] णिरु दित्तहिँ दंतहिँ अहरु लेइ ।
मणु जोयइ झायइ[५] जहिँ जि जहिँ पडिहासइ भासइ तहिँ जि तहिँ[६] ।
सुंदरि पर[७] थणहरणवियदेह दिहि दिती रंती णवसणेह[८] ।
संबोहणु सोहणु खणे[९] पढेइ पर ताहि तिसाइहि मणि लढेइ[१०] ।

घत्ता—सेणिउ सुणइ गोत्तमु भणइ णयणंदिउ जगसामिउ[११] ।
बुहणलिणरवि जिणवरु मुयवि मयणे को णायामिउ[१२] ॥१५॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए मणोहरउ जाइउ पुणु वि अंस तह सत्तइं तओ सयलदेसिउ पयइभावदंहिंगिय पुणो जुवइलक्खणं विरहु रायसेट्ठिसुए इमाण कयवण्णणो चउत्थो संधी सम्मत्तो ॥

संधि ॥४॥

१५. ४ ग घ आवलेइ । ५ क ख ग जोयइ । ६ क मणु जोयइ जहि जहि पडिहसेइ भासइ तहि तहि कामु जि भणेइ । ७ ख परि° । ८ क णिवसणेह । ९ ख सखि । १० क परताइति साइति मणु लढेइ, ख पडितोइवि साइवि मणि लुढेइ; घ परताहिइ तिसाइहि मणु लुढेइ । ११ ख जगि° । १२ ख को वि ण यामिउ ।

संधि ५

१

सेणिय णिवइ मणोरमहि एत्तहिँ वि तहिँ रइ[1] कहिँ वि पएसि ण भावइ।
एक्केण वि विणु वल्लहेण अइदुल्लहेण जणसंकुलु घरु वणु णावइ ॥ ध्रुवकं ॥
कमलजलद्द गेउ भूसणविहि ण वि कप्पूरचंदणं।
असणु ण सयणु भवणु पडिहासइ पवियंभेइ[3] रणरणं ॥ दुवई ॥

पुणु पुणु सा पभणइ जणियताव   रे रे मयरद्धय खलसहाव।
छलु लहेवि तुहुँ वि महु तवहि देहु   सउरिसहो होइ कि जुत्तु एहु।
रुद्देण आसि तव दड्ढु देहु   भणु महिलहँ उप्परि को ण[4] गोहु।
पंच वि महु लाइवि[5] हियए वाण   अण्णाउ[6] केण हणिहसि अयाण।
सयवत्तवत्तलोयणविसाल   जहिँ जहिँ अवलोयइ[7] कहिँ वि बाल।
तहिँ तहिँ आवंतउ मुइउ भाइ   सुहदंसणभरियउ जगु जि णाइँ।
जा तहेँ[8] सा तासु वि तहिँ अवत्थ   एक्कासिउ णेहु ण घडइ कत्थ।
अह घडइ कह व सो थिरु ण थाइ   सच्छिद्दए करयले सलिलु णाइँ।

घत्ता—णियवि सुदंसणु विरहियउ रइ विरहियउ तो रिसहदासु मणे चिंतइ।
जइ परिणाविउ होइ सुओ गुणगणहिँ[10] जुओ तो वड्ढइ महु कुलसंतइ ॥१॥

२

कुलसंतइए धम्मु संपज्जइ   धम्मेँ पाउ खिज्जए।
पावक्खएण[1] बोहि ताए वि पुणु   सासयपुरि गमिज्जए ॥ दुवई ॥
तेँ कज्जेँ गिहत्थ[3] कुलु मण्णहिँ   इय अवत्थ पुणु चउविह[4] वण्णहिँ।
तो वरकण्ण का वि जोइज्जइ   जेँ सा णंदणु परिणाविज्जइ।

---

१. १ क मणोरमहि तहि रइ। २ क पदेसि, ख पवेसि। ३ ख परिरंभेइ। ४ घ ण। ५ ख लावहि। ६ क अण्णाए। ७ क आलोयइ। ८ क घ तहिं; ख तह। ९ क कहवि। १० ख सुवेण गुणगणइं।

२. १ ख पाउखयेण। २ ख पावेविणु। ३ प्रतिषु 'गिहत्थु'। ४ ग घ चउहु वि।

अहवा[5] सारिजूउ खेल्लंते[6] भणिउ आसि सइँ सायरदत्तेँ ।
जा कायवि महु पुत्ति हवेसइ सा तुह[7] णंदणासु दिज्जेसइ ।
तो वरि[8] एवहिं सो[9] मग्गिज्जइ देइ ण देइ सच्चु[10] जाणिज्जइ ।
अब्भत्थणभंगभए इट्ठु[11] वि अवहेरहिँ णर कज्जु सुजेट्ठु वि ।
जइ वि हु एरिसु तो वि ण किज्जइ माणु जेण णियकज्जु हणिज्जइ ।
एत्थंतरि अत्थिय[12]-चिंतामणि तहिँ वि सकज्जें[13] आयउ सो वणि[14] ।

घत्ता—सायरदत्तु विसुद्धजसु णिरुवमु सवणु लहु वइसारियउ वरासणे ।
पुणु आउच्छिउ वणिवरेण अइआयरेण अणुरूवइ किय संभासणे ॥२॥

३

पभणहु णियमणिट्ठु किं किज्जइ जें कज्जें समागया ।
पभणइ वणिवरिंदु तं किज्जइ वड्ढइ णेहु जें सया ॥दुवई॥
आया कारणेण जेणम्हइं जाणंत वि पुच्छहु[1] तं तुम्हइँ ।
जइ वि तो वि संबंधु कहिज्जइ किं बहुणा विवाहु विरइज्जइ ।
रिसहदासु तं णिसुणिवि जपइ जिणकमकमलिंदिदिरसंपइ ।
बालहो जं विवाहु फुडु जाणहो तं णेवउ तुम्हइँ जि[3] पमाणहो ।
वार वार किं फिर बोलिज्जइ जं पडिवण्णउ तं पालिज्जइ ।
जहिँ परियउ चित्तु तुम्हारउ तत्थ वियक्कु[4] णत्थि अम्हारउ ।
इय णिसुणेवि वयणु हरिसोल्लिउ सायरदत्तु झत्ति संचल्लिउ ।
वरतंबोलहत्थु गउ तेत्तहो जोइसगंथकुसलबुहु[5] जेत्तहो ।

घत्ता—सिरिहरु णामें जोइसिउ गुरुयणवसिउ आउच्छिउ णवर वणीसें ।
सुहदंसणहो मणोरमहे वरलग्गु कहु तेण वि वज्जरिउ विसेसें ॥३॥

---

२. ५ क जा मा ख जे सो । ६ ख °तो । ७ क तुव । ८ क भोवरि, ख तो वर । ९ ख सा । १० क सच्चु । ११ क भंगभयइट्ठु, ख भगभइ इट्ठु इ । १२ ख दुत्थिय । १३ ख सुकज्ज । १४ क ग घ खणे ।

३. १ प्रतिषु 'प्रच्छहु' । २ ग घ जिणपय° । ३ क तुम्हं जेम । ४ ख ग घ वियक्कु । ५ क कुसलु बहु, घ बुह । ६ ग घ कहे ।

४

फुडु वइसाहमासे सियपक्खए पंचमि सुज्जवारए।
जायए मूलरिक्खे सिवजोयए कविलए[1] करणे सारए ।।दुवई।।
सूरुग्गमणहो लग्गिवि तेरह घडियइँ   अवरु वि पंचासहिँ तो पलहिँ चडियइँ।
होसइ मिहुणलग्गु बहुवरमणदिहियरु   तं णिसुणेवि वयणु गउ णियघरे[2] वणिवरु।
लहु विवाहसामग्गि असेस पउंजिय   बंधव सयण इट्ठ के के ण उ रंजिय।
दोहिँ वि घरहिँ चारु मंडउ विरइज्जइ   दोहिँ वि घरहिँ असमु तोरणु उब्भिज्जइ।
दोहिँ वि घरहिँ घुसिणच्छडउल्लउ दिज्जइ   दोहिँ वि घरहिँ रयणरंगावलि किज्जइ।
दोहिँ वि घरहिँ धवलु मंगलु गाइज्जइ   दोहिँ वि घरहिँ गहिरु तूरउ वाइज्जइ।
दोहिँ वि घरहिँ विविहु[3] आहरणु लइज्जइ   दोहिँ वि घरहिँ लडहतरुणिहिँ णच्चिज्जइ।
सच्चुवहाणु एहु णारिहिँ दिट्ठिगारउ   कलहु दुद्धु जामाइउ[4] तूरु पियारउ।
।।चप्पइ[5] छंदो।।

घत्ता—वेढिवि तरुणि[6] तरट्टियहिँ समरट्टियहिँ जणमणहरधवलवावारहिँ[7]।
तो मंगलकलसेहिँ णिरु ण्हावियउ वरु भूसिउ भूसणहिँ सुसारहिँ ।।४।।

५

पत्ते विवाहलग्गे उण्णामयकंकणकरु समच्चिउ।
सिरे सिय[1]-कुसुममउडु सियपरिहणु चंदणलेवचच्चिउ[2] ।।दुवई।।
चडिण्णु[3] तुरंगमे उब्भियछत्तु   कमेण जमाइउ मंडवि पत्तु।
अणंतरु माउहरम्मि पइट्ठु   पियंतरवत्थसमीवे वइट्ठु।
पलोइउ आणणु फेडिवि वत्थु   हुओ फलु णेत्तहँ[4] तासु कयत्थु।
करे करु दिट्ठिहिँ दिट्ठि पहुत्त   ण चलइ कद्दमे ढोरि व[5] खुत्त।
णिकेयहो लेविणु कंत[6] सलीलु   विणिग्गउ णाइँ सराउ सुपीलु।
तओ तहिँ वेइहे मज्झे णिवासु   णियच्छिउ पिंगु जलंतु हुयासु।

---

४. १ ख तिउलइ। २ ख °घरु। ३ क विवाह। ४ क जेमाइउ, ख जामाउय। ५ ख चउपही। ६ क वेढिउ तरुण। ७ क °वारवारहिं, ख °धवलुच्चारहिं।

५. १ ख सियछत्त। २ ख लेवण चारु चच्चिउ। ३ ख चडेवि। ४ ख लोयण। ५ ख ढोरु व। ६ ख कंति।

पयक्खिण दोण्णि वि पासहिँ दिंति　गिरिदहो णं रविरण्ण सहंति ।
विरायहिं णं पुणु[७] रोहिणिचंद　पुणो तसु[८] णावइ विज्जुलकंद ।
पहिट्ठउ ता मणे सायरदत्तु　पयंपइ एम पहुल्लियवत्तु ।
इमी तुह[९] छोल्लिय[१०] चंपयवण्ण　कुलीण महाणर दिण्णिय कण्ण ।
भणंतु इणं[११] करे घल्लइ तोउ　हरीहो सिरि व्व सुवल्लह होउ ।
पईवउ खट्ट रईहरवण्णु　समप्पइ दाइजयं[१२] सहिरण्णु
वहूय वराहँ वियंभइ कामु　पयासिउ छंदउ[१३] मोत्तियदामु ।

घत्ता – विरहविसंठुलमत्ताहं आसत्ताहं तहु हुउ विवाहु किर जावहिँ ।
णं रवि जोयहुँ आइयउ परिराइयउ[१४] पत्तुवरिपएसए[१५] तावहि ॥५॥

६

ता मज्झणयाले णववहुवरु इंदियवग्गमोयणं[१] ।
सुहिवंधवजणेहिँ परियरियउ आहुंजेइ[२] भोयणं ॥दुवई॥
बहुविजण सोहहिँ थाले थाले　णक्खत्त णाइँ गयणंतराले ।
हरिणीलहरियमुग्गेहि जुत्तु　मोत्तियपुंजच्छवि कलमभत्तु[३] ।
णवकणयरसारुणु घिण्णु भाइ　संझाराएण मयंकु[४] णाइँ ।
खज्जा ढोइय[५] मुहगलिय[६] जइ वि　दुज्जणमित्ति व भज्जंति[७] तइ वि ।
भज्जंत वि जण ण वि परिहरंति　सुमणेह कासु वल्लह ण होंति ।
वर लावण सोया जग[८] सहंति[९]　मगमाया सुयणे गुण वसंति[१०] ।
पुणु मडय उवणिय मंडालझ　अइसच्छ पत्थ जिणगुणहिँ[११] तुल्ल ।
पुणु दिण्णइँ णाणा तिम्मणाइँ　अइतिक्खइँ णावइँ तिम्मणाइँ ।
पिज्जइ दक्खारसु जणहिँ महुरु　छेयल्लहिँ धुत्तहिँ णाइँ अहरु ।
महुरु वि मेल्लेवि जण तित्त खाइँ　अणुराएँ दोस वि गुण विहाइँ ।

---

५. ७ ख पुरु । ८ क दमु, ख तम । ९ क रुह । १० ख छोली । ११ ग घ इणि ।
१२ क दाइत्तयंसि । १३ ख छंदु वि । १४ ख भणुरायउ । १५ ख पइमइ ।

६. १ क इंदियमग्ग° । २ क आउंजेइ । ३ प्रतिषु 'कलवि' । ४ ख मियंकु ।
५ क ढोया । ६ ख ग घ °गुलिय । ७ ख भज्जंत । ८ ख जणि; ग घ जणु ।
९ ख लहंति । १० क सज्जण गुण हसंति, ग घ सुयण व । ११ क एणाइ जिणमणहं, ख इंछ जिण ।

दहित्थट्टु वि मणहरु सहइ केम णेहसमउ पियहिँ मरट्टु जेम।
वण्हुण्हु दुद्धु पिज्जंतु सहइ रहसंकिउ कज्जु व हियउ डहइ।

घत्ता—जं सरसउ आहुंजियउ पुणु वज्जियउ तं भोज्जु विरायइ केहउ।
धुत्तेँ धुत्तिहिँ सुरउ[12] वरु गेण्हिवि णिरु अइतित्तिए[13] वज्जिउ जेहउ ॥६॥

७

पुणु परकज्जु जेम अइसीयलु जलु गेण्हेवि सोहणा[1]।
किउ गंडूसएहिँ[2] सव्वेहिँ वि मुहकुहरहो विसोहणा[3]।
जेमियणराहँ सयलहँ वि ताहँ।
कप्पूरभिण्णु सिरिखंडु दिण्णु।
पूयहलु[4] पण्णु तह पंचवण्णु।
वरकुसुमदाम ढोइय पगाम।
तो[5] णवणवेण वरउच्छवेण।
जणु मणहरस्स गउ णियघरस्स।
एत्तहिँ दिणिंदु हुउ तेयमंदु[6]।
णं अत्थवंतु सोवयविचित्तु[7]।
णिब्बुहणहेउ हुयवहहो तेउ।
माणिणि वि ताउ तो वहहिँ राउ[8]।
णं दिण्णु[9] भत्ति जाणिवि भवित्ति।
णहतरुवरासु फलु णाइँ तासु।
कालेण खुडिउ[10] अइपक्कु पडिउ।
जणजणियराउ कंदप्पराउ।
णहसिरितियाहे ण्हावंतियाहे[11]।
रविकणयकुंभु ल्हसियउ[12] सुसुंभु।
दुवई वि एह फुडु चंदलेह।

---

६. १२ ख पुरउ। १३ ख णिम्मइ तित्तिउ।

७. १ क गेण्हेविणु सोहणं। २ ख तेहिं। ३ क विसोहणं। ४ ख पूयफलु। ५ घ ते। ६ घ तेण मंदु। ७ क सोवयहि चित्तु। ८ ख माणिणिहि राउ णं रायाहिराउः ग घ माणिणिहि ताउ वो दहिहि राउ। ९ ख दिण्णु। १० ग घ कुडिउ। ११ क चंदुब्भलाहिं। १२ क तहसिउ व।

घत्ता पहराहउ आरत्तउ[13] संतावजुओ रवि सायरे जाम णिमज्जइ।
पेच्छहो कम्महो तणिय गइ सो उद्धवइ[14] णिसिरक्खिए[15] ताम गिलिज्जइ ॥७॥

८

बहुपहरेहिँ[1] सूरु अत्थमियउ अहवा काइँ सीसए।
जो वारुणिहिँ रत्तु सो[2] उग्गु वि कवणु ण कवणु णासए ॥दुवई॥
णहमरगयभायणे वरवदणु सञ्झाराउ घुसिणु ससि चदणु।
ससिमिगु कत्थूरी णिरु सामल वियसिय गह कुवलय उडु तंदुल।
लेविणु मगलकरणणुराइय णिसितरट्ट तहिँ समए पराइय।
पेच्छिवि बहुवर लच्छिविराइय ण सतोसेँ कहिँ मि ण माइय।
जा ता सुहदसणु सोहतउ वहुअए जुउ रइहरे पइसतउ।
पडिहासइ मणे[3] इच्छिय करिणिए झिझकुजे ण करि सहुँ करिणिए।
पङ्कोवरि विण्ण वि चक्कइँ रइआसत्तइँ ण सरि[5] चक्कइँ।
अह ण सोहहि गोरितियक्खइँ ण रइमयणइँ हुयइँ पयरखइँ[6]।

घत्ता—चदणतिलयहिँ महमहिउ विब्भमसहिउ णहलग्ग[7] चारु थण दावइ।
भुयवल्लीकरपल्लविउ थणफलणमिउ जोव्वणु वणु धण्णउ सेवइ ॥८॥

९

करइ[1] वियार विविह अहिणवरइ णववहुया विलज्जए।
अह कामधु पुरिसु ज ण करइ त पर णेव छज्जए ॥ दुवई ॥
सुदसणो णियउढए[3] णियमणे मणोरमा करेइ[2] णीविबधणे।
सुदसणो सकामय पयपए मणोरमा करेहिँ कण्ण झपए।
सुदसणो सविब्भम कडक्खए मणोरमा ण सम्मुह णिरिक्खए।
सुदसणो थणेसु[4] हत्थ घल्लए मणोरमा करेण[5] त पि पिल्लए।

७ १३ ग घ आरत्तु हुउ। १४ ग फुडु हवइ। १५ ख रक्खसिए।
८. १ ग पहरणहि। २ ख अइ°। ३ ख रइ। ४ घ विभहुजि।
५ क सिरि। ६ घ हुयपक्खइ। ७ ग ग घ लग्गु।
९ १ ख ग घ करिवि। २ क णियच्छए। ३ ग करेवि। ४ ख थणेहि।
५ ख करेहि।

सुदंसणो मुहं मुहेण चुंबए मणोरमा खणंतरं विलंबए।
सुदंसणो विएहि होट्ठ चंपए[६] मणोरमा वि हुं करंति कंपए।
सुदंसणो णहेहि घाउ दावए मणोरमाहिँ[७] अंगे सेउ धावए[८]।
पुणो रयं[९] रमंति वे वि सुंदरं इयं पि छंदयं वसंतचच्चरं।

घत्ता—हुं करंति मेल्लंति सर ते बहुवर[१०] डसियाहर केसविसंठुल[११]।
णाणा करणबंध करहिँ पुणु संवरहिँ णं रणवुहि[१२] कुरुपंडवबल ॥९॥

१०

छुडु छुडु रत्तचूलवासिय किर छुडु पचलिय[१] पवासिय।
उट्ठिय कायसद्द भयवेविर छुडु णिलुक्क कोसिय ॥ दुवई ॥
ता जगसरवरम्मि णिसि कुमुइणि उडु[२] पप्फुल्लकुमुयउद्भासिणि[३]।
उम्मूलिय पच्चूसमयंगेँ गमु सज्जिउ ससिहंसविहंगेँ।
बहलतमंधयारवारणअरि दीसइ उययसिहरे रविकेसरि।
पुव्वदिसावहूहिँ[४] अरुणच्छवि लीलाकमलु व उब्भासइ रवि।
सोहम्माइकप्पफलु[५] जोयहो कोसुमगुंछु[६] व गयणासोयहो।
दिणसिरिविद्दुमवेल्लिहे कंदु व णहसिरि घुसिणलल्लामय[७] बिंदु व।
अह चउत्थदिणे णववरइत्तहो उण्णामउ कंकणु छोडिउ तहो।
वल्लहीए सह णिरु कीलंतहो इच्छियकामभोय भुंजंतहो।

घत्ता—बहुदियहहिँ णयणाणंदियहो सुउ जाउ तहो णामेँ सुकंतु सुपसिद्धउ[८]।
तरुणिगणमणअवहरणु जगदिहिकरणु पच्चक्खु णाइँ मयरद्धउ ॥१०॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए अलं विरहकायरा जिह मणोरमासुंदरी विवाहु जिह जायउ जिह मणिच्छियं भोयणं दिणेसस्स अत्थो जह सुरयकील सूरुग्गमो इमाण कयवण्णणो भणिओ संधी फुडु पंचमो

संधि ॥३॥

---

९. ६ क चप्पए। ७ ख मणोरमा वि। ८ ग घ दावए। ९ क रई। १० ग घ बहुयवर। ११ क विसंछुल। १२ क रण कुणइ।

१०. १ ख पवसिय। २ ख छुडु। ३ ख ग घ उब्भासिणि। ४ ख ग घ वहूइ। ५ क ग घ फलु। ६ क ख कुसुम। ७ ख घुसिणु लुलामय। ८ घ विक्खायउ।

संधि ६

१

सरसं विंजणसहियं मोयय[1]सारं पमाण[2]सिद्धं खु।
भोज्जं कव्वविसेसं विरल सहि एरिसं लोए॥
अह तहिँ अवसरे परिमिउ संघेण असेसेँ।
उववणे पत्तउ तवपुंजु णाइँ मुणिवेसेँ॥

साहुसमाहिगुत्तओ छुड्डु पहुत्तओ ताम रिसहदासो।
वंदणहत्तिए गओ करिविलग्गओ जिणहो णं [3]सुरेसो॥ आरणालं॥

पुच्छंतहो तहो पणमियसिरासु गिहधम्मु कहइ मुणि वणिवरासु।
अत्तागमतच्चहँ[4] सद्दहाणु जं कीरइ तं सम्मत्तु जाणु।
अत्ता अट्ठारहदोसचत्तु तेँ ईरिउ जं तं होइ सुत्तु[5]।
सुत्तु[6] वि परवाइयणयदुलंघु पुव्वावरअविरुद्धउ सलग्घु।
जीवाजीवासवबंध जेम संवर णिज्जर मोक्खो वि तेम।
अक्खिय ए एतहिँ तत्त[7] सव्व ते सद्दहंति जे के वि भव्व।
आजम्मु वि के वि ण सद्दहंति मिच्छत्तहो सिरे किं[8] सिंग होंति।
गउ तेण णरए संघसिरि मंति पावेँ कि कत्थ वि[9] होइ संति।
सम्मत्तेँ विणु तउ घोरु वीरु चिज्जंतु वि णिरु सोसियसरीरु[10]।
किं बहुणा तं अकियत्थु[11] जाइ दुज्जणजणे[12] किउ उवयारु णाइँ।
तरुवरहो मूलु सिरु धडहो जेम सारउ सम्मत्तु वि वयहो तेम।

घत्ता—इय जो मण्णइ सो दुक्खलक्ख णिण्णासइ।
मूलगुणव्वय पुणु तहो मुणिंदु आहासइ॥१॥

---

१. १ ख मोयण, ग घ मोया। २ ग घ पमाणु। ३ क एं जिणाएं: ख जिणहं नं; घ जिणहो एं सुरेसरो। ४ क तच्चहिं। ५ क तत्तु; ग घ सच्चु। ६ क तत्तु। ७ क सच्च। ८ घ किं सिरे। ९ ग घ कत्थइ। १० क सोसियणियसरीरु; ख भिज्जंतउ णिरु सोसियसरीरु। ११ ख अकयत्थ। १२ ख दुज्जणि जणि।

२

पिप्पलदुविह उंबरा[1] सवड फिंफरा सुहुमतससमिद्धा ।
इय पंच वि ण खज्जहिँ णेय दिज्जहिँ[2] आगमे णिसिद्धा ॥

संधिज्जंतए भज्जगुणंतए ।
सुहुमइँ सत्तइँ होंति बहुत्तइँ ।
तं जो घोट्टइ सो णरु लोट्टइ[3] ।
गायइ णच्चइ सुयणइँ णिंदइ[4] ।
कविलइँ वंदइ विहसइ कंपइ ।
अभणिउ जंपइ रंगइ वग्गइ ।
जुवइहिँ लग्गइ माउ जि संगइ ।
भउहउ वंकइ गज्जइ रिंकइ[5] ।
पडइ विहत्थहो रत्थहिँ कत्थहो ।
छेरइ हेरइ दारइ मारइ ।
रुज्झइ बज्झइ जुज्झइ[6] मुज्झइ[7] ।
मुच्छाजुत्तहो मंडल मुहे तहो ।
मुत्तहिँ[8] लंघेवि पुणु पुणु सुंघेवि ।

घत्ता—मज्जहो पाणेँ जायवकुलु सयलु[9] समत्तउ ।
दुक्खपरंपर तह चारुदत्तु संपत्तउ ॥२॥

३

मज्जहो दोस अक्खिया तुह ण रक्खिया संपइ वणीसा ।
इह सुपसिद्ध जारिसा कहमि तारिसा णिसुणि मंसदोसा ॥ आरणालं ॥

सुक्कसोणिएहिँ जाउ होइ मंसु पसुवहाउ ।
दिस्समाणमवि[1] विहत्थु जिणवरागमे दुगंछु ।
तम्मि जीव संभवंति दिट्ठिगोयरा ण होंति ।

---

२. १ क उंबेरु । २ क दिज्जइ । ३ ग घ उट्ठइ वग्घइ । ४ ख रट्टइ वंचइ गायइ णच्चइ । ५ क रंकइ (टि. रंको भवति) । ६ क डज्झइ । ७. ख बज्झइ जुज्झइ मुज्झइ कुज्झइ । ८ क मुत्तिवि; ख मुत्तिहिं । ९ ख सयलु वि ।

३. १ क दिस्समाण सा, ख दीसमाणु म वि ।

जं जि एरिसं हवेइ तं बुहो कहं असेइ।
णो अहिस[2] तासु ठाइ[3] जो पलं णिहीणु खाइ।
एयचक्के जो पहाणु रक्खसो बगाहिहाणु।
सो पलं असंतु संतु रउरवे मरेवि[4] पत्तु।
आसि विप्प वोमे जंत[5] भूमिपडिय तं असंत[5]।
धम्मु मंसभक्खणेण के वि भणंति पसुवहेण।
एस छंदु हे गुणाल तोमरेहु[7] पुप्फमाल।

घत्ता—धम्मु जि[8] एरिसु तो केरिसु पाउ भणिज्जइ।
एण जि सग्गहो तो णरए केण जाइज्जइ॥३॥

४

णिग्घिण[1] तरुभयावणे णियवि काणणे महुयरीण[2] छत्तं।
णिप्पीलंति महुरसं णवर णं विसं तं ण पियवि[3] जुत्तं॥ आरणालं॥

जइ एक्क वि मच्छिय पेच्छिज्जइ भोयणे सव्वेहिँ[4] वि चिलिसिज्जइ[5]।
मुहु मलवलइ[6] पउरु थुक्किज्जइ असणु खद्धु जं तं बोक्किज्जइ।
हा हा जणु अयाणु मइमोहिउ[7] इहपरलोयजम्मसुविरोहिउ।
मच्छियाण छत्तंडयवसरसु[9] पियइ लोउ णिरु जीहिंदियवसु।
अइपवित्तु जणु जणहो पघोसइ[10] संपूसइ[11] तं कि पि ण दूसइ।
सुइ सुइ महु भणंतु खउ गच्छइ लोयायारु एहु ण णियच्छइ।
बारहगामडहणे जं कहियउ पाउ होइ तं जे[8] महु वहियउ।
जो पुणु जीहलुद्धु तं पासइ[12] तसु पुणु पावसंख को भासइ।
आसिकाले संदरसियदुहमलि[13] जणपसिद्ध हुय महुबिंदुय कलि।

३. २ ग घ णो वहिसु। ३ क होइ। ४ क मरेइ। ५ क °तु।
६ ख कि वि। ७ ख तामरोह। ८ ख वि जे।

४. १ घ णिग्घिणि। २ ग घ महुयरीय°। ३ क पियउं। ४ क सव्वहे।
५ ग घ विलसेज्जइ। ६ ख मलमलइ। ७ ख मय°। ८ ख जम्मलोय°।
९ क छत्तंडयजो रसु। १० ख जणहि विघोसइ। ११ क तं पूसइ। १२ क उण जीउ लुद्धु तं पासइ (टि० जीवः लुब्धः), ख पायइ। १३ ख °कलि, ग घ °सलि।

घत्ता—पंचुंबर सुर पलु महु एए जइ मुच्चइ।
सिरिअरुहागमे ते[१४] अट्ठमूलगुण वुच्चइ ॥४॥

५

एवहिँ पंच अणुवया तिण्णि गुणवया जणमणाहिणंद।
चउ सिक्खावया तह होंति ते जहा णिसुणि हे वणिद ॥ आरणालं ॥
संखेवेँ जिणागमे जीवरासि वुत्तो।
सिद्धभवासिय भेयहिँ[१] दुविहु सो णिरुत्तो ॥
अट्ठगुण अणोवमा सिद्ध एक्क भेया।
तसथावर भवासिणो जीव दुविह णेया ॥
तस वि दु तिण्णि चउ पुणो पंचकरण जुत्ता।
जलथलणहयलसमुब्भवा ते वि विबुह वुत्ता ॥
गब्भय तह समुच्छिमा सण्णि इयर णामा।
पज्जत्तापज्जत्तया कम्मपयडिधम्मा[२] ॥
थावर ते वि पंचहा होंति इह णिरुत्ता।
महिजलयग्गिमारुअ[३] वणप्फई अणंता ॥
अच्छउ दूरें हिसणं[४] चिंतिएण दुत्थो।
णिवडिउ घोररउरवे मरेवि सालिसित्थो ॥
जीववहं ण कीरए इय मुणेवि सम्मं।
परु अप्पं समागयं दीसए णिछम्मं[५] ॥
तसु पुणु काइं सीसए जो करेइ हिंसा।
हेला णाम दुवइया वुत्त णवर एसा ॥

घत्ता—अह थावरगणे जइ[६] कीरइ हिंसा कत्थ वि।
णउ पुणु इयरहँ मंतोसहिपिउदेवत्थु वि ॥५॥

---

४. १४ ख °गमि भेय।

५. १ ख भवासिणो जीव; घ भवासिभेयहिं। २ क पज्जत्तया अपज्जत्तया कम्मपडिधम्मा (टि० कर्मसहिताः)। ३ ख मारुव। ४ क दूरेंहि मरणं (टि० बधादिकं दूरे तिष्ठतु, मनो व्यापारेण कृत्वा)। ५ क समाणउ दीसउ णिच्छम्मं, ख तह प्फरुप्प समाणए।
६ क ग गणे इह; ख गणिएणजइ; घ गमणे इह।

६

बीयाणुव्वए गिरा सपरहियियरा चवसु सुहय णूणं ।
वसु णरणाहु होंतओ णरए पत्तओ अलियभासणेणं ॥ आरणालं ॥

णिसुणि[1] वणिणाह तह अणुवयतइज्जए[2] ।
तिणसमाणं पि परदविणु ण हरिज्जए ॥
हरिवि रयणाइँ वणिवरहो दुहतत्तओ ।
मरिवि सिरिभूइ णरयम्मि[3] संपत्तओ ॥
अणुवय चउत्थम्मि[4] परतियविवज्जणं ।
कुणसु चडुलयरमणपसरपरिभंजणं ॥
रावणाइय जसपसरपरिसेसिणं[5] ।
णरए गय सयल परतियहो अहिलासिणं[6] ॥
गंथपरिमाणु करि पंचमाणुव्वए ।
गयउ फुडहत्थु[7] लोहेण चिरु सब्भए ॥[8]
पढमगुणवए फुडं सुहय पयडिज्जए[9] ।
दिसि विदिसि गमणविरई सया किज्जए ॥
पुणु दुइज्जम्मि गुणवए रइभंजणं ।
भोयउवभोयपरिमाणपरिउंजणं ॥
तइयगुणवए पयासेमि जं जुत्तउ ।
मंदयारु त्ति छंदो इमो वुत्तउ ॥

घत्ता—संखलु रज्जु व विसु सिहि पहरणु[10] णउ दिज्जइ ।
कूरइँ जीवहँ णियमणो[11] उप्पेक्खा किज्जइ ॥६॥

७

सल्लकसायगारवे जणियरउरवे वज्जिऊण सम्मं ।
समया चित्ते किज्जए संभरिज्जए[1] दोसमुक्कधम्मं ॥ आरणालं ॥

---

६. १ ग घ णिसुणिवि । २ ग घ अणुवया तज्जए । ३ ख सो णरय । ४ क ख °चउत्थए । ५ क प्रतिषु '°सेसणं' । ६ ग घ °लासणं । ७ ग घ फडहत्थु । ८ ग घ सुब्भए, ख सत्तए । ९ ग घ पडिवज्जए । १० ख पहरणो वि । ११ ख °मणिण ।

७. १ ख सुहु भरिज्जइ ।

पहिलउ सिक्खावउ होइ एम वीयउ आयण्णहि[2] कहमि[3] जेम।
उववासु अहव णिव्वियडि जाणु[4] लुक्खाँ[5]हारंबिलु अद्धमाणु[6]।
सिंगारविवज्जणु भूमिसयणु चउपव्वहिँ कीरइ णिहयमयणु।
तिज्जए सिक्खावए पत्तदाणु दिज्जइ णियसत्तिए सुहणिहाणु।
सो पत्तु वि तिविहु जिणेहिँ सिट्ठु उत्तमु तह मज्झिमु अह कणिट्ठु।
रयणत्तयपावियँ[7]परमलाहु वयवंतउ उत्तमु पत्तु साहु।
जो सावउ सो मज्झिमु[8] णिरुत्तु अविरयसम्मत्तेँ हीणु पत्तु।
दिढयरमिच्छत्तमएण मत्तु अक्खिउ संखेवेँ सो अपत्तु।

घत्ता—तिविहहो पत्तहो दाणेण तिविहु[9] फलु लब्भइ।
जिह पुरिसंतरसंगेण सीलु पवियंभइ॥७॥

८

अग्गिल णाम बंभणी दुहणिसुंभणी[1] देवि पत्तदाणं।
जक्खकडक्खलक्खिणी जाय जक्खिणी संस सुरणराणं॥

पत्तदाणमाहप्पविसेसेँ रयणविट्ठि लद्धी सेयंसेँ।
इय मुणेवि परउत्तमपत्तहो दिज्जइ दाणु सीलसंजुत्तहो।
जिणहरे अहव पंथे अहपंगणे करेवि तासु पडिगहु तोसियमणे[2]।
सुइपएसे उच्चासणु दिज्जइ पायंवुरुहजुयलु धोविज्जइ।
जलु वंदिवि विहिणा अंचिज्जइ पणविज्जइ तिसुद्धि भाविज्जइ।
एम दाणु जं दिज्जइ अवियलु वडवीउ व हवेइ तं बहुफलु।
विहलु जाइ कह[3] दिण्णु अवत्तए[4] ववििउ वीउ जह ऊसरछेत्तए[5]।
कंचणमणिगणोहु सयणासणु धणु कणु भवणु असणु तह णिवसणु।
दीणहँ दुत्थियाहँ जं दिज्जए तं कारुण्णदाणु पभणिज्जए।
चयवि संगु सण्णासु करेवउ वुत्तु चउत्थु एहु सिक्खावउ।

---

७. २ घ आयाणहि। ३ ख कहिमि। ४ ग घ जासु। जिणहरि जाइअह अरुह तासु। ५ ख रुक्खा°। ६ क वड्ढमाणु, ग घ वत्थुमाणु। ७ ख जुत्तय। ८ ग घ सावउ मज्झिमु मुणि। ९ ख विविहु वि।

८. १ घ तमणिसुं°। २ क ग घ °जणे। ३ ख जं; ग घ किह। ४ ख अपत्तइ। ५ वाविउ वीउ जहोसरछेत्तए।

घत्ता—इय सावयवय पालेवि णरु सग्गहो गच्छइ।
चलहारमणिओ रमणिओ रमंतु चिरु अच्छइ ॥८॥

९

तत्तो चइवि सुरवरो[1] हवइ णरवरो भुंजिऊण सोक्खं[2]।
पुणु तवजलणतत्तओ कम्मचत्तओ लहइ परममोक्खं॥

णिसिअसणे[3] वयइँ ण सोह दिंति　　उवयरियइँ खलयणे किं करंति।
सारउ जिह मंदरु पव्वएसु　　णिसिभोयणवज्जणु तह वएसु।
णउ जुत्ताजुत्तउ मणे कलंति　　गड्डुरियपवाहे जण चलंति।
रविविहुरे जाए भुंजंति तो वि　　अच्छंति मूढ णउ णियमु लेवि।
पसुवहँ पुमाहँ अंतरु वि कवणु　　जइ णउ मुअंति तुंगीहिँ असणु।
तहिँ समए भूअ रक्खस मिलंति　　दिट्ठिहिँ अगम्म भोयणु गिलंति।
दीसइ ण किं पि मलु रेणु वालु　　अहिगरलु वि दरिसियपलयकालु।
घिरिहोलि[4]पमुह जइ पइसयंति[5]　　दुप्पेच्छ रोय तो संभवंति।
जे सुहुम जीव अवर वि अडंति　　ते असणमज्झि अवसि[6] पडंति।
हियएण अंध दरमलेवि खंति　　इय पयउ दोससय तहिँ हवंति।

घत्ता—एहउ बुज्झिवि वरि हालाहलु विसु खज्जइ।
सीलु विवज्जेवि णउ रयणिहिँ भोयणु किज्जइ ॥९॥

१०

हा हा लोउ मूढउ पावें छूढउ मुणइ णउ हियत्तं।
तणु सहसत्ति खिज्जए किं मरिज्जए रयणि जइ[1] ण भुत्तं ॥ आरणालं॥

सहउ सिहितावणं　　महउ सुहभावणं।
चडउ[2] जलियाणले　　पडउ भइरवतले।
जाउ गयकणखले　　ण्हाउ गंगाजले।
हरउ देहहो मलं　　धरउ सिरि गुग्गुलं।

---

९. १ क सुरवरहो। २ क णरसोक्खं। ३ क ग घ साणें। ४ क घिरिहोलि। ५ ग घ पयसवंति। ६ क ग घ एविणु।

१०. १ ख णिसिहि जं। २. क उडउ।

हुणउ तिलजवघयं णवउ दियवरसयं।
जणिय अरिविग्गहे मरउ तहिँ गोग्गहे।
देउ दियसासणं लेउ गुरुपेसणं।
कुणउ हरअच्चणं पुरउ कयणच्चणं[3]।
तणु जि परिखिज्जए फलु ण संपज्जए।
णिसिहिँ छुडु भोयणं करइ मणमोयणं[4]।
अमरपुरसुंदरं णाम छंदो वरं[5]।

घत्ता— दुद्धहो भरियउ जिह घडु सुरबिंदु विणासइ।
तिह णिसि असणें[6] तवहो महाफलु णासइ ॥१०॥

११

जाणंत वि[1] ण वज्जहिँ णिसिहिँ भुंजइँ के वि जे णिहीण।
ते अण्णहि भवंतरे दुहणिरंतरे होंति धणविहीण ॥ आरणालं ॥

[2]खुद्दखुद्द घोरसद्द[2]।
किण्हगत्त रत्तणेत्त।
दीहदंत णं कयंत।
वंकतुंड ओट्ठखंड।
उद्धकेस थूलणास
कण्णतुट्ट पायफुट्ट।
काण कुंट पंगु मंट।
हिंसठाण मंसखाण।
पावयम्म हीणकम्म[3]।
ते हवंति णीसरंति[4]।
धम्मु तो वि तेत्थु को वि[5]।
णेव[6] लिंति णो लहंति।

---

१०. ३. क ग घ कव्वच्चणं। ४ ख जो मोयणं। ५ क °सुंदरी णाम छंदो इणं; ग घ °सुंदरी छंदु णामो सिरि। ६ ख णिसिहि असणेण।

११. १ ग घ जाणंतहि। २ क बहुलणिद्द सुट्ठुखुद्द। ३ ख हीणजम्म। ४ ख ग घ नो करंति। ५ क एवि (टि० आगत्य)। ६ ख ग घ णेव।

सोक्ख जाम गंपि ताम ।
खाणपाण मग्गमाण ।
चंडियाहिँ अग्गि ताहिँ[७] ।
ते पडंति तो दडंति[८] ।
देवि एइ[९] कि व देइ ।
कज्जसिद्धि पुण्णलद्धि ।
णत्थि ताण माणवाण ।
कामबाण छंदु जाण ।

घत्ता—अप्पउ[१०] अहणिसु उज्जमु[११] करेवि संतावइ ।
पुण्णविहीणउ अणु-मत्तु वि सुक्खु ण पावइ ॥११॥

१२

वर कोवीणधारया कलुणकारया लच्छिए विहीणा ।
लेविणु लट्ठि[१] करयले भमहिँ महियले भिक्ख मग्गमाणा ॥ आरणालं ॥

ते सुक्ख लुक्ख[२] अलहंति भिक्ख ।
पेसणु करंति कि पि वि हरंति ।
गंजणु सहंति पाणिउ वहंति ।
घर सारवंति पयजुय णवंति[३] ।
कणतुस लहंति चूरेवि पयंति ।
घरकोणे खंति डिभउ णदंति[४] ।
णउ अक्खवंति रिट्ठउ जियंति[५] ।
कंदलु कुणंति णियसिरु धुणंति[६] ।
रूसेवि जंति देसहिँ भमंति ।
सिय अहिलसंति अट्टेँ मरंति ।
छंदु वि मुणेह[७] फुडु चंदलेह ।

---

११. ७ क घोरसह। ८ ख तोडयंति। ९ क ग्राइ; ग घ देइ जाइ, देवि जाइ केम। १० क ग घ मच्छउ। ११ ख उजउ।

१२ १ क जाहि; ग घ लाहि। २ क रूखलक्ख। ३ ग घ णमंति। ४ ख ग घ डिभहं ण दिंति। ५ ख रंधिउ जिवंति। ६ क हणंति। ७ क जंपंति एह।

घत्ता—इय जाणेविणु जे रयणिहिँ भोयणु सेसहिँ[८]।
दोसविवज्जिय ते दिणयरु व्व उब्भासहिँ[९] ॥१२॥

१३

संपुण्णंगमणहरा विमलजसहरा कमलबंधु तेया।
विहुरसहासवज्जिया[१] तियसपुज्जिया इंदउव्वमेया ॥ आरणालं ॥
सुंदरसरीर सुरगिरिसुधीर भीसणसमरंगणे एक्कवीर।
अखलियपयाव गंभीरराव तइलोक्कपसिद्ध महाणुभाव।
णियअरिकयंत रिद्धिए महंत मयरद्धयव्व[२] सोहग्गवंत।
साउहभडेहिँ दप्पुब्भडेहिँ सेविज्जहिँ जयसिरिलंपडेहिँ।
मयघुम्मिरेहिँ गइमंथरेहिँ आरुहहिँ सलक्खणगयवरेहिँ।
तोसियसुरेहिँ[३] भाभासुरेहिँ विज्जिज्जहिँ विविहहिँ चामरेहिँ।
जणमणहरेहिँ सुस्सरसरेहिँ गाइज्जहिँ वरगायणसएहिँ।
तहिँ भामिणीहिँ मणभावणीहिँ[४] माणिज्जहिँ गयवरगामिणीहिँ।

घत्ता—अवरु वि जं जं इह[५] कि पि वि दीसइ गयमलु।
जाणसु सुंदर तं तं जि[६] अणत्थमियहो फलु ॥१३॥

१४

जा जुवइ वि बहुरसं[१] चयइ जह विसं जामिणीहिँ भत्तं[२]।
सा पावइ कुलं वरं णाइँ अंबरं[३] णिम्मलं पवित्तं ॥ आरणालं ॥
कुडिलालय ससिवयण[४] मिगणयण[४]।
णिद्धदसण[५] तंबिरअहर महुरसर।
किसलयभुय[६] घणथणकलस मज्झं किस[७]।
गुरुणियंब जणजणियरइ हंसगइ।
अहिणववेल्लि व हलहलिय कोमलिय।

---

१२. ८ क वज्जहि। ९ क दिणयरु क वउ भासहि।

१३. १ ग घ विहुर°। २ क ग घ मयरद्धवंत। ३ घ वरनरवरेहि।
४ ख मणगामणीहि। ५ घ इह तं। ६ क जियहो (टि० जीवस्य)।

१४. १ क ग घ विविह°। २ ख भुत्तं। ३ क यंबर°। ४ क °णी।
५ क सिद्ध°। ६ ख °भुय लवणजुम्म। ७ क मज्झि किस।

सव्वावयव सलक्खणिय बुहथुणिय ।
होइ णरिंदहो पाणपिय णाइँ सिय ।
लहइ जाण जंपाण धय मत्तगय ।
वरतुरंग संदणपवर भडणियर ।
विविहकुसुमफलदलघणय[8] उववणय ।
करइ कील सहुँ सहयरिहि मणहरिहि ।
इय[9] रयणमाल[10] पद्धडिय पायडिय ।
घत्ता—सुहसय[11] भुंजिवि वइरायवंत तउ पालइ ।
अच्छउ इयरहो इंदहो इंदत्तणु ढालइ[12] ।।१४।।

१५

कुगुरुकुदेवभत्तिओ[1] मयपमत्तिओ[2] णिसि असंति[3] जाओ ।
कंचाइणिसरिच्छओ दुण्णिरिक्खओ होंति मरेवि ताओ ।। आरणाल ।।
रयभुरकुंडिउ रंडिउ मुंडिउ ।
चेडिउ दासिउ छिव्वर[4]णासिउ ।
विसरिसभालउ वुडियकवोलउ[5] ।
चुधलणेत्तउ[6] दीहरदंतउ[7] ।
हड्डुकरालउ इंगलकालउ ।
लंबिरथणियउ असुहावणियउ ।
कुंटिउ मंटिउ[8] मोट्टिउ छोट्टिउ ।
बहिरिउ अंधिउ अइदुग्गंधिउ ।
पेसणसारिउ विप्पियगारिउ ।
हीणउ दीणउ कम्मे[9] रीणउ[9] ।
मइलकुचेलिउ कलहणसीलिउ ।

---

१४. ८ क ग घ °ए । ९ क ग घ इय णामें । १० ख रयणावलिय ।
११ ख सुहसिरि । १२ ख ग टालइ ।

१५. १ ख °मत्तउ । २ क °पत्तिओ; ख पमत्तउ । ३ ख असंतु । ४ क चिब्बिर ।
५ क चडिय°, ख बुडिय वोलिउ, घ चुडिय । ६ क °णेत्तिउ । ७ क दंतिउ ।
८ क कुंठिउ मंठिउ, घ मंठिउ । ९ क हीणिउ दीणिउ कम्में रीणिउ ।

भिक्ख भमंतिउ दुक्ख सहंतिउ ।
इय[10] चिरु अच्छहिँ सोक्ख समिच्छहिँ ।
दइयहुँ[11] रूसहिँ अप्पउ[12] दूसहिँ ।
तिहुवणरम्महुँ[13] तो वि ण धम्महुँ ।
लग्गहिँ मूढिउ पावपरूढिउ ।

घत्ता—पुणु वणिणाहे पुच्छिउ मुणिवरु रहसु ण रक्खइ ।
अवडयदिट्ठंते[14] जीवहो दुहु सुहु तं अक्खइ ॥१५॥

१६

चलियउ को वि तरुघणे गयउ काणणे भिल्लपंथि[1] पत्तो ।
धाविउ[2] तासु गयवरो उद्धकियकरो[3] गुलुगुलंतु मत्तो ॥ आरणालं ॥

गयभीयउ णासंतो संतो सरणं अलहंतो[4] ।
जा घिप्पइ सो णरु किर करिणा[5] णं हरिणो हरिणा ।
ता तहिँ रण्णे सो बप्पडउ[6] पेच्छेविणु अडउ ।
तहिँ अडे लंबइ तणु सपयासे[7] लग्गेवि दिढकासे ।
जाम अहो जायइ किर तट्ठो अजयरु ता दिट्ठो ।
अवर वि चउकोणेसु सदप्पा दिट्ठा चउ सप्पा ।
तो किण्हसिया मूसय संकासं[8] कुरुडहिँ सपयासं[8] ।
एत्तहिँ मायंगेँ पवहंते[9] तहिँ तं[10] अलहंते ।
तहो अडयहो[11] तडि दिट्ठो विडवी[12] दंतेणाहणेवी ।
कंपाविउ तहो साहहो गुलिउ[13] महुयरि महु[14] गलिउ ।
सो झत्ति वि उड्ढमुहु[15] जाओ णिसुणिवि तहो राओ
विसमपओ इय पायाउलओ सोलह दह कलओ ।

---

१५. १० क इह । ११ क ग घ दिव्वहु । १२ ग घ किं पि । १३ क तिहुणरजम्महु; ख °रमणहु । १४ ग घ मयणावयारो । १५ क ग प्रवडुय°, ख प्रड° ।

१६. १ ख भिल्लिपंथि । २ ग घ धायउ । ३ ग घ °कयकरो । ४ प्रतिषु 'प्रलहंतो इय संतो' । ५ ग घ किर सो णरु । ६ ग घ बप्पुडउ । ७ ख सयपासें । ८ ख °सें । ९ ख च वहंति । १० तं तहि । ११ ग घ तडयहो । १२ ख ताए तहिं रोसिए सो विडवी । १३ क गालिउ, ख गुलियउ । १४ ख मुहयरि तं गलिउ । १५ क झत्ति उड्ढ°, ख झडत्ति उड्ढ° ।

घत्ता—उड्ढ णियंतहो तहो खिल्लविल्ल संजोएँ[16] ।
णिवडिउ जीहहो महुबिंदु लिहइ[17] अणुराएँ ॥१६॥

१७

कुद्धं महुयरीउलं लग्गए अलं तासु सव्वदेहे ।
अवजसमिव कुणंदणे फणि व चंदणे धूउ णं कुगेहे ॥ आरणालं ॥

तहिँ काणणु संसारु णिरुत्तउ   मणुउ जीउ जिणणाहेँ वुत्तउ ।
भिल्लपहो[1] अहम्मु उवलक्खिउ   वणकरि मिच्चु वणीसर अक्खिउ[2] ।
अडउ देहु बहुदुक्खहँ भायणु   अजयरु णारयणिलउ भयावणु[3] ।
सप्प कसाय चारि अइदुद्धर   डसहिँ जगु वि[4] कहिँ छुट्टइ सो किर ।
कासतंबु[5] आउसु मइदक्खा   किण्हसेय मूसय दो पक्खा ।
विडवी कम्मबंधु णिरु दुव्वलु   महुबिंदु वि[6] इंदियसुहु चंचलु ।
महुयरीउ[7] बाहिउ अपमाणउ   दुस्सहाउ पीडहिँ उद्धाणउ ।
जीउ मुणंतु वि इय अवगण्णइ   असुइकिमी असुइहिँ रइ मण्णइ ॥१०॥

घत्ता—इय णीसारए संसारए सारउ तउ पर ।
जें भवि भवि किउ कलिमलु णिण्णासइ वणिवर ॥१७॥

१८

जिणु वि गिहत्थु होंतउ गयचरित्तउ ण हु लहइ झाणं ।
झाणें विणु मणोहरं मोक्खपुरवरं[1] दुलहं णराणं ॥ आरणालं ॥

तं णिसुणिवि णिव्वेय[2]-पउत्तउ   गउ वणिदु णियघरु[3] संपत्तउ ।
कहइ सुदंसणासु[4] संखित्तउ   जणपसिद्धु ववहारु णिरुत्तउ ।
णारीयणहो दोसु झंपिज्जइ   चित्तहो[5] अणुजायउ जंपिज्जइ[6] ।
अज्झलोए दक्खिण्णउ किज्जइ   दुट्ठारिहिँ विक्कमु पयडिज्जइ ।
गुरुयणे[7] विणउ भत्ति दाविज्जइ   विणएँ लच्छि कित्ति पाविज्जइ ।

---

१६. १६ ग घ खेल्लिविल्ल° । १७ ख ग घ महइ ।

१७ १ क भिल्लपंथ । २ क लक्खिउ । ३ क भयाणणु । ४ ख जि । ५ ख कम्मु । ६ क व । ७ घ महुयरियउ ।

१८. १ क °सुखवरं । २ ख णिव्वेइ । ३ ख °घरि । ४ क सुदंसणाउ । ५ ख चित्तहिं । ६ घ संपजइ । ७ ख गुरुणा ।

साहुलोउ रक्खिज्जइ सव्वे[८] णिम्मच्छरभावेण[९] सउव्वे[८] ।
मम्मिलहँ[१०] छंदे[८] वत्तिज्जइ णियकज्जे[८] खरु गुरु व गणिज्जइ[११] ।
गव्वियाहँ पडुयउ[१२] गज्जिज्जइ पाविट्ठहँ संगु वि वज्जिज्जइ ।
अवरु सम्मु कसु ण अक्खिज्जइ सरणे पइट्ठु जीउ रक्खिज्जइ ।
राउलु अह देउलु सेविज्जइ कोहु माणु माया पसमिज्जइ ।

घत्ता--कोवपरव्वसु माणड्ढु[१३] सुट्ठु मायारउ ।
लोहक्कंतउ[१४] कासु वि णउ होइ पियारउ ॥१८॥

१९

जो मम्महं ण भासए गुण पयासए चलइ छंदु णूणं ।
सो देवहु वि दुल्लहो होइ वल्लहो कि ण माणवाणं ॥ आरणालं ॥

अवरु वि सुंदर णयणाणंदिर ।
णरवइअग्गए थिए[१] ओलग्गए ।
परधिक्कारणु[२] पायपसारणु ।
अद्धणिहालणु[३] भउहांचालणु ।
करकममोडणु अंगुलिफोडणु ।
जणउवहासणु भासाभासणु ।
खासणु जिंभणु तह अवठंभणु ।
केसुम्मोहणु अंगपसाहणु[४] ।
दप्पणदंसणु अप्पपसंसणु ।
सेच्छए जंपणु णासाकंपणु ।
दंतणिपीलणु[५] दुट्ठउ कीलणु ।
आसणपेलणु अंगुव्वेलणु[६] ।
इट्ठदुगंच्छणु सेवालंछणु ।

---

१८. ८ क सत्थें । ९ ख णिम्मलेण भावेण, ग घ मणिमच्छरभावेण । १० ख धम्मे लहु; ग घ मम्मिलरु । ११ क गुरु मेल्लिज्जइ । १२ ख पडयउ । १३ क माणसु । १४ ख लोहुक्कंतउ ।

१९. १ ग घ थिउ । २ क परिधि° । ३ क मद्ध° । ४ ख केसहं छोडणु अंगपसारणु । ५ ग घ णिकीलणु । ६ ख अंगविच्चलणु ।

अवरु वि जं जं वज्जसु तं तं ।
एवहिँ काणणे बहुपंचाणणे[7] ।
गंपिणु पइसमि सिरि परिसेसमि ।
बुहयणणयणो छंदो मयणो ।

घत्ता—तो जंपिज्जइ सुहदंसणेण विहसंतेँ ।
तुम्ह परोक्खए कि मईं घरवासे वसंतेँ ॥१९॥

२०

हउँ वि सुदुद्धर[1] तवं चरमि हयभवं जियमहाकसायं ।
ता[2] जणणेण जंपियं भुवणे जं पियं भुंजि[3] णिवपसायं ॥ आरणालं ॥
जम्मणजरामरणबंधणहं खयकरणु ।
मइ सरिसु जइ पुत्त तुहुँ लेहि[4] तवयरणु ॥
एयं कुलं कासु जोएइ तो वयणु ।
तुहुँ अम्ह कुलतिलउ तुहुँ पुरिसवररयणु ॥
इह[5] तुहुँ जे पर एक्कु सुहिहिययदिहिकरणु[6] ।
पईं मुयवि को अवरु घरभारधुरधरणु ॥
करिऊण[7] आलीउ गालीउ जो देइ ।
रडिऊण तह भोयणं माय मग्गेइ ॥
अंगरुहु सो केम परिहरिवि तुह जुत्तु ।
जिणभवणु जिणण्हवणु जिणपुज्ज जिणथुत्तु ॥
करि देहि मुणिदाणु अपमाणु सुपवित्तु ।
जिणसासणे जं जि जिणवरहिं इह[8] वुत्तु ॥
जे के वि कारवहिँ जिणणिलउ मणहरहिँ[9] ।
ते अण्ण जम्मम्मि चिरु रमहिँ सुरहरहिँ ॥

---

१९. ७ क बहपंचानने (टि०बृहत्पंचानने) ।

२०. १ घ सुद्ध दु° । २ ख तो । ३ ख विलस णियसियं भुंजि । ४ क तवइ । ५ क ग घ इय । ६ ग घ वरकरणु । ७ क करि जणण° । ८ ख इय । ९ ख मणिधरहिं, ग घ मणिहरहिं ।

जिणण्हवणु जे करहिँ कारवहिँ सद्दहहिँ ।
सुरसेलसिहरम्मि सुरण्हवणु ते लहहिँ ॥
जे करहिँ भत्तीए समणोज्ज जिणपुज्ज ।
सुरणरहँ विसहरहँ ते होंति इह पुज्ज ॥
जे थुणहिँ जिणणाहु जगकमलसरमित्तु[10] ।
दोसहससजीहाहिँ तहो करइ फणि थोत्तु ॥
सत्तीए भत्तीए मुणिदाणु जे दिंति ।
ते भोयभूमीहिँ सुहु लहेवि[11] दिवि जंति ॥
[मयणावयारो छंदो]

घत्ता—पुणु णयणंदिय पणवेवि समाहिगुत्तहो पय ।
जणणी जणणु वि तउ करिवि देवलोयहो गय ॥२०॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए वणिंदे णंदणवणे[12] मुणिवरेण आहासिया अणुव्वयगुणव्वया तह य चारि सिक्खावया अणत्थमिउ तं जहा रिसहदाससग्गगमणं इमाण कयवण्णणो भणिओ संधी पुण छट्ठओ ।

संधि ॥ ६ ॥

---

२०. १० ख सरमिहरु । ११ ग घ लहहिं । १२ क णरिंद णंदणवणे; ख वंदिऊणरिंदावणे; ग घ छंदोणरंदेणवणे ।

संधि ७

१

सग्गहो गए ताए सुरलीलए सुदंसणु ।
भोयइँ भुंजंतु अच्छइ लद्धपसंसणु ।। वंसत्थ ।।

कया वि सत्तीए[1] सुपुण्णु लितओ   मुणीण सत्थे सुहदाण[2] दितओ ।
कया वि भत्तीए जिणं थुणंतओ   महंत पूयं ण्हवणं कुणंतओ[3] ।
कया वि सव्वण्हुणिकेय जंतओ   जिणेदतुंगालय कारवंतओ ।
कया वि दिव्वाहरणेहिँ राइओ   पढंतवेयालियविंदसेविओ ।
कया वि णट्टं सरसं णियंतओ   सुहावहं गेयसरं सुणंतओ ।
कया वि कीलाहरे[4] विब्भमंतओ   मणोज्जचोज्जेण पिया दमंतओ ।
कया वि हासेण वि रोसवंतओ[5]   सुचाडुआलावहिँ तोसवंतओ[6] ।
कया वि थोवं पि हियं चवंतओ   सुकंतपुत्तं णिरु सिक्खवंतओ ।
कया वि णाणाविहकज्जगुत्तओ   अणेयसकप्पवियप्पजुत्तओ ।
समीहए छेलहए[7] वणिदओ   इमो वि वंसत्थु हवेइ छंदओ ।

घत्ता—इय सुविणोएहिँ[8] चरिमाणंगउ अच्छइ ।
णरवइहे पसाय[9] पुण्णवंतु संगच्छइ ।।१।।

२

वराए वाणीए[1] तिलोयरंजया जसुत्तमा सीस भणंति संजया ।
जणाणुराओ तहो काइँ सीसए सुहासुह लोए पयक्खु दीसए ।। वंसत्थ ।।

लइ केत्तिउ धम्महो फलु सीसए   करे कंकणु कि आरसि[2] दीसए ।
अच्छउ दंसणेण फंसेण वि[3]   होइ णेहु केण वि णिसुएण[4] वि ।

---

१. १ ग घ भत्तीए । २ क सुहयाए, ग घ सह दाए । ३ क कयंतओ । ४ ख लीलाहरि । ५ ख हासेवि चरइ रमंतओ । ६ क मणोज्जभोएण सुहं जणंतओ । ७ ख समाहिहत्थेहलहे । ८ क सुविणोयएहि, ख सुविणोयं । ९ क पसाइय ।

२. १ ग घ विराय वाणीय । २ क आरिसे । ३ क वरएण वि; ग घ परसेण वि । ४ क जि सुएण ।

तहो सोहग्गु कविल णिसुणंतिय उवरोहियहो कविलभट्टहो पिय।
मिगलोयण पाडलगाइगामिय कुसुमाउहवाणहिँ आयामिय[5]।
वार वार अणिबद्धउ जंपइ विहिलंघलु[6] हवेइ खणे कंपइ।
खणे रोमंचु होवि[7] सुपसिज्जइ विरहु वि सण्णिवायजरु णज्जइ[8]।
तहे सरायमणु[9] दिसिहिँ पधावइ करिपयदलिउ तुच्छु जलु णावइ।
अह ण कवणु णेहे[?] संताविउ पवणे[?] धयवडो व्व[10] कंपाविउ।
मालव देसि गउडि[11] हिंदोलउ महु ण सुहाइ भणहि[12] भावालउ।
पंचमु पंचमु सरु णं कामहो[13] हलि[14] सहि विरहणेहु उवसामहो।

घत्ता—कविलहिँ वयणेण सहियए[15] पंचमु वुत्तउ।
सविसेसें ताहे पचेसहो[16] सरु खुत्तउ ॥२॥

३

सुदंसणे जायसुहरस[1] लुद्धए परोक्खराएण रयाए मुद्धए।
मुणेवि णीसास सहेल्लिअग्गए पयंपियं तोरणखंभलग्गए[2] ॥ वंसत्थ ॥

बहिणि मज्भुवेयण ण वियाणहि जइ जाणहि[3] तो सो वि ण आणहि।
जो सज्जणमणणयणाणंदणु सुहउ णाइँ गोविंदहो णंदणु।
पुरवरम्मि णीसेसउ गणियउ पुरुसिलीमुहेहिँ जे[4] वणियउ।
इय वरगुणु ण जाइँ[5] सो पाविउ ताहिँ जीउ फुडु अइसयपाविउ।
तहो विरहाणलेण हलि महु तणु[6] डज्झइ हुयवहेण णं जरतणु।
चंदु वि मज्भु मणहो णो[7] भावइ इय मुणेवि करि जं तुह भावइ।

घत्ता—तो सहयरियाए[8] मग्गे[?] जंतउ लक्खिवउ[9]।
कविलहे[?] विहसेवि तीए सुदंसणु अक्खियउ[?] ॥३॥

२. ५ ख ओहामिय। ६ क विहलंघणु। ७ ख होइ। ८ क णिज्जइ। ९ ख तहि रायइ मणु, ग घ ताहे रायमणु। १० ख वडोउ। ११ क ग घ मा लवेसि गउडी। १२ क ख भणइ। १३ क पंच विसमसरु कामहो। १४ ग घ हल। १५ ख सहियहिं, ग घ सहिए। १६ ख तहो पंचेसरु।

३. १ ख ग घ सुदंसणुज्जाय सुहस्स। २ ग घ थंभलग्गए। ३ क जाणइ। ४ ख जो; ग घ जं। ५ ख जसेण। ६ ग घ मणु। ७ ख ण वि। ८ ख तहो सहियरियाइं। ९ क °यउ।

४

पलोइओ ताए सणिद्धदिट्ठिए पयंपियं चित्तणुरायहिट्ठिए[1] ।
वयंसि जं सोक्खमणिट्ठदंसणे ण तं सुगाढेइ परस्स फंसणे ॥ वंसत्थ ॥
एवहिँ सहि गंपिणु जइ महु वेयण जाणहि ।
पिउ बोल्लिवि पिययमु तो महु णिलयहो आणहि ॥
गय[2] जंपइ दूइ भो पंकयदललोयण ।
तुह मित्तहो संपइ मत्थए वट्टइ[3] वेयण ॥
अवियप्पु[4] वणीसरु लहु सउहयले पइट्ठउ ।
सुहि एत्तहिँ तेत्तहिँ जोयंतेण ण दिट्ठउ ॥
पुच्छिय कहिँ कविलो अच्छइ वेयणजुत्तो ।
तो कविलए कामो करे धरेवि इय वुत्तो[5] ॥
तुह[6] विरहपरव्वस हउँ झीणी अणुदिणु किह ।
इह किण्हए पक्खए मयलंछणलेहा[7] जिह ॥
कि दिसउ णियच्छहि महु उप्परि दय किज्जउ[8] ।
परिउंबिवि[9] सुहव गाढालिंगणु दिज्जउ[8] ॥
ण मुणइ चित्तंतरु कविला रइसुहु वंछइ ।
सच्चउ आहाणउ[10] अत्थी दोसु ण पेच्छइ ॥
तो चवइ सुदंसणु सुंदरि कि तुहुँ ण मुणहि ।
लइ कहमि हियत्थे गूढमम्मु[11] महु णिसुणहि ॥
पर कसु वि म अक्खसु[12] जाणहि संढउ मइँ इह ।
बाहिरे परसुंदरु[13] इंदवारुणीफलु जिह ॥
सहसत्ति विरत्तिए कविलए मुक्कु वणिंदो ।
मागहणक्कुडिया णामे[14] एसो छंदो ॥
घत्ता—दूरयरपियाहँ महिलहँ[15] मणसंतावणु ।
तहिँ अवसरे पत्तु मासु वसंतु सुहावणु ॥४॥

४. १ ख °दिट्ठिए, ग घ सिट्ठिए । २ क गइ । ३ ख वट्टइ; ग घ वट्टए । ४ क अवियप्पवसें । ५ क वुत्तउ । ६ क तउ । ७ ख रेहा । ८ क °ज्जइ । ९ क परिऊरवि । १० ख इय सच्चउ ऊहाणु । ११ क गूढमणु । १२ ख पर कासु वि मा मक्ख । १३ ख बाहिरि परिसुंदरु दीसइ । १४ ख णामो । १५ क पहयिहं; घ पहियउ ।

५

सुयंधुमंदो मलयद्दिमारुओ वसंतरायस्स पुराणुसारओ[1]।
जणंतु खोहं हियए वियंभए समाणिणीणं अणु माणु सुंभए ॥

जहिँ जहिँ मलयाणिलु परिधावइ तहिँ तहिँ मयणाणलु उद्दीवइ ।
अइमुत्तउ[2] जहिँ वियसइ मुद्धउ छप्पउ कि ण होइ रसलुद्धउ ।
जो मंदारएण णिरु कुप्पइ सो किं अप्पउ कुडए समप्पइ[3] ।
सामल कोमल सरस सुणिम्मल कयली वज्जेवि केयइ णिप्फल ।
सेवइ फरसु वि छप्पउ भुल्लउ जं जसु रुच्चइ तं तसु भल्लउ ।
महमहंतु विरहिणिमणदमणउ कसु ण इट्ठ पप्फुल्लियदमणउ ।
जिणहरेसु आढविय सुचच्चरि करहिँ तरुण सवियारी चच्चरि ।
कत्थइँ गिज्जइ[4] वरहिंदोलउ जो कामीयणमणहिंदोलउ ।
अहिसारिहिँ संकेयहो गम्मइ गयवईहिँ गंडयलु[5] णिहम्मइ ।
पियविरहे पहियहिँ[6] डोलिज्जइ अहवा महुमासे भुल्लिज्जइ ।

घत्ता—तो लेवि करंडु पुप्फफलावलिजुत्तउ ।
णरवइअत्थाणे लहु वणवालु पहुत्तउ ॥५॥

६

णरिंदचूडामणिघट्ठ[1]पायहो कहेइ अट्ठंगु णवेवि[2] रायहो ।
मणोज्जउज्जाणवणं सुफुल्लियं सहेइ भिंगावलिए य मिल्लियं[3] ॥ वंसत्थ ॥

घुमुघुमिय मद्दलइँ कणकणिय कंसाइँ[4] ।
दुमुदुमिय गंभीर दुंदुहिविसेसाइँ[5] ।
दुंदुमिय उंदाइँ[6] ढंढंत तिउलाइँ[7] ।
अणवरय सलसलिय कंसालजुयलाइँ ।
रणझणिय तालाइँ त्रं त्रंत दुक्काइँ[8] ।

---

५. १ ख पुराणुसारओ । २ ख अइमत्तउ । ३ ख कुरइ समप्पउ; ग घ कुरइ समप्पइ । ४ क णिज्जइ । ५ ख मंडयउ । ६ क पहियहं; ख पियहि ।

६. १ ख घिट्ठ । २ ख णवेइ । ३ क पेल्लियं; ख मेल्लियं । ४ क कोसाइं; घ सोसाइं । ५ ख दुंदुहि ण घोसाइं । ६ क दुंदुमइं उंदाइयइं; ख दुंदुम मऊघूइं; ग घ दुदुंमउंदाइं । ७ क टिउलाइं । ८ क ख ग त्रां त्रा सढुक्काइं ।

डमडमिय डमरुयइँ डंडंत डक्काइँ।
थरथरिरे थरथरिरे करडोहि[9] सद्दाइँ।
झिंझिंझि झिंझित झिंझिरि सुहद्दाइँ।
थगेदुगेगे थगेदुगेगे तखेतखिखे पडहाइँ।
किरिकिरिरि किरिकिरिरि तटखुंद लडहाइँ।
करमिलग झिंमिझिंमिय झल्लरि वियंभाइँ।
रुंजंत रुंजाइं भभंत भंभाइँ।
तुरुतुरिय काहलइँ हूहुइय[10] संखाइँ।
एयाइँ अवराइँ बहुविह असंखाइँ[11]।
णिय अवसरं मुणेवि आणंदपूरियहिँ[12]।
सहसत्ति वाइयइँ[13] तूराइँ तूरियहिँ।

[मयणावयारो णाम छंदो]

घत्ता—इय तूरणिगद्दु णिसुणिवि अखिल[14] मुज्झिय।
दिक्किरि दिसपाल सयल वि हुय मयउज्झिय ॥६॥

७

रवेण एयं भुवणंतपूरयं वसंतउच्छाहयरं[1] सुतूरयं।
सुणेवि राओ हरिसे विसट्टओ पुराओ उज्जाणवणं पयट्टओ ॥वंसत्थ॥
चल्लिओ राउ उज्जाणकीलामणो विबुहसंसेविओ णाइँ सक्कंदणो।
चलिय अंतउरालंकिया राणिया अभयणामि त्ति णं देवि इंदाणिया।
चलिउ सुदंसणो[2] कंतिवंतो तहा कुवलयाणंदणो छुद्धहीरो जहा।
चलिय हिट्ठा मणोराम सा गेहिणी णियसुसोहग्गओहामिया रोहिणी।
चलिउ तीए सुकंताहिहाणो सुओ महयरालंकिओ कीलणे उच्छवो।
चलिउ सेट्ठिस्स मित्तो जणे सुहओ कविलभट्टो सरिद्धीए णं माहवो।
चलिय तुच्छोयरी पोमवत्तच्छिया कविल णामप्पिया तासु णं लच्छिया।
चलिउ णिस्सेसलोओ मणे तोसिओ सहइ छंदो इमो उव्वसी भासिओ।

---

६. ९ ख करडोहि। १० क ग घ हूहुयइं। ११ ग घ °असेसाइं। १२ क पूरियइं। १३ ख सहसा वि वाइयहि, ग घ सहसत्ति वायाइं। १४ क अखिवर, ग घ अखिल।

७. १ घ °रयं। २ क चल्लिओ दंसणो।

घत्ता—पत्तेण णिवेण णाणाविहमहिरुहघणे ।
संजायउ णाइँ देवागमु णंदणवणे ॥७॥

८

महासरं पत्तविसेसभूसियं सुहालयं सक्कइविंदसेवियं[1] ।
सुलक्खणालंकरियं सुणाययं[2] णिउ व्व रामु व्व वणं विराइयं ॥वंसत्थ॥

रायहंसगइगमण रंभाजंघोरुयअइकोमल ।
पवरलयाहररमण कयपसूयं[3]णियसण णिरु णिम्मल ॥
अलिरोमावलिणिद्ध वित्त[4]तहणाहीसुमणोहर ।
पीणपवरउत्तुंगमाहुलिंगउब्भासियथणहर ॥
वेल्लीभुयसुकुमाल रत्तासोयपत्तकरसुंदर ।
बिंबीहलअहरदल दाडिमबीयसुदसणाणदिर[5] ॥
चंपयफुल्लसुणास वियसियइंदीवरदललोयण ।
पोमाणण सिहिपिच्छकेसबंधजणमयणुक्कोयण ॥
चंदणघुसिणरवण्णवण्णं तिलयंजणसुपसाहण ।
कप्पूरायरसोह बहुभुयंगसेवियहरिवाहणं[6] ॥
कंचणवंत[7] सुमंड कोइलल्ललियालावसुहासिणि ।
तरुराइय वणे[8] तेत्थु दिट्ठिय राएँ णाइँ विलासिणि ॥
इयगुणेहिँ परउणग कासु णं हियवउ हरइ णिरुत्तिय ।
कामलेह णामेणं[9] पद्धडिया फुडु एस पउत्तिय ॥

घत्ता—रायागमणेण तणुरोमंचिय[10] भासइ ।
णवकुसुमहलेहिँ अग्घंजलि व पयासइ ॥८॥

९

तओ वयंसीहिँ सुखेड्डदक्खहिँ[1] अणेयभावंतरजुत्तिलक्खहिँ[2] ।
सुलीलए सायरसेणपुत्तिया सहेइ खोणि व्व दिसाहिँ जुत्तिया ॥ वंसत्थ ॥

---

८. १ क सक्कउविंदसेवियं, ख °तोसियं । २ ख सुणाइयं । ३ क °पसूण । ४ ख °चित्त । ५ ख घएण । ६ ख हरिवाणर । ७ क °वएण । ८ ख वि । ९ क णाम, ख णामें । १० क तिण°

९. १ क ख मुखेंदु दक्खहिं । २ ख °भक्खहिं ।

पेच्छिवि पुरउ जंति सियसेविए सलहिय सा अभयामहएविए।
उण्हावियबंधवसुहिलोयण पुण्णवंत एह[3] वरगुणभायण।
एत्थंतरि कविलाए पवुत्तउ[4] देवि तुम्ह इय भणिवि ण जुत्तउ।
लायण्णें सोहग्गें उत्तम तुह समाण णउ रंभ तिलोत्तम।
मीणइ सइ पउलोमी[5] अच्छर सव्व वि तुह विहवें णिम्मच्छर।
तुह बुद्धिए सरसइ वि ण पुज्जइ इय सुणेवि अभयाए भणिज्जइ[6]।
हलि सहि[7] मज्झु काइँ वण्णिज्जइ पुत्तें विणु कि णारिहिँ छज्जइ।
पुत्तु एक्कु कुलगयणदिवायरु जणणिमाणरयणहो रयणायरु।
जइ वि हुं विरयइ जोव्वणखंडणु तो वि तियहि[10] पुत्तु जि परमंडणु।
तें परवण्णणु जुत्तु जि आयहे णंदणवंतिहे कयपइरायहे।

घत्ता—तो कविलए वुत्तु पुत्तु केम एयहे हुउ।
एयहे पइ संढु काहे वि पासइँ मइँ सुउ ॥९॥

१०

हसेवि[1] तो झत्ति भणेइ राणिया ण याणए कि पि अलं[2] अयाणिया।
वणिंदआसत्तमणा वियंभिया विहस्स एसा फुडु तेण डंभिया ॥ वंसत्थ ॥
इय वयणेहिँ कविलए मुक्कु सासु किउ ईसि ईसि णियमुहवियासु।
तो अभयादेविए वुत्त एम मज्झु वि तुहुँ गोवहि हियउ केम।
मुहणयणवियारहिँ भासणेहिँ इंगियतणुचेट्ठपयासणेहिँ।
जाणिज्जइ जं किर परहो चित्तु हलि तं धुत्तत्तणु[3] कवणु वुत्तु।
अइसए छेइल्ल वसंति जेत्थु जाणिज्जइ ऊसासियं पि तेत्थु।
तो जंपइ कविला दर हसंति तुम्हग्गए लज्जमि हउँ कहंति।
जइ देवि देहि[4] महु अभयदाणु तो णिरवसेस भासमि कहाणु।
लइ अभउ दिण्णु अभयाए वुत्तु लक्खियउ वि रक्खहि कि सचित्तु।

---

९. ३ क घ इह। ४ ग घ वुत्तउ। ५ क पोलोमी।
६ ग घ अभया पभणिज्जइ। ७ क हलि हलि। ८ ख इत्थु। ९ क घ विहि।
१० क नियहि (टि० जाणीहि)।

१०. १ ख ग घ हसेइ। २ ख हले। ३ ख धुत्तत्तु वि। ४ ख देहि देवि।

घत्ता—इय वयणु सुणेवि अभयहिँ णउ रक्खिज्जइ।
कविलाए सगुज्झु रहसगए[4] अक्खिज्जइ ॥१०॥

११

इमाहे कंतस्स गुणा[1] सुणंतिया[2] परोक्खराएण रया अहं थिया[3]।
वयंसिए अग्गए जंतु जाणिओ मिसेण तो वाहरिऊण आणिओ ॥ वंसत्थ ॥
छुडु रइहरम्मि वणिवरु पइट्ठु मइं करे धरेवि वुत्तउ मणिट्ठु।
पयलंतु मयणसिहि उवसमेहि लइ एक्कवार पहु मइँ[4] रमेहि।
हउँ संढु तेण महु कहिउ झत्ति मुक्कउ कराउ अइ हुय विरत्ति[5]।
इय कहिउ गुज्झु कविलाए जाम विहसेवि वुत्तु अभयाए ताम।
अच्छउ तहो देसहो तणिय वत्त जहिँ तुहुँ वि छइल्लहिँ मज्झे[6] वुत्त।
कि ते[7] आलोयणँभावसुद्धि ण मुणइँ जे[8] बोल्लिए परहो बुद्धि।
हउँ तुज्झ बुद्धि पाएँ लुहेमि परहियए केम णियमइ छुहेमि।
सहि पिययमु इह धुत्तीहि तेम वाहिज्जइ पय पाणहिय जेम।
घत्ता—वयणेण वि तेण वंचिय तुहुँ हउँ इय मुणमि।
गए सलिलसमूहे पालिहि बंधणु कि कुणमि ॥११॥

१२

हलि हलि सो जिणधम्मरत्तओ दयावरो दुव्वसणेहिँ[1] चत्तओ।
सरस्सईमंडिउ लद्धसंसओ पराण णारीण सया णउंसओ ॥ वंसत्थ ॥
इय सुणेवि अभयहे गिर कविला कुविय बोल्लए।
देवि एत्थु जम्मुब्भवपयइ कि को वि मेल्लए ॥
हीण दीण हउँ बंभिणि[2] सुगुणसुबुद्धिवज्जिया[3]।
अप्पसुओ[4] आहाणउ णिसुणंती ण लज्जिया ॥

---

१०. ४ ख रहसेगय, ग घ रहसंगइ।

११. १ ख गुणं। २ ग घ थुणंतिया। ३ ग घ महंतिया। ४ ख ग घ मइ°। ५ ख हुवउ रत्ति। ६ ख मज्झु। ७ ख आलोवणि। ८ ख मुणहि जं बोल्लिय, ग घ जो बोल्लिए।

१२. १ घ दुव्वयणेहिं। २ ग घ बंभणि। ३ क सगुणि°। ४ ख अयसउ।

चायभोयसंजुत्तिय अंतेउरपहाणिया ।
ललिय जेम तुहुँ सुहव णरणाहस्स राणिया ॥
तुहुँ जि एक्क सुवियक्खण वण्णइ सयलु पुरयणो[५] ।
अइछइल्ल तो जाणमि जइ चालेहि तसु मणो ॥
तो मयंध उच्छलिय[६] अभयादेवि गज्जए ।
पुणु वि पुणु वि तुहु वयणहिँ हासउ मज्झु दिज्जए ॥
बुद्धिवंत पारंभहिँ जं तं कि ण छज्जए ।
जंपिएण कि बहुणा एहउ कोड्डु किज्जए ॥
मयरकेउ सुहदंसणु जइ ण रमेमि[७] हउँ हले ।
तो मरेमि ओलंबेवि पासउ कंठकंदले ॥
जइ पइज्ज[९] णउ पालमि तो हउँ कविले लंजिया ।
छंदु एउ सुपसिद्धउ णामेँ सालहंजिया ॥

घत्ता—इय करिवि पइज्ज अभया मणेण चमक्कइ ।
संचारिमणाइँ वाउल्लिय[१०] परिसक्कइ ॥१२॥

१३

विलासहासुब्भवभाववत्तिया[१] चलंति उज्जाणवणं पहुत्तिया ।
जणंति सखोहु णराण भावइ धणुच्चया वम्महभल्लि णावइ ॥ वंसत्थ ॥
जिह सा तिह अवराउ वि सारिउ कीलावणे संपत्तिउ णारिउ[२] ।
मणहरफुरियाहरणविहूसिय केण वि णियभामिणि सभासिय ।
तुह रईए विणु सुण्णायारउ चित्तु ण रमइ कहिमि[३] अम्हारउ ।
एम भणेविणु म चिराविज्जउ[४] वरउज्जाणजत्त सहलिज्जउ ।
केण वि सह ण णीय तेँ रुट्ठिय पिय तोसिज्जइ माणगरिट्ठिय ।
एक्कसि मं छलु लेहि महारउ एयहो जम्महो हउँ तुम्हारउ ।

---

१२. ५ ख परियणो । ६ ख मयंड उच्छालिय । ७ क रमेबि । ८ ख कंठि । ९ घ पइण्ण । १० क माउल्लिय ।

१३. १ ग घ °वत्तिया । २ घ सपत्ति सुणारिउ । ३. ख सुहिल्लि ।
४. क इय भणेवि मणु म चिराविजइ, घ एम सुणेविणु° ।

को वि सकामुउ पायहिँ लग्गइ रमणिहिँ रमणु पलोयहुँ मग्गइ ।
पुणु पुणरवि णियचित्तु समप्पइ अहवा रत्तु ण कि पि वियप्पइ ।
घत्ता—करपल्लवसार णयणकुसुम थणफलधरि[1] ।
णं मोहणवेल्लि सोहइ का वि किसोयरि ।।१३।।

१४

जहिं जहिं मत्तगइंदगामिणी णियच्छए लीलए का वि कामिणी ।
तहिं तहिं आण समीहमाणओ वियंभए वम्महु बद्धठाणओ ।। वंसत्थ ।।
थणवट्टपीणपीवरसतुंग क वि जोयइ[1] अवर वि माहुलिंग ।
क वि चाहइ सारुणकोमलाहँ अंतरु[2] रत्तुप्पलकरयलाहँ[3] ।
तहिँ एत्तहे तेत्तहे भमरु जाइ कत्थइँ छप्पउ वि दुचित्तु भाइँ[4] ।
काहे वि तुच्छोयरे[5] रोमराइ हुय पायड[6] मयणभुअंगि णाइँ ।
णीलुप्पलमालए मुद्ध का वि अवलोयइ मरगयमेहला वि ।
क वि णियगईए हंसु वि हसेइ सा नेण जि पियमाणसे वसेइ ।
काए वि अउव्वधाणुक्किणीए तिक्खुज्जलणयणसरेहिँ तीए ।
विद्धउ परिहरिवि अविद्धु विद्धु सहसा संतोसिउ मयरचिंधु ।
घत्ता - जहिँ जहिँ पिय जाइ तहिँ तहिँ पियमणु[7] धावइ ।
तहो ताए अउव्वु मोहणु दिण्णउ णावइ ।।१४।।

१५

लयाहरे पिंगुलयाणिरंधए भमतफुल्लंधयफुल्लगंधए[1] ।
सुणेवि पारेवयसद्दु[2] लीलए सकामिणीए सह को वि कीलए ।। वंसत्थ ।।
णंदणवणे णरणारिउ[3] भमंति छलवयण[4] परोप्परु उल्लवंति ।
को वि[5] भणइ कंते वियसिउ असोउ सा भणइ अवस वियसइ असोउ ।
पिए मिट्ठइँ एयइँ[6] सिंरिहलाइँ मिट्ठइँ जि होंति[7] पिय सिरिहलाइँ ।

---

१३. ५ क फलथणयरि; ख थणफलभरि ।

१४. १ ख जोवइ । २ ख अंबरु । ३ क ख °लाइं । ४ क ग घ होइ । ५ ख तुच्छोवरि । ६ ग घ पाडल । ७ ख तियमणु ।

१५. १ ग घ फुल्लंधुय° । २ ख पारावय° । ३ क णरणारिय । ४ क ग घ °वयणु; ख छणवयण । ५ ख क वि । ६ ख एयहो । ७ ख जंति ।

पिए सरसहिँ वड्डइ वयहँ वंति कहिँ पिययम सरसहिँ वय हवंति[8] ।
पिए हेलए विसहरु हउँ तरेमि जइ विसहरु तुहुँ तो हउँ डरेसि ।
को वि भासइ भासइ कं ति काउ[9] कि पिय सुउ[10] कंकं कंठणाउ ।
पिए महु भावहिँ[11] कंतारयाइँ पिय कसु ण इट्ठ[12] कंतारयाइँ ।
पिए वंकालावहिँ तुहुँ वियट्ठु[13] जइ तो कि पिययम पइँ वियट्ठु[13] ।

घत्ता—पिए पेच्छ मणोज्ज सरस सुकोमल सज्झइ ।
पिय एरिस गुणेहिँ अवर वि अवसे[14] सज्झइ ॥१५॥

१६

कहि पि[1] वंकं इय तत्थ जंपियं वियट्ठलोएहि[2] सुहावणं पियं ।
कहि पि संगीयरसं पउंजियं रसिल्लदेवाण मणं पि रंजियं ॥ वंसत्थ ॥

तो णिवेण लोएण सरवरं लक्खियं असेसं पि मणहरं ।
णीलरयणपालीए पविउलं कमलपरिमलामिलियअलिउलं ।
अमरललणकयकीलकलयलं चलियवलियउल्ललियझसउलं ।
कलमरालमुहदलियसयदलं लुलियकोलउल्हलियकंदलं ।
पीलुलीलपयचलियतलमलं गलियणलिणरयपिगहुयजलं[3] ।
अणिलविहुयकल्लोलहयथलं तच्छलेण ण छिवइ णहयलं ।
पत्थिउ व्व कुवलयविराइयं पुंडरीयणियरेण छाइयं ।
करिरहंगसारंगभासियं छंदय विलासिणि पयासियं ।

घत्ता—सरु पेच्छेवि लोउ हरिसें कहिँ मि ण माइउ ।
माणससरे[4] णाइँ अमरणियरु[5] संपाइउ ॥१६॥

१७

रमेवि[1] उज्जाणवणम्मि णारिओ[2] सरोवरे पत्तिउ चित्तचोरिओ ।
करंति ताओ जलकील[3] जारिसा पवण्णिउं सक्कु ण को वि तारिसा ॥छ॥

---

१५. ८ ख वयहं पंति । ९ क कते काउ । १० ख सउं । ११ क भावए । १२ ग घ एट्टुइं । १३ ख वियड्ढु ।

१६. १ क कह पि । २ ग घ विसट्ट लोएहिं । ३ प्रतिषु 'हपजलं' । ४ क माणसरे । ५ क प्रमरु णियरु ।

१७. १ क रमेण । २ ग घ °वणं विराइग्रो । ३ क कीलि । ४ क धरेवि ।

तहुँ पइसरेवि जलु पय धरेइ[4] पुण रमणएसे विब्भम करेइ[5] ।
णं[6] तहिँ जे तहिँ जे लीणउ दडेइ[7] तिवलिउ पिहंतु थणहरे चडेइ[8] ।
चुंबेवि वयणु बालहँ धरेइ कामुयणरासु जलु अणुहरेइ ।
आहउ करेण दूरुच्छलेइ आसत्तिए पुणु णं घरि पडेइ[9] ।
पीडिज्जमाणु वम्महतिसाइँ[10] पुणु पुणु भमेइ णं चउदिसाइँ[10] ।
परिसंतु[11] णिएविणु तरुणिदेहु सुर चिंतहिँ पयभरु धण्णु एहु ।
काहि वि जलवुब्बुहे उर णिरंभ[12] सोहंति णाइँ जलि कुंभिकुंभ ।
काहि वि रमणे पिए दिट्ठि दिण्ण[13] ण चलइ णं कद्दमि ढोरि खुण्ण[14] ।

घत्ता—काहि वि थणवट्टे वंकु तिक्खु णहु लग्गउ ।
वम्महकरिकुंभे णावइ अंकुसु भग्गउ ॥१७॥

१८

सुद्धद्धपत्तं दियकंतिकेसरं सुयंधजीहामयरंदभासुरं ।
भमंतणेत्तालि सुमित्तबोहियं मुहारविंदं ताहँ ताहिँ सोहियं ॥ वंसत्थ ॥

कहिँ वि वरकमलमहुमिलियमहुयरउलं ।
तरइ क वि तरुणि अइतरल सहरि व जलं ॥
कहिँ वि क वि अरुणकरचरण किय[1] पयडए ।
भमरगण[2] मिलिवि तहिं णलिणिमण णिवडए ॥
घुसिणरसरसिय थणकलस क वि दरिसए ।
पणयपरवसहो पिययमहो मणु हरिसए ॥
कहिँ वि अणुसरिवि पिउ पियहिँ मुहपरिमलं ।
हरिसवसु[3] खिवइ दसदिसिहिँ करसयदलं ॥
णवर सिरचिहुरभरु दिढवि पुणु अविरलं ।
करहिँ जलु करिवि स वि भरइ तहो उरयलं ॥
कहि वि रहसेहिँ उच्छलेवि को वि[4] अणिमिसं ।

---

१७. ५ ख करेवि । ६ ख पुणु । ७ ख दडेवि । ८ ख तिवलिउ पिय तुह थणहरि चडेवि । ९ ख चडेइ । १० ग घ °सहि । ११ क पइसंतु । १२ क जलबुंदुहि उरु । १३ ख रमणइ पिय दिट्ठि रत्त, ग घ रमणए पिय दिट्ठिपत्त । १४ ग घ खुत्त ।

१८. १ क किल । २ ग घ °गुण । ३ ग घ °विसु । ४ ख ग घ हिरसहिं ३ ग लिवि स वि कु वि ।

पियइ पियअहरु महुयरु व कमलिणिरसं ॥
कहिँ मि क वि रमणि तहिँ लहिवि पियफरिसणं।
बहलहुयपुलय परिहरइ मणे रणरणं[1] ॥
कहिँ मि मणिकडय तणुघडण णिवडिय जले।
सहहिँ पडिफुरिय ससहररवि व णहयले ॥
॥ छंदु दिणमणि इमो ॥

घत्ता—जलकील करेवि सरवराउ णिग्गउ जणु।
तो तरुणिहिँ जुत्तु अभय पसाहइ णियतणु ॥ १८ ॥

१९

णिडालएसे लिहिओ विचित्तओ दुरेहु जाईकलियाए सत्तओ[1] ।
कवोलवट्टे मयणाहिवल्लिया विलेहिया चूयसुमंजरिल्लिया ॥ वंसत्थ ॥
तेयवंत किय कण्णहिँ कुंडल राहुभएण चंदरविमंडल।
णं सरणए पइट्ठ मिगणयणहे णहमाणकिरणुज्जोइयगयणहे ॥
सिहिणहँ उवरि हारु परिघोलइ णहगंगापवाहु णं लोलइ।
अह णं कामपासु भावालउ अह णं महुसिरीहिँ हिंदोलउ ॥
थड्ढहँ[2] पुरउ लुठंतु णवंतु वि मज्झामउ[3] ण लहइ गुणवंतु वि।
मेहलाए जं हुयवहु सेविउ तेणं तहि णियंबु संपाविउ ॥
रणझणंतु हंसउलइँ तोसइ मंजीरयहँ जुयलु णं घोसइ।
कुंकुमलित्तु[4] चलणजुयलुल्लउ मइँ दुलहउ वि लद्धु[5] णिरु भल्लउ ॥

घत्ता—अहो सेणियराय कि बहुणा मोहियसुरे।
सयलु वि संतुट्ठु जणु[6] गउ णयणंदिउ पुरे[7] ॥ १९ ॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए सुदंसणविलासया कविलबंभणीछम्मणं[8] वसंतसमयागमे जिह पइण्णं-संबंधयं वणम्मि जलकीलणं अभयादेवितणुभूसणं इमाण कयवण्णणो भणिओ संधि फुडु सत्तमो[10] ।

संधि ॥७॥

---

१८. ५ क रइगणं।

१९ १ ग घ कलियापसत्तओ। २ घ थट्टहं। ३ ख मज्झाउं वि। ४ क° लित्तु; ख लीउ। ५ ग घ दुलद्धु लद्धउ। ६ ख जगु। ७ क पुरवरे। ८ ख छम्मं। ९ ख पयब। १० क समत्तओ।

संधि ८

१

कोमलपयं उदारं छंदाणुवरं गहीरमत्थड्ढं ।
हियइच्छियसोहग्गं कस्स कलत्तं व इह[1] कव्वं ॥
आसि सुदंसणचरियं सरसइए पगोवियं कइंदाणं ।
होसइ णयणाणंदो णयणंदि रइस्सए जम्हा ॥
[2]अभयादेवि सलक्खणिया[3] जहिँ[4] दीसइ तहिँ जि पियारी ।
सालंकारी कंतिजुय णावइ कह सुकइहि केरी ॥ध्रुवकं॥

मरुद्धुया धयावलीय धुव्विरं   पवालइंदणीलजालकव्वुरं ।
सुतारहारकुंदचंदपंडुरं   विचित्तथंभहेमभित्तिभासुरं[5] ।
सुधूमगंधलुद्धवंतभामरं[6]   अणेयकोउहल्लमोहियामरं ।
गवक्खमत्तवारणेहिँ राइयं   रणंतकिंकिणीवियाणछाइयं[7] ।
णिबद्धणिद्धमोत्तिऊहदामयं[8]   विसालहंसतूलतूलिकामयं[9] ।
पढंतकीरसारियामणोहरं   मणिप्पहाए भूरिभाणुभाहरं ।
अणेयभेयपुप्फयंधसुंदरं[10]   सवड्ढिमामहप्पजित्तमंदरं[11] ।
पराइया कमेण तं णिकेयणं   वसंतचच्चरं हि छंदयं इणं ।

घत्ता—छुहवज्जिय[12] सिढिलंग हुय तह णट्ठचित्त[13] विच्छाइय ।
जुण्णदेवकुलियो[14] सरिस अभया पंडियए पलोइय ॥१॥

२

अवलोइवि सुगुणविराइयए[1]   पुच्छिज्जइ पंडिए धाइयए ।
किं पुत्तिए सयणे पडिवि थिय   कि दीसहि उम्मणि[2] दुम्मणिय ।

---

१. १ क ख इह; घ हवइ । २ क में यह पद्य नही है । ३ ग घ सलोणिय । ४ ख जहिं जहिं । ५ क ख भासुरं । ६ ख मोहिभामरं । ७ ग घ विमाणछाइयं । ८ क मोत्तियाहं । ९ ख हंसतूलिकाय रामयं, ग घ हंसतूलिरूवकामयं । १० क °भासुरं । ११ घ °मंदिरं । १२ क छुह लज्जिय । १३ तहवण चित्तु । १४ क °कलिया ।

२. १ ग घ सगुण° । २ ग घ उम्मण ।

महो वेयण एइ तहा घणिय[3] तं णिसुणेवि भणइ णरिंदपिय[4]।
[5]तुम्हइँ अमुणिउ[5] णउ किं पि जहि अक्खमि पंडिए हउँ काइँ तहिँ।
तो भणइ विउसि कि रहहि महुँ ण मुणेमि कि पि लइँ[6] कहहि तुहुँ।
अह भणइ अभय णउ तुह रहमि पंडिए सुणु[7] अंतरंगु कहमि।
जइ पावमि सुहदंसणहो रइ तो मयणु ण पीडा महु करइ।
अह जइ ण तासु सुहयहो मिलिय तो माए ण जीवमि णिरुत्तुलिय।
ता चविउ बुहिए मइवंतियए करयलहिँ कण्ण झंपंतियए।
पुत्तिए जं पइं उग्गीरियउ बलि किउ तं थुत्थुक्कारियउ।
मरिसइ सो जो पइँ णउ सहइ तुहुँ जीवहि ताम जाम पुहइ।
[पद्धडियाणाम छंदो]

घत्ता—सो पुणु वणिवरु बुहतिलउ जिणवरकमकमलहँ भत्तउ।
पंचाणुव्वयपमुह सुहसावयवय धरइ णिरुत्तउ ॥२॥

३

जो सम्मत्तरयणपरिमंडिउ लच्छिए पणयणीए अवरुंडिउ।
अयसयम्मु[1] जो दूरेँ वज्जइ सो किम परहो णारि पडिवज्जइ[2]।
एक्कें हत्थेँ तालु[3] कि वज्जइ कि मरेवि[4] पंचमु गाइज्जइ।
किज्जइ अणुरइ तहो जो मण्णइ जो पुणु अणुणियंतु[5] अवगण्णइ।
होउ सुवण्णेण वि तें पुज्जइ कण्णजुयलु जसु संगें छिज्जइ[6]।
दोदिसेहिँ[7] रत्तउ सुमणोरमु गणमि णेहु पिचुयपिछोवमु।
एक्कदिसाए सुट्ठु अहिरामें[9] सिहिपिछोवमेण कि पेम्में[10]।
कहिँ तुहुँ कहिँ सो[11] कहिँ अवरुंडहि[12] दूरट्ठियहो णेहु लहु[13] छडहि[12]।

घत्ता—इय णिसुणेविणु तहे वयणु अभयामहएवि पवुच्चइ।
एत्तहे तुहु सिक्खावयणु उत्तहें[14] वि सुदंसणु रुच्चइ ॥३॥

२. ३ ख तहि जि घिय। ४ ग घ 'अभयामहएवि सराउलिय' यह पाठ अधिक है। ५ ग घ तुम्हहं अमुणियउ ण किं°। ६ ख लहु। ७ ख सुणि। ८ क ख पंचाणुव्वयमुद्धरहि।

३. १ ग घ अयसमग्गु। २ ख परिवज्जइ। ३ ख ताल। ४ ख किं णरेण। ५ ख अणुणवंतु। ६ क हिज्जइ, ग घ दिज्जइ। ७ क बेहिसेहिं ग दोहि सेहिं। ८ ख पिंडये। ९ ख सुट्ठु अहिरामो। १० ख° पेमो। ११ ख कहिं सो कहिं तुहुं। १२ ख °इ। १३ क लइ। १४ क एत्तउ, ख एत्तहि।

४

गाथाष्टकं

अव्वो जेणोवाएँ[1] सूहवो एइ तेण आणेहि[2]।
घरि घरिणिए णिवडंती[3] विरहमारि कि णिठ्ठुरा होहि ॥१॥
ता धीरत्तं बुद्धी माणो लज्जा भओ सुमज्जाय।
विहिलंघलतणुकरणो[4] मयणो ण वियंभए जाम ॥२॥ (पथ्या)
विरयइ डाहो अदंसणेण जसु दंसणेण पासेओ।
तस्सोवरि[5] सुविरत्ती माए इह कस्स णिव्वहइ[6] ॥३॥ (परपथ्या)
कोमलबाहुलयालिंगणेण तं सोक्खं जइ वि णउ हवइ
इह तो वि सुवल्लहदंसणेण किं किं[7] ण पज्जत्तं ॥४॥ (विपुला)
सो को वि होइ पिययमु जेण विणा रइ ण कहिँ वि पडिहाइ[8]।
जिह जिह[9] संबोहिज्जइ तिह तिह[10] ण विरुज्झए[11] हियय ॥५॥ (पथ्या)
जेणायण्णियमित्तेण माए[12] हिययम्मि होइ संतोसो।
तेण समं संबंधं को जाणइ केत्तियं सोक्खं ॥६॥ (परपथ्या)
अमिलंताण[13] वि दीसइ णेहो दूरे वि संठियाणं पि।
जइ वि हु रवि गयणयले इह तह वि हु लहइ सुहु णलिणी ॥७॥ (पथ्या)
अभयावयणं णिसुणेवि पंडिया भणइ पुत्ति जं किं पि।
कीरइ कज्जं[14] परिभाविऊण[15] तं सव्वं सुंदरं होइ[15] ॥८॥ (विपुला)

घत्ता—दीहु[16] सुहावहु चिंतियउ[17] अवसगालु णउ[18] बोलिज्जइ।
पच्छुत्तावउ जं जणइ[19] तं किं पि कज्जु णउ किज्जइ ॥४॥

५

जाइकुलुब्भवाहे[1] गुणजुत्तिहे   एक्कु जि कंतु होइ कुलउत्तिहे।
देवहिँ बंभणेहिँ जो[2] दिण्णउ   धणविहीणु बहुरोयकिलिण्णउ।

---

४. १ जेणोवएण; ग जेणोवाएण। २ ख आणेवि। ३ क घरि घरणि वडंतो। ४ क ख विहिलंघण। ५ ख तह सोवरि। ६ ख णिव्वडइ, ग घ वियडइ। ७ क इह णयणवल्लहदंसणेण कं कं। ८ क पडिहासेइ। ९ ख जहं जहं। १० ख तहं तहं। ११ क विरज्जए। १२ क माइ; ख माय। १३ क मीलंता ण। १४ क लज्ज। १५ ख ग घ तं सुंदरं होइ। १६ क दिट्ठु। १७ ख चिंतियइ। १८ ख बोलु ण। १९ क जं जइ।

५. १ ख कुलभवेहि। २ ख जं।

पंगु कुंटु दुब्बलु दुग्गंधउ कूरचित्तु खासणु[3] बहिरंधउ ।
सो मुएवि इयरु[4] वि सिरिरिद्धउ जइ वि सुरिंदु अह व मयरद्धउ ।
तो वि महासईए वज्जिव्वउ[5] भउ दक्खिण्णु लोहु ण करिव्वउ[6] ।
सेच्छ गेहकम्मे सुयपोसणे[7] णाहसयणे[8] तह[9] देहविहूसणे ।
इय मेलेविणु अवरु णिसिद्धउ तियहिँ सइच्छायरणु[10] विरुद्धउ ।
अमियमहाएवी पररत्ती कोढि सढिय[11] णरए संपत्ती ।
इयरउ को गणेइ पुणु णारिउ बहु अणत्थ[12] बहु अवजसगारिउ ।
तुहुँ वि ताहँ पंथे[13] मा गच्छहि[13] सग्गु मुएवि णरउ कि वंछहि[14] ।
अंगोवंग सहोच्छिय[15] दावइ त खज्जइ जं परिणइ पावइ ।
अण्णु[16] मज्झु तं हासउ दिज्जइ घररिद्धए जं[16] भिक्ख भमिज्जइ ।
तुज्झु कंतु तिहुवणे सुपसिद्धउ सहइ पयक्खु णाइँ[17] मयरद्धउ ।
[पारंदिय णाम पद्धडिया]

घत्ता—अभयामहाएविए णवर विहसेप्पिणु[18] एम पउत्तउ ।
जं पइँ जंपिउ हियवयणु[19] तं हउँ जाणमि[19] माए णिरुत्तउ ॥५॥

६

दोहाष्टकं

जाणमि वणि गुणगणसहिउ[1] परजुवईहिँ विरत्तु ।
पर महु अंबुले[2] हियवडउ णउ चिंतेइ परत्तु ॥१॥
जाणमि हउँ उवहाणइं कि तुहुँ चवहि बहुत्तु ।
अंबिए को ण वि पंडियउ परउवएस कहंतु ॥२॥
जाणमि इह[3] कुलउत्तियहिँ एक्कु जि णियपइ जुत्तु ।

५. ३ ग घ खीसणु । ४ ख अवरु । ५ क वज्जेवउ । ६ क करेवउ ।
७ क सुपयासणे । ८ क मयणे । ९ ग घ तव । १० ख °वरणु; ग घ °चरणु ।
११ क णिसढिय । १२ ख अवत्थ । १३ क ख पंथें मागच्छहि । १४ क इच्छहि ।
१५ ख सहोच्छा । १६ ख मज्झु हासउ दिज्जिज्जइ । घरि रविज्जइ; ग घ घर रद्धए ।
१७ क एयरहु णं । १८ ख विहसेविणु । १९ क ग घ तं जाणमि ।

६. १ ग घ वणिवरु गुणसहिउ । २ ख पर मुहि अंबलि । ३ क इय ।

पर हउँ माइए[4] किं करमि तहो उप्परि मणु खुत्तु[5] ॥३॥
जाणमि परपुरिसहो उवरि णउ किज्जइ आसत्ति ।
किंपिउ बुज्झइ पुणु वि पुणु अइदुलंघ भवित्ति ॥४॥
जाणमि कंतु वि महु तणउ मयरद्धउ व विहाइ ।
पर महु अण्णो लग्ग मणे णिरु सुहदंसणवाइ ॥५॥
जाणमि पइँ मोहाउलए हिय-मिय-सिक्खा दिण्ण ।
पर मइँ उववणु जंतियए अज्जु जि किय सुपइण्ण[6] ॥६॥
कविलए सहुँ बोल्लंतियए मइँ तहिँ एम पवुत्तु ।
जइ सुहदंसणु णउ रममि तो हउँ मरमि णिरुत्तु ॥७॥
इय णिसुणेविणु पंडियए तो वुत्तउ विहसेवि ।
खीलयकारणि देवउलु णउ जुत्तउ[7] णासेवि ॥८॥
घत्ता—रहसेँ सीलु परिक्खएवि जणणिदु कज्जु णउ किज्जइ ।
वरसुवण्णकलसहो उवरि ढंकणु किं खप्परु दिज्जइ ॥९॥

७

इयरहँ दिव्वाहरणहँ पासिउ सीलु वि जुवइहे[1] मंडणु भासिउ ।
हरिवि णीय जा किर[2] दहवयणे सीलेँ सीय दड्ढ णउ जलणे[3] ।
तह अणंतमइ सीलगुणंकिय खगकिरायउवसग्गहँ[4] चुक्किय ।
रोहिणि खरजलेण संभाविय सीलगुणेण णइए ण वहाइय[5] ।
हरि-हलि-चक्कवट्टि-जिणमायउ अज्ज वि तिहुयणम्मि विक्खायउ ।
एयउ सीलकमलसरहंसिउ फणिणरखयरामरहिँ पसंसिउ ।
जणणिए छारपुंजु वरि जायउ[6] णउ कुसीलु मयणेणुम्मायउ ।
सीलवंतु बुहयणे सलहिज्जइ सीलविवज्जिएण किं किज्जइ ।
घत्ता—इय जाणेविणु सीलु परिपालिज्जए माए महासइ[7] ।
णं तो लाहु णियंतिहे[8] हले मूलच्छेउ तुह होसइ ॥७॥

६. ४ ख मायए । ५ ख रत्तु । ६ ख कीय पयण्ग । ७ क जुत्त वि ।
७. १ ख जुवई । २ ख किर जा । ३ ख सीय ण दड्ढिय जलणें ।
४ ख °हो । ५ विहाइय । ६ परिजायउ । ७ क °उज्जए महासइ । ८ क णियंतियहि ।

८

सीलविहीणहँ जणि[1] हाहारउ होसइ तुज्झ कण्णकडुयारउ।
सीलविहीणहे सिय जाएसइ सीलविहीणहे मरणु हवेसइ।
इय सुणेवि अभयामहएविए जंपिज्जइ रोसेण पलीविए[2]।
परउवएसु दिंतु बहुजाणउ सव्वु को वि सासुइउ[3] सयाणउ।
किं बहुजंपिएण गरुयारउ जइ वि मज्झु होसइ हाहारउ।
जइ दुल्लह[4] संपइ जाएसइ जइ वि विउसि महु मरणु हवेसइ।
तइ वि कासु वयणे[5] णउ छंडमि रइयपइज्जए अप्पउ मंडमि[6]।
तासु असंगमे महु मणु जूरइ दुद्धसद्ध[7] किं कंजिउ पूरइ।
आणिज्जउ[8] सो सुहउ वियड्ढउ पार्य दड्ढ वरि हियउ म दड्ढउ।
[9]जइ पियसंगमु कहव ण किज्जइ[9] तो[10] फुडु मइँ अइरेण मरिज्जइ।
[11](पारद्धिया णाम पद्धडिया छंदो)[11]

घत्ता—पंडिय चिंतइ तं सुणेवि इय गोहगाहु किर सुम्मइ।
इत्थीगाहु तसु वि गरुउ[12] जे[13] सयरायरु जगु दुम्मइ॥८॥

९

ण फिट्टइ पेयवणे इह गिद्धु ण फिट्टइ पंकए भिंगु पइट्ठु[1]।
ण फिट्टइ तुंबरणारयगेउ ण फिट्टइ पंडियलोयविवेउ।
ण फिट्टइ दुज्जणे दुट्ठसहाउ ण फिट्टइ णिद्धणचित्ते विसाउ।
ण फिट्टइ लोहु महाधणवंते ण फिट्टइ मारणचित्तु कयंते।
ण फिट्टइ जोव्वणइत्ते मरट्टु ण फिट्टइ वल्लहे चित्तु चहुट्टु[2]।
ण फिट्टइ विंझि महाकरिजूहु ण फिट्टइ सासए सिद्धसमूहु।
ण फिट्टइ पाविहे पावकलंकु ण फिट्टए कामुयचित्ते भसंकु।
ण फिट्टइ आयहे जो असगाहु सुछंदु वि मोत्तियदामउ एहु।

---

८. १ क जण। २ ग घ पलेविए। ३ ख सामुइय। ४ ख जइ वि मज्झु। ५ क मंडिमि। ६ क °सुद्धि। ७ ख पाणिज्जइ। ८ क माय। ९ क ग घ में यह चरण नहीं है। १० ख तइ। ११ क ग घ पारदिय पद्धडिय भणिज्जइ। १२ ख वि तसु गरउ। १३ ग घ तें।

९. १ ख पयंट्टु। २ क वल्लहं चित्ते सुहट्टु।

घत्ता—अहवा जं जिह जेण किर जिह अवसमेव होएवउ ।
तं तिह तेण जि देहिएण[3] तिह एक्कंगेण सहेवउ ॥९॥

१०

केत्तिउ वार वार चिंतेज्जइ　　केत्तिउ वार वार झूरिज्जइ ।[1]
कवणु दोसु वसुहाहिवपत्तिहि　　जहिं तेलोक्कु वि सवसु भविसिहि ।
लइ करेमि अब्भत्थिउ आयहे　　तणु लायण्णवण्णसुच्छायहे ।
जसु अणुजाइ एहिँ होइज्जइ　　तसु छंदेण णवर चल्लिज्जइ ।
पुणु जंपियउ ताए हे सुंदरि　　धीरी होहि ताम[2] परमेसरि ।
आणमि जाम गंपि वणिसारउ　　अच्छउ[3] उरे घुलंतु जिह हारउ ।
इय भणेवि पंडिय गय तेत्तहिँ　　थियइँ[4] पयावइगेहइँ जेत्तहिँ ।
भणिउ रहंगि सत्त महु भल्ला　　करेवि देहि मट्टियबाउल्ला ।
(पारंदियाणाम पद्धडिया)

घत्ता - अभयाराणी जामणिहिँ मयणहो वउ सहलु[5] करेसइ ।
तसु माहप्पेँ दुल्लहु वि हियइच्छिउँ[6] फलु पावेसइ ॥१०॥

११

ता तेँ चक्कीसेँ[1] णिम्मविया　　पंडियहिँ पुरउ आणिवि ठविया[2] ।
पडिहासहिँ णं विहिणा घडिया　　सत्त वि णं सग्गहो सुर पडिया ।
सत्त वि णं हरिसियंग रमहि　　सत्त वि णं चलहिँ वलहिँ भमहिँ ।
सत्त वि ण रंगहिँ णं तसहिँ[3]　　सत्त वि णं आणिक्खहिँ हसहि ।
सत्त वि णं करु करेण हणहि　　सत्त वि णं विण्णाणइँ गुणहि ।
सत्त वि णं तहे वियप्पु मुणहि　　सत्त वि णं उत्तमंगु धुणहिं ।
सत्त वि णं वणिआगमु जणहिँ[4]　　सत्त वि णं तहो गुणगणथुणहि ।
सत्त वि णं अभयहे वरिसणहिँ[5]　　सत्त वि णं ताहे मरणु रणहिं ।

---

९. ३ क घ देहएण ।

१०. १ क एउ अकज्जु तो वि किर किज्जइ । २ ग घ ताह । ३ घ अच्छइ ।
४. क पियइं (टि० प्रियाणि) । ५ क घ सहउ । क इच्छिय° ।

११. १ क चक्केसें । २ क ख आणेवि ठिया । ३ क रंगहि तसहि वसहि ।
४ क जाणहि । ५ क वरेण सहि ।

घत्ता—सत्त वि आणिय णियघरहो पंडियए संक परिसेसिवि।
पच्छाइय वत्थेहिँ किह जिह गुणहिँ दोस णीसेस वि ॥११॥

१२

तुण्हिक्किय थक्किय[1] णियघरए संपत्तए पडिहारासरए।
पुत्तलउ एक्कु णिरु पहसियए सहसा संचालिउ विहसियए।
तो मंदमंद चल्लंतियए पुणु थामे थामे मेल्लंतियए।
संभागम-एम करंतियए तहिँ पढमदारे संपत्तियए।
कट्ठोहरम्मि[2] आउच्छियए किं एउ[3] ताए[4] अरुणच्छियए।
जंपिअए रोसु कुरंतियए किं एयए तुम्हहुँ तत्तियए।
इय वयणहिँ रक्खवाल कुविय पंडियए समुहुँ भिउडिए[5] लविय।
एक्कु जि[6] अणपुच्छिवि पइसरहि अण्णु वि पुच्छिय कोवउ करहि।
किं पि वि सकज्जु वियरंतियहे तुह काइँ हुयउ[7] पइसंतियहे।
जइ किं पि दोसु इह संभवइ तो अम्हहुँ राणउ णिग्गहइ।

घत्ता—पइसंतिहिँ उप्परियणउ कड्ढिउ पडिहारिहिँ[8] केहउ।
सयरहँ सुएहिँ समच्छरेहिँ गंगापवाहु चिरु जेहउ ॥१२॥

१३

फोडेवि वाउलओ डंभजुत्ताए ता भासियं एम[1] आरत्तणेत्ताए।
पुज्जा करेऊण[2] वाउलए सज्ज देवी सगेहम्मि जग्गेसए अज्ज।
तुम्हेहिँ भग्गो इमो कलि सव्वाण सीसं हणामीम उव्वूढगव्वाण।
बुद्धेण सिद्धेण वाएँ खगिंदेण [3]खंदेण इंदेण देवाण विंदेण[3]।
[4]जक्खेण रक्खेण चंदेण सूरेण[4] राएण णाएण कालेण कूरेण।
हीरेण थेरेण लंबोयरेणावि अत्थीह तुम्हाण रक्खा ण केणावि।

---

११. ६ ख जहि।

१२. १ घ थक्कइ। २ ग घ कट्ठियहरम्मि। ३ क एयउ।
४ ग घ ताए। ५ ख सम्मुहुं वि भिउडि। ६ क ख वि। ७ क तुम्ह काइं हुउ।
८ क पडिहारहि।

१३. १ ख एव। २ ग °करे जेहिं। ३ क इंदेण देवाण चिंदेण जक्खेण;
ख इंदें णरिंदेण देवाण विंदेण। ४ क रक्खेण चंदेण सूरेण गाहेण।

एवं सुणेऊण चित्तम्मि भीएहिँ णावंतसीसेहिँ ता भासियं तेहिँ।
अम्हाण णो एरिसं कारिउं[5] जुत्तु छंदो वि कामावयारो इमो वुत्तु।
घत्ता—किं बहुणा वायावित्थरेण वाउल्लउ तुहुँ आणेज्जसु।
अण्णवार अंगुलिय जइ दरिसावमि[6] तो रूसेज्जसु ॥१३॥

१४

इय णिसुणेवि वयणु उवसंनिय भणइ एम पंडिय मइवंतिय।
रायणित्ति[1] किं हउँ ण वियाणमि जणविरुद्धु जं[2] गिण्हवि आणमि।
तुम्हहिँ एवमेव हउँ गंजिय का वि णिहीण दीण जिह[3] लंजिय।
मण्णाविय पुणो वि कयडंभहिँ[4] लुणेवि सीसु किं अक्खय छुब्भहिँ[5]।
कियउ जइ वि तुम्हेहिँ अजुत्तउ एक्कवार मइँ खमिउ णिरुत्तउ।
णियपहुचरणकमलअणुरत्तहो दीहाउसु हवेहु हो पुत्तहो।
अमिएँ तुम्ह सीसु सिंचिज्जउ[6] अणुदिणु णिवपसाउ संपज्जउ[6]।
इय कमेण सत्त वि मणिसारइँ वसि कियाइँ पंडियए दुवारइँ।
एत्तहे[7] वि कलिमलणिण्णासणु अट्ठमिदियहिँ सेट्ठि सुहदंसणु।
मुणि णवेवि उववासु लएविणु[8] सव्वारंभभाउ[9] वज्जेविणु।
घत्ता—चलिउ मसाणहो सुद्धमणु उट्टंतहो वत्थु विलग्गउ।
णाइँ णिवारइ पुणु वि [10]पुणु ण वि तुहुँ उवसग्गहो जोग्गउ[10] ॥१४॥

१५

कहिँ चल्लिओसि[1] णीसरिय वाय तह छिक्क जाय।
पक्खलिय अवरु णिज्जियतमाल[2] सिरे छुट्ट वाल[2]।
पच्छइ[3] चेलंचलु रोसमाणु कड्ढइ साणु।
हुउ दाहिणु खरु पुणु एंतु दिट्ठु कोढिउ णिकिट्ठु।
छिदंतु पंथु अग्गए सदप्पु गउ किण्हसप्पु।

---

१३. ५ ख काउउं। ६ क दरिसावहुं; ग घ दरिसावह।
१४. १ ग घ रायणिवित्ति। २ क जगे। ३ क णं, ग घ हउं। ४ ख कयडिंभहि; ग घ गयडंभहि। ५ क ख तुम्हहिं। ६ ख °जइ। ७ ग घ एत्ताहें। ८ क °प्पिणु। ९ क सव्वारंभुपाउ। १० ख णं उत्तं उवसग्गहि जोगउ; ग घ णं तुहुं°।
१५. १ ख चल्लिऊण। २ क घ °लु। ३ क ख पेच्छइ।

आयउ सवडम्मुहु चलसहाउ दुग्गंधवाउ।
थोवंतरे कंटयदुमे णिविट्ठु करयरिउ रिट्ठु।
थिय वामिय कक्कडसरु करंति सिवें फेक्करंति।

घत्ता—एयइँ तह अवरइँ जाम पहे अवसउणइँ[४] पुणु पुणु पेक्खइ।
अइसयणियमासत्तमणु सव्वइँ[६] वणिदु उप्पेक्खइ ॥१५॥

१६

जंतु जंतु पत्तो मसाणए घुरुहुरंतसंभडियसाणए।
सडियपडियबहुदेहिजंगले घुग्घुवंतघूवडअमंगले[२]।
सिवपमुक्कफेक्कारभीसणे किलिकिलंतवेयालणीसणे।
पज्जलंतजालाहुयासणे[३] साइणीससंकेयभासणे[४]।
पिसियलाहपरिभमियगिद्धए[५] मडयकेसपुंजयसमिद्धए।
हुंकरंत जोइयवियंभणे मंतसत्तिपरविज्जथंभणे।
विविहरुंडबहुमुंडमालिए मिरपरिक्खहिडियकवालिए[६]।
तहिँ[७] भरंतु णियमणे जिणेसरो थियउ काउसग्गे वणीसरो।

(विलासिणी णाम छंदो)

घत्ता—एत्थंतरे दाणवदलणु[८] सूरु वि पहरहिँ अक्कमिउ।
पायपसारु करंतउ वि भवियव्वहो वसु अत्थमिउ ॥१६॥

१७

मित्तविओएँ णलिणि महासइ कण्णिय चूडुल्लउ ण पयासइ।
अइसोएँ[१] ललियंगइँ सिढिलइ अलिणयणउ पंकयमुहु मइलइ।
तद्दुहेण दुहियाइँ व चक्कइँ इत्थियसंगु[२] विवज्जिवि थक्कइँ।
अज्ज वि सो तहेव कमु चालइ[३] इय पडिवण्णउ विरलउ पालइ[३]।
कुमुअसंड दुज्जणसमदरिसिअ मित्तविणासणेण[४] जें वियसिय।

१५. ४ ख सिय। ५ ख गघ अवसवणइं। ६ क सद्धइं (टि० श्रद्धया)।
१६. १ ख उट्ठियउ, ग भोवडिय, घ भुवडिय। २ क धुवडहि अमगले।
३ ख चीया हुयासणे। ४ ग घ साइणिय°, ख °भीसणे। ५ क ससियालहं°।
६ ख हिंडहि। ७ ख तव। ८ ख दाणवणिद्दलणु।
१७. १ क घ अइसोएण। २ क दुत्थिय°। ३ क ग °हि। ४ क ख °विणासेण वि।

ण्हाइवि लोयायारेँ सुइहर[5]　　संझावंदणकज्जेँ दियवर ।
सूरहो देहिँ[6] जलंजलि णावइ　　पर अत्थमिउ ण तं फुडु पावइ ।
णिसिवेल्लिए णह मंडउँ[7] छाइउ　　जलहरमालए णाइँ विराइउ ।

(पारंदिया णाम पद्धडिया)

घत्ता—तो सोहइ उग्गमिउ णहे ससिअद्धउ विमलपहालउ ।
णावइ लोयहँ दरिसियउ णहसिरिए फलिहकचोलउँ[8] ॥१७॥

१८

विप्फुरियउ तह णक्खत्तणियरु　　पायडिउ ताए[1] णं पुप्फपयरु ।
तहिँ काले पहिट्ठउ[2] कामिणीउ　　भूसणइँ लिंति थोरत्थणीउ ।
क वि भणइ सहिए गुणरयणखाणि　　मण्णाविवि[3] वल्लहु झत्ति आणि ।
ससवित्तिहिँ क वि ईसा करेइ[4]　　पिउ कड्ढेवि केसग्गहेँ धरेइ[5] ।
मंडए कहिँ पिउ रूसेवि जंतु　　हारेण णिबंधइ का वि कंतु ।
पिउ हरिसिउ आलिंगणहँ जाइ　　खेड्डेण[6] का वि लिहक्केवि थाइ ।
परिरंभिवि पुणु पुणु क वि घणेहिँ　　पेल्लइ वच्छत्थलेँ[7] पिउ थणेहिँ ।
कासु वि माणिणिमुहे दिट्ठि जाइ　　वरपंकए छप्पयपंति णाइँ ।

(रयडा णाम पद्धडिया)

घत्ता -- पिउ अण्णहिँ आसत्तमणु पेच्छेवि क वि जूरइ[8] दूहव ।
रे विहि दुट्ठ हयास खल हउँ पइँ ण काइँ किय सुहव ॥१८॥

१९

कहिँ वि चारु सिंगारु करेप्पिणु[1]　　टरटरंति विड वेस णिएप्पिणु[1]
कहिँ वि वेस वल्लह अवमाणइ　　पंगुलो वि धणवंतउ माणइ ।
कहिँ वि सुरउ रमेवि संतुट्ठउ　　कूडउ दम्मु देवि विडु णट्ठउ ।
कहिँ वि दासि विडभडहो विलग्गइ　　कच्छहिँ धरेवि भाडि पुणु मग्गइ ।

---

१७. ५ क सिरिहर; ख सुरहर । ६ क ख देइ । ७ घ °मंडलु ।
८ ग घ कचोलउ ।

१८. १ ख णाइं । २ ख पहिट्ठिउ । ३ ख मण्णावि्वि । ४ ख करेवि ।
५ ख पिउ अच्छिवि केसग्गहे करेवि । ६ ख छिड्डेण । ७ ख वच्छत्थलु । ८ घ भूरइ ।

१९. १ ख °विणु ।

कहिँ वि वेस सुंदर सव्वंगहो चडुयम्महिँ मणु हरइ भुयंगहो ।
कमसेँ अद्धरत्तु गउ जामहिँ मंदपयाउ चंदु हुउ तामहिँ ।
हा वणिदु उवसग्गु सहेसइ को तं सुयणविहुरु[2] पेक्खेसइ ।
णं इय चिंतिऊण अत्थमियउ अलिउलगवलवण्णु[3] तमु भमियउ ।

घत्ता—णं विहिणा जगअंबरहो वोलेवए[4] किउ णीलरसु[5] ।
अहवा णं अभयहिँ तणउ दीसइ पवियंभिउ अवजसु ॥१९॥

२०

तिमिरं णियच्छेवि पंडिय गया तत्थ थिउ झाणजोएण सेट्ठीसरो जत्थ ।
पणवंति जंपेइ लग्गी पयग्गम्मि जइ अत्थि जीवे दया तुम्ह धम्मम्मि ।
अणुरायवंतीहिँ विद्दाणगत्तीहे[1] करि जीवरक्खा तुमं रायपत्तीहे ।
विरहाहिदट्ठीहे[2] हे सामि किं तेण णहि होइ जीवास मेलावमंतेण[3] ।
म चिराहिँ ए एहि उम्मीलणेत्ताइँ[4] लहु गंपि आलिंगि सोमालगत्ताइँ[5] ।
भणु कस्स तुट्ठो जिणो देसि ठाणस्स[6] लइ अज्ज जायं फलं तुज्झ झाणस्स ।
तुहुं[7] माणिणीचित्तअंभोरुहे मित्त सारीयणामेण[8] छंदो इमो वुत्त ।

घत्ता—पणयसहिय कंटइयतणु सा रायहंसवरभामिणी ।
रेहइ अभयदेवि सगुण सकमल सुवत्त णं पोमिणी ॥२०॥

२१

णिब्भूसण वि सुट्ठु उब्भासइ भूमिय तिहुयणं पि मविसेसइ ।
अच्छराउ किर सुरणर मोहहिँ तहे[1] पयबद्धिओ वि णउ सोहहिँ ।
सत्तसराल[2] वीण जइ वायइ तो मुणिहिँ वि मयणज्जरु[3] लायइ ।
रूवि दिणयरो वि जा थभइ तेहिय पुण्णहिँ विणु किम[4] लब्भइ ।
सा वि तुज्झ[5] आगमणु णियच्छइ एहि एहि उम्माहिय अच्छइ ।
तो वि ण कि पि तासु[6] मणु भिज्जइ किं णईए सायरु खोहिज्जइ ।

---

१९. २ क सुयणु विहुरु । ३ ख गउलवण्णु । ४ क विल एव । ५ ख घ णीलि° ।

२०. १ ख विद्दाणणंतीए । २ क विरहेहि° । ३ ख °मित्तेण । ४ क गवि रवि । ५ ग घ °त्ताए । ६ ख देउ सिद्धत्थ । ७ ख तुम । ८ ख सरीयेण णामेण ।

२१. १ क तहिं, ख तहो । २ ख °सराउल । ३ ख मुणीहि मयणहं जरु । ४ ख कहि । ५ क तुम्ह । ६ ख तासु किं पि ।

पंडियाए तेत्थहो आवेप्पिणु कहिउ जाम चित्तंतु णवेप्पिणु[7]।
ताम अभयं[8] भयवज्जिय जंपइ अवरु उवाउ णत्थि इह संपइ।
पुणु वि जाहि जइ कह व ण आवइ उच्चाएवि आणि महु भावइ।
पुरुसायत्तु ताम परिकीरइ दइवायत्तु होंतु को वारइ।
अवसु वि वसि किज्जइ जं रुच्चइ विसभएण किं फणिमणि मुच्चइ।

घत्ता—किं तुहुँ आसंका करहि इह जो [9]खाइहइ करंबउं[9]।
[10]माइए विणडेज्जंतु जणे[10] सो सइँ सहसेइ विलंबउं ॥२१॥

२२

तो ताए गंपि झंपियणयणु[1] लहु लइयउ उच्चाइवि मयणु।
आवंतिए केण वि पुच्छियए[2] दिज्जइ पडिउत्तरु दच्छियए[2]।
णिव्वविवहो[3] अइअणुरायजुया वाउल्लउ जग्गेसइ[4] अभया।
सो भग्गउ एवहिँ अण्णु मइं आणिउ हे णंदण गंपि सइं।
अण्णेण वि पुच्छिय भत्तियए सो णिरसिउ किं इय तत्तियए।
अण्णेण वुत्तु कहि माए महुं[5] कहि एहए[6] वेलए गइय तुहुं।
किं कहिएँ महु पहे छोत्ति हुआ हुं हुं ओसरु सरु दूरे सुआ।
इम दिंति पडुत्तरु पत्त[7] तहिं पउलीदुवारपडिहारं[8] जहिं।

घत्ता—पुणु सत्तइँ दारंतरइँ[9] पइसरइ विउसि भयरहिया[10]।
णिच्चलंग पडिहार थिय ण केण वि भित्तिहिँ लिहिया ॥२२॥

२३

लोयचित्तमोयण तं विसेवि[1] केयणं।
पंडियाए पंडिओ तूलिपंके छंडिओ।
रायसेट्ठिणंदणो सज्जणाहिणंदणो।

---

२१. ७ ख णिएप्पिणु। ८ ख ता अभया। ९ ख खाइ करंबउ।
१० ख माइ विणडिउ जं ति जणि।

२२. १ ख झंपियउ णयणु। २ ख °याइं। ३ क णिव्वविदहो।
४ ख लग्गेसइ। ५ ख किं माइ महो। ६ ख एयइं। ७ ग घ पत्ति।
८ ग घ पउलीदुवारु पडिहारु। ९ ग घ सत्तहि दारंतरहिं। १० ख सा भयरहियाः
ग घ विउसिम भय°।

२३. १ ख विसेइ।

देवसाहुवंदणो वूढधम्मसंदणो ।
धीरिमाए मंदरो रिद्धिए पुरंदरो ।
दित्तिए दिणेसरो बुद्धिए जिणेसरो ।
[2]भावणाए णिट्ठिओ[2] काउसग्गसंठिओ ।
सुहओ अरूसणो चितए सुदंसणो ।
किं करेमि तं पियं जं बुहीए जंपियं ।
हा बुहाण णिंदिरं[3] चिंतियं असुंदरं ।
जो ण कामखंडिओ सो सलग्घु पंडिओ ।
उण्हियाणिरुत्तओ[4] एस छंदु वुत्तओ ।

घत्ता—सप्पुरिसहो माणसु गहिरु विहुरे[5] विं ण जायइ कायरु ।
किं सुरमहणारंभे हुए मज्जाय पमेल्लइ[6] सायरु ॥२३॥

२४

रे णिहीण दीण जीव पाउ आसवेइ एहिँ ।
अप्पमाणमज्जवाणमासखाणकारणेहिँ ॥
णाणवंतसंतदंतदेवसाहुणिंदणेहिँ ।
संकिलिट्ठदुट्ठचिट्ठकूरदेववंदणेहिँ ॥
कालकूडमिस्सिएहिँ दिण्णअण्णभोयणेहिँ ।
वत्थुवत्थइत्थिअत्थइट्ठणट्ठसोयणेहिँ ॥
कूडसाखिकूडमाणकूडदव्वदावणेहिँ ।
कामकोहलोहमोहमाणडंभभावणेहिँ ॥
खीरणीरसप्पितेल्लसस्सधूलिमीसणेहिँ ।
एवमेव जत्थ तत्थ हासरोसखीसणेहिँ[2] ॥
राजवेरचोरजारथीकहाणुचालणेहिँ ।
देसरट्ठगामसीमदुग्गसेलजालणेहिँ ॥
थूलसण्हपाणभूयजीवसत्तदारणेहिँ ।

२३. २ क भावणा अणिट्ठिओ । ३ क णिंदियं । ४ क तुरिएहया ।
५ ख विहुरेण । ६ क मेल्लए, ख ण मेल्लइ ।
२४. १ ग घ कूडसिक्ख° । २ ख °भासणेहि ।

लोलचक्खुसोयघाणजीहफासपेरणेहिँ ॥
एम चिंतिऊण लेइ सुप्पइण्ण सो वणिदु ।
वुत्तु [3]अद्धजाइया य एस[3] चित्तु णाम छंदु ॥

घत्ता—जइ[4] कहमवि उव्वरिउ हउँ जमकरणहो एहए अवसरे ।
तो लेसमि जिणभासियउ तउ कल्ले संहुए[5] वासरे ॥२४॥

२५

इय जाम वयपुण्ण थिउ लेइ[1] सुपइण्ण ।
पिच्छेवि सहसत्ति चिंतेइ णिवपत्ति ।
पच्चक्खु एहु मारु परिचत्तसिंगारु ।
जइ तणु पसाहेइ तो जगु वि[2] मोहेइ ।
विरहग्गिसंतत्तु[3] केत्तडउ महु चित्तु ।
पुणु भणइ सच्छेहिँ णिम्मीलिअच्छेहिँ ।
झाएहि कि णाह उत्तत्तकणयाह ।
मुहजित्तमयवाह तियचित्तमयवाह
भो सुहय इह[4] जम्मे णिपवित्ति[5] जिणधम्मे ।
करिऊण आयासु पाविहसि सुरवासु
किं तेण सोक्खेण जं होइ दुक्खेण ।
लइ ताम पच्चक्खु तुहुँ [6]माणि रइसुक्खु[7] ।
मा होहि अवियारु संसारे तं सारु ।
भुंजियइ जं मिट्ठु माणियइ समणिट्ठु ।
परजम्मु कि दिट्ठु कउलागमे सिट्ठु ।
जाणेहि फुडु मार[8] लाएहि किं वार[8] ।
लीलाए पय दिंति गय चारु पयपंति ।

---

२४. ३ ख अद्धि जाइ जाप्पएसु, ग घ अद्धि जाइया पएस । ४ क कइ ।
५ ख ग घ कल्लाणइं हुय वासरे ।

२५. १ घ लेवि । २ क ग घ जि । ३ ख विरहम्मि । ४ ग घ इम ।
५ ग घ णयचित्ते । ६ क माणिरं सोक्खु । ७ ख णं । ८ ख °र ।

घत्ता—हे सुंदर अम्हहिँ दुहिँ वि जइं णेहेँ कालु गमिज्जइ।
तो सग्गेण मणोरेहण लद्धेण वि भणु कि किज्जइ ॥२५॥

२६

सुहय जइ इच्छसे[1] संखकुंदेंदुणीहार[2]हाराभहीरगगंगो[2]तरंगावलीपंडुरं[3]।
पढमबितिचारपंचछसत्तट्ठअण्णण्ण-माणिक्कभूमिहिँ[4] भाभासियासेसदिग्गंतरं[4]॥
विविहकुसुमोहकिंजक्करसंमिस्सकत्थूरिकप्पूरकस्सीरयामोयधावंतइंदिंदिरं।
चलियतियपायमंजीरझंकारसद्देण उम्मत्तणच्चंतमोरेहिँ उब्भासियं मंदिरं॥
(चंडवालुं त्ति णामेण दंडो इमो)

जइ इच्छहिँ[6] बालउ अलिणिहवालउ कुवलयसामलिउ।
मयरद्धयलोलिउ[7] भुंभुरभोलिउ किसलयकोमलिउ॥
थणभारक्कंतिउ जियससिकंतिउ कुलिसकिसोयरिउ।
ओलंबियहारउ जणमणहारउ रइहे सहोयरिउ॥
(भ्रमरपदो[8] णाम छंदो)

वरराउलं उब्भियविविहछत्तसिरिग्गिरि[9]धयवडेहिँ समाउलं[10]।
जणपेसलं जइ इच्छहि वणिद णिच्चुच्छवेहिँ[11] रइयमंगलं[11]॥
(मुखंगलीलक्खखंडकं)[12]

जइ इच्छसि मणोज्जं[13] चंचला हया णिज्झरवत उत्तुंग[14] सइलोवम गया।
कंचणमणिमऊहचिंधइयं[15] रहवरा सेवागय असेस पणवंति किंकरा॥
(आवली छंदो)

घत्ता—ता मइँ अणुहुंजहि सुहय इह होहि महियले राणउ।
मा सच्चिलउ करेहि तुहुँ तं[16] संखिणिहिकहाणउ ॥२६॥

---

२५. ६ ख मि, ग घ दुहि जइ।

२६. १ ख इच्छसि। २ ग घ हारब्भगंगा। ३ ख पंडरं।
४ क भाभासुरं असेस दिग्गंतर, ख ताभासिरं देसदिग्गंतरं। ५ ख चदयलो णामो।
६ क ख इच्छइ। ७ प्रतिषु 'भोलिउ'। ८ ख भ्रमरपट्टा। ९ क ख सिग्गिरि।
१० ख रामाउलं, ग घ रमाउलं। ११ घ णिच्चुच्छविरइय°। १२ ख मुखंगलीलवला-
खंडकं। १३ घ समणोज्ज। १४ घ तुंग। १५ क °मणिहि चिचइय। १६ ख कउंडी।

२७

हे सुहय कि ण सुउ पइं[1] कहिमि विक्खाउ　परयारअहिगमणु देवहँ[2] वि संजाउ ।
गोरीहिँ विवरोक्खे[3] मयणग्गिसंतत्तु　हरु गंग रमिऊण केलासि संपत्तु ।
गोवीहिँ लोणियहिँ[4] दणुआरि संरत्तु[5]　गउ णिसिहिँ संकेउ हरि सुरउ अणुहुत्तु ।
बंभेण अच्छर तिलोत्तिमहे विरहम्मि　रिछि वि ण परिहरिय अणुहविय रणम्मि ।
सूरेण अहिगमिय कोंतीहे[6] उप्पण्णु　सुउ भुवणे सुपसिद्धु णामेण जो कण्णु ।
पिय रमिय पिच्छेवि सिरिविम्मामित्तेण　सकलंकु किउ चंदु मयइण्हघाएण[7] ।
आहल्लसुरयम्मि[8] गोगमिणे[9] पक्कखु　हरि णियवि सहसभउ किउ पुणु वि सहसक्खु ।
मइँ माणि इय सयलु जाणेवि वित्तंतु　मयणावयारो इमो छंदु णिब्भंतु[10] ।
घत्त—इय अवर वि दिट्ठंतमय[11] देविणु मरालगइगामिणि ।
बहुविहभंगिहिँ पुणु वि पुणु खब्भालइ[12] वणिवरु कामिणि ॥२७॥

२८

जणमणहरणइँ　वरआहरणइँ ।
विविहइँ लेविणु　णियडए ण्हविणु ।
भउँहउँ वंकइ　अहरु वि डंकइ ।
पीवर घणयण　उग्घाडइ थण ।
णक्खणे गोवइ　णाहि पलोवइ ।
णीवीबंधणु　सिढिलइ पुणु पुणु ।
कोंतल छोडइ[1]　अंगइँ मोडइ ।
कक्खउ दावइ　मुहु वियसावइ ।
पायहँ लग्गइ　पुणु आलिंगइ ।
दरणहघट्टणु[2]　अहरसुघट्टणु[3] ।
समणिउ[4] मम्मणु　करइ सुचुंबणु ।

२७. १ ख पइं सुओ । २ ख देवहि । ३ ख विवरोपि । ४ ग घ लोणस्सहे । ५ ख हुयरत्तु, ग घ हुउ रत्तु । ६ ख कुंतियहि । ७ क मयअद्धघाएण, ख मयइण्ण विघएण; ग घ अइमयणघाएण । ८ ख आहिल्ल° । ९ क गोयम्मि, ख गोमियए । १० ग घ वि छंदो इमो वुत्तु । ११ क सयइ, ग घ सई । १२ ख विक्खब्भालइ ।

२८. १ क झाडइ । २ क °वट्टणु । ३ ख सहरसुवट्टणु, ग घ सरहसुवट्टणु । ४ ख सयणिउ ।

इय अवराहिँ[5] वि   बहुभंगीहिँ वि ।
जइ वि खवालिउ[6]   तइ वि ण चालिउ[7] ।
जिणदासीमुओ   णं कट्ठीहुओ[8] ।
छंदु वि वुत्तउ   मयणु णिरुत्तउ ।

घत्ता—अभया तो वि ण ओसरइ बहुविह उवाय चिंतंती ।
कइलासहो सुरसिंधु[9] जिह थिय पासे पासु भमंती ॥२८॥

२९

रोसंगयाए   दोच्छियउ ताए ।
दुप्पिट्ठ[1] धिट्ठ   सिढिलाहरोट्ठ ।
पिसुणावतार[2]   रे रे किराड[3]
एवड्डु[4] पुण्णु   कहिँ तउ उप्पण्णु ।
जं मज्झु आमु   चुंबहि सतामु ।
कि देवथाणु   थंभाणु भाणु ।
पुज्जिउ सतंबु   जं अहरबिंबु ।
दसणेहिँ धरहिँ[6]   णहि रइ जि करहि[7] ।
कि भइरवम्मि   णिवडियउ[8] तम्मि ।
भग्गहिँ णहाहिँ   रइमुहवहाहिँ ।
जं घणघणेहिँ   लग्गहिँ[9] थणेहि ।
पइँ अण्णजम्मे   परविण्हुधम्मे ।
लंघेवि गहणु   कि किउ समहणु[10] ।
कुरुखेत्ते गहणु   जं केसगहणु ।
पावहि हयास   रे वणियदास ।
दुहसयदलम्मि   गगकणखलम्मि ।

---

२८. ५ ख अवरेहिं । ६ क वि य चालिउ । ७ क ग घ पचलिउ ।
८ क °जुओ, ख वट्टइ हुउ । ९ ख सुरसघु ।

२९. १ ख दुप्पिट्ठ । २ क ग घ °ताड । ३ क किरिराड । ४. क ख एवडउ ।
५ क तहुं । ६ ख धरेवि, ग घ धरेहि । ७ ख णहि पक्खरेवि; ग घ गहिरए मरेहि ।
८ क ग घ णिवडेइ । ९ क लग्गइ । १० ख ग घ सगहणु ।

कि पियरपिडु पाडिउ अखंडु ।
णिवचित्तदमणि पिहु लडहरमणि ।
ज आरुहेहि[11] कहिँ तुहुँ लहेहि[12] ।
कि[13] पइँ रवण्णु तउ घोरु चिण्णु ।
जे लुलियहारु उरु हणहि चारु ।
एयहो वि उवरि कि भणमि णवरि ।
मुहु अप्पणो वि मुत्तेवि जोवि ।
छदु वि मुणेह फुडु चंदलेह ।

घत्ता—सामें भेॅॅ तुहुँ[14] भणिउ दोच्छिउ वि णकि पि वि बोल्लहि ।
णियमणि णिरु असगाहु किउ जो सल्लइ[15] अज्ज वि मेल्लहि ॥२९॥

३०

अज्ज वि हउँ अच्छमि माणुराय जम्मे वि ण मेल्लमि तुज्झ पाय ।
अज्ज वि अणुहुंजहि विसयसुक्खु भणु केण णिहालिओ गंपि मोक्खु ।
अहवा अवहेरहि कहव अज्जु लइ कल्लए सिज्झउ तुज्झ[1] कज्जु ।
जइ णत्तिय तावा[2] तुह ण देमि जइ पइँ सगोत्तु णउ[3] खयहु णेमि ।
तो अभयणामु ण वहमि[4] वराय हउ पग्गि व पइवयसेवि[5] जाय ।
अह तुज्झु जइ वि दावमि ण णासु[6] तो पेच्छंतहो सयलहो जणासु ।
ओलंबिवि अप्पाणउँ मरेमि[7] कि बहुणा नियढट्टसु करेमि ।

(रयडा णाम पद्धडिया)

घत्ता—पुणु पुणु एम भणेवि[8] णिरु णिवडिय णियसयणि[9] सुहाविणि ।
णं णाइणि णिप्फंद थिय रेहइ णरणाहहो भामिणी ॥३०॥

३१

तो सुहदंसणु चितइ सकज्जु अभया चितइ ण रमिउ[1] मणोज्जु ।
सुहदंसणु चितइ जलउ णारि अभया चितइ महु हुउ सुहारि ।

---

२९. ११ क भो ज आरुहहि । १२ क जि लहहि । १३ ख कं ।
१४ ख सामि भेइं मइ तुहुं । १५ ख सो णिरु ।

३०. १ ख तुज्झु । २ क तापं । ३ क णहु । ४ ख वहउ ।
५ ख पइवय सरिवि, ग घ पइवइ सरिवि । ६ क जइ वि विमलु सुजसु (टि० शीलयशः) ।
७ क मरेवि । ८ ग घ भणेइ । ९ ख सयणयले ।

३१. १ ख रमिय ।

सुहदंसणु चिंतइ उव्वरेमि अभया चिंतइ सुंदरु घरेमि[2] ।
सुहदंसणु चिंतइ कम्मणासु अभया चिंतइ सुरयाहिलासु ।
सुहदंसणु चिंतइ णाणलाहु अभया चिंतइ हुउ अंगे डाहु ।
सुहदंसणु चिंतइ मोक्खमग्गु अभया चिंतइ मुच्चिउ ण भोग्गु ।
सुहदंसणु चिंतइ खवमि कम्मु अभया चिंतइ मइँ किउ अहम्मु ।
सुहदंसणु चिंतइ जगु अणिच्चु अभया चिंतइ महु पत्तु मिच्चु ।
(रयडा णाम पद्धडिया)

घत्ता—सुहदंसणु चिंतइ हियइं अवहेरहिं[3] अडयणसाहसु ।
अइसयकल्लाणहिँ सहिय रे जीव अरुह आराहसु ॥३१॥

३२

सुलहउ पायालए णायणाहु सुलहउ कामाउरे विरहडाहु ।
सुलहउ णवजलहरे जलपवाहु सुलहउ वइरायरे वज्जलाहु ।
सुलहउ कस्सीरए[1] घुसिणपिंडु सुलहउ माणससरे कमलसंडु ।
सुलहउ दीवंतरे विविहभंडु सुलहउ पाहाणे[2] हिरण्णखंडु ।
सुलहउ मलयायले सुरहिवाउ[3] सुलहउ गयणगणे उडुणिहाउ ।
सुलहउ पहुपेसणे कप्पू[4] पसाउ सुलहउ ईमासें[5] जणे कसाउ ।
सुलहउ रविकंतमणिहिँ हुयासु[6] सुलहउ वरलक्खणे पयममासु[7] ।
सुलहउ आगमे धम्मोवएसु सुलहउ सुरुईयणे मइविसेसु ।
सुलहउ मणुयत्तणे पिउ कलत्तु पर एक्कु जि दुल्लहु[8] अइपवित्तु ।
जिणसासणे जं ण कया वि पत्तु किह णासमि[9] तं चारित्तवित्तु ।
(रयडा णामें पद्धडिया)

घत्ता—एम वियप्पवि जाम थिउ अविओलचित्तु[10] सुहदंसणु[11] ।
अभयादेवि विलक्ख हुय ता णियमणे चिंतइ पुणु पुणु[12] ॥३२॥

---

३१. २ ख रमेमि । ३ प्रतिपु 'अवहेरमि' ।

३२. १ क ख कासीरए । २ ख पाखणिण । ३ क °वासु । ४. ख बहु । ५. क सुलहउ सावएणे (टि० सावज्ञे मूर्खे दुर्जने मिथ्यादृष्टि पुंसि) । ६ क सुलहउ णवकतहे मणिहि वासु । ७. ग घ °लक्खणपए° । ८ ग घ दुलहउ । ९ क पामसि । १० क अवियल, ख अविचल । ११ ख सुदंसणु । १२ ख हुय णियमणे चिंतइ पुणु वि पुणु ।

३३

कहिँ वसंतु कहि उववणु अच्छइ　　कहिँ णरिंदु कीलेवउँ[1] गच्छइ ।
कहिँ हउँ तहिँ[2] पहिट्ठ संचलिय　　कहिँ सा डोड्डि[3] चवइ हरिसोल्लिय ।
कहिँ पंडियए एहु वढु आणिउ　　हा मइँ होतु कज्जु ण वियाणिउ ।
हा मइँ मा भावण भाविज्जइ[4]　　जाए मरणु बंधणु पाविज्जइ ।
हउँ कविलाए लेवि संपेरिय　　पंडियाए तइयहुँ विणिवारिय[5] ।
हउँ जाणंति संति आयहो गुण　　काइँ लग्ग असगाहेँ[6] णिग्गुण ।
सगुणसरासणु व्व जइ रुब्भइ　　जं ण माइ मुट्ठिहिँ तं मुब्भइ ।
एम पासे णउ खज्जइ पिज्जइ　　एम वि[7] गलडाहियए मरिज्जइ ।
परयारं पि होइ विरुयारं　　दुस्सहणरयदुक्खहकारं[8] ।
जा ण कि पि केण वि जाणिज्जइ　　ता वर एहु तहिँ वि[9] घल्लिज्जइ ।

(रयडा णाम पद्धडिया)

घत्ता –इय चिंतिवि सविलक्खियए अभयामहएविए वणिवरु ।
चाउद्दिसु वेढिवि लइयउ विसवेल्लिए णं चंदणतरु[10] ॥३३॥

३४

लहु उक्खिवेवि[1] सचलिय जाम　　गय रयणि मिहुरु उग्गमिउ ताम ।
पेच्छिवि विहाणु बाहुडिय भत्ति　　चरिमंगु सयणे घल्लिउ दडत्ति ।
चंदणहि जेम[2] लक्खणहो रुट्ठ　　दहहो जि चिरु वीरवइ[3] धिट्ठ ।
पज्जुण्णहो जिह पुणु कणयमाल　　तिह सा वि वणिवहो हुय कराल ।
बीइंदुयारँसुईमुहेहिँ[4]　　फाडिउ सरीरु णियकररुहेहिँ ।
घणथण सहंति[5] लोहियविलित्त　　णं कणयकुंभ घुसिणेण सित्त ।
वच्छयलएसु हत्थहिँ हणंति　　उट्ठिय ह्यास लहु इय भणंति ।
भसमुसलु परंगणरत्तचित्तु　　महमाइहिँ दिण्णउ कहिँ पहुत्तु ।

(रयडा णाम पद्धडिया)

३३　१ ग घ कीलेवइ । २ क तइं । ३ ख ग घ सा । ४ क वासिज्जइ । ५ क जि णिवारिय । ६ क असग्गहि । ७ ख एवहि । ८ ग घ णरयहं दुक्खहं कारं । ९ ख तहि जि । १० क ग घ अंजणतरु ।

३४.　१ क अक्खिवि, घ उक्खेविवि । २ क चंदणमवि जिह । ३ ख वीरमहि । ४ ग घ वीयंदयार । ५ क महंत ।

घत्ता—महु लडहंगइँ वणिवरिण एयइँ गंजियइँ पलोयहो।
जाम ण मारइ ता मिलिवि अहो धावहु घावहु[6] लोयहो ॥३४॥

३५

कियउ तीए कुआरउ जामहिँ[1] वणिवरिदु मणि चिंतइ तामहिँ।
पुरिसु चित्ते[2] उम्माहिउ अच्छइ महिल अवरु पुरिसंतरु वंछइ।
पुरिसु रत्तु[3] किर णियडउ गच्छइ महिल वंकदिट्ठीए णियच्छइ।
पुरिसु वि गाढु गाढु अवरुंडइ महिलचित्तु अवरत्तहिँ[4] हिंडइ।
पुरिसु णेहसब्भाउ[5] पउंजइ महिल कवडकूडहिँ मणु रंजइ।
पुरिसु दविणु आणेवि घरे[6] घल्लइ महिल तं पि[7] चोरेप्पिणु मेल्लइ।
पुरिसु अणेयपयारहिँ[8] पिच्छइ महिल अलियवयणाइँ[9] पयच्छइ।
पुरिसु चित्तु जुंजइ[10] घरदारहो महिल होइ आसत्ती[11] जारहो।

घत्ता कत्थइँ[12] कज्जवसेण पुणु छुडु पुरिसु जाइ घरु छंडिवि।
तो[13] एत्तहिँ आवइ महिल गाइ व हरहाई[14] हिंडिवि ॥३५॥

३६

वोमि विहयहँ[1] सलिले जलयरहँ
गमणागमणायरहँ पायमग्गु जइ कह व[2] दीसइ।
आदंसणे[3] पडिबिंबु हत्थगेज्झु जइ[4] कह व दीसइ ॥
पारयरसु जइ मूइमुहे इह[5] थिरु होइ णिरुत्तु।
तियहो चित्तु पुरिसहो उवरि तो ण चलइ अणुरत्तु ॥१॥वस्तु॥
महिल रत्तिय करइ कारवइ
उवयारविरत्त पुणु सइँ मरेइ मारइ मरावइ।
अच्छउ ता[6] किर मरणु मिससणहिँ सुहियइँ[7] धरावइँ[8] ॥

३४. ६ क घावहो धावहो।

३५. १ ग घ °वहि। २ ख पुरिसचित्तु। ३ ग घ पुरिसचित्तु। ४ ख अवरि तहि। ५ ग घ पुरिसणेहु। ६ ग घ घरि आणिवि। ७ ख तहि जि। ८ क °पयारं। ९ वयणइ जि। १० क जुजुइ। ११ ग घ आसत्तिय। १२ क अच्छइ। १३ ख ता। १४ क घरिहाइ जि।

३६. १ ख विहंगयहं। २ ख पयडु। ३ ख आदंसे। ४ क हले मुज्झइ, ख हाथि गिज्झु जइ पयडु। ५ ख जइ। ६ ख जा। ७ ख ग घ मुहियइं (टि० मोहितान्)। ८ ख मुहिमय धरावहि, ग घ मुहियएहि मुहियए धहावइ।

गंजइ गंजावेइ णिरु बहु अणत्थ पयडेइ ।
सिहिजालोलि व पज्जलिय परपाणहँ णिवडेइ ॥२॥

विसम वंकिय णीयरय गहिर[9]
बहुविब्भम बहुभमण उहयपक्खदूसणपयासिय ।
तीरिणि जिह तिह[10] जुवइ मंदगइ सलोणहु[11] समासिय ॥
सिहिधूमोलि व वरघरहो मइलिणि साहकार ।
विसभत्ति व मरणुव्वहण[12] तिक्खिय जिह असिधार ॥३॥

हरिणसिगहँ वंसमूलाहँ
मंजिट्ठलयाजडहँ अंकुसाहँ अहिमयरदाढहँ[13] ।
णइवल्लणहँ[14] खनयणहँ तह य तुरयगीवहँ मराढहँ ॥
आयहँ पासिउ अब्भहिय[15] वंकिम ण चलइ जेण ।
हम्मइ[16] तीयहिँ णिणु व हिउ[17] कामिहि[18] सुरयच्छलेण ॥४॥

कवडु चल्लइ कवडु[19] वोल्लेइ
वकद्धभउहउँ करइ कवडभावे थणगाहि[20] पयडइ ।
कवडे[21] पुणु पुणु दर हसइ पुणु वि कवडजुय अंग[22] मोडइ ॥
कवडेँ चाडुयसय दिसइ[23] कवडेँ सउह[24] करेइ ।
कवडेँ तुहुँ वल्लहु भणइ कवडेँ चित्तु हरेइ ॥५॥

दिट्ठिदंसणु[25] णेहु सब्भाउ
उवयारु चाडुयवयणु[26] दाणु संगु वीसामकरणु वि ।
कुलकज्ज[27] वड्ढिम विणउ दव्वहरणु धिक्कारमरणु[28] वि ॥
इय सयल वि मज्जायचुय णारि ण मण्णइ केम ।
तुच्छ सकलुसिय भीसणिय पाउसगिरिणइ जेम ॥६॥

---

१६. ९ ग णियर गहिर, घ णिय गहिर । १० ख तिह खलु । ११ क सलोणिहि ।
१२ क मरणु जणहि, ख मारण वहण । १३ ख अइमइर°, ग घ अइमयर ।
१४ ख णइ चलणहं । १५ ख अभयहिय । १६ घ हणइ । १७ क तिण विहियउ
(टि० तृणं कृत.), हम्महि तिय तेण जि विहिउ, ग घ तियहे तेण हियउ ।
१८ ख कामेहि, ग घ काहिमि । १९ क कवलु । २० ख कवडभाइ थणहाइ ।
२१ क कवले । २२ ग घ °जुइ अंगु । २३ ख °सयइं दिस । २४ क सव्वहं
(टि० सर्वेषामपि) । २५ क हिट्ठियदंसणु, घ हिट्ठिदंसणु । २६ ख अवयार चाडय वयण ।
२७ ख कुललज्ज । २८ क धिक्कारणु ।

कव्व लक्खण[29] तक्क सुणिघंट[30]
सछंदालंकार वरचरणकरण सिद्धंतभेयइँ ।
जीवाण सुहासुहइँ[31] कम्मपयडिबंधइँ[32] अणेयइँ ॥
मंतइँ तंतइँ सउणइं एत्थु ण कीरइ भंति ।
एक्कु मुएप्पिणु तियचरिउ सव्वइँ जाणिज्जइ ॥७॥

अस्सरासहँ[33] सीहवग्घाहँ
आसीविसविसहरहँ कह वि चित्तु विण्णए अलीढहे[34] ।
अणुमित्तु वि तियहे पुणु को समत्थु इह वसुहवीढए[35] ॥
गहचक्कु वि अंबुहिसलिलु वालुयणियरु विचित्तु ।
कह व पमावए जाणियए[36] णउ पुणु तियहिँ चरित्तु ॥८॥

खलहुँ जलणहुँ णहिहुँ सिंगियहुँ
दाढियहुँ णरवइकुलहुँ अरिहुँ सरिहुँ मित्तहुँ सकवडहुँ ।
बहुदोसहुँ मुक्खहुँ वि वसणियाहुँ[37] तह ठगहुँ दवडहुँ[38] ॥
किं बहुणा वरि एयहुँ वि[39] जाइज्जइ वीसासु ।
णउ पुणु अणुमित्तु वि तियहे जइ वि हु गुणहँ सहासु ॥९॥

चोरि णिग्घिणि लुद्ध[40] चलचित्त
मायाविणि साहसिणि अलियरासि परयारमोहिय ।
अवहत्थियसीलगुण होइ णारि सब्भावदोहिय ॥
जाणंतु वि परिस वि गुण[41] जो तहि[42] पत्तिज्जेइ ।
सो दुक्खावलिरं पियए तिलु तिलु कप्पिज्जेइ ॥१०॥

मुयउ जसहरु तियविसासेण
साकेयपुराहिवइ देवरइ वि रज्जाउ भट्टउ ।
णवणायसहस्सबलु नियविसत्थु[43] कीयउ पणट्टउ ॥

---

३६ २९ ख °णु । ३० क मुघंट । ३१ ख मरण मुहा° । ३२ ख बंधए ।
३३ क अइसरोसहं, ग घ अस्सरोसह । ३४ क अवलीढद (टि० अवलीढुं), ग घ अलीढए ।
३५ ख° वीढहं । ३६ क पयारइं, ख कह व पमावइ जो णियइ । ३७ ख मुक्खहहे
विसोणियहे । ३८ क दगडहुं धगडहुं, ग घ ठग्गहु धवडहु । ३९ ख एहु वि ।
४० ख धिट्ठु । ४१ ख एरिसु गुणहि । ४२ क वहो । ४३ ख विसंगु ।

अवर वि जे जे तियमइहिँ जाएसहिँ[४४] वीसासु ।
ताहँ ताहँ गलकंदलए लग्गेसइ जमपासु ॥११॥

जेम भउहहिँ जेम दिट्ठीए
तह जिह जंपंति[४५] गिर होइ वंक तिय तेम हियवए।
सेच्छाए संचरिवि[४६] पुणु वारवार गज्जेइ जणवए ॥
अलियउ पुक्कारिवि रडेवि[४७] परु मारावइ धिट्ठ ।
हो हो कि कि णउ करइ तिय रुट्ठिय[४८] मा दिट्ठ ॥१२॥
(वस्तुबंधकडवयं[४९])

घत्ता—तं कूवारु सुणेवि जणु लहु ससरु सचाउ पधावइ[५०] ।
सूरपहाहरु[५१] तडितरलु पाउसि णवजलहरु णावइ ॥३६॥

३७

तओ णिवइ पुच्छए जणु णिएवि[१] धावंतओ ।
कहि पि गिरितुंगओ गउ विछुट्टु[२] कि मत्तओ ॥
महंतु दविणीसरो लयउ किं पि बंदिग्गहे ।
सदप्पु अरि को वि कि महु पउत्तओ[३] विग्गहे ॥१॥
किमेत्थ णडवेक्खणं अह व कि पि चोज्जं वरं ।
तओ णरु णमंतओ कहइ को वि वित्तंत्तरं ॥
सुदंसणेण देवहो अभयदेवि वम्मासिया ।
सरम्मि जिह पोमिणी गयवरेण विद्धंसिया ॥२॥
इयं सुणेवि पत्थिओ अरुणणेत्तदट्ठाहरो ।
फुरंतणासाउडो तिवलिभालभूभंगुरो ॥
पकंपियसरीरओ बहलसेयअल्ललओ ।
करेण हयभूयलो भणइ[४] एम रोसिल्लओ ॥३॥

३६. ४४ क जाएसइ । ४५ क घ जिह जि जंपंति । ४६ क संवरेवि (टि० कडछोवि); ख सेच्छइ संचल्लइ वि । ४७ ख पुक्कारइ रडइ । ४८ ख रुट्ठी । ४९ ख °बंधा कडवया । ५० ग घ पधाइउ । ५१ क °पहारु; ख °पहाहउ ।

३७. १ क णुएवि । २ ख छुट्टओ । ३ ख पत्तउ, ग पहुत्तउ ; घ कि महुत्तउ । ४ ग घ हणइ ।

पियेइ मयतण्हिया[5] कुलिसमुइ को घासए।
गसेइ विसमंजरी जलहिवेल को सोसए॥
लुणेइ जमदाढिया[6] गरुडपक्ख को भंजए।
छलेण बलि मडए[7] महु पिया वि को भुंजए॥४॥
हुयास अहि वेरिणो चउर जार उपेक्खए।
ण सो सुइरु णंदए गरुवआवयं[8] पेक्खए॥
सुदुट्ठणरणिग्गहं सुयणपालणं[9] जुत्तयं।
णिवस्स जइ भूसयं[10] पुहइछंदयं वुत्तयं[11]॥५॥

घत्ता—अहो अहो भडहो तुरिउ तुरिउ[12] जा जाहु अभय साहारहु।
इयरु वि लेहु लेहु हणहु[13] खणे तिलु तिलु कप्पेवि मारहु[14]॥३७॥

३८

तं णिसुणेवि वयणु महिवालहो केण वि दिट्ठि दिण्ण करवालहो।
केण वि चाउ सगुणु अवलोइउ वरकलत्तु जिह मुट्ठिहे माइउ।
केण वि असिधेणुय विप्फारिय[1] णं कालेण जीह णीसारिय।
केण वि वुत्तु णाहु जसु रुट्ठउ तसु लुणेमि हउँ णासु सउट्ठउ।
केण वि वुत्तु अज्जदिणु धण्णउ देवदेव जं पेसणु दिण्णउ।
हत्थपहत्थवंतु वियरेसमि इंद इव्व हउँ हणउँ धरेसमि।
केण वि वुत्तु हउँ वि जाएसमि अज्जुणु व्व कण्णहो लग्गेसमि।
केण वि वुत्तु राम हउ होसमि विडसुग्गीवहो माणु दलेसमि।
केण[2] वि वुत्तु मईं वि णउ[3] पुज्जइ सुहकम्मसुहु कीस पेमिज्जइ[4]।
केण वि वुत्तु गज्जि किं किज्जइ विरलें पहुहे कज्जु साहिज्जइ।
(पारंदिया णाम पद्धडिया)

घत्ता—इय गज्जिवि जसलंपडेहिँ सुहडहिँ धावंतहिँ वणिवरु।
वेढिउ चाउद्दिसु सहइ साणहिँ णं कत्थइँ करिवरु॥३८॥

३७. ५ क विमइ मयनउणा। ६ क °डाढिया। ७ ख वडए। ८ ग घ आवई। ९ क °पालय। १० ख घ भूसण। ११ क छद वुत्तय। १२ क अहो भडहो भडहो तुरिउ। १३ क हणउं। १४ ख खणि खणि कप्पिवि मारहो।

३८. १ घ अप्फारिय। २ क मे यह पूरी पंक्ति नहीं है। ३ ख णिउ, घ णिव।

३६

जा मारणहुँ[1] णियउ[2] वणिसारउ ता जणेण पुरि किउ हाहारउ ।
पप्फुल्लियराईवसुवत्तिहे[3] जहिय वत्त केण वि तसु पत्तिहे ।
तुज्झ कंतु णिवरमणिहिँ[4] चुक्कउ दूसहमरणावत्थहिँ ढुक्कउ ।
तं णिसुणेवि[5] उट्ठंति पडंतिय उरयलु करयलेहिँ ताडंतिय ।
णयणंसुएहिँ सिहिण सिप्पंतिय तणु पासेयबिंदुहिँ थिप्पंतिय ।
मणिपालंबदोर[6] गुप्पंतिय मुहमरुमिलिय भमर वारंतिय ।
अइदीहुण्ह[7] सास मेल्लंतिय पउणाहयलय व्व कपंतिय ।
हा किं कियउ णाह जंपंतिय[7] गंपिणु तं पएसु संपत्तिय ।

(पारंदिया णाम पद्धडिया)

घत्ता—सहइ मणोरम पुणु वि पुणु भडयण असेस णिदंती ।
केसग्गहे आरुट्ठमण पचालि णाइँ कंदंती ॥३६॥

४०

हा हा णाह णाह पुक्कारइ पइँ मुएवि मइँ को साहारइ ।
हा हा णाह णाह जगसुंदर[1] संपयाए पच्चक्खपुरंदर ।
हा हा णाह णाह जणवल्लह[1] अमरंगणगणाहँ[2] मणदुल्लह ।
हा हा णाह णाह आणंदण जिणवरिंदमहरिसिकयवंदण ।
हा हा णाह णाह मयरद्धय हिंसाइयदोसेहिँ अलुद्धय ।
हा हा णाह णाह किं भाविउ जें परयारु गंपि पइँ सेविउ ।
हा हा णाह णाह वड भग्गउ कि घुणु वज्जखंभि[3] आलग्गउ[4] ।
हा हा णाह णाह महुँ एहउ णउ सहइ चित्ते सविरोहउ[5] ।

(पारंभिया णाम छंदो)[6]

घत्ता—जाणमि सढ[7] सुरासुर वि छुडु कंतु ण केण वि रक्खिउ ।
हा हा कासु कहेमि हउँ परदुक्खें को वि ण[8] दुक्खिउ ॥४०॥

---

३६. १ ख मारणहिं, ग घ मारणह। २ क णियउ। ३ क सुवत्तहे। ४ क रमणेहिं। ५ ख सुणेवि। ६ ख °पालंबु हारु। ७ क मे 'अइदीहुएण …… जपंतिय' इतना पाठ नहीं है।

४०. १ ख जग°। २ ख °गणवराह। ३ क वज्जखंड। ४ घ मे यह पूरी पंक्ति नहीं है। ५ क सविरोहिउ, ख चित्तु°। ६ केवल क प्रति में। ७ क संढु, ख चंद। ८ क कोण वि ण; ख को ण वि।

४१

हा हा णाह सुदंसण सुंदर सोमसुह।
सुअण सलोण सुलक्खण जिणमइअंगरुह ॥
सुमरमि पढमसमागमे विरहु असड्ढलउ।
तहु[1] विवाहे करजोडणु तारामेलणउ ॥
सुमरमि अणुदिणु[2] रइहरे गाढालिंगणउ।
हावभावसविलाससुविब्भमजंपणउ[3] ॥
सुमरमि उववणे सरवरि कयजलकीलणउ।
मम्मणमणियमणोहरु अहरावीलणउ ॥
सुमरमि णवकोमलदलकुवलयताडणउ।
मुत्ताहलहारावलिबंधणछोडणउ ॥
सुमरमि सुरहिविलेवणु[4] अंगहिँ भूसणउ[4]।
वार वार मण्णावणु सपणयरूसणउ[5] ॥
सुमरमि छुडु छुडु चल्लिय बहुमाणे[6] भरिय।
चाडुयहिँ संबोहिय करपल्लवे धरिय ॥
सुमरमि सुरहियकेसरणियरे[6] पिंजरिय।
सुइपूरण किय सभसलसुरतरुमंजरिय ॥
सुमरमि चारुकवोलहिँ पत्तावलिलिहणु।
ईसि ईसि थणपेल्लणु वरकुंतलगहणु ॥
तो वि ण फुट्टु महारउ हियडउ वज्जमउ।
वुत्तु छंदु सुपसिद्धउ इय रासाउलउ ॥

घत्ता—हा हा हा विहि दुट्ठ खल खउ कि ण जाहि[7] रे तोडिय।
णिहि दक्खालेवि[8] मज्झु पइँ लोयण पुणु कि उप्पाडिय[9] ॥४१॥

४२

जइ वारिवाह णहि णोत्थरंति[1] जइ तरु ससुक्क फल[2] वित्थरंति।
जइ मयहिँ सीह मारिय मरंति जइ मयणबाण जिणमणु हरंति।

४१. १ ख तहि, घ तहे। २ क ग घ दिएणु रईहरे। ३ ख चुंबणउ। ४ ख ग घ भूसणभूसणउ। ५ ख° तासणउ। ६ ग घ मररुह केसरे°। ७ क ग घ आसि। ८ ख दिक्खालहि। ९ क पुणु उप्पाडिय

४२. १ ख णोयरंति। २ ख ससुक्ख।

जइ देव णरए णारइय सग्गे   जइ जंति मिच्छमइ तिहुवणग्गे।
सम्मत्तणाणदंसणपसिद्ध   जइ सभवंति संसारि सिद्ध।
परयारगमणु तो तुहुँ करेहि   चरिमंगि एहिँ मारिउ मरेहि।
इय भणइ मणोरम जेम जेम   सुहदंसणु चिंतइ तेम तेम।
कसु तणउ तणउ कसु घरु कलत्तु   परमत्थेँ को वि ण सत्तु मित्तु।
संसारु[3] भमंतेँ मइँ वि णवर   अण्णहिँ भवे एयहँ दिण्ण पहर।
ते महु वि तिक्खपहरणकरग्ग   पावेवि णिमित्तु पहरंति लग्ग।
भुवणत्तए वि पवियंभियासु   आवज्जियकम्महो णत्थि णासु।

(रयडा णामेँ पद्धडिया)

घत्ता – हउँ द्रप्पा[4] उड्ढगइ[5] रयणत्तए संजुत्तउ।
बहुविहबज्झब्भंतरहिँ गंथहिँ जिणो व्व परिचत्तउ ॥४२॥

४३

पुणु पुणु णियमणे चिंतइ जाम[1]   दप्पुब्भड भड उत्थरिय ताम।
लइ इट्ठदेउ संभरि[2] भणंति   गलकंदले[3] करवालहिँ हणंति।
तहिँ अवसरे वितरु एक्कु पत्तु   भणु कासु ण दीसइ सत्तु मित्तु।
सो सयल वि भड थंभेवि धरेइ   असिपहर कुसुममालउ करेइ।
तो तियसहिँ णहे सजाय तुट्टि[4]   जयजयरवेण किय कुसुमविट्ठि।
सुरताडिज्जंतउ गयणे भाइ   दुंदुहि ण अक्खइ एम लोइ[5]।
परिसेसिवि णियमणे राउ दोसु[6]   पालिज्जइ किर छुडु[7] वयहँ लेसु।
सुरणरहँ पुज्ज तं कवणु चोज्जु[8]   लब्भइ मोक्खु वि अणवज्जु[8] पुज्जु।

घत्ता —वरसम्मत्तविहूसणहँ भव्वयणहँ जिणसुमरणे[9]।
णासइ पाउ असेसु लहु तमु जि[10] दिवायरवियरणे[11] ॥४३॥

---

४२. ३ घ संसारि। ४ प्रतिषु 'हंसुद्रप्पा'। ५ ख सुद्धगइ।

४३. १ ख मणि चिंतइ एम · ग घ मणे इय चिंतेइ। २ ख सुमरिवि। ३ ख गलि°। ४ ख हिट्ठि। ५ घ लेइ। ६ ग घ रायदोसु। ७ ख छुडु किर। ८ क °ज्ज। ९ क विहूसणं जिणवरु सुमरणे। १० क जेम। ११ क °वियरणे तिम णासइ उवसग्ग बहु।

४४

सुदुद्धरु[1] अंजणपव्वयकाउ दिसाकरितासणु मेहणिणाउ ।
सदप्पु वि वेज्झु[2] ण देइ करिंदु मणम्मि भरंतह[3] देउ जिणिंदु ॥१॥
पसुत्तु समुट्ठिउ[4] दंतिसमीहु महाबलु लोललुलावियजीहु ।
सरोसु वि देइ कम ण मइंदु[5] मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥२॥
तमालमहीरुहभंपडसीसु दिणेसरसण्णिहलोयणभीसु ।
हवेइ पसण्णु पिसाउ रउद्दु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥३॥
[6]वियंभियवेलणहंगणवोलु जलोब्भवजीवपयासियरोलु ।
अथाहु वि गोप्पयमेत्तु समुद्दु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु[6] ॥४॥
फुरंत फणामणिरुद्धदियंतु[7] तिलोयखयंकरु[8] णाइँ कयंतु ।
वलेवि ण डंकइ कूरु फणिंदु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥५॥
दुसंचरतीरिणिपव्वयदुग्गि[9] असंखमहीरुहभीसणमग्गि ।
कहिँ पि ण लग्गइ तक्करविंदु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥६॥
विएण व सित्तउ तिव्वु जलंतु जगत्तउ जालहिँ णाइ गिलंतु ।
स सोम्मु हवेइ सिही जह[10] चंदु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥७॥
णिमीलियबंधवसज्जण चक्खु अणेयपयारपयासियदुक्खु ।
विहट्टइ संखलबंधु[11] सुरिंदु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥८॥
मणोहर इंदियसोहणिवारु भयंदरसूलसिलेसमसारु ।
पणासइ रोउ जहा जरु मंदु[12] मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥९॥
दुलंघु रणंगणि पासयवूहु[13] ण मारिवि सक्कइ सत्तुसमूहु ।
किवाणु वि होइ अलं अरविंदु मणम्मि भरंतह देउ जिणिंदु ॥१०॥

(मोत्तियदाम)

---

४४. १ घ सुद्धरु। २ क वेब्भु, ख विभु। ३ ख भणतहं। ४ घ समुट्ठिय दंतिसमूहु। ५ क घ मयंदु। ६ क मे वियंभिय' ' 'देउ जिणिदु - यह पूरा चौथा पद नहीं है। ७ क °फडाहि णिरुद्ध°। ८ ग घ तिलोक्क ९ घ दुसचरि°। १० घ जिम। ११ ख ग घ विंदु। १२ क ख सहा जरविंदु। १३ ग रएप्पिणु पासहिं°, घ रएप्पिणु पासहि कूहु।

घत्ता—वरखगिदु उज्झायंतहँ गारुडियहँ फिट्टइ विसु जिह ।
भव्वयणहँ णयणाणंदि जिणु सुमरंतहँ उवसग्गु तिह ॥४४॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए बुहीअभयाजंपणं करेवि कुडवाउलल्लया सुदंसणखंभालणं[14] पुणु पहाए धाहावणं णरिंदभडथंभणं[15] अमरसाहुक्कारणइँ[16] इमाण कयवण्णणो भणिओ सधी फुडु अट्ठमो ।

संधि ॥८॥

---

४४. १४ ग घ खलावणं । १५ क भिडथभणं । १६ ग °णह, घ साहुक्कारकरणणहे ।

संधि ९

१

उब्भडभिउडी भीममुहु भडथड थंभिवि वणिवरकारणे ।
विंतरदेउ णरेसरहो मीहहो[1] सीहु व भिडिउ[2] महारणे ॥

चंपापुरवरंबुरुहसूरहो   दुट्ठसत्तुकुसुमोहचूरहो[3] ।
णियपयावभेसियसुरिंदहो   झत्ति धाइवाहणणरिंदहो ।
जं मसाणमज्झम्मि लक्खियं   चरणरेहिँ तं एवि अक्खियं ।
देवदेव वणिएण रंभिया   तुम्ह भिच्च पहरंत थंभिया ।
तो णिवेण अवरे वि पेसिया   विंतरेण पुणु ते वि[4] भेसिया ।
अण्ण अण्ण जे जे वियंभिया   तेण झत्ति ते ते णिसुंभिया ।
ता णिवरस[5] सहसा णमंतओ   कहइ को वि अइबुद्धिवंतओ ।
वणिवरिंदपक्खिउ[6] ससाहसो   तहिँ वियंभए देव रक्खसो ।
तसु वि सेणु दीसइ गरुक्कओ   णं समुद्दु मज्जायमुक्कओ ।
तं सुणेवि णरवइ पलित्तओ   णं हुआसणो घिएण सित्तओ ।
जो करेइ तहो पक्खु तिहुवणे   अज्जु णेमि हउँ सो जमाणणे ।
गहिरु रायवयणेण वज्जए   समरतूरु खयघणु व गज्जए ।
तं सुणेवि पुलओ विसट्टओ   कहो[7] वि णिविडु सण्णाहु तुट्टओ ।
सगुणु धम्मु गेण्हंतु दीसए   मुणिवरो व्व भडु को वि सीसए[8] ।
को वि तोणजुयलेण भासुरो   उक्कमेइ णहे णं खगेसरो ।
महइ को वि जयसिरिविलासिणी   वुत्तु छंदु एसो विलासिणी ।

घत्ता—रणरहसेण को वि सुहडु पवरु थंभु उम्मूलिवि धावइ ।
दाणवंतु थिरथोरकरु[9] दुण्णिवारु सुरवारणु णावइ ॥१॥

---

१. १ ख सिहउ । २ ख भडिउ । ३ ख ग घ कूरहो । ४ ख तेण । ५ क ग घ ताम णिवहो । ६ ख वणिवरिंदु°, ग घ °पेक्खिउ । ७ ख बहू । ८ ख ग घ भासए । ९ क ग घ थिरु थोरु करु ।

२

भणइ का वि लग्गेवि गलकंदले   भिडेवि[1] तेत्थु उब्भडभडगोंदले ।
आणसु धयवडाओ सुविसालअ   करमि जेम घरि वंदणमालउ[2] ।
भणइ का वि सिंदूरेँ पंकिय   विप्फुरंतमोत्तियहिँ[3] अलकिय ।
आणि गंपि अरिकरिसिरसंघड   करमि जेम णियघरे मंगलघड ।
भणइ का वि कामिणि कामाउर   जइ पइँ हरेवि णेइ पवरच्छर ।
तिलु तिलु लुणिवि देहु सइँ घायमि   ता णिरुत्तु तियवहु[4] तुह लायमि ।
भणइ का वि पहुकज्जु करेज्जसु   दुरयंतुरंगणियरु घाएज्जसु ।
अरिबलु पबलु सयलु बलि दिज्जसु   महु घरे विजयरेह आणिज्जसु ।
घत्ता—णीसेसु वि बलु सण्णहेवि सहुँ धरणीसरेहिँ[6] संचलिउ ।
सोहइ पच्छायंतु महि जुयखए णं समुद्दु उच्छलिउ ॥२॥

३

चलइ णिवबलं   दलइ महियलं ।
सहइ णहभर[1]   वहइ अइडरं ॥
दलइ फणिउलं   चलइ आउलं ।
मुयइ विससिहि[2]   हरइ जणदिहि ॥
चलइ[3] जलथलं   खलइ अरिबल ।
करइ भयरसं   सरइ दसदिसं ॥
मिलइ हयथडो[4]   घुलइ[5] धयवडो ।
मुसइ अंबरं   पुसइ[6] दिणयरं ॥
रसइ पडहओ   उसइ[7] करहओ ।
कमइ संदणो   भमइ भडयणो ॥
रुलइ रयभरो[8]   चलइ[9] णिब्भरो ।
चडइ णहयले   पडइ महियले ॥

---

२. १ ख भिडइ । २ ग घ वंदुरमालउ । ३ ख विप्फुरेहिं । ४ ख णियवउ । ५ ग घ तुरय । ६ क ग घ °सरेण ।

३. १ क ग घ णहुभरं । २ ख विसहरं । ३ घ जलइ । ४ ख भडयडो । ५ क लुडइ । ६ ख सुसइ । ७ ख कसइ । ८ क रुलइ रइभमो (टि० रजोभ्रम), ख चलइ° । ९ ख रलइ ।

दडइ कायरो रडइ गयवरो ।
वहइ[10] मयजलं रहइ धरयलं ॥
कुणइ परिमलं रुणइ[11] अलिउलं ।
दुवइ भासिया कुसुमविलासिया ॥

घत्ता—चाउरंग बलपरियरिउ णरवइ छुडु छुडु णियडए ढुक्कउ[12] ।
एत्तहिँ मायाबलसहिउ रयणीयरु सवडम्मुहु थक्कउ[12] ॥३॥

४

तो गज्जइँ रणरहसुब्भिण्णइँ आब्भिट्टइँ णिवणिसियरसेण्णइँ ।
मिहुणइँ जिह रोमंचियगत्तइँ मिहुणइँ जिह तरलावियणेत्तइँ ॥
मिहुणइँ जिह उद्दीवियरोसइँ मिहुणइँ जिह धावियमुहसोसइँ[1] ।
मिहुणइँ जिह विरइयसंबंधइँ मिहुणइ जिह वरकरणमयंधइँ ॥
मिहुणइँ जिह चिक्खित्ताहरणइँ मिहुणइँ जिह उच्चाइयचरणइँ ।
मिहुणइँ जिह आमेल्लियसुसरइँ मिहुणइँ जिह पुणु पुणु दरहसिरइँ ॥
मिहुणइँ जिह सेउल्लणिजलइँ[2] मिहुणइँ जिह कड्ढियकरवालइँ ।
मिहुणइँ जिह आहयवच्छयलइँ मिहुणइँ जिह मुच्छाए तणुवियलइँ ॥

घत्ता—तो उल्ललइ चलइ खलइ तसइ ल्हसइ णासमइ पणासइ ।
णिसियरबलु णिवसाहणहो णववहु जेम ससज्झय[3] दीसइ ॥४॥

५

वितरेण तं धीरिउ णियबलु पुणरवि भिडिउ गहिरकयकलयलु[1] ।
जाम ताम सहसा धूलीरउ उट्ठिउ[2] बलहँ णाइँ विणिवारउ[3] ॥
लग्गेवि[4] पयहँ णाइँ मण्णावइ विहुणिउ तइ वि कडिल्थिइ[5] पावइ ।
तहे अवगण्णिओ वि णउ रूसइ वच्छत्थले पेल्लंतु व दीसइ ॥
दुण्णिवारधायहँ णं संकइ दिट्ठिपसरु णं मंडए[6] ढकइ ।

---

३. १० ग घ महइ । ११ क भणइ । १२ ख °इ ।

४ १ क °सासइं, ख धाहाविय सोसइं । २ घ सोउल्ल° । ३ क ससंभमु ।

५. १ ख गहिरु । २ क उहय° । ३ ख °वारिउ । ४ ख लग्गउ । ५ क कडच्छहे, ख ग घ कडच्छहि । ६ ख मंडवि ।

कहइ णाइँ लग्गिवि[७] कण्णंतरे मम्महिरामरमणिए जो रइहरे ॥
अहरबिंबु दंतग्गिहिँ खंडिउ पिहुलवच्छु वाहहिँ अवरुंडिउ ।
सो सिवकामिणीहि मा दिज्जउ महु अब्भत्थण वि मण्णिज्जउ ॥
केसहँ लग्गिवि रोसु व दावइ गउ णहे णं अमरहँ[८] धाहावइ ।

घत्ता—पहरंतहिँ सुहडहिँ समरे तक्खणे लोहियसरि णीसारिय ।
दावंती भउ[९] सुरणरहँ[१०] णावइ कालेँ जीह पसारिय ॥५॥

६

सिग्गिरि[१] बहुविहतरुवरणविय[२] धयचमरचिंधकल्लोलजुय ।
सियवरतुरंगफेणुज्जलिय[३] संदणसहासगाहावलिय[४] ॥
जिगिजिगियखग्गमीणुल्ललिय करिवरखडक्कणिरुद्धलिय[५] ।
रसरसियतूरवगपरियरिय[६] चलवलियअंतडिडहँ[७] भरिय ।
कुंभयलसीप्पउडपरिदलिय बहुरयणमोल्लमोत्तियगलिय ॥
णिवडियभडविरसियमुहकमल गिद्धावलिअलिहिंडियमुहल ।
तरवारिवारिपूरेँ विसम सरजालणिविडकोट्टिमसुगम ॥
परिमोहइ रुहिरतरंगिणिय बिसिलोयछंद पद्धडि भणिय ।

घत्ता हउँ कुलीणु अवगण्णियउ उच्छलंतु अकुलीणउ वुत्तउ ।
रुहिरणइहेँ धूलीरएण णं इय चिंतेवि अप्पउ खित्तउ ॥६॥

७

णिवडिय बलइँ णिएवि अवरुप्परु कुविय णरिंदणिसियरा ।
तो सण्णद्ध वे वि उद्धाइय[१] मत्तगइंदवंदिरा[२] ॥
अयसीकुसुमवण्ण अइदुद्धर पडिभयगलह दारुणा ।
धवलविसाण[३]पिंगलोयणजुय सुंडमुहम्मि सारुणा[४] ॥

---

५. ७ ख लग्गइ ! ८ क णं भ्रमरहं । ९ घ भुउ । १० ख सुरयणहं ।

६. १ ख सिक्किरि । २ ग घ तरवर° । ३ ग घ सियपवर तुंग° । ४ ग घ गाहो-च्छलिया । ५ ख करवर घड णिरु भइदुल्लिलिया । ६ घ रसमसिय° । ७ ख डंबुहें ; ग घ डिंडुह ।

७. १ क उद्धोइय । २ क° मंदरा । ३ ख विसाल । ४ ख आरुणा ।

पिहुलत्तेण तिकर[5] सत्त जि कर तुंगत्तेण मणहरा।
वेवत्तेण[6] दह जि कर भासिय दीहत्तेण णवकरा ॥
पच्छए णविय उण्णया अग्गए पुच्छकरेहिँ दीहरा।
वंसविरायमाण दिढ णावइ संचारिममहीहरा ॥
पयपब्भारणमियवसुहायल चूरियसयलविसहरा।
खरकण्णाणिलेण णीसेस वि आकंपवियसायरा ॥
अइगंभीरबहलगलगज्जियबहिरियसयलकाणणा।
कुंभत्थलसुतेयसिंदूरें अरुणियदसदिसाणणा ॥
धंति वलंति ठंति सवडम्मुह दिंति[7] उरे उरत्थलं।
दंतग्गेहिँ दंत णिब्भिंदिवि[8] लिंति करेण करयलं ॥
पुणु सुतिरिच्छ होंति जुज्झंति ण ठंति खणं पि णिच्चला[9]।
अट्ठावीसमत्तसंजुत्तिय दुवई एस विज्जुला ॥

घत्ता—तो[10] णिवदंतिए[11] णिसियरहो गयवरें रयणहँ[12] कोडिउ दिण्णउ।
पुणु मग्गियउ[13] पडेवि थिउ णावइ रिणिउ लेइ उच्छिण्णउ ॥७॥

८

एत्थंतरे माणसजायसल्लु अण्णहिँ गए आरूढउ पिसल्लु[1]।
रे रे भूगोयर पावरासि समरंगणु मेल्लिवि णासि णासि ॥
णाणाविहवरपहरणकराहँ[2] जा हुइ अवत्थ तुह किंकराहँ।
सा तुह म होउ इय भणइ जाम दोच्छिउ णिवेण रयणियरु ताम।
णउ लज्जिओ सि तुहुँ इय भणंतु अप्पाणउ किं विणडिउ खणं तु[3] ॥
भूगोयरेण सुवियक्खणेण किं हयउ ण दहमुहु लक्खणेण।
महु करिणा तुह करि णिहउ जेत्थु तुह महु समसीसी[4] कवण तेत्थु ॥
अह अत्थि सत्ति तो भिडु णिरुत्तु रक्खसहो वि भेक्खसु[5] हउँ पहुत्तु।

(रयडा णाम पद्धडिया)

---

७. ५ क विकर। ६ ख विद्धत्तेण। ७ ख दंति। ८ ग घ णिब्भंदिवि। ९ ख °लं। १० ख ते। ११ क णिवडंतीए, ग णिवडंती, ख घ णिवदंती। १२ ख रयणिउ; ग घ रयणहो। १३ क मग्गए।

८. १ क आरूढु मल्लु। २ क णाणाविहघणु पहरण°। ३ ख वहुवइ हणंतु; ग घ णिवडिउ खणंतु। ४ क तुहु मुहु समसीसइ। ५ घ भेक्खुसु।

घत्ता—वरमायंगहिँ आरुहिय विण्णि वि दुद्धररोसहो चडिय।
गलगज्जेवि गिरिवरहँ थिय णाइँ पवरपंचाणण भिडिय ॥

९

वे वि तक्खडा दप्पउब्भडा।
देहभासुरा णं सुरासुरा ॥
बद्धमच्छरा णं सणिच्छरा।
जुज्झकोच्छरा तोसियच्छरा ॥
अंबुहीगिरा कज्जजंपिरा।
लच्छिरामिया सेण्णसामिया ॥
णं भयावणा रामरावणा।
ढुक्कसम्मुहा मुक्कआउहा ॥
घायघुम्मिरा रत्ततिम्मिरा।
दो वि सुंदरा णाइँ मंदरा ॥
कंपवज्जिया देवपुज्जिया।
छंदु सिद्धओ सुपडिबद्धओ[1] ॥

घत्ता—तो राएँ रयणीयरहो णिज्झरवंतु तुंगु करिपव्वलु[2]।
दीहरबाणहिँ छाइयउ णावइ विसहरेहिँ मलयाचलु ॥९॥

१०

समरट्टु[1] थोटट्टु आहवे पयट्टु सरजालेँ पूरिउ[2] सो दुघोट्टु।
महिणाहेँ पुणरवि णिसियरस्स सपेसिय बाणसयाइँ[3] तस्स ॥
अइउज्जुय[4] मोक्खहिँ धावमाण[5] गुणपेरिय मुणि व सहंति बाण।
तहिँ अवसरे पडइ ण हत्थि जाम सो जावहाणु[6] सहस त्ति ताम ॥
अंगाहिवसिंधुरे[7] चडिउ[8] केम कमु देइ धराहरे सीहु जेम।

९. १ घ सुप्पसिद्धओ सुपडिबद्धओ। २ ख कयपव्वलु।

१०. १ क समरट्ट। २ क ग घ पूरिवि। ३ ख ठाणु रयेइं ; ग ठाणु रएवि, घ बाणु रएवि। ४ क अइउज्जय, ग घ अइदुज्जय। ५ ख मोक्खु ण धाइमाणु; ग घ मोक्खु ण धावमाणु। ६ क जा ण हणइ, ग घ जा हणेइ। ७ ख अणगइं वरसिंधुरे। ८ ख चडिवि।

णाणाविह पहरण परिहरेवि णिसियरणिव तहिँ जुज्झंति बे वि ॥
अण्णोण्णुप्पेल्लिय कुप्परेहिँ करगाहाछोडणदुक्करेहिँ[9] ।
केसरिकमेहिँ उरपेल्लणेहिँ अहियासहिँ[10] मच्छुच्छल्लणेहिँ ॥

घत्ता—इय जुज्झंता सामरिस अतुलपरक्कम सोहियविग्गह ।
करिवराउ[11] दोण्णि वि ल्हसिय णं गयणंगणाउ कूरग्गह ॥१०॥

११

कंचणणिबद्धए उब्भियसुचिंधए[1] ।
घगघगियमणिसरे मंदकिंकिणीसरे ॥
मणजवपयट्टए टणटणियघंटए ।
धूवधूमाउले गुमुगुमियअलिउले[2] ॥
खणखणियसंखले बहुवलणचंचले[3] ।
हिलिहिलियहयवरे[4] एरिसे रहवरे ॥
णिउ चडिउ जावहि रयणियरु तावहि ।
लहु अवरसंदणे आरुहिउ तक्खणे ॥
खणु वि ण हुँ थक्कए समरि परिसक्कए ।
दुवइया वज्जरी अमरपुरसुंदरी ।

घत्ता—सोहइ णिसियररहवरेण[6] परिअंचिउ चंपाहिवरहवरु ।
भूरिकणयभाभासुरउ णाइँ दिवायरेण सुरमहिहरु ॥११॥

१२

तो अंगणाहेण रहवरसणाहेण ।
जणहिययरामेण अइपवरथामेण ॥
अप्फालिओ चाउ[1] उच्छलिउ गुरुणाउ ।
सुरअसुर मणे डरिय णिरु धरणि थरहरिय ॥

---

१०. ९ क ढक्करेहि । १० क महिपासहि । ११ ख करिकराउ ।

११. १ ख उज्झिय° । २ घुमघुमिय° । ३ क बहुबहल चंचले, ख बहुचलण° । ४ ख °हयचले । ५ क खलु वि ण हु, ख खलु वि णउ । ६ ग घ णिसियरराहवेण ।

१२. १ ख अप्फालिय वरचाउ ।

दिसिगय समोसरिय　　हुय मणुय भयजरिय[2]।
खयरउल खलखलिय　　गिरिसिहर टलटलिय ॥
विसहर वि सलसलिय　　जलणिहि वि झलझलिय।
[3]पर मुएवि रयणियरु　　कयपयड गुणणियरु[3] ॥
धणु लेवि सो थक्कु　　राएण तो मुक्कु।
बाणोहु किर जाम　　णिसियरेण तहो ताम ॥
खंडियउ धणु छत्तु　　महिवीढे संपत्तु।
वर दुवइ णउ भंति　　इय चारु पयपंति ॥

घत्ता—तहिँ अवसरि चपाहिविण　मुक्क सत्ति तिमियरहो तुरंती।
हियए लग्ग णिरु पाणपिय　णाइँ विलासिणि मुच्छ करंती ॥१२॥

१३

तो गयणंगणे　　मिलियसुरंगणे।
चवियसुरासुरे　　तणुभाभासुरे ॥
महिलपराहवे　　जायमहाहवे[1]।
सुरहँ ण लज्जिय　　घणु जिह गज्जिय ॥
णिसियरु राएँ　　मणि सकसाएँ।
राहुं जिह रवि　　णिज्जिउ पुणरवि ॥
हुउ मुहकायरु[2]　　णवर णिसायरु।
सत्तिपहारेँ　　अइ अणिवारेँ ॥
वेविरगत्तउ　　मुच्छइँ पत्तउ।
किहँ[3] जीवेसइ　　संसउ दीसइ ॥
कुविए णरेसरि　　एहए अवसरि।
लंबियबाहहो　　वणिवरणाहहो ॥
को वि ण सरणउ　　ढुक्कउ मरणउ।
हा कि किज्जइ　　कासु कहिज्जइ ॥

---

१२. २ क ख जरजरिय। ३ क पर सुयवि धणुराव। रयणियरु धीराव।
१३. १ क एहए माहवे। २ ख महिकायरु। ३ क कहं ; ग घ किर।

इय कह जक्खणे ढडुरु तक्खणे ।
पसमियवेयणु जाउ सचेयणु ॥
(मयणो णाम छंदो) ।

घत्ता—तमियरु रायहो धाविया सिहरिहिँ[4] विज्जदंडु णं ढुक्कउ ।
णाणाविहहिँ विउव्वणहिँ वियरइ संगरे णाइँ घुडुक्कउ ॥१३॥

१४

ण थाइ भमंतु मयंगु दमंतु[1] ।
तुरंग हणंतु भडोह चणंतु ॥
रहंग दलंतु णरेंद मलंतु ।
पयंगु पवंगु[2] खणेण रहंगु[3] ॥
कवोउ कुरंगु खणेण तुरंगु ।
बलाउ चऊरू खणेण मऊरु ॥
णऊलहिँ[4] मच्छु खणेण तरच्छु ॥
अगाहु वराहु खणेण दुरेहु ।
सिघालु विरालु खणेण मरालु ॥
अणिदु गइंदु खणेण मइंदु ।
महीसु सथोट्टु हवेइ खरोट्टु[5] ॥
अणेयविहाइँ करेइ मुहाइँ ।
अणेय मसत्थ[7] विउव्वइ[8] हत्थ ॥
णियच्छिवि सो त्रि ण कंपइ तो वि ।
मणम्मि णरिंदु पयासिउ छंदु ॥
सुमेत्तियदामु जणे अहिरामु ।

घत्ता—जं जं कि पि पुरउ णियइ तं तं णिवइ हणंतु ण थक्कइ ।
णाइँ रामु रामणसमरे कुरुबलि भीमु अह व परिसक्कइ ॥१४॥

---

१३. ४ क सिहरे।

१४. १ ख मयंगु दलंतु। २ ख पयंग पयंगु। ३ मयंगु, ४ ख ग घ उलूवहि। ५ ग घ खरोट्ठु। ६ ग घ अणेण विहाइं। ७ क समत्थ। ८ ख विउव्वण।

१५

रक्खसेण मुक्कु अक्खु दुण्णिरिक्खु कालओ।
धाइवाहणेण भूरिरोसिरो विरालओ ॥
रक्खसेण मुक्कु चारु चंचलो तुरंगओ।
धाइवाहणेण दूसुसीसु तिक्खसेगओ[1] ॥१॥
रक्खसेण मुक्कु मत्तु तुंगगत्तु वारणो।
धाइवाहणेण सीहु लंबजीहु दारुणो ॥
रक्खसेण मुक्कु मेहु वोमि उत्थरंतओ[2]।
धाइवाहणेण घोरु मारुओ तुरंतओ ॥२॥
रक्खसेण चित्तभाणु पज्जलंतु घित्तओ।
धाइवाहणेण मेहु णीरविट्ठिजुत्तओ ॥
रक्खसेण मुक्कु रुक्खु सुक्खु अक्खलंतओ।
धाइवाहणेण तिव्वु पावओ जलंतओ ॥३॥
रक्खसेण पत्थरालु मुक्कु सेलु जक्खणे।
धाइवाहणेण चंडु वज्जदंडु तक्खणे ॥
रक्खसेण मुक्कु रुंदु चंदु विप्फुरंतओ।
धाइवाहणेण राहु तप्पहा हरंतओ ॥४॥
रक्खसेण मुक्कु झत्ति अंधयारु भीसणो।
धाइवाहणेण भाणु भूरिभापहासणो ॥
रक्खसेण मुक्कु जाम सायरो झसायरो।
धाइवाहणेण ताम मंदरो सकंदरो ॥५॥
रक्खसेण णायवासु[3] पेसिओ पईहरो।
धाइवाहणेण वाणु भासुरो खगेसरो ॥
तो णिसायरो णिवस्स संगरे पलाणओ।
तक्खणेण झत्ति पत्तु वुत्तु छंदु तोणओ ॥६॥

---

१५. १ क धाइवाहणेण भूरिरोसिरो विरालओ। २ क मुक्कु तत्थ मेहु उत्थरंतओ। ३ क णायबाणु।

घत्ता—तो णिवेण णिसियरु भणिउ रे णिल्लज्ज रणंगणे भग्गओ।
जइ तो किं पुणु आइयउ णासि णासि पइँ मारिवि लग्गओ ॥१५॥

१६

णरवरिंदु णिद्धारेवि णयणइँ भणइ ण भणइ[1] जाम इय वयणइँ।
भल्लिएँ हणिवि ताम मुच्छाविउ अह मच्छरु को णावइ पाविउ ॥
लहिवि चेट्ठ णिसयरहो[2] णिवपुंगमु धाइउ हरिहे णाइँ तंबेरमु।
जिगिजिगंतअसिविज्जुल मणहर भिडिय बे वि णिसियरणिवजलहर ॥
तक्खणेण चंपापुरिपालें जाउहाणु आहउ करवालें।
दोहाइउ तिमिरयरं[3] दो थाइय दो हय तो चयारि संपाइय ॥
हय चयारि मरु मरु पभणंता झत्ति सरोसं[4] अट्ठ संपत्ता।
अट्ठ णिहयं[5] सोलह सुविराइय सोलह हय बत्तीसुद्धाइय ॥
बत्तीस वि दोहंडिय जामहिँ चउसट्ठि जि उप्पण्णा तामहिँ।
ते हय तक्खणेण वित्थारियउ अट्ठावीसा सउ[6] उत्थरियउ ॥
(पारंद्धिया णाम पद्धडिया छंदो)

घत्ता—मज्झे[7] परिट्ठिउ चंपवइ सोहइ णिसियरेहिँ गुरउद्दहिँ।
विउणहिँ विउणहिँ[8] वेढियउ जंबूदीउ व दीवसमुद्दहिँ ॥१६॥

१७

पुणु पुणरवि वेढिउ[1] णिवइ केम कम्महिँ संसारिउ जीउ जेम।
सुट्ठु वि बलवंतउ गुणगुरुक्कु किं बहुयहिँ लइयउ करइ एक्कु ॥
तहिँ अवसरे सो राहमत्ति णट्ठु ण मोहसमूहहो हत्थि तट्ठु।
संचरिय विउव्वण णिसियरेण णिसागमे णिसि व दिणेसरेण ॥
अग्गए णिय पच्छए दिव्वु जाइ जीवहो पुव्वंकिउ कम्मु णाइँ।
रयणायरेण कड्ढिवि किवाणु तो वुच्चइ णिवइ पलायमाणु ॥
जज्जाहिँ[2] सरणु सुहदसणासु रक्खेवए अण्णहो सत्ति कासु।
त सुणेवि सरणि गउ गलियमाणु जंपइ सुदंसणु भयकंपमाणु ॥

१६. १ क पुणइ वि भणइ। २ क णिसियरहो ख णिसियर; ग घ णियरहो। ३ ग घ तमियर। ४ क सरोवि। ५ ख विहय। ६ ग घ अट्ठावीसउ सउ। ७ ग घ झत्ति। ८ क विउलहि विउलहि।

१७. १ ख वेढिउ। २ ख जा जाहि।

घत्ता—चयवि जोउ णिउ रक्खियउ मेल्लाविउ भडयणु असिभीसणु।
अवयारहिँ उवयारु जइ को करेइ मेल्लेवि सुदंसणु ॥१७॥

१८

सो दूरेँ अच्छउ[1] ताम राउ देव वि णमंति जसु धम्मे भाउ।
एत्थंतरे तेण णिमायरेण तं बलु जीवाविउ सायरेण ॥
अक्खिज्जइ रायहो कवडजुत्तु देवहँ वि दुलक्खउ तियचरित्तु।
थिय[2] रामएवउच्छंगे जइ वि पुरिसंतरु तिय अहिलसइ तइ वि ॥
तुह अग्गमहिसि रूवें वरासु अहिलासहो गय सुहदंसणासु।
अंधारए आणाविउ वणिंदु थिउ णिच्चलंगु णं महिहरिंदु ॥
मुक्कमाणे णवर विलक्खियाए तणु फाडिवि धाहावियउ ताए।
सहसा पइ पेसिय किंकरेहिँ जा हम्मइ तिक्खहिँ असिवरेहिँ ॥
ता आसण्णकाले मुणिवि एत्थु आवेवि मइँ रक्खिउ भिच्चसत्थु।
परिसंग वि मारिय[3] णउ मरंति अम्हारिस उवसग्गइँ हरंति
सण्णाहिँ वि जइ वि समत्तु जाम मइँ मायाबलु णिम्मविउ ताम।
जं अवरु अणंतरु हयविवक्खु तं सयलु णिवइ तुज्झु जि[4] पयक्खु।
तो पच्छुत्ताउ करंतु राउ पुणरवि मण्णावइ साणुराउ।
खमि[5] मज्झु किं दोसवियारणेण तं णिसुणिवि जंपिउ[6] वणिवरेण।

घत्ता—सप्पुरिसहो किं बहुगुणहिँ पज्जत्तं दोहिँ[7] णराहिव।
तडिविप्फुरणु व रोसु मणे मित्ती पहाणरेहा[8] इव ॥१८॥

१९

तो मेइणिपालेण[1] पउत्तउ सप्पुरिसहँ उवसमु परं[2] जुत्तउ।
सुद्धसहाउ सुमणु उवहसणहिँ णिच्च वि णिंदिज्जंतउ पिसुणहिँ।
छारें दप्पणु व्व उब्भासइ णिम्मलु अहिययरं पडिहासइ[3]।
हउँ अवयारु करेविणु धिट्ठउ एविणु तुह पयसरणु पइट्ठउ।
पइँ रक्खिउ हउँ लद्धअकित्तणु[4] पइँ महु दिण्णु रज्जु मणुयत्तणु।

---

१८. १ ख अच्छइ। २ क थिउ। ३ क वियारिय। ४ ख वि। ५ ख ग खम। ६ क जपिजइ। ७ क दोसेहिं। ८ क पहाणे रेहा।
१९. १ ख °पालेण। २ ग घ परि°। ३ ख मि पयासइ। ४ क अकित्तणु।

तुहुँ महु बंधु इट्ठु[5] सुहि सज्जणु तुहुँ गुणरासि सेयआवज्जणु।
तुह उवयारहो भो भो सुंदर पडिउवयारु णत्थि जगे[6] वणिवर।
जइ वि तो वि करि[7] वयणु महारउ अद्धु रज्जु भुंजहि हिगारउ।
घत्ता—एत्थंतरे जंपइ वणियवरु[9] वियलियदिवसि वं सोक्खसयज्जें।
सुरधणुछायपयासिरेण हो कि पुज्जइ महु णिव रज्जें[10] ॥१९॥

२०

संपयाणिहालणेण रज्जणीइपालणेण।
सत्तुवग्गविग्गहेण दुट्ठजीवणिग्गहेण।
एयजीवियस्स हेउ पाउ अज्जिओ अमेउ।
का णरिंद कज्जसिद्धि भुंजि त पि रज्जरिद्धि।
दूसहं तवं चरेमि हं भवण्णवं तरेमि।
तो भणेइ राउ एम तं तवं करेसि[1] केम।
अज्जए जुवाणभाउ[2] णंदणो वि अप्पकाउ।
बप्प लालि पालि ताम सो समत्थु होइ जाम।
तं पि चारु भोय भुंजि इट्ठ मित्त बंधु रंजि।
पच्छए तवं करेसु तो पयंपए वणीसु।

(समाणिया)

घत्ता—णरवइ सव्वया वि जमहो बालु जुवाणु विद्धु णउ छुट्टइ।
अवसप्पिणिए विसेसेण जलबुब्बोवमु जीविउ वट्टइ ॥२०॥

२१

जे जोव्वणत्ते वरतउ करंति ते लीलए भवसायरु तरंति।
जोव्वणु पुणु गिरिणइवेगतुल्लु विद्धत्ते होइ सव्वंगु ढिल्लु।
जरसिंहिअउव्वजालग्गितत्तु जायइ सव्वु संकुइयगत्तु।
धणुहु व्व[1] णवइ पुट्ठीहिँ[2] मज्झु णिण्णुण्णयंमहि गोमय अमेज्झु।

---

१९. ५ ख इट्ठ बधु। ६ ख घ णत्थि जगि। ७ क तव। ८ ख मयणु, ग घ वणिवरु। ९ ग वियलियं दिवसिव। १० ख पयासिएण हो हो पुज्जइ णिव महु रज्जइं।
२०. १ ख करेहि। २ ग घ जुवाणु भाउ। ३ ग घ °णिहि।
२१. १ ख धणु जुव्व। २ प्रतिषु दिण्णुणय°।

जलु मुत्तु रज्जु अहि चंपियं पि[3]		ण मुणइ विसेसु दिट्ठीए कं पि[4] ।
जोवणु व पडिउ महियलि[5] णिएइ		णं कुकइकव्वु पए पए खलेइ ।
पवणाहउ तरु जिह थरहरेइ
दुप्पुत्त व सुइ वयणु ण सुणंति		जुज्झंति जा ण डिभय[6] भणंति ।
ता तउ चरेवि[7] सिवहरे चडेमि		संसारकूवे जें णउ पडेमि ।
तं पेम्मु जं ण पयडेइ देसु[8]		तं भोयणु जं मुणिभुत्तसेसु ।
सा पण्णा जा ण करेइ पाउ		सो धम्मु जत्थ[9] णउ डंभभाउ ।
सो सक्कइ[10] जो जिणवरु थुणेइ		सो सूरउ जो इंदिय जिणेइ ।
घत्ता—दिव्वाहरणविलेवणइँ तावज्जिय[11] पडिहासहिँ चंगइँ ।
अइदुग्गंधइँ विट्टलइँ जाम ण लग्गहिँ मणुवहँ अंगइँ[12] ॥२१॥

२२

लहिओ[1] णीलजस मरणहेउ		तवचरणहो गउ चिरु रिसहदेउ ।
दिक्खकिय तह तणुरुह वि तासु		णेच्छंति[2] सेव भरहेसरासु ।
मुअ णंदण णिसुणिवि सयरराउ		सिय सेसिवि सहसा सवणु जाउ ।
सुरजुअलें वण्णिउ सणकुमारु		जायउ विविण्णु[3] तउ चरइ चारु ।
पव्वज्जा पालिय राहवेण		लक्खणु छम्मासुव्वहवि तेण ।
पमुणासें होसइ किर विवाहु		वउ लेइ कुमारु वि णेमिणाहु ।
जोइवि विलीण[4] अलिमेह उक्क		अवर वि जिण दुद्धरतवहो ढुक्क ।
हउँ पुणु हवेमि णवहिँ णिगधु		गउ जेण महायणु सो जि पंथु ।
घत्ता—किय पइण्ण मइँ तइयहुँ जे इय उवसग्गहो जइ छुट्टेसमि ।
दिक्ख लेमि दइयंबरिय पाणिपत्ते ता हउँ भुंजेसमि ॥२२॥

२३

तो हुउ णट्ठत्तरु णं मोग्गहु[1]		पुणु वण्णइ णरेसु सपरिग्गहु ।
भो वणिद भावियपरमप्पय		वंदारयपविदवंदियपय ।

---

२१. ३ ख जलमुत्ति°, क °मुत्तु अहि वि संचंपियं पि । ४ ख कि वि ।
५ क ग घ महियलु । ६ ख जणा डिभइ । ७ क चरेमि । ८ ख ग घ दोसु ।
९ ख जेण । १० क सोहइ । ११ प्रतिषु त वज्जेवि । १२ क लग्गइं अह मणुअंगइं ।
२२. १ क लहिवि । २ ख णेच्छंत । ३ ग ध विवण्णु । ४ क णील ।
२३. १ क तो हु सुदंसणासु सग्गागहु, ख ण गोज्झहु ।

पइँ जेहउ जिणिंदु पर बुज्झइ णिहिलु वि तुह गुणोहु को सुज्झइ ।
जणु वामोहगहिउ पालइ घरु पाउ ण गणइ किं पि वंचइ परु ।
किसि कव्वाडु सेव मण्णइ वरु[2] नवणामेण देइ[3] देहे जरु ।
संपत्त वि चएवि[4] णिवसंपय धण्णु सो वि[5] जो लेइ महव्वय ।
पुणु पुरम्मि णिउ[6] जा[7] सपत्तउ तावेत्तहे करेवि अवरत्तउ[8] ।
ओलंबवि तरुगो[9] अभया मुय पाडलिउत्ते[10] णयरे वितरि हुय ।
पंडिया वि णियमणे संतट्ठिय तहे पाडलिहे[11] संमुह लहु णट्ठिय ।

घत्ता—तहिँ जाणेवि विउसि थिय देवदत्तगणियाहे णिकेयणे[12] ।
इय अक्खइ णयणंदिगणि समवसरणे जिणणाहविलोयणे[13] ॥२३॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए महाकव्वे विवित्तए थिय णिवेण वणिणाहस्स समप्पिया ण गिण्हिया अभयावितरी जाइया पणासेवि बुद्दी गया णयरे पाडलिउत्तए इमाण उवयण्णणो णवमो संधि समत्तओ ।

॥ संधि ९ ॥

---

२३. २ ग घ धरु । ३ ग घ एइ । ४ ख चएइ । ५ ग घ सो जि । ६ क णिव । ७ ख जं । ८ क करेवि वरत्तउ, ख करइ भवरुत्तउ । ९ ख तरुवरि । १० क पाडरिउत्ते । ११ क पाडलहे ख तहु पाडलिहु समुहु । १२ क गणियाणिकेयणे । १३ क °णाहलोयणे ।

संधि १०

भीमावणे तहिँ पिउवणे[1] पावियपरमपसंसें।
गयतामसे णियमाणसे चिंतिज्जेइ वणीसें॥ ध्रुवकं ॥

मरणजम्मण सलिल अत्थाहे
बहुकवडावत्तधरे[2] विविहचित्तदुव्वायणीसणे।
राइदोसजलयरपउरे[3] कोहलोहवडवग्गिभीसणे[4]॥
दुग्गइवेलासवलिए इह संसारसमुद्दे।
धम्मरयणु पुण्णेहिँ[5] विणु ण लहइ जीउ रउद्दे ॥ वस्तु ॥

देव माणवेहिँ लद्धसंसणो — चिंतिऊण एरिसं सुदंसणो।
णंदणस्स देवि तं णिय पयं — लोयजुत्तु पत्तओ जिणालयं।
जं अमोयजक्खजक्खिसुंदरं — णं धणाहिवस्स केलिमंदिरं
जं णहो व्व रोहिणीमणोहरं — कुंदचंदतारयाहिँ भासुरं।
जं सरु व्व चक्किणीपसाहियं — चारुहंसजोइचक्कसोहियं[6]।
जं करि व्व घंटरावघग्घरं[7] — दिव्वकुंभसंखतूरचामरं[8]।
जं वणु व्व यंतजंतसावयं[9] — ज धणु व्व मोक्खमग्गदावयं।
तं णियच्छिऊण सो पहिट्ठओ — छंदओ णिसेणि णाम सिट्ठओ[10]

घत्ता — तहिँ सुदरे जिणमंदिरे णियकुलणहयलचंदें।
हयमोहहो जिणणाहहो थुइ आढत्त[11] वणिंदें॥ १ ॥

२

जय णमंसिय[1]तियससुरमउड
मणिकिरण चुंबियचलण जयहि सयलतिल्लोकखोहण।
जय जय केवल णाणणिहि जयहि भव्वअंबुरुहबोहण॥

---

१. ख उववणे। २ क कवडवत्त°। ३ ख पवरे। ४ घ °लोहकवडग्गिभीसणे। ५ ख पुण्णेण। ६ क °जाइ चक्क°। ७ ख ग घ घंटराय°। ८ ग घ संखवूढचामरं। ९ क वणु व्व पत्तजुत्तु सावयं, ख °साहय। १० ख दिट्ठओ। ११ ग घ पारद्ध।

२. १ ग घ णमंसिर।

जय इंदियपडिभडदलण जय जाणियपरमत्थ ।
जय जरमरणविणासयर जय जय जय णिग्गंथ ॥ वत्थु ॥

जय अमोहरविमोहतणुपहा[2]　　धाउरहियमवरहिय[3]चउमुहा ।
जयहि पगुणगुणगणविहूसिया[4]　　जयहि असुरसुरणरपसंसिया ।
जय अमाण जय माणलक्खया　　जय अकाम कामत्तणक्खया[5] ।
जय हि कुणयमयगलमयाहिवा　　जय[6] तिलोयलोयाण कयकिवा ।
जय सुपास आसाविणासया　　जय अकरण जमकरणतासया ।
जय सकमल सुकमल इह थुआ[7]　　जयहो मरण समसरणसजुआ[8] ।
सुमुणिराय गयरायदोमया[9]　　सुरहिगंध सुरहिय अलेसया ।
जयहि अणह णहविद्धिवज्जिया　　वासुपुज्ज पुज्जाणुपुज्जिया ।
(विलासिणी णाम छंदो)

घत्ता—जइ सयलहो गयणयलहो पारु को वि चक्कमइ[10] ।
तो आरिसु अम्हारिसु तुह गुण वण्णवि सक्कइ[11] ॥ २ ॥

३

खुहइ खलयणु मुअइ करि दप्पु
सप्पो वि णिव्विसु हवइ विसु वि अमियरूवे पवत्तइ ।
सिहि सीयलु संभवइ कमु वि दितु केसरि णियत्तइ ॥
कुलिसकठोर णिहुभडइँ पयणियलइँ तुट्टंति ।
धीरुवसग्गइँ अवरइँ वि तुह णामें फिट्टंति ॥ वत्थु ॥
थुणेइ देउ मोक्खहेउ चित्ति जाम हिट्ठओ ।
सुरिंदवंदु तें मुणिंदु ता णिसण्णु दिट्ठओ ॥
तवग्गितत्तु मोहचत्तु सिद्धिकंतरत्तओ ।
मयाण भट्ठु[2] णेत्तइट्ठु[3] जल्ललित्तगत्तओ ॥१॥

२. २ क अमाहरविमोह दिणयरतणुपहा ; ख °रविमऊह° । ३ ख सउरहिय । ४ क पगुणगणहि ; ख सयलगुणगण° । ५ प्रतिषु 'कामतणु अक्खया' । ६ क जयहि । ७ क सकमलकमलाणाहसथुआ , ग घ णाणमउमुकल इह थुआ । ८ क समवसरण° । ९ क° रायदेमया । १० घ चमकइ । ११ क विरिण वि सक्कइ , ख विरिणवि ण सक्कइ , ग घ तुह पुणु वरिणवि सक्कइ ।

३. १ ख अवयरिवि । २ ख मयाण णट्ठु । ३ ख णित्तइट्ठु ।

पणट्ठदेसु सुक्कलेसु संजमोहवित्तओ ।
तिलोयबंधु णाणसिंधु भव्वकंजमित्तओ ॥
अलंघसत्ति बंभगुत्ति सुप्पयत्त[४] रक्खणो ।
जिणिंदउत्त-सत्ततत्त-ओहिणाण-अक्खणो ॥२॥
गिरिंदधीरु दोसभीरु पावपंकउद्धरो ।
तिसल्लवेल्लि-दुक्खवल्लि-तोडणेक्कसिंधुरो ॥
पसण्णमुत्ति सुज्जदित्ति सीलतोयसायरो ।
पमायणासु कंदभासु संजओ दयावरो ॥३॥
महाकसाय णोकसाय भीमसत्तुतोडणो ।
अहिंसमग्गु धीसु णग्गु कम्मबंधसाडणो ॥
कुतित्थपंगु मुक्कसंगु तोसियामरामरो[५] ।
लगुत्तिसोलअक्खरेहिँ[६] छंदु पंचचामरो ॥४॥

घत्ता—समचित्तउ जिणभत्तउ परिपालियरयणत्तउ ।
तवतत्तउ मयचत्तउ चायारहिँ जुत्तउ ॥ ३ ॥

४

विमलवाहणु णाम भयवंतु
अहिणंदेवि वणिवरेण णयसिरेण पुच्छिय भवंतर ।
सो रहसु ण तहो रहइ कहइ सयल वंदेवि जिणवर ॥
जंबुदीवे सुरमहिहरहो दाहिणदिसए[१] पसिद्धु ।
गंगासिंधुहेँ मज्झि ठिओ भरहखेत्तु धणरिद्धु ॥ वस्तु ॥
अत्थि विझदेसे[२] लजि कोसलम्मि भूमिपालु णाम राउ मेहणाउ ।
तासु भामिणी वसुंधरीए तीए लोयवालु पुत्त जाउ दिव्वकाउ[३] ।
एक्क वासरम्मि ताम रायसीहवारे लोउ सव्वु पत्तु पुक्करंतु ।
देव देव रक्खि रक्खि कंपमाणु माणवाण विदु पत्तु त सुणित्तु ॥
बिभिएण[४] पत्थिवेण पुच्छिओ अणंतबुद्धि मंति जाम तेण ताम ।

३. ४ ख तेयसत्ति सुद्धवत्त । ५ ख भव्वतोसियामरो । ६ क ख लघुत्ति° ।
४. १ क °दिस, ख °दिसिय; ग घ दाहिणि दिसए । २ ग घ विसयदेसि । ३ ख लोयवाल पुत्त जाय दिव्वकाय । ४ ख विब्भएण ।

वुत्तु दाहिणेण पट्टणस्स विझभूहरम्मि अत्थि भिल्लु विक्कमिल्लु ।
वग्घणामु केसरि व्व कुंभिकुंभदारणे पसत्तु रत्तणेत्तु ॥
चंडचावदंडकंडहत्थु दीहदाढियालु किण्हदेहु णाइँ मेहु ।
उद्धकेसु भीमवेसु आहवे अजेउ कूरचित्तु णं कयंतु ॥
पीणपीवरत्थणीकुरंगिणीए जुत्तु दुण्णिवारु मोट्टियारु ।
(विषमवृत्तं)

घत्ता—सो रूसइ जणु तासइ पुणु पइसइ तहिँ महिहरे ।
खणे दीसइ खणे णासइ विज्जुदंडु णं जलहरे ॥४॥

५

तेण वज्जेँ कलुणु कंदंत
सपत्तिय सयल पय[1] इय सुणेवि भूवालराएँ ।
वुच्चइ दर कुविएण काइँ तेण कीरए वराएँ ॥
णाम अणतु अणंतबलु दंडाहिउ आणत्तु ।
सो भडथडहयगयसहिउ[2] गउ गंजोल्लियगत्तु ॥ वस्तु ॥
पहुत्तो अणंतो पुलिंदेण जित्तो[3] ।
भएणं पणट्ठो णिओ ताम रुट्ठो ॥
सदप्पं चवंतो बलं धीरवंतो ।
सचिंधो सछत्तो सयं झत्ति पत्तो ॥
करुग्गिण्णखग्गो ण जा तस्स लग्गो ।
तओ लोयवालो पजंपेइ बालो ॥
तुमं सूरसूरो पयावेण सूरो ।
महारायराओ ण तुल्लो किराओ ॥
विसालोल्लजीहो सिआलस्स सीहो ।
बलग्गोइ[4] कुद्धो तुमं देव सुद्धो ॥
इमं जंपिऊणं अरिं हक्किऊणं ।
सुराणं असज्झं कयं तेण जुज्झं ॥

---

५. १ ख सपत्ती एह पय । २ क भडकरिसहिउ, ग घ थडहयकरिसहिउ । ३ ख जुत्तो । ४ क वलग्गेभि ।

किवाणेण भीसं　　हयं तस्स सीसं ।
णरिंदो पहिट्ठो　　पुरे सो पइट्ठो ।
(सोमराई णाम छंदो)

घत्ता—हयहयथडे गयगयघडे उब्भडभडकयरंगणे[५] ।
असिअसियउ विहिविहियउ[६] मरेवि समरु[७] समरंगणे ॥५॥

६

वच्छदेसए गोट्ठिए हुउ साणु
पंचाणणसमसरिसु एक्के[१] दियहिँ गोवीहिँ सहियओ ।
कोसंबिहिँ आइयउ परिभमंतु जिणभवणे रहियओ ॥
जा कुरंगि होंती समरि सा कालेण विचण्ण ।
महिसि जाय कासीविसए वाणारसिहिँ रवण्ण ॥वस्तु॥

भवंतरे होतउ आसि किराउ　　पुणो हुउ जो भल्लडुल्लु वराउ ।
मरेप्पिणु[२] अगयदेसि दुगेज्झे[३]　　अकंपहे चंपहे सो तहिँ मज्झे ॥
समिद्धयलुद्धयसीहपियाहिँ　　हुओ किर णंदणु सीहिणियाहिँ ॥
कुलक्खयकम्म[४] खलो हु[५] करंतु　　सुयस्स[६] मिसेण य पत्तु कयंतु ।
तओ सुहओ कयगोहणरक्खु　　णियच्छइ काणणे साहु जियक्खु ॥
णमो अरहंतपय मुणिऊण[७]　　सुदंसणु तं सि हुओ[८] मरिऊण ।
तवेण जि घोरुवसग्गु सहेवि　　अणोवमु केवलणाणु लहेवि ॥
अफासु अगंधु असद्दु अचक्खु[९]　　अणंतचउक्कु लहीसहि मोक्खु ।
घत्ता—जा होतिय भिल्लहो पिय पुणु हुय महिसि भवंतरे ।
सा कालें असरालें णिवडिय जमदंतंतरे ॥६॥

७

चंपपट्टणे रज्जयसामलहो[१]
जसवइहिँ वच्छिणि[२] दुहिय होवि विहव अणथमिउ लेप्पिणु[३] ।

५　५ क °रंजणे । ६ ख विहिवसियउ । ७ क सबरु ।

६.　क एक्कहि । २ ख मरेविणु । ३ क दुसज्झे । ४ ख कुलक्खउ जाम खणुक्खकरतु, ग घ कुलक्ख कम्म° । ५ क खलोव्व, ग घ खलोज । ६ ख सुवस्स । ७ क मुणिऊण । ८ ख तं जि हुओ, ग घ तं सुहओ । ९ क ग घ अभक्खु ।

७. १ ख रऊयसामलहो, ग घ रज्जव सामलहें । २ क वच्छि । ३ ख लेविणु ।

जिणधम्मपुण्णोदएण तुज्झ कंत सा हुय मरेप्पिणु ॥
जाएसइ सुरणरसुहइँ भुंजिवि मोक्खु णिरुत्तु ।
एउ मइँ[4] तुम्हहँ[5] अक्खियउ जं होसइ[6] जं वित्तु ॥वस्तु॥

पमत्तु समासलग्गत्तु[7] मयगु करंतु पसंगु ।
घणम्मि णिबद्धु वणम्मि असज्झु झसो जलमज्झे ।
खलंतु वलंतु चलंतु णिहित्तु पलम्मि पसत्तु[8] ।
दुरेहु मणोहरदेहु रुणंतु संगधु मुणंतु ।
विलीणु कुसेसयलीणु पयंगु मुसण्हणवंगु[9] ।
चलंतु णहम्मि मिलंतु पहिट्ठु हुयासे पइट्ठु ।
वरंगु वणंते[10] कुरंगु भमंतु कुरंगि रमंतु ।
समत्तु सुगेयहो रत्तु ॥

घत्ता—इय मणवस सुहलालस विसयासत्त हवेप्पिणु[11] ।
दुहसारए संसारए पुणु हिंडंति मरेप्पिणु[12] ॥७॥

८

मरणु पत्तउ चंगु फरिसणेण
रसणेण सुभउमु णिउ गंधलुद्धु तह गंधमित्तु वि ।
दिट्ठीए सहस्सभडु सुइरसेण[1] गंधव्वदत्तु वि ॥
जो पुणु पंच वि इंदियइँ[2] पसरंतइँ ण धरेइ ।
सो अगारायकड्ढणउ[3] सइँ हत्थेण करेइ ॥वस्तु॥

गया खउ देव वि चित्तवसिल्ल[4] पसिद्ध वि जे किर मागमहल्ल ।
णियच्छिवि थेरु तिलोत्तिमकाउ मणस्स वसेण चउम्मुहु जाउ ।
अणतु वि सो वि मणं ण धरेइ सदप्पिउ गोवहँ गोविउ लेइ ।
सई तणु अद्धे सिरे सुरसिंधु हवेइ हरो मणलोलु मयंधु ।
असेससुरासुरमत्थयसूलु चलावियतुंगधराहरमूलु[6] ।

७. ४ घ एमउ । ५ क तुम्हइं । ६ ख होहइ । ७ ख समालसगत्तु । ८ ख थलम्मि पसत्तु । ९ ख °वजु । १० क अणते, ख वणनु । ११ क सम्भत्तु । १२ ख °विणु ।

८. १ ख सवणेण २ क पचइ इंदियइं । ३ ख कड्ढणइ । ४ क °विसल्ल । ५ क सहत्तणु । ६ ख चलाविउ तुंगु धराधरमूलु ।

सया जसु छज्जइ लीलु विहाणु विहीसणु भायरु लंकपहाणु।
जगत्तयपायडु रावणु णाम[7] णिएविणु रामहो चंदहो[8] राम।
अखंडसइत्तणें मंडिय सीय सकाममणेण हरेविणु णीय।
रणंगणे लक्खणचक्कहएण दुहं सहियं णरयम्मि गएण।

घत्ता — भरहेसहो[9] णंदणु तहो णवर सुलोयणलुद्धउ।
धणणाएँ सकसाएँ सो समरंगणे बद्धउ॥ ८॥

६

उत्तरंतउ पवरसुरसरिहिँ
पारासरु चलियमणु मुयवि लज्ज केवट्टिणंदिणि।
अलिगइ[1] उअरि तहे वासु होइ तावसु महामुणि॥
भारहु पुणु हुउ दोवइहे[2] केसग्गहपवरेण।
जिणु मेल्लेवि के के ण जगे विणडिय सयल[3] मणेण॥वस्तु॥

मणं मवसं इह[4] जस्स हवेइ तिलोए जसं णिरु तस्स भमेइ।
णरामरखेयर सेव कुणंति फणिंद णरिंद गुणोहु थुणंति।
ससल्ल महल्ल विवक्ख तसंति[5] दुलग्घ[6] कुविग्घ कया वि ण होंति।
बलुद्धर सिंधुर अग्गए थंति चलंग तुरंग ण कत्थए भंति[7]।
सुमंत सुजंत सुतंत फुरंति सपेसणु सासणदेव करंति।
पहाण णिहाण घणाहिव दिति[8] अमेय अणेय सुपाहुडपंति[9]।
मणिट्ठ गरिट्ठ सुहाइँ रमेवि वरामरु सो णरु होइ मरेवि।
विमाणे विमाणे पणट्ठदुहाइँ सपुज्ज मणोज्ज लहेइ सुहाइँ।

घत्ता — हुउ जो पुणु चंचलमणु सो दुहसलिले णिमज्जइ।
परलच्छिउ धवलच्छिउ[11] पेच्छिवि तिलु तिलु झिज्जइ॥९॥

---

८. ७ क णामु, ख ग घ राम। ८ ख राहवचंदहो, ग घ सहसा चंदहो।
९ ख भरहेसरहो।

९. १ क आलिंगिय। २ ख दोमइहे। ३ ख णिवडिय चवलमणेण।
४ क मणं पि वस सइं, ख मण च वसं इह। ५ क महल्ल सिलोवम जंति। ६ क दुविग्घ।
७ ग घ कत्थ समंति। ८ ख कुणंति। ९ क दंति। १० ख सुपाहुड दंति।
११ ख खरलच्छिउ लवलच्छिउ।

१०

हवइ सारउ मेरु पव्वयह

अइरावउ कुंजरहँ फणिहिँ सेसु सुरगेहु हम्मइँ।

खीरोयहि सायरहँ[1] सुरहँ इंदु णरजम्मु जम्मइँ॥

तं पावेप्पिणु मूढमइ जो णवि धम्मु करेइ।

सो सासयसुहलच्छियहिँ पतिहिँ कुप्परु देइ॥वस्तु॥

छणम्मि छणम्मि पहिट्ठु चलेइ ण कि पि वि आउ गलंतु कलेइ।

तुमं चिरुजीउ[2] पहिट्ठु हवेइ मरेहि सुणेप्पिणु[3] रोसु करेइ।

ण जाणइ मज्झु पढेमइ कालु अचिंतिउ णावइ मच्छहो जालु।

सिहंडिहिँ[4] पिच्छु गइंदहो दंतु मयाइणु गंडयअत्थि फुरंतु।

किमीरुह लोहिय कबल जे वि जणेण पवित्त पसंसिय ते वि।

मुओ णरु कासु वि होइ ण इट्ठु सबंधव ते वि वहंति अणिट्ठु।

छिवंति ण णावइ कालउ सप्पु पिया सुय तक्खणे चितहिँ अप्पु।

विणासि सरीरहो जाणिवि थत्ति हियत्थे पयत्तणु कीरइ झत्ति।

अहो जणं धम्मु पईउ जि लेहु वलेवि मं[6] जम्मणकूवे[7] पडेहु।

सुणेविणु एम[8] मुणिंदहो वाणि सुदसणे[9] सीसि चडाविय पाणि।

पडिच्छइ धम्मु महागुणखाणि अणंतरु सेणियराय वियाणि।

घत्ता—इय गणहरु अक्खइ णिरु जो णयणंदियसासणु।

सुकलाहरु[10] णं ससहरु कुवलयपिउ तमणासणु॥१०॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए किराउ पुणु मंडलो सुहयगोउ सुदमणो कुरंगि महिसी तहा रजयपुत्ति सा[11] वच्छिणी पुणो हुय मनोरमा कहिय चारि जम्मतरा इमाण कयवण्णणो दहमो संधि समत्तओ।

संधि ॥१०॥

---

१०. क सायरजलहं। २ ग घ जीय। ३ ख सुणेविणु। ४ क ख सिहंडहि। ५ ग घ जिणधम्मु। ६ क ण। ७ ख जम्मह कूवि। ८ घ एस। ९ घ सुदंसणु। १० क स कलाहरु। ११ ख या।

संधि ११

१

जम्मंतरु सुणेवि तहो मुणिहि पासि वणिवसहे[1] ।
लइयउ तवचरणु णिव्वेइएण जह[2] रिसहे[1] ॥ ध्रुवकं ॥
तहो तवचरणु णवर णिसुणेप्पिणु[3] णरवइ धाइवाहणो ।
अणिमिसणयणु पुणु वि पुणु चिंतए भवभयतसियणियमणो[4] ॥ रचिता ॥
विचित्तु ण देव वि[5] जाणहिँ णारिचरित्तु ।
अयाणु अहं किह[6] जाणमि ताहे पमाणु[7] ।
झडित्ति पयासिवि डंभु[8] मया[9] महु पत्ति ।
णिमित्तु लहेवि सुदंसणु सो जि[10] विरत्तु ।
मणोज्जु विवज्जिवि रज्जु व रज्जु सपुज्ज[11] ।
सुसिक्खु पगेण्हिय तेण दियंबरदिक्ख ।
अहं पि ण जाणमि इंदियलंपडु किं पि ।
महंतु ण संकमि पाउ करंतु अणंतु ।
भविस्स ण जाणमि कत्थ मरेवि हविस्स[12] ।
णिवेण इयं णियचित्ते वियप्पिवि तेण
असेसु सपुत्तहो ढोइउ रज्जु सदेसु ।
अणिंदु दियंबरु जाउ णवेवि मुणिंदु ।
पियाउ हुओ उव्विव्विउ[13] तासु पियाउ ।
अगव्व तओ मउडाहिय दिक्खिय सव्व ।

घत्ता—अवरहिँ केहिँ वि तं पेच्छिवि वओ पडिवज्जिउ[14] ।
णाइँ महासल्लु वि[15] केहिँ वि मिच्छत्तु विवज्जिउ ॥१॥

---

१   १ क °हि । २ ख जिह । ३ क धरावइ णिसुणेप्पिणु, ख णवर णिसुएविणु । ४ क °तसियमणो । ५ क ण देव ण । ६ क कह । ७ ख पवाणु । ८ ग घ डंभु । ९ ख मइं । १० ख वि । ११ क रज्जु सपुत्त कलत्त । १२ क °स्सु । १३ क खंधिव्वउ । १४ घ पडिवज्जियउ । १५ ख महासरि वि ।

२

णरवइपमुहएहिँ सव्वेहिँ वि तवलच्छी विहूसिया ।
कियउ चउत्थु अण्णदिणे[1] चंपहिँ गोचरिया पयासिया ॥ [रचिता]
जत्थ सिरी अणुहुत्त[2] तहि पि कयं पुण भिक्खपवित्थरणं ।
लोहु ण लज्ज भयं ण वि गारउ पेम्मसमं[3] तवचरणं ॥
उच्चउ णीचउ गेहु ण भावइ जाइवि पंगणए वलए ।
रिक्खए रिक्खे भमंतु कमेण जि चंदु व तुंगणहंगणए ॥
साहुसुदंसणरूवणियच्छणे अंगइँ अंगु दलंतियउ ।
धाइउ[4] जोवणइत्तिउ[5] णारिउ मेहलदाम खलंतियउ ॥
का वि भणेइ सही[6] पुरु खोहिउ आसि अहं विवरीय[7] थिय ।
एण जि पंडु पइत्तरु देविणु छम्मिय सा कविलस्स पिय ॥
का वि भणेइ णरिंदहो गेहिणि वल्लह णेच्छिर्य[8] जा अभया ।
सा वि पहाए करेविणु ढड्ढमु लंबिवि रुक्खि विलक्ख मुया ॥
का वि भणेइ मकर मणोरम वज्जेवि दिक्खवहू वरिया ।
किं तुहुँ मुद्धे कडक्खणिरिक्खणु जुंजहि एण ण संभरिया[9] ॥
ओसरु ओसरु चदगहिल्लए[10] आलि म आलि करेहि मणे ।
लग्गि म धावि विलज्जपयासणु हासु हवेसइ तुज्झ जणे ॥
दिट्ठि जुयंतरे दितु पगच्छइ अच्छइ मोणवएण भिसं ।
एहु कहेइ ण इत्थिकहंतरु जेणुववज्जइ[11] कामरसं ॥
सेसिउ[12] हासु सुखेडपलोयणु[13] सगु सपुव्वरईभरणं ।
होरु सुडोरु सुकरणु कुंडलु सेहरु लेइ ण आहरणं ॥
इत्थितिरक्खणउसयउज्झिए ठाणे वसेइ[14] करेइ दमं ।
एहु वि जो मइराकिर[15] छंदउ के वि[16] भणंति लयाकुसुमं ॥

---

२. १ क चउत्थु ताम अण्णहि दिणे। २ ख अणहुत्तु। ३ ख °सम पि। ४ ख धारिउ। ५ क जोव्वणु इत्तिउ। ६ क ग घ सहे। ७ ग घ विवरेवि। ८ ख वल्लहो णिच्छेइ। ९ ग घ जुजए एण म संभरिया। १० ख गहिल्लिय, ग घ गहेल्लिए। ११ ख जेण उवजइ। १२ ख सेसउ; ग घ सेसइ। १३ ग सखेडु; घ सखेड। १४ क पराणे चलेइ। १५ ख मयराकिर, ग ध किर मइरा। १६ क को वि।

घत्ता—पुरे चरिय करेवि गउ जिणमंदिरहो सइंकारणु।
लीलामंदगई मुणि लंबियकरु[17] णं वारणु ॥२॥

३

णियगुरु णविवि तेण तहिं तक्खणे पच्चक्खाणु गण्हियं[1]।
असणु सुखाणु पाणु[2] तह सादिं चउविह चयवि[3] तण्हियं ॥ [रचिता]

गुरुणा णीसेसु वि कहिउ जेम　　किरियम्मु[4] सुदंसणे[5] पढिउ तेम।
पंचुत्तमवय समिदीउ पंच　　पंचेंदियजउ छावासयं च।
लोचाचेलक्कु[6] अण्हाणजुत्तु　　खिदिसयणु अदंतवणु वि णिहत्तु।
ठिदिभोयणेक्कभत्तेण जुत्त　　इय अट्ठवीस मूलगुण वुत्त[6]।
चउदह मल बत्तीसंतराय　　परिपालइ दूरुज्झियपमाय।
सोलह उग्गम मणजणियतोस　　सोलह उप्पायण होंति दोस।
दस एसण पुणु इंगालधूम[7]　　संजोयण तह य पमाण जाम[8]।
इय छेयालीस विवज्जमाणु　　अच्छइ झायंतउ धम्मझाणु।

घत्ता—ण करइ रइ अरई णउ हसइ ण को वि दुगुंछइ[9]।
होइ ण णिद्दावसु पुज्जासक्कार ण वंछइ ॥३॥

४

गिरिवरसिलहँ उवरि अत्तावणु देविणु गिभयालए।
पुणु घणसमए रुक्खतले णिवसइ बाहिरि सिसिरयालए ॥ [रचिता]

एक्कु जि परमतच्चु मणे झायइ　　वेण्णि वि रायरोस[1] विणिवायइ।
सल्लत्तयतणुसल्लुप्पाडइ[2]　　चउ कसाय दुज्जण णिद्धाडइ।
पंचासवदारइँ परिरंभइ　　छज्जीवहँ णिकाय ण णिसुंभइ।
सत्त भयाइँ चित्ति णउ जुंजइ　　अट्ठ दुट्ठ मय दूरें वज्जइ।
णवविहु बंभचेरु णिव्वाहइ　　दहलक्खणु वि धम्मु आराहइ।

---

२. १७ क ओलबियकरु ; घ लंबियकरणु।

३. १ क गहियं। २ ख सुपाणु खाणु। ३ ख चयदि। ४ क किरिजम्मु। ५ ख लोचाचेयलु। ६ क जुत्त। ७ ग घ गंगालधूम। ८ ख णाम। ९ क णउ दुग्गंछइ ; ख णउ को वि दुगुंछइ।

४. १ ख रायदोस। २ क सल्लइं तिण्णि सल्लु व पाडइ; ग सल्लत्तय तिणु सल्लय पाडइ।

एयारह सावयगुण भासइ बारहविहतवेण तणु सोसइ।
तेरहविहु चरित्तु परिपालइ चउदह भूयगाम सुणिहालइ।
पण्णारहहँ पमायहँ बीहइ सोलह सग्गठाण ण समीहइ[3]।
सत्तारह वि असंयम छंडइ संपराय अट्ठारह मंडइ।
एउणवीस णाहसज्झाणइँ मुणइ वीस असमाहीठाणइँ।
एक्कवीस सवल वि संखोहइ[4] तह[5] बावीस परीसह विसहइ।
सुद्दयडज्झयणइँ[6] तेवीस वि अक्खइ[7] जिणतित्थइँ चउवीस वि।
पंचवीस भावण उग्गोवइ[8] छव्वीस वि पुहविउ[9] परिभावइ।
सत्तवीस मुणिगुण उक्करिसइ[10] अट्ठवीस आयारइँ दरिसइ।
एउणतीस पावसुय[11] दूरइ[12] तीस मोहठाणइँ मुसुमूरइ।
एक्कतीस मलवाय दुगंछइ जिणबत्तीसुवएसइँ[13] वंछइ।

घत्ता—एत्तहिँ कुसुमउरे जा पंडिय आसि पणट्ठी।
देवदत्तपुरओ सा कहइ कहंतरु तुट्ठी ॥४॥

५

इह वरभरहे अंगदेसंतरे चंपहे धाइनाहणो।
णरवइ[1] अभयदेविसंजुत्तओ अत्थि तिलोयमोहणो ॥ [रचिता]

अह तहिँ रिसहदासु णामें वणि अरुहदासि तहो सगुण णियंबिणि।
तीए पुत्तु सुदंसणु जायउ हुउ जुवाणु तिहुवणविक्खायउ।
सायरसेणु अत्थि अवरु वि वणि सायरसेण णाम[2] तहो पणयिणि।
ताहे धूय[3] णामेण मणोरम परिणिय सुदंसणिण मणोरम[4]।
ता[5] सुकंतु णंदणु तहो जायउ[6] एत्तहे उववणम्मि मुणि आयउ।
धम्मसवणु तहो पासे सुणेप्पिणु रिसहदासु थिउ दिक्ख लएप्पिणु।
अह तहिँ अत्थि तासु रायहो हिउ कविलभट्टु णामें उवरोहिउ।

---

४. ३ क सग्गठाण सम्मीहइ। ४ ख ग घ परिरखोहइ। ५ क मह ; ख मुणि। ६ ख सुद्दयडइं ज्झाणइ। ७ क अक्खय। ८ ख भावणउ ण गोवइ। ९ क पुहइउ। १० क मुणिगणउं करेसइ। ११ ख पावसुइ। १२ क दूरहिं। १३ ख बत्तीसमुवएसइं।

५. १ ख अच्छइ। २ ग घ अत्थि। ३ ख सूव। ४ क तहो विवाहु जायउ सुमणोवम। ५ ख तें, ग घ त। ६ ख णंदणु संजायउ।

कविला बंभिणि तहो हियवट्ठिय[7] सा वि सुदंसणरमणुक्कंठिय।
मित्तमिसेण[8] सहिए सो आणिउ संढउ भणिवि छुड्डु णउ माणिउ।
ता वसंते णंदणवणु फुल्लिउ तहिँ णिउ पुरयणेण सहु चल्लिउ।
एत्थए[9] अभयमइए वणु जंतिए कविलए सहुँ सखेडु जंपंतिए।
किय पइण्ण जइ रमिमि ण वणिवरु तो मरेमि[10] किं णेहहो दुक्करु।

घत्ता—आइवि महु कहियउ मइँ सा पुणु पुणु वि णिवारिय।
उट्ठिय पक्खजुया कीडिय णं फुरइ असारिय ॥५॥

६

तहे गिर सुणेवि मइँ वि वाउल्लय[1] काराविवि ण पवडिया[2]।
पडिवापमुहणिसिहिँ पडिहारहिँ सह कलहेवि फोडिया॥ [रचिता]
ता कवडु पयासिवि भड संतासिवि[3] वणिवरु आणियउ।
मइँ ताहे समप्पिउ तीए मणप्पिउ[4] जाम ण माणियउ॥
थण णहहिँ वियारेवि जण कूवारेवि सगुणविराइयउ[5]।
मारावइ जामहि णिसियरु तामहि इक्कु पराइयउ॥
तेँ भडथड थंभेवि समर वियंभेवि णरवइ वुत्तु किह।
ओलंबियवाहहो वणिवरणाहहो सरणे पइट्ठु जिह॥
राएँ सिरि दिण्णिय णउ पडिवण्णिय वणिणा तउ लइउ[6]।
अभया मुय[7] तट्ठिय हउँ वि पणट्ठिय जा विउसिए कहिउ॥
तो विहसेवि गणिया थोवडथणिया[8] सहसा उल्लवइ।
कविला मइँ जाणिय अभया राणिय ण वियक्खण हवइ॥
मइँ कुलविण्णाणइँ करणविहाणइँ णेहपवट्टणइं।
रइमम्मण मणियइँ बंधइँ मुणियइँ दरणहघट्टणइं॥
जो हुंतउ वणिवरु सो हुउ मुणिवरु किं वण्णियउ पइं।
जे जे गलगज्जिय ते ते रंजिय[9] कवण ण कवण मइं॥

५. ७ क हिययं ठिय। ८ ख मित्तवसेण। ९ ख ग घ पच्छए। १० क मरेवि।

६. १ ख वाउल्लउ। २ क कारावेवि णिवडिया। ३ क संतोसिवि। ४ क मणु जंपिउ। ५ ख सगुणु विराइयउ। ६ ख कियउ। ७ क मय। ८ क तो घणथणिया। ९ ख गंजिय।

तवचरणें विणडिउ दिट्ठिहिँ णिवडिउ जइ णउ वसि करमि ।
तिहुवणपरमेसरि तो कुंडेसरि पायग्गें हणमि ॥

घत्ता—इय पसिद्धि णयरे तहो दंसणम्मि तरुणीयणु ।
थिउ उम्माहियओ दिवसयरहो णं भिसिणीवणु ॥६॥

७

ता एत्तहे वि सगुरु[1] परिपुच्छेवि सुरणरकयपसंसणो ।
जिणकमकमलजुयल वंदंतउ विहरइ मुणि सुदंसणो ॥ [रचिता]

रिसहु अजिउ अहिणंदणु सुमइ वि जिणु अणंतु साकेयहे पणविवि ।
सावत्थिहिँ वंदिय संभवजिणु कोसंबिहिँ पउमप्पहु तो पुणु ।
वाणारसियहिँ पासु सुपासु वि चंदउरिहिँ चंदप्पहु[2] संसेवि ।
पुप्फयंतु कायंदिहिँ[3] सारउ भद्दिलपुरि सीयलु जि भडारउ ।
सीहउरए सेयंसु जिणेसरु चंपहे वासुपुज्जु परमेसरु ।
विमलएउ कंपिल्लहिँ जगगुरु धम्मु रयणउरि[4] पयपणवियसुरु ।
संति कुंथु अरु गयउरे[5] जिणवर मिहिलहिँ मल्लि णमिवि तित्थंकर ।
रायगेहे मुणि सुव्वउ णंदिउ रिट्ठणेमि सउरीउरि वंदिउ ।
[6]चरमु देउ तइलोयणमंसिउ वड्ढमाणु कुंडलपुरि संसिउ ।
इय विहरंतु संतु तवतत्तउ पाडलिउत्ति णयरि संपत्तउ ।

घत्ता—तहिँ कुसुमउरे मुणि छुडु छुडु चरियाए पइट्ठउ ।
ता पंडियए लहु धवलहरारूढिए दिट्ठउ ॥७॥

८

मुणिवरु णियवि विउसि दर विहसेवि[1] सिसुसारंगणेत्तहे ।
सकरंगुलिसण्णए[2] दरिसेप्पिणु अक्खइ देवयत्तहे ॥ [रचिता]

इहु सो जो चंपाणयरि वुत्तु इहु सो जो जिणदासियहे पुत्तु ।
इहु सो जो पुरसंखोहवंतु इहु सो जो सुमणोरमहिँ कंतु ।

७. १ क गुरु, ख सुगुरु । २ क ग घ चंदप्पहु चंदउरिहे ।
३ ख ग घ कांकिदिहि । ४ क घ रयणपुरे । ५ क गयपुरे, ग घ गयवरे ।
६ क मे ११-१२ पंक्तियो के स्थान मे यह एक मात्र पंक्ति है—पाडलिउत्तणयरे संपत्तउ । साहु सुदंसणु गुणगणजुत्तउ ।

८. १ क वियसेवि : ख विहसइ । २ क सकरंगुलिए सएणए ।

इहु सो जो कविलहो परममित्तु इहु सो जो कविलहे छम्मजुत्तु ।
इहु सो जें अभयहि गाढु बद्धु इहु सो जो मइँ घरि णेवि छुद्धु ।
इहु सो जो ताहे ण सवसु जाउ इहु सो जो थक्कउ मुक्कभाउ ।
इहु सो जो मरणावइहिँ ढुक्कु इहु सो जो पुण्णहिँ कह व मुक्कु ।
इहु सो जसु राएँ दिण्णु रज्जु इहु सो जो चिंतियँ[3] परमकज्जु ।
इहु सो जो रूवें मयरकेउ इहु सो जो अभयहे मरणहेउ ।
इहु सो जो तहिँ हुव[4] समणु[5] आसि इहु सो जो गुणगणरयणरासि ।
इहु सो जसु कारणि हउँ पलाण इहु सो जसु कारणि[6] तुहुँ मलाण ।
इहु सो जसु उप्परि गुणमहप्पु तुहुँ वार वार णिय करहि दप्पु ।
घत्ता—इय वयणाइँ[7] सुणेवि गणियाए सुदासिहिँ पासिउ[8] ।
सहसा सउहयले मुणि ठाउ भणेविणु पेसिउ[9] ॥८॥

९

पुणु मणिरयणखइयदिढकढिणकवाडपुडं[1] णियंतियं ।
ता मुणिवरेण णवर जिणपडिमाजोयठिएण चिंतियं ॥ [रचिता]

किं मित्तें कवडपयासिरेण किं सुअणें परउवहासिरेण ।
किं राएँ जणसंताविरेण किं णेहें विप्पियदाविरेण ।
किं लद्धें धम्में पाविरेण [2]किं ऊसरछेत्तें वाविरेण ।
किं लच्छिविहीणें पंकएण किं मणुएँ लग्गकलंकएण ।
किं कुसुमें गंधविवज्जिएण किं सूरें समरपरज्जिएण ।
किं भिच्चें पेसणसंकिएण किं तुरएँ ऊरं[3] ढंकिएण ।
किं दव्वें किविणकरासिएण किं कव्वें लक्खणदूसिएण ।
किं णीरसेण णविर्पे[4] णडेण किं साहुण[5] इंदियलंपडेण ।
घत्ता—तिणकट्ठेहिं सिहि तीरिणिसयसहसहिँ सायरु ।
ण[6] लहइ तित्ती जिह तिह जीउ वि भोयतिसायरु[7] ॥९॥

८. ३ ख चितइ । ४ क हुउ तहि । ५ ख सवणु । ६ ख वरणमि । ७ ख वयण । ८ क भासिउ ; ख पेसिउ । ९ ख घोसिउ ।

९. १ क °फुडं । २ ग घ में यह चरण नहीं है । ३ ख उरुहइ ; ग घ तुरय ऊरय° । ४ ख णवि । ५ क साहुं ; ख ग घ साहुहु । ६ क णं । ७ क भोयहि सायरु ; ग भोएं तिसायरु ; घ भोयह सायरं ।

१०

तडिचवलयरविसयसुहपरवसु हउँ बहु विहुर पत्तओ[1] ।
इय पुणु पुणु वि जाम किर णियमणि चितइ मुणि विरत्तओ ॥ [रचिता]

ताम उमाकमकमलिंदिंदिरि   सविलासउ अवलोइवि[2] सुंदरि ।
पासु पढुक्किय मुणिवरणाहहो   खमवासहो तवलच्छिसणाहहो ।
पभणइ किं अप्पउ दुहि जुंजहि   सोक्खधवक्कउ सुंदर भुंजहि ।
तउ करेवि सुहु परभवि लब्भइ   गोथणु चयिवि सिगु किं दुब्भइ ।
तुहुं सोलहआभरणहिँ जोग्गउ   मलविलित्तु कि अच्छहि णग्गउ ।
एवमेव किं तणु संतावहि   मज्झु हियत्थवयणु[3] परिभावहि ।
अह वा तवहु गाहु जइ लग्गउ   तो माणिवि सुहु होज्जसु[4] णग्गउ ।
रमहि किं ण महिलउ कोमलियउ   हा हा कि तुहुँ दइवें छलियउ ।

घत्ता—छणससहरवयणउ अइथोररमणु चक्कलथणु ।
विब्भमचलणयणउ माणिज्जउ वररमणीयणु[5] ॥१०॥

११

तं परभवे तवेण कि लब्भहि परभउ केण दिट्ठओ ।
कइँ वि दिणाइँ जाम जीविज्जइ माणिज्जइ मणिट्ठओ ॥ [रचिता]

जें मण्णिउ णियतणु णं जरतणु[1]   इय वयणहिँ कि भिज्जइ तहो[2] मणु ।
पुणु करेइ कयजणमणविब्भमु   हाउ भाउ सविलासु सविब्भमु ।
दरसिक्कारु फारु आवेल्लणु   ईसि ईसि मम्मणु थणपेल्लणु ।
करपहारु दिव्वाहरपीलणु   जीहाविलिहणु[3] णयणुम्मीलणु ।
कामठाणु[4] दरणहसंघट्टणु[5]   णाणाकरणबंधपरियट्टणु ।
इय लहेवि जसु हियउ ण भिज्जइ   तसु समाणु को भुवणे भणिज्जइ ।
धण्णउ सो जि बप्प स कइत्थउ   भवसमुद्दउत्तरणसमत्थउ[6] ।
रयणिउ तिण्णि दियहँ[7] गय जामहिँ   तीए विलक्खियाए मुणि तामहिँ ।

---

१०. १ ग घ बहु वेर पत्तओ। २ ख सविलासहो अवलोयइ। ३ ख हियत्त°। ४ ग घ होज्जहि। ५ क ख रमणीययणु; माणिज्जइ वर रमणिउ रमणु।

११. १ ग घ जिरतणु। २ ख लब्भइ तसु। ३ ख घ जीहविलेहणु। ४ क कामण। ५ क दरणहरसघट्टणु। ६ ख °समुद्दुत्तारणह°। ७ क दियस।

घत्ता—खित्तु मसाणे किर तिविहेँ णिव्वेएँ जुत्तउ ।
तणुउवसग्गेण थिओ तिरयणु णग्गु विचित्तउ[8] ॥११॥

१२

तहिँ चउविहु वि असणु परिसेसिवि अच्छइ जाम मुणिवरो ।
अवरु वि हवइ ताम सेणिय णिव विभयजणणु वइयरो ॥ [रचिता]
णिरुविचित्तवित्तियसथूहए[1] घवघवंतघग्घरसमूहए ।
रणझणंतकिंकिणिसरालए रणरणंतघंटावमालए ।
जिगिजिगंतरयणंसुजालए[2] फरहरंतधयवडविसालए ।
मणिगवक्खमणिमयकवाडए सालभंजियाजणियणाडए[3] ।
मत्तवारणंकियदुवारए पत्तभंगिबहुरूवसारए ।
पंचवण्णचंदोवडंबरे विविहरयणझुम्मुक्कझुंबिरे ।
धूवगंधवासियदियंतरे गुमुगुमंतमहुअरणिरंतरे ।
फारमूरकरणियरदूसणे सुरविमाणपावियविसेसणे ।
[विलासिणी णाम छंदो]

घत्ता—इय सुरहरे चडिय अमरंगण[4] हरिसे णच्चइ[5] ।
कत्थइ रमणमणा छुडुँ[6] छुडु जा णहयले वच्चइ[5] ॥१२॥

१३

तहो मुणिवरहो उवरि ता सुरहरु थिउ थरहरेवि[1] केरिसं ।
चिरु केलाससिहरे मुणिबालिहिँ[2] पुप्फविमाणु जेरिसं ॥ [रचिता]
जिय भेडचित्तु[3] भडभीमसमरे जिह णरयवड्डणु सग्गाउ अमरे ।
जिह माणभंगु जिणवरे सउण्णे[4] जिह मलकलंकु उत्तमसुवण्णे ।
जिह मुक्खलोयझुणि पयसमासे जिह कालवासु[5] लोयग्गवासे ।

११, ८ ख ग घ णग्गउ चित्तउ।

१२, १ ख विचित्तचितियसुपूहए, ग घ विचित्तचितियसमूहए। २ ख रयणंसुमालए; ग घ °सुतालए। ३ क °पाडए। ४ ख भ्रमरगण। ५ ख घ °च्चई। ६ ग घ रमण च्छुडु।

१३. १ क थरहरइ; ग घ रहवरे वि। २ ख केलाससिहरि लंकाहिउ। ३ क भायचित्तु। ४ ख सुवण्णि। ५ क °पासु।

जिह अंधयारु भरपसरमित्ते[6] जिह कुकइयणु सुंदरकवित्ते ।
जिह ण्हाणकरणु मणसुद्धिसुद्धे[7] जिह पावलेउ[8] सण्णाणबुद्धे[9] ।
जिह सकिलेसु[10] उवसममहंते[11] जिह रइविलासु णिण्णेहवंते ।
मणु सोत्तरम्मि जिह मणुयगमणु जिह सुद्धसिद्धे[12] संसारभमणु ।
जिह केवलणाणए खाणपाणु[13] ण पयट्टइ मुणिसिरे तह विमाणु ।

घत्ता—सुरहरु थरहरेवि णहे जंतु जंतु किर थक्कउ ।
ण पडिउ धरणियले तं महु मणे चोज्जु गुरुक्कउ ॥१३॥

१४

मुणितवचरणपवरमाहप्पें इंदु वि पडइ सग्गहो ।
इयरु वि गणइ कवणु इय जाणेवि जिणवरधम्मे लग्गहो ॥ [रचिता]

पेच्छिऊणं विमाणं णहे खोलियं चिंतियं खेयरेसं तओ बोल्लियं ।
केण सिंघो पसुत्तो समारोडिओ केण लच्छीसणाहीरुहो तोडिओ[1] ।
[2]केण खग्गेण वोमंगणो ताडिओ केण गव्वेण कालाणलो फाडिओ ।
केण मुट्ठीए[3] ताराहिओ पाडिओ केण केलासि विस्सेसरो फाडिओ ।
केण रासीगओ भाणवो रोसिओ केण घुट्टेण अंबोणिही सोसिओ ।
केण सेसप्फणामंडलो मद्दिओ[4] केण थामेण जित्तो रणे भद्दिओ ।
केण णिव्वाणसेलो समुच्चालिओ केण मूढेण कालाणलो जालिओ ।
को णिरंभेइ चंडंसुणो संदणं[5] को विमाणं पि एयं[6] मणाणंदणं[7] ।

[सग्गिणी[8] णाम छंदो]

घत्ता—गेण्हमि सिरकमलउ जो मज्झु विमाणु णिरोहइ ।
कालें चोइयओ को अच्छइ जो मइँ खोहइ ॥१४॥

---

१३. ६ ख अंधयारतरपसर° । ७ ग घ मणसिद्धिसिद्धे । ८ ख पावलेसु । ९ ग घ सण्णासबुद्धे । १० क सकित्तेसु । ११ क °महतु । १२ ग घ सुद्धे सिद्धे । १३ गघ खाणु पाणु ।

१४. १ क तोलिओ । २ क मे यहाँ से अगली तीन पंक्तियाँ नहीं हैं । ३ ग घ मुट्ठीए । ४ क °फणामेडओ मोडिओ । ५ क चंडंसुणे सट्टरं । ६ ख पि थमे । ७ क °णंदिरं, ख णंदिणं । ८ क संसिणी ।

१५

दसदिसिमुहइँ जाम अवलोयइ ता मुणि दिट्ठु पिउवणे।
सुमरेवि पुव्वजम्मु सिहिसिह विव[1] भत्ति[2] पलित्त तक्खणे[3]॥ [रचिता]

जम्मंतरु सुमरिवि वितरीए पारद्धउ घोरुवसग्गु तीए।
धरि[4] धावि धावि हणु हणु भणंति चाउद्दिसु[5] णिसियर किलिकिलंति।
चाउद्दिसु रुंडइँ दडदडंति चाउद्दिसु मुंडइँ हडहडंति।
चाउद्दिसु पायव कडकडंति चाउद्दिसु अजयर तडतडंति।
चाउद्दिसु मसया[6] गुणगुणंति[7] चाउद्दिसु महुलिह रुणुरुणंति।
चाउद्दिसु घूवड[8] घुग्घुवंति चाउद्दिसु सेरिह सुसुवंति।
चाउद्दिसु वायस करयरंति[9] चाउद्दिसु मंडल घुरहुरंति।
चाउद्दिसु वाणर कुलकुलंति चाउद्दिसु मयगल गुलुगुलंति।
चाउद्दिसु फणिउल सलसलंति चाउद्दिसु करह सु फिक्करंति।
चाउद्दिसु हुयवह जलजलंति चाउद्दिसु लोहिय झलझलंति।

घत्ता – पुणु पुणरवि मुणिहिँ चाउद्दिसु भमंति[10] णिसायर[11]।
असिकल्लोलधरा णं खए उच्छलिय सायर॥१५॥

१६

पुणरवि अवर अवर बहुवेसहिँ दसदिसहिँ वि ण माइया।
खणे हरि सरह वग्घ वियडाणण रंरंजंत[1] धाइया॥ [रचिता]

अण्णइँ वेयालइँ गहियकवालइँ रंताइं[2]।
णासियवयकज्जहो पूरिवि[3] सज्जहो दिताइं॥
अण्णइँ भेरंडइँ आमिसखंडइँ खंताइं।
अण्णइँ णरसीसइं विलुलियकेसइँ लिंताइँ॥
अण्णइँ णासोट्ठहिँ पाणिपउट्ठहिँ[4] सुसियाइँ।
अण्णइँ कयकालहो[5] णरकीलालहो[6] तसियाइं[7]॥

---

१५. १ क सिहिसिहि व। २ ग घ गपि। ३ क पलित्त रक्खभक्खणे। ४ ख परि°। ५ ख चाउद्दिसि। ६ क मुगया। ७ क ख गुलुगुलंति। ८ क घूघुय। ९ ख कडयडंति। १० क भवंति। ११ ग घ णिसियर।

१६. १ ग घ उररुंजंत। २ ख भ्रंताइं। ३ क पुरवि। ४ ग घ °पउव्वहिं। ५ क कयलाहहो; ग घ कयलालहो। ६ ख णरकंकालहो। ७ ग घ तवियाइं।

अण्णइँ वि अभइहिँ रासहसइहिँ रसियाइं ।
अण्णइँ मसिवण्णइँ लंबिरकण्णइँ हसियाइं ॥
अण्णइँ वि किलिण्णइँ मडयचडिण्णइँ रडियाइं ।
अण्णइँ गयवत्थइँ पसरियहत्थइँ[८] णडियाइं ॥
अण्णइँ सयवयणइँ पिंगलणयणइँ बहुभुअइं ।
अण्णइँ किमियड्ढइँ बहुदुग्गंधइँ लहु मयइं ॥
अण्णइँ अपमाणइँ कयउड्डाणइँ रुंडाइं ।
अण्णइँ ल्हकइँ मेल्लियहक्कइँ मुंडाइं ॥
अण्णइँ दाढालइँ भिउडिकरालइँ मत्ताइं ।
मरु मारि भणंतइँ[९] अंगु धुणंतइँ पत्ताइं ॥
[कुवलयमालिणी णाम छंदो]

घत्ता—एम[१०] विउव्वणहि जलु थलु णहु रुद्धउ भूवहिँ[११] ।
अप्पाणउ जमेण णं दरिसिउ णाणारूवहिँ ॥१६॥

१७

तह वि ण चलइ समणु[१] णियजोयहो णिक्कंपो अगव्वओ ।
जिह खरचडुलपवणपडिपेल्लिउ भासुरु अमरपव्वओ ॥ [रचिता]
किउ सजलु घणु चडुलु णहे पिहियदिवसयरु ।
अणवरयजलपवहपरिधवियभसमयरु[२] ॥
तडयडइ तडिचवलु भउ दिसइ सुरणरहँ ।
खयउलहँ मयउलहँ वणयरहँ विसहरहँ ॥
जणु तसइ तणु सुसइ वणे विसइ भयसहिउ ।
जलथलहँ महियलहँ जलु वहइ[३] परअहिउ[४] ॥
पुणु चवइ जणु सयलु खयदिणहो किमवसरु[५] ।
हुउ गरुय महिपयरु चउदिसहिँ जलपसरु[६] ॥

१६. ८ ख फरसियहत्थइं, क ग घ परसिय°। ९ ख मरि पभणंतइं। १० क ग घ एस। ११ क ख भूयहि।

१७. १ ख घ सवणु। २ क जलपंकिजसमयरु दुहणियरु ; ख जलपवहवियरंत-भसमयरु। ३ घ हवइ। ४ क परयहिउ। ५ ग घ किमिवसरु। ६ क जलयसरु (टि० जलदस्वरः)। ख हुअ गरुय चउदिसिहि अइबहलु जलपवरु।

कहिँ चलहु कहिँ वलहु कहिँ जियहु कसु कहहु।
णियसुयहिँ सहु पियहिँ कहिँ विसवि दिहि लहहु॥
असरिसहिँ जललवहिँ झलझलइ महिवलउ।
पुणु वहइ घरु णयरु[7] गिरिसिहरु टलटलउ॥
पुणु कलइँ[8] गिलिगिलइँ[9] णहि मिलइँ णिरु रसइँ।
अइपबल हलमुसल पुणु पुणु वि खल दिसइँ॥
णउ तइ वि णियझणहो मुणि चलइ गुणणिलउ।
इय भणिउ दहदहहिँ लहुकलहिँ[10] ससिविलउ॥

घत्ता—तणु मणु वयणु णिरुंभियउ जेण मुणिणाहेँ।
तहो किर को गहणु पउरेण[11] वि णीरपवाहेँ॥१४॥

१८

विडवीविडवघडणउप्फडियतिडिक्कावलिप्[1] पिंगलो।
रयभरभरियभुवणभवणोयरु पुणु णिम्मिउ महाणलो[2]॥रचिता॥

जाम साहू ण जोयाउ[3] संचल्लिओ धीरओ।
जाम णीसेसगंथो गुणावासु गंभीरओ॥
ताम तिव्वेण कोवेण सा वितरी कंपिया।
चंड आलाव[4] तुंडेण मेल्लंतिया जंपिया॥
आसिकाले मसाणाउ आणेवि[5] मण्णाविओ।
तो पहाए कुवारेवि डंभेण गंजाविओ॥
रक्खसेणावि[6] तं रक्खिओ एण्हि को रक्खए।
एम जंपेवि गंतूण पायाले दुक्खक्खए॥
बाहुदंडेहिँ तीए धरावीढु उच्चाविय[7]।
तेण उच्चं महासेल्लचक्कं पि कंपावियं॥

---

१७. ७ ग घ पुणु हवइ घरु णियरु। ८ क कहइ। ९ ख करि गिलइ। १० ख दहदिहहि लहु कलउ। ११ ख पवरेण।

१८. १ क उप्पडिय°। २ ख महाणिलो। ३ ख जोयेण; ग घ जोयाण। ४ क ख आलाउ। ५ ख आणावि। ६ क रक्खसेणेवि। ७ क उच्चाइयं; ख मुच्चाइयं।

तेण दाणोहगंडा वि दोयंड संतासिर्या[8] ।
ताण चिक्कारसद्देणं पंचाणणा रोसिया ॥
तेहिँ रुंजंतएहि दिसाचक्कमाऊरियं[10] ।
तेण आसागरेहि पडंतेहिँ चिक्कारियं ॥
ओवडंतेहिँ तेहि पि भूमंडली डोल्लिया[11] ।
ताए झलसायरा सायरा सत्त उच्छल्लिया ॥
ताण कल्लोलमालाए वोमंगणं[12] वोलियं ।
ताए चंदक्कतारावली झत्ति भंकोलियं ॥
एम संघारकालो[13] अकाले वि णं पत्तओ ।
एम मंदारदामो त्ति छंदो फुडं वुत्तओ ॥

घत्ता—अभयावितरिए[14] तेलोक्कचक्कु संताविउ ।
झाणत्थहो मुणिहि एक्कु वि ण रोमु कंपाविउ ॥१८॥

१९

चिंतइ सवणु तरणि गयणयलहो णेहहो पणयरूसणं[1] ।
मउ करिवरहो कलमु धवलहरहो उवसमु तवहो भूसणं ॥ [रचिता]
णियकुलणहयलससि पुणु चिंतइ रिसि सुयहरहो ।
उत्तमखममद्दव अज्जउ लाहउ मुणिवरहो ॥
सविमाणारूढें विज्जुलदाढें उक्खविओ ।
पंचेणइ[2] संगमे संजउ दुग्गमे णं[3] खविओ ॥
पुणु वालिभडारउ णिज्जियमारउ गिरि हसवि[4] ।
रुट्ठेण दसासें भिउडिविमीसें[5] तले[6] विसवि[7] ॥
अट्ठावउ तुलियउ तो वि ण चलियउ मुणिपवरु ।
तह खिल्लहिँ किल्लिउ णउ उव्वेल्लिउ[8] गयकुमरु ॥

१८. ८ ख संतावियं । ९ ख किक्कार° । १० चक्कमाजारियं । ११ ख उद्धवंडेहि तेहि पि भूमडलं डोलियं । १२ ख वोमंडल । १३ घ एय संसारकालो । १४ क °वितरियए, घ °वितरिण ।

१९. १ ख पणउ भूसणं । २ क पंचेई°; ग घ पंचणए । ३ क णो; ग घ ण । ४ ख होसवि । ५ क विमासें । ६ ख तुलि । ७ क विसेवि । ८ तुल्लिउ ।

महिहरे कुलभूसणदेसविहूसणमुणिवरहि ।
उवसग्गइँ सहियइँ असुरें विहियइँ खमधरहिं[10] ॥
चिरु दंडयराएँ अइसकसाएँ हूलियइं ।
पंचसयमुणिदइँ[11] कुवलयचंदइँ[11] पीलियइं ॥
कयमायावेसें सीयसुरेसें राहवहो ।
उवसग्गु पउंजिउ तो वि ण भंजिउ जोउ तहो ॥
कउरवकुलजोहहिँ तावियलोहहिँ जं विहिओ ।
इय पंडुहिँ पुत्तहिँ णियमणउत्तहिँ[12] तं सहिओ ॥
किउ पारसणाहहो हुयसिवलाहहो कुसढेणं ।
उवसग्गु अभग्गें[13] अहणिसु लग्गें कमढेणं ॥
इय अण्णहिँ बण्णहिँ णीसावण्णहिँ जइवरहिं ।
उवसग्गइँ सहियइँ णरसुरविहियइँ गुणहरहिं ॥

[कुवलयमालिणी णाम छंदो]

घत्ता—मुणिहिं सकज्जु चिरु साहिउ[14] सहेवि उवसग्गइँ ।
हउँ वि णउ ओसरमि लइ दरिसिउ[15] एहु समग्गइँ ॥१९॥

२०

अह तहिँ समए[1] भिउडिभीसावणु विसरिससरिसणेत्तओ ।
सिसुससिसरिसदाढु[2] पहरणकरु णिसियरु सो जि पत्तओ ॥ [रचिता]

तेण हक्किया सपाव दुट्ठभाव[3] ।
हे णिहीण थाहि थाहि कत्थ जाहि ।
अज्ज भज्ज जीवमाण लेमि पाण[4] ।
तो सदप्पु वितरीए वुत्तु तीए ।
रे पिसल्ल एहि एहि पाण लेहि ।
केण साहसेण बप्प णिव्वियप्प ।

---

१९. ९ ख उच्छलिउ । १० ग घ खमवरहि । ११ क °हं ; ग घ °हो । १२ क णियमयम उत्तहि ख णियमइवंतहि । १३ ख अहंगें । १४ क महिउ । १५ ख वरिसिउं ।

२०. १ क समरथिरु, ख समइ । २ क °डाढु । ३ क बुद्धिभाव । ४ क मज्झु जीवमाण, ख जीवमाणु लेवि पाणु, ग घ लेवि पाण ।

एस णग्गयस्स कज्जि मा पमज्जि ।
पाण लेवि णासि णासि रे हयासि ।
मज्झु पासि पावरासि कत्थ जासि[5] ।
एस तुज्झ सीसे सज्जु कालवज्जु ।
मं पडेउ दुण्णिवारु पाणहारु ।
एम जंपिऊण ताए पाणिभाए ।
विज्जुपुंजु तेयउग्गु लेवि खग्गु ।
आहओ[6] उरम्मि तुच्छँ पत्तु मुच्छ ।
चेयणा लहेवि तेण रक्खसेण ।
वुत्तु हे णिहीणे[8] मज्झु जं असज्झु ।
णिहएण[9] घाउ दिण्णु वच्छु भिण्णु ।
तं कलंतरिल्लु लेहि एहि एहि ।
तो पहुत्त लग्ग तस्स पावणिस्स ।
णं असालिया समत्थ दिव्व सत्थ ।
एस माणिणी[10] णिरुत्तु छंदु वुत्तु ।

घत्ता—णिसियरु रोसवसु सरु सिसिरु सचावि णिवेसइ ।
दोहग्गयचित्तु[11] जिह दीहरु[12] सहसा संपेसइ ॥२०॥

२१

हिमकणमिसेण णवर परिपंडुरु सउरिसजसु[1] व धावए ।
अहिणवपणउ जेम वियरंतउ तणुरोमंचु[2] दावए ॥ [रचिता]
सिसिरवाणप्पहारेण ओणल्लिया[3] वितरी बोल्लिया ।
दिट्ठ तउ सत्ति सहसत्ति दोसायरा सव्वदोसायरा ।
पुरिसयारेण[4] लइ चत्तु अवलत्तओ जइ वि भयचत्तओ ।
हरिणु कहिँ जाइ वग्घेहि कमे पत्तओ णवर जीवंतओ ।

---

२०. ५ ख णासि णासि पावरासि; ग घ णासि णासि कुत्थ जासि । ६ क जा हओ । ७ ख उच्छ । ८ क हीणे होणे । ९ क सिहएण । १० क मालिणो । ११ क दोग्गयचित्त । १२ क पीहरु ।

२१. १ क सरु सजसु । २ ग घ तणुगे मतु । ३ ख णउ डुल्लिया । ४ ग घ पुरिसायरेण ।

पियहि सीयलउ जलु जाहि अज्जु वि घरं   जा ण तोडमि सिरं ।
इय पयंपेइ तो गिंभ णामें सरो   मुक्कु भाभासुरो ।
तप्पहावेण धगधगइ धूलीसरं   भमइ रइडंबरं ।
लुलइ किडि कद्दमे सुसइ पल्ललजलं[5]   जलइ दावाणलं ।
दुसहजलतिसए फुट्टेइ जीहादलं   सरइ जणु तरुतलं ।
भणिउ इय छंदु णामेण मणिसेहरो   विसमपयमणहरो ।

घत्ता—फलसुपत्तसहिओ उज्जउ भणु कासु ण भावइ ।
धम्मगुणुज्झियओ[6] सरु ण णरु[7] भुवणु संतावइ ॥२१॥

२२

जले थले गयणे पलयसिहिसण्णिहु गिंभसरो वियंभियं[1] ।
तो दर हसेवि णवर णिसियरेण वि पाउससरे[2] णिसुंभियं ॥ [रचिता]

सो बाणु   अपमाणु ।
छुडु चलिउ[3]   णहे मिलिउ ।
अइचडुलु   घणवडलु[4] ।
गडयडइ   णं पडइ ।
महिवलए   जणणिलए ।
तं सुणेवि   सिरु धुणेवि ।
सिहि रडइ   पुणु णडइ ।
तडयडइ   तडि पडइ ।
गिरि फुडइ   जणु दडइ ।
गिरिसिहरे   बहुकुहरे ।
तो वि पउरु   जलणियरु ।
पसरंतु   वरिसंतु ।
णउ थाइ   कहिँ जाइ ।
जण सयल   भयवियल ।

---

२१. ५ ग घ पल्लवजलं । ६ गुणवज्जियउ । ७ क णरु वि ।
२२. १ क वियंभए । २ क °सरो ; ख पावसि सरि । २२. ३ क चडिउ । ४ ख भमवउलु ।

तो हरिय थरहरिय।
भासुरहो णेसरहो।
णिसि जेम तहो तेम।
सा णट्ठ दप्पिट्ठ।

[आणंदो णाम छंदो]

घत्ता—मुणिवरो[5] वि हियए संभरइ पाय जिणएवहो।
णयणंदियजयहो[6] सुरणरफणिपविहियसेवहो ॥२२॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा रइए सुदंसणमुणिवरहो कह सुणेवि सरदत्तए घरम्मि खक्भालओ पुणु मसाणे जम्मंतरं संभरेवि उवसग्गयं अभयवितरीए कयं इमाण कयवण्णणो भणिओ एयारहो संधी समत्तओ।

संधि ॥११॥

---

२२. ५ क मुणिवर। ६ क णयणाणंदिय°।

संधि १२

१

अह तहिँ तेहए अवसरे सत्तमवासरे घाइचउक्कु विवण्णउ।
सुहदंसणहो मुणिंदहो णरसुरवंदहो केवलणाणुप्पण्णउ॥ [ध्रुवकं]

हुउ अवियलु केवलु मुणिहिँ णाणु   जा ता वरे सुरहरे सुरपहाणु।
दीहरकरु गयवरु आणवेइ   सो वित्थरु मणहरु तणु करेइ।
बत्तीसइँ आसइँ णिम्मियाइँ   मयरत्तइँ णेत्तइँ दूणियाइँ।
सोहारुहे मुहे मुहे अट्ठ दंत   पुणु दंते दंते जलयर सहंत।
एक्केक्क थक्क सरवर महंत   तहिँ सरवरि सरवरि विप्फुरंत।
एक्केक्के थक्की भिसिणि अमल   बत्तीसेक्केक्कहो जाय कमल।
हुयँ कमले कमले बत्तीस पत्त   तहिँ पत्ते पत्ते परमेट्ठिभत्त।
बत्तीस दुतीस ठवंतिँ णट्ट   रसकोच्छर अच्छर तणुविसट्ट।

घत्ता—जंबूदीवहो जेत्तिउ वित्थरु तेत्तिउ किउ संवरिउ करिँदेँ।
तत्थुवलग्गिवि आएँ मणि अणुराएँ थुव्वइ एम सुरिंदेँ॥१॥

२

जय जणमणहर   जय भवभयहर।
जय महजसहर   गणणहससहर।
जय दढहयसर   जय जलहरसर।
जय वरपयकय   जय वरपयणय।
जय कयदयवहँ   जय तवरहवहँ।
जय तमवणदह   जय णयवणदहँ।

---

१. १ क ख मुहे अट्ठट्ठ। २ क में अगले तीन चरणो के स्थान मे केवल ये दो चरण हैं— सरवरे कमलिनि बत्तीस अमल। भिसिणिहे भिसिणिहे बत्तीस कमल। ३ क हुइ। ४ ख हवंति। ५ क ग घ थुव्वइ।

२. १ क भयभयहर। २ क गुणणहससहर। ३ ख जय जय दयवह। ४ ग घ तवरवह। ५ क °वह।

जय भवसयमह जय णयसयमहु ।
जय समदमरयँ[6] जय ववगयरय ।

[अणुसारतुलं कडुयत्तवज्जिओ[7] सव्वलहु छंदो]

घत्ता—तुहुँ करुणाणिसि ससहरु[8] कलिमलतमहरु सुरणरणियरणमंसिउ ।
भव्वंभोरुहदिणयरु गुणरयणायरु तुहुँ जए केण ण मंसिउ[9] ॥२॥

३

तं णीराओ[1] माणेँ मुक्को त मोहधारेहि अक्को[2] ।
तं बुद्धो सिद्धो णिग्गंथो मिच्छारीणं तं मउभत्थो ।
तं सूराणं सूरो वीरो गंभीरो तं[3] पारावारो ।
तं णीसंगो तं णिच्चंदो[4] भत्तीए देवाणं वंदो ।
तेलोक्के पुज्जाणं पुज्जो णूणं कम्मद्दीणं वज्जो[5] ।
तं बंधं मोक्खं चिंतंतो अव्वाबाहं णाणं पत्तो ।
सव्वेसि साहूणं सामी दुल्लंभे[6] लोयग्गे गामी ।
तं सव्वण्हू भव्वाणंदो विज्जुमालो[7] एसो छंदो ।

घत्ता—इय संथुउ सहसक्खेँ तो लहु जक्खेँ बारहगणमंजुत्तउ ।
सहमंडउ चउदिसु किउ मज्झए मुणि थिउ भद्दवीढे मलचत्तउ ॥३॥

४

ससिदुद्धधवलु मियचमरजुयलु ।
अलिजणियतुट्ठि गुरकुसुमवुट्ठि ।
जणजणियतोसु दुंदुहिणिघोसु ।
भावलउ दिव्वु णं रवि अउव्वु ।
हयतिजयसोउ तरुवरु असोउ ।

२. ६ क समदयरह । ७ क कुडुमत्तपवज्जिउ, ख कूडवत्तावज्जिउ । ८ ग घ करुणा-मयससहरु । ९ क केण ण णमंसिउ ।

३. १ ग घ णीराई । ग घ धारे छेक्को । ३. ख णं । ४. ख तं णिस्संको तं णिद्दंतो । ५ क कएणादीणं दुज्जो । ६ ग घ दुल्लघे । ७ क विज्जामालो ; ख घ विज्जुमाला ।

कयपावहाणि सुमणोज्ज[1] वाणि ।
इय सहिउ भाइ समसरणे णाइँ ।
थिउ जिणु समक्खु वरकेवलक्खु ।
अवर वि असेस अइसयविसेस ।
रेहंति केम जिणवरहो जेम ।
छंदु वि मुणेह णिरु चंदलेह ।

घत्ता—तहिँ पच्छंनहँ सतहँ अइउवसंतहँ भूरिभत्तिभरणमियहँ[2] ।
णिरु संसारविरत्तहँ नग्गयचित्तहँ कहइ महामुणि भवियहँ ॥४॥

५

अरुहदेउ दोसहिँ परिचत्तउ रिसिगुरु णिग्गंथु रयणत्तउ ।
धम्मु अहिंसालक्खणु गुणहरु[1] तहिँ णिग्गंथु मोक्खमग्गु वि वरु ।
णउ मण्णइ मिच्छत्तपरव्वसु करइ पाउ मोहंधु सतामसु ।
जीउ अणाइणिहणु संसारए भमइ मीणु ण पारावारए ।
चउगईहिँ दुक्खाइँ सहंतउ अच्छइ उप्पज्जंतु मरंतउ ।
लहइ ण[2] मणुयजम्मु अह लद्धउ सुगइ ण धम्मु जं जि अविरुद्धउ ।
अह सुणेइ[3] हियए णउ थक्कइ अह थक्कइ तवचरणहो[4] संकइ ।
विणु तवेण णउ झाणुप्पज्जइ झाणे विणु ण मोक्खु पाविज्जइ ।

घत्ता—तो वितरि उवसंतिय भणइ णमंतिय मुणिवर एत्तिउ किज्जइ ।
महु रउरवे णिवडंतिहे दुण्णयवंतिहे दय करेवि तउ दिज्जइ ॥५॥

६

ता महुरवाणीए मुणिवरेण इय वुत्तु ।
सुरतिरयणारयहँ तउ हवइ णउ जुत्तु ॥
तुह हवइ पर एक्कु[1] सम्मत्तु मलणासु ।
णिस्संकपमुहट्ठगुणरयणआवासु ॥
ता ताए वितरिए लहु लयउ सम्मत्तु ।

४. १ ख ग घ समणोज्ज । २ ख ग घ °भत्तिवर° ।
५. १ क गणहरु । २ ख लहविणु । ३ ख णिसुणेवि । ४ ग घ °चरणें ।
६. १ क एहु ।

दुहहरणु सुहकरणु परिचइउ मिच्छत्तु ॥
तं सुणिवि अच्छरिउ पुरलोउ संखुहिउ ।
संपत्तु मुणिदंसणुच्छाहरससहिउ[2] ॥
तहो णाणलोयणहो लोएण गिर सुणेवि ।
मिच्छत्तु परिहरिउ वउ धरिउ संथुणेवि ॥
तो[3] ताए पंडियए दुण्णयविरत्ताए ।
लहु लयउ तवयरणु सहुँ देवयत्ताए ॥
एत्तहिँ वि सा सुणेवि केवलसमुप्पत्ति ।
तहो घरिणि हुय अज्ज[4] घरु चयवि सहसत्ति ॥
बहुदियहिँ[5] सा ताउ पियपमुहसुहलेसुँ[6] ।
गय तियसलोयम्मि करिऊण सण्णासु ॥
अवसेस कम्मत्थिया दड्ढरज्जु व्व ।
तहो थोवयालेण गय खयहो ते सव्व ॥
पुणु पूसपंचमिहिँ वरसोम्मवारम्मि ।
सुधणिट्ठणक्खत्तेँ[7] पहरावसेसम्मि ॥
मुणि सहियउवसग्गु[8] मलपडलपरिचत्तु ।
एक्केण समएण लोयग्गे संपत्तु ॥

[मयणावयारो णाम छंदो]

घत्ता—दोसट्ठारहचत्तउ गुणसंजुत्तउ तणुकिंचूणायारे[9] ।
थिउ णिव्वाणे मुणिसरु महु परमेसरु देउ बोहि अवियारे ॥६॥

७

अहो सेणिय महरायाहिराय खाइयसम्मत्तणिबद्धराय[1] ।
वरपंचणमोक्कारहँ रएण जहिँ सिवसुहु पत्तउ गोवएण ।
तहिँ णरु जइ को वि सहावजुत्तु[2] पंच वि पय झायइ[3] एयचित्तु ।
पुज्जाविहाणु मयलु वि करेइ तो किं ण सिद्धिवहु मणु[4] धरेइ ।

६. २ घ °भरिउ । ३ ख ता । ४ ख अजि । ५ ख °दियहिं । ६ प्रतिषु 'णियपमुह°' । ७ क सुद्धद्दणक्खत्तें । ८ ख मुणि सहिउ उवसग्गु । ९ क °यारो ।

७. १ ग घ विबद्धराय । २ क ख सहायजुत्तु । ३ क ठाइय । ४ क मण ।

अच्छउ तं दुल्लहु मोक्खठाउ   इहरत्ते वि लहइ जणाणुराउ ।
जंभारिसो वि संकरइ पूय   गहँ रक्खस वसि जायंति भूय ।
गलगंडरोयसय खयहो जंति   विसउववि‍साइँ दिट्ठिहे ण एंति[6] ।
विछिय अहि मूसय णउ डसंति   विग्घइँ ण होंति दुज्जण तसंति ।

घत्ता— इय णिसुणिवि मगहेसरु थुणिवि जिणेसरु गिरि ओयरिवि[7] णिकेयहो ।
गउ मदरगिरिवरथिरु सोहइ णं चिरु भरहेसरु साकेयहो ॥७॥

८

आयहो गंथहो बुहजणियतुट्ठि   विरइय अरंहतहिँ अत्थसिद्धि ।
पुणु गंथसिद्धि जयमणहरेण   गोत्तमअहिहाणें[1] गणहरेण ।
सोहम्में जंबूसामिएण   पुणु विण्हुदत्तें दिविगामिएण ।
पुणु णंदिमित्तें अवरज्जिएण   गोवद्धणेण सुरपुज्जिएण[2] ।
पुणु भद्दबाहुपरमेसरेण   पयडेवि विसाहमुणीसरेण[3] ।
पोढिल्लएण पुणु खत्तिएण   जयणामें धम्मपवत्तएण[4] ।
णागें सिद्धत्थें संजएण   दिहिसेणें[5] तवसिरिरंजिएण ।
पुणु विजयसेणें बुद्धिल्लएण[6]   पुणु गंगदेवणामिल्लएण ।
पुणु धम्मसेणें णक्खत्तएण   जयपालें मुणिजयपत्तएण ।
पुंड्डुवसेणें जियमयेण[7]   पुणु कंसायरिएं गयभएण ।
सुभद्दें जयभद्दें[8] पुंगमेण   लोहज्जें सिवकोडिएँ कमेण ।

घत्ता—गणहरएवमुणिंदहिँ कुवलयचंदहिँ एयहिँ अवरहिँ अवियलु ।
आहासिउ पवयणे जिह मइँ भवियणे तिह पंचणमोक्कारहँ फलु ॥८॥

९

जिणिंदस्स वीरस्स तित्थे महंते ।
महाकुंदकुंदण्णए एंतसंते ॥

७. ५ क गय । ६ क दिट्ठिहे एंति । ७ क गिरिउ परिवि ; ख गिरि उवयरि ।
८. १ ख गोयम अहिणाणें । २ क संपुज्जिएण । ३ ग घ पयडेविणु साहुमुणीसरेण । ४ ख °पवित्तिएण । ५ ग घ दिविसेणें । ६ ग घ पुट्ठिल्लएण । ७ क जियमणेण । ८ क जसभद्दें ।

सुणक्खाहिहाणो[1] तहा पोमणंदी ।
पुणो विण्हुणंदी तओ णंदिणंदी ॥
जिणुद्दिट्ठधम्म सुरासीविसुद्धो[2] ।
कयाणेयगंथो जयंते पसिद्धो ॥
भवंबोहिपोओ महाविस्सणंदी[3] ।
खमाजुत्त सिद्धंतिओ विसहणंदी ॥
जिणिदागमाहासणे एयचित्तो ।
तवायारणिट्ठाए लद्धाए[4] जुत्तो ॥
णरिंदामरिंदेहिँ सो णंदवंदी[5] ।
हुओ तस्स सीसो गणी रामणंदी ॥
असेसाण गंथाण पारम्मि पत्तो ।
तवे अंगवी भव्वराईवमित्तो ॥
गुणावासभूओ सुतिल्लोक्कणंदी ।
महापंडिओ तस्स माणिक्कणंदी ॥

[भुजंगप्पयाओ इमो णाम छंदो]

घत्ता--पढमसीसु तहो जायउ जगे विक्खायउ मुणि णयणंदि अणिंदिउ ।
चरिउ सुदंसणणाहहो तेण अवाहहो विरइउ बुहअहिणंदिउ ॥९॥

१०

आरामगामवरपुरणिवेसे सुपसिद्धअवंतीणामदेसे ।
सुरवइपुरि व्व विबुहयणइट्ठ तहिँ अत्थि धारणयरी गरिट्ठ ।
रणदुद्धरअरिवरसेलवज्जु रिद्धिए देवासुरजणियचोज्जु ।
तिहुवणणारायणसिरिणिकेउ तहिँ णरवइपुंगमु भोयदेउ ।
मणिगणपहदूसियरविगभत्थि तहिँ जिणहरु वहुविहारु[1] अत्थि ।
णिवविक्कमकालहो ववगएसु एयारह संवच्छरसएसु ।

---

९. १ ख सिसिक्खाहिहाणों, ग सुसरणाहि° घ सुसरहाहि° । २ ग घ °धम्मंधुराणं विसुद्धो । ३ ग घ महोविसहणंदो । ४ क तवारणद्धोए लद्धीए । ५ ख ग घ °मरिंदाहि-वाणंदवंदी ।

१०. १ क जिणहरु पडुविविहारु, ख जिणवरबद्धु विहारु ।

तहिँ केवलिचरिउ अमच्छरेण[2]   णयणंदि विरइउ कोच्छरेण[3]।
जो पढइ सुणइ भावइ लिहेइ   सो सासयसुहु अइरेँ लहेइ।

घत्ता—णयणंदियहो मुणिदहो कुवलयचंदहो णरदेवासुरवंदहो।
देउ देउ मइ णिम्मल भवियहँ मंगल वाया जिणवरइंदहो ॥१०॥

एत्थ सुदंसणचरिए पंचणमोक्कारफलपयासयरे माणिक्कणंदितइविज्जसीसणयणंदिणा विरइए महंदपरिवित्थरो सुरवरिंदथोत्तं तहा मुणिंदमहमंडवं तसु त्ति मोक्खवासे गमणं णमोपयफलं पुणो सयलसाहुणामावली इमाण कयवण्णणो संधी दोदहमो समत्तो।

संधि ॥ १२ ॥

इय सुदंसणचरिउ समत्तो।

---

१०. २ क सुमच्छरेण। ३ ग घ वच्छरेण।

नयनन्दि विरचित

सुदर्शन-चरित

[अपभ्रंश काव्य सुदंसणचरिउ का हिन्दी अनुवाद]

संधि १

१. पंच नमोकार मंत्र

लोक में सर्व अरहंतों को नमस्कार। सिद्धों को नमस्कार। आचार्यों को नमस्कार। उपाध्यायों को नमस्कार। साधुओं को नमस्कार।

इस पंचनमोकार मंत्र को पाकर एक ग्वाल भी सुदर्शन हो गया और मोक्ष को गया। उसी सुदर्शन के उत्तम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप चतुर्वर्ग को प्रकाशित करनेवाले चरित्र का व्याख्यान करता हूँ।

जिनके रूप को देखते हुए इन्द्र विस्मित मन हो गया और तृप्ति को प्राप्त न हुआ; जिनके जन्माभिषेक के समय चरणांगुष्ठ से शैलराज सुमेरु भी चलायमान हो उठा, पृथ्वी कांप उठी, समुद्र उछल उठे, पर्वत डोलने लगे, गजेन्द्र चीत्कार करने लगे, सिंह दूर हट गये, फणीन्द्र जाग उठे, आकाश में चन्द्र और सूर्य तत्काल हँस उठे, महान् दिग्गज उत्त्रस्त और लज्जित हो गये, विद्याधर और सुरेन्द्र आशंकित हुए; जिनपर अनुरक्त होकर सिद्धि रूपी सुन्दरी ने मानो तपश्री रूपी दूती को भेजा, तथा जिनके केवलज्ञान में यह समस्त महान् जगत् हस्तामलकवत् दिखाई देता है, ऐसे सन्मति जिनेन्द्र के चरणारविन्दों तथा शेष जिनेन्द्रों की भी वन्दना करके एक दिन प्रफुल्लित-मुख होकर नयनानन्दि (नयनन्दि) अपने मन में विचार करने लगे कि सुकवित्व, त्याग और पौरुष, इन तीन के द्वारा ही भुवन में यश कमाया जाता है।

२. कवि-विनय व जम्बूद्वीप-भरतक्षेत्र

सुकवित्व में तो मैं अप्रवीण हूँ और धनहीन होने के कारण मैं त्याग भी क्या कर सकता हूँ? तथा सुभटत्व तो दूर से ही निषिद्ध है। इस प्रकार साधन-हीन होते हुए भी मुझे यश का लोभ है। तो मैं अपनी शक्ति अनुसार पद्धडियाबंध में एक अपूर्व काव्य की रचना करूँ। यदि चित्त में जिनेन्द्र भगवान् का संस्मरण किया जाय, तो कविता में स्वयं ही मति प्रवृत्त होने लगती है। क्या कमलपत्र पर पड़ा हुआ जलबिन्दु भी मुक्ताफल के समान पवित्र शोभायमान नहीं होता? ऋषभादि तीर्थंकरों के तीर्थ में क्रमशः अन्तिम तीर्थंकर पर्यन्त सुप्रसिद्ध

और गुणवान् दश-दश अन्तकृत् केवली हुए हैं। इनमें से अन्तिम तीर्थंकर के तीर्थ में जो कर्मों का क्षय करने वाले पांचवे अन्तकृत् केवली सुदर्शन हुए उन्हीं का पवित्र चरित्र मैंने प्रारम्भ किया है, उसे सुनिये।

इस उत्तम तिर्यग्लोक में सूर्य और चन्द्ररूपी प्रदीपों से शोभायमान विशाल जम्बूद्वीप के दक्षिण दिशाभाग में देवपर्वतों से युक्त, जयश्री की निवासभूमि भरतक्षेत्र है। इसी भरतक्षेत्र में देवकुरु और उत्तरकुरु से भी अधिक विशेषता को प्राप्त सुप्रसिद्ध मगधदेश है, जहाँ जल से पूर्ण मनोहर नदियाँ मन्थरगति से लवण समुद्र की ओर बहती हुई ऐसी शोभायमान होती हैं, जैसे मानों मनोहारिणी युवती रमणियां मन्दगति से अपने सलोने पति के पास जा रही हों।

३. मगध देश का वर्णन

इस मगध देश में जैसे पांडु इक्षु वन अति सरस दिखाई देते थे, वैसे ही हर्ष से युक्त कामिनियों के मुख भी। इक्षु दंड उसी प्रकार दले, पीडे व पैरों से मले जाने पर रस प्रदान करते थे, जैसे धूर्तों के कुल दलन, पीडन और मर्दन से दंडित होकर मुख से लार बहाते हैं। जहां वेश्या मुख से राग आलापती हुई अनुराग पूर्वक नृत्य करती थी, धन्या (गृहिणी) भी गान करती हुई सुन्दर नृत्य करती थी व मधुरगीत गाती हुई (धान्य को कूट-कूट कर) चावल से तुष अलग करती थी; तथा शुकपंक्ति कलरव करती हुई (खेतों में या आंगन में सूखते हुए) धान को निस्तुष करते थे (धान को फुकल कर चावल खा जाते थे)। जहाँ खेत सघन शस्य से युक्त होते हुए अपनी मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते, जिस प्रकार कि पथिकों की वियोगिनी स्त्रियां घनी सांसे लेती हुई भी अपनी कुल-मर्यादा का त्याग नहीं करतीं। वहां के उपवन रमण करनेवालों को हर्ष उत्पन्न करते हुए उस भद्रशाल युक्त नन्दनवन का अनुकरण करते थे, जो देवों के मन को आनन्ददायी है। कमलों के कोशों पर बैठकर भ्रमर मधु पीते थे: मधुकरों को यही शोभा देता है। जहां सुन्दर सरोवरों में अपने शोभायमान शरीरों सहित हंसिनी से क्रीडा करते हुए श्रेष्ठ कमलों के लिये उत्कंठित और नाना प्रकार के पत्रों पर स्थित राजहंस उसी प्रकार विलास कर रहे थे, जिस प्रकार कि उत्तम धनुष से सुसज्जित शरीर, समरपंक्ति की क्रीड़ा का संकल्प किये हुए, श्रेष्ठ राज्यश्री के लिये उत्कंठित व नाना भांति के सुभट पात्रों सहित उत्तम राजा शोभायमान होते हैं। ऐसे उस मगध देश में राजगृह नाम का नगर है, जैसे मानों देवों का निलय हो, व जो मानो पृथ्वी रूपी महिला ने अपने मुख पर कपोलपत्र व तिलक रूप निर्माण किया हो।

४. राजगृह नगर वर्णन

वह नगर ऊँचे शालवृक्षों तथा उल्लसित लाल सुन्दर कोपलों वाले उद्यानवन के सदृश ऊँचे कोट सहित, रक्तमणि व सुन्दर प्रवालों से चमकता था। वह

बुद्धिमानों के लिये उसी प्रकार प्यारा था, कदली वृक्षों से भरा था, व गरिष्ठ था, जैसा कि देवेन्द्र देवों को प्यारा है, रम्भा अप्सरा से आलिंगित है, तथा स्वयं गरिमा को प्राप्त है। वहां रति और प्रीति की खूब समृद्धि थी; तथा आकाश में वहां की मकराकृत्ति ध्वजाएं फहरा रही थीं; अतएव जो कामदेव के समान दिखाई देता था, जो रति और प्रीति नामक देवियों से युक्त है, और जिस की ध्वजा मकराकार है। वह नगर निर्मल धर्म से सुसज्जित तथा प्रफुल्लित पुष्पों वाले मनोज्ञ सरोवरों के द्वारा उस मन्मथ के समान था, जो निर्मल धनुष से सज्जित तथा पुष्पवाणों से मनोज्ञ है। वह रत्नों का स्थान, मनोहर देवालय युक्त व सम्पत्ति का निधान होने से उस अमथित उदधि के समान था जो रत्नों का अगार, मनोहर सुरा का आलय तथा श्री का निधान था। वहां की प्रजा में कभी क्षोभ नहीं होता था और वह दिव्य तरङ्गों तथा श्रेष्ठ हाथियों से शोभायमान था, जिससे वह नगर मन्थन से पूर्वकालीन उदधि के समान था, जिसके जल में मंथन का क्षोभ नहीं हुआ था; और जो दिव्य अश्व और उत्तम हाथी रूपी रत्नों से शोभायमान था। अमृतयुक्त व मेरुपर्वत द्वारा उत्पन्न कंप से रहित मन्थन से पूर्व उदधि के समान वह नगर मद मान से रहित तथा सर्पों व वानरों के विशेष उपद्रव से सुरक्षित था। सुरा के निवास तथा असाधारण अप्सरा जनों के विलास से युक्त अमथित उदधि के समान वह नगर सुगन्धित द्रव्यों से युक्त एवं ईर्ष्या से मुक्त लोगों का क्रीड़ास्थल था। ऐसे उस राजगृह नगर में अपनी कीर्त्ति से भुवनमात्र को धवलित करनेवाला एवं ऋद्धि से सुरेन्द्र का भी उपहास करने वाला राजा श्रेणिक अपनी चेलना नामक महादेवी सहित राज्य करता था।

५. राजा श्रेणिक का वर्णन

वह श्रेणिक राजा अपने नख रूपी मणियों की किरणों से नभस्तल को लाल करता था, और अपने बाहुबल से सबल दिग्गजों के समूह को तोलता था। वह सब बातों में असाधारण था, कमलनेत्र और लक्ष्मीरूपी वधू का वर था; तथा जिस प्रकार वृक्ष पक्षियों को फलदायी होता है, उसी प्रकार वह याचकों की इच्छाओं को सफल करता था। उसका मुख पूर्णचन्द्र के समान था। उसके शरीर के गुण कामदेव के मानों धनुष की प्रत्यंचा ही थे जिसके कारण वह नागों, मनुष्यों व देवों की स्त्रियों के मन को भी मोहित करता था। वह अपनी उत्तम कलाओं के समूह से कलानिधि चन्द्र का भी उपहास करता था। वह सुवर्ण के समान गौरवर्ण था; और नये मेघ के सदृश उसका स्वर गंभीर था। वह अपनी प्रभा से दुस्सह तापयुक्त सूर्य की किरणों को भी जीतनेवाला था। वह राजा प्रतिदिन परमप्रभु जिनेश्वर देव की वन्दना करता था। उसके बाल भ्रमर समूह के सदृश काले थे; और बाहु ऐरावत हाथी की सूँड के समान प्रचण्ड थे। वह अपने स्थिरता रूपी गुणों से सुमेरू पर्वत को भी जीतता था। वह जिनेन्द्र भगवान् के

कहे हुये उत्तम रत्नत्रय रूपी धर्म को धारण करनेवाला था। वह अपने परिजनों के हृदय को हरण करनेवाला तथा गुणों के समूह का निधान था। वह षोडश कलाओं से संयुक्त तथा सहज ही अविचल धैर्य धारण करता था। ऐसा वह श्रेणिक राजा मरकतमणि संयुक्त, रत्नों के समूह से जटित सिंहासन पर विराजमान था, मानों निर्मल तारों से संयुक्त आकाशरूपी प्रांगण में पूर्णचन्द्र स्थित हो।

६. विपुलाचल पर महावीर का समोसरण

इस प्रकार जब राजा श्रेणिक सिंहासन पर विराजमान था, तब कोई एक मनुष्य उसके मन को आनंद देनेवाला वहाँ आकर उपस्थित हुआ। उसने आकर राजा को नमस्कार किया और उचित सम्मान पाकर कहा—हे राजन् जिनेश्वर वर्धमान स्वामी का यहाँ आगमन हुआ है। वे विपुलाचल पर्वत पर समवसरण के बीच इस प्रकार शोभायमान है, जैसे आकाश में नक्षत्रों के मध्य चन्द्रमा विराजमान हो। इस समाचार को सुनकर राजा श्रेणिक अपने सिंहासन से उठ खड़ा हुआ। उस समय समस्त राजसभा में तत्काल क्षोभ उत्पन्न हुआ। हारों की शोभा से संयुक्त उर से उर और मुकुट से मुकुट टकराने लगा। जिस प्रकार मेघों के आगमन होने पर मयूर प्रसन्न होता है, उसी प्रकार हर्षित होकर राजा ने आनन्दभेरी बजवाई और वह सात पद आगे बढ़ा। वह वीर भगवान् को नमस्कार करके एक गजेन्द्र पर आरूढ़ हुआ, मानों नवीन मेघ पर पूर्णचन्द्र चमक रहा हो। उस समय रथ, यान, झंपान, भृत्य और तुरंग इस प्रकार चल पड़े, जैसे समुद्र में तरंगे चल रही हों। कपूर से अलंकृत महादेहधारी गज ऐसे शोभायमान हो रहे थे, जैसे बिजली की चमक से उज्ज्वल मेघ ही हो। राजा श्रेणिक सुरेन्द्र के समान लीला सहित चला। (यह वर्णन भुजंग प्रयात छंद में किया गया है।) हाथीरूपी मकरों सहित, छत्ररूपी फेन से आच्छादित, तुरगरूपी तुरंगयुक्त और रथरूपी वीचि सहित, एवं ध्वजमालारूपी चलायमान कल्लोलों से संयुक्त होने के कारण वह राजा संक्षुब्ध समुद्र के सदृश शोभायमान हुआ।

७. राजा की वंदन-यात्रा

कहीं सूर्य के अश्वों के समान चचल, खुरों के अग्रभाग से भूतल को खोदता हुआ चाबुक से आहत होकर घोड़ा वेग से निकल रहा था। कहीं सुरेन्द्र के हाथी अर्थात् ऐरावत के समान सजा हुआ, गण्डस्थल से मद झराता हुआ, हथिनी के साथ-साथ गज दौड़ रहा था। कहीं सुरांगनाओं को दुर्लभ, चंचल नेत्रों की शोभा द्वारा प्रेम उत्पन्न करनेवाले, नग्न खड्गों सहित भयंकर भट चल रहे थे। कहीं हंस के समान लीलागमन करती हुई कामिनी जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति से प्रेरित होकर हँसती हुई चल रही थी। कहीं पर पर्वत की बीहड़ता युक्त महावृक्षों से भरे हुए वन में ध्वज से ध्वज लग गया और रथ से रथ टकराकर भग्न हो गया। कहीं

एक हाथी दूसरे हाथी को धक्का दे रहा था, एक भट दूसरे का व्युत्क्रमण कर रहा था। अहो, यह खच्चर झड़प लगाकर दौड़ रहा है। राजा की अनुरागिणी विलासिनी स्त्री (राजा के ऐसे धर्मानुराग को देखकर) खिन्न हो रही थी। (यह वर्णन प्रमाणिका नामक सुन्दर छन्द में किया गया है।)

जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन में अनुरक्त जन हर्ष से कहीं भी न माते हुए शोभायमान हो रहे थे, जैसे चन्द्रोदय होने पर समुद्र अपनी कल्लोलों से बढ़ता हुआ शोभित होता है।

८. विपुलाचल-दर्शन

चलते-चलते राजा ने लोगों के मन को हरण करनेवाले ऊँचे शिखर से युक्त विपुलगिरि नामक पर्वत को देखा। वह पर्वत हाथियों के गर्जन से ऐसा प्रतीत होता था जैसे दुंदुभी बजा रहा हो, कोकिलों के कलरव द्वारा जैसे गान कर रहा हो, नाचते हुए मयूरों द्वारा मानों नृत्य कर रहा हो, मृगों की उड़ानों द्वारा मानों दौड़ रहा हो, तृणरूपी रोमों द्वारा मानों पुलकित हो रहा हो, निर्झरों द्वारा मानों खूब पसीज रहा हो। इस प्रकार वह पर्वतराज जगवंद्य जिनेन्द्र भगवान् के प्रति चाटुता करता व मानों भक्ति प्रकट कर रहा था; और उच्चस्वर से कह रहा था कि त्रिभुवन की लक्ष्मी के नाथ कब आते हैं, आकर भी क्षणमात्र कहाँ विलम्ब कर रहे हैं। मैं जिनेन्द्र भगवान् की विशेष ऋद्धि से कृतार्थ हो गया। ऐसा कौन है जो सम्पत् पाकर गर्जने नहीं लगता? विरला ही कोई अपने गुणों से लज्जित होता है। इन्द्र की आज्ञा से कुवेर-विनिर्मित और आकाश में स्थित उस भगवान् के समवसरण को श्रेणिक राजा ने इस प्रकार देखा जैसे हंस मानस-सरोवर को देखे।

९. समोसरण वर्णन

वह समवसरण पृथ्वी से पांचसहस्र धनुष ऊपर आकाश में एक योजन विस्तार सहित स्थित था। उसकी चारों दिशाओं में मन्दर छाया दे रहे थे, और सुवर्ण की सोपान-पंक्ति शोभायमान हो रही थी। पृथ्वी इन्द्रनील मणियों से पटी हुई थी, और एक योजन प्रमाण आकाशतल विशुद्ध था। चार मानस्तंभ, जिनकेतन, परिखावलय, वन, उपवन, ध्वजा, कल्पवृक्ष, महान् देवगृह, कोठे, मणिस्तूप, ये सब चमक रहे थे। पवित्र अष्ट मंगलद्रव्य शोभायमान थे, और धर्मचक्र धारण किये हुए चार यक्ष भी। तीन मेखलायें, विशाल सिंहासन, सुवर्णमय सहस्रपत्र कमल और उसके ऊपर भगवान् वर्धमान चार अंगुल ऊपर सिंहासन का स्पर्श न करते हुए विराजमान थे। उनका मुख पूर्व दिशा की ओर था, और वे तन्द्रारहित, केवलज्ञान युक्त, इन्द्रादिक द्वारा वन्द्य, निमेष रहित, रोषहीन, नीरागनेत्र, नख और केशों की वृद्धि तथा शरीर की छाया से रहित थे। श्वेत चमर, छत्र और दुंदुभि सहित पुष्पों की सुगंध से युक्त जिनेन्द्र भगवान् ऐसे

शोभायमान थे जैसे मानों सिद्धिरूपी वधू की डोली को विवाह कर लाने के लिये चले हों।

१०. राजा श्रेणिक का सद् विचार

जिनेन्द्र देव के दर्शन करके राजा श्रेणिक अपने मन में भक्तिपूर्वक विचारने लगे—मनुष्यत्व का फल धर्म की विशेषता ही है। मित्रता का फल हित-मित उपदेश है। वैभव का फल दीन-दुखियों को आश्वासन देना है। तर्क का फल सुन्दर सुसंस्कृत भाषण करना है। शूरवीरता का फल भीषण रण मांडना है। तपस्या का फल इन्द्रियों का दमन करना है। सम्यक्त्व का फल कुगति का विध्वंस करना है। सज्जनता का फल दूसरों के गुणों की प्रशंसा करना है। बुद्धिमत्ता का फल पाप की निवृत्ति तथा मोक्ष का फल संसार से निवृत्ति है। जीभ का फल असत्य की निन्दा करना, सुकवित्व का फल जिनेन्द्र भगवान् का गुणगान करना है। प्रेम का फल सद्भाव प्रकट करना व अच्छी प्रभुता का फल आज्ञा पालन है। ज्ञान का फल गुरुजनों के प्रति विनय प्रकाशित करना तथा नेत्रों का फल जिनेन्द्र भगवान् के चरणों का दर्शन करना है।

इस प्रकार चितवन करके श्रेणिक नरेन्द्र ने सन्तुष्ट होकर स्तुति करना प्रारम्भ किया, जिस प्रकार कि कैलाश पर्वत पर स्थित आदिनाथ भगवान् की स्तुति सुरेन्द्र ने की थी।

११. जिनेन्द्र-स्तुति

जय हो जगतिलक जिनेश्वर भगवन्, जिनका अभिषेक सुमेरु पर्वत पर इन्द्र द्वारा किया गया था। जय हो, हे भव्यरूपी सरोवर के कमलों के दिनकर और सुखनिलय। हे भगवन्, आप निष्पाप हैं; और समवसरण के बीच चारों दिशाओं में आपके चार मुख दिखाई देते हैं। आपके कर्मरूपी मल का पटल विनष्ट हो गया है। आपके नेत्र कमलपत्र के सदृश सुन्दर हैं। हे अरहंत भगवन्, आप कामदेव के बाणों के प्रहार का अपहरण हैं; जन्म, जरा और मृत्यु का परिहरण तथा शुद्ध चरित्र को धारण करनेवाले हैं। आपका समवसरण कुबेर द्वारा निर्मित है; तथा उसमें आये हुए सब जनों के आप शरण हैं। आप अपने निर्मल यश के प्रसार से भुवनतल को श्वेत करनेवाले हैं, भयरहित हैं, और विषयों के राग की अग्नि को नये मेघ के समान वमन करनेवाले हैं। आपका प्रभामंडल सूर्य के सदृश स्फुरायमान है। देव आपकी दुंदुभि बजाते हैं तथा आप बुद्धिमानों के मन में हर्ष उत्पन्न करते हैं। हे अन्तिम तीर्थंकर, आपके ऊपर देव पुष्पों की सघन वृष्टि करते हैं। आपकी अमृत ध्वनि द्वारा स्वमत का मंडन और परमतों का खंडन होता है। आपके ऊपर चंचल चमर ढुलते हैं, और आप शिवनगर को गमन करते हैं। देव, मनुष्य, विद्याधर और नाग आपकी अतिमहिमा

पूर्वक पूजा करते हैं। जय हो तुम्हारी, हे परमात्मन्, आप समस्त अतिशयों से निरन्तर युक्त हैं। [इस कडवक की रचना शशितिलक नामक छंद में हुई है।]

इस प्रकार समवसरण के बीच राजा श्रेणिक अपने मस्तक पर हाथ जोड़ कर हर्षित हुए; और प्राचीन काल में भरत के समान अरहंत जिनेश्वर का स्तवन करके नरकोठे में बैठ गये।

१२. त्रेसठ शलाका पुरुष

तत्पश्चात् देवों, मनुष्यों और नागों द्वारा सेवित गौतम गणधर से राजा श्रेणिक ने पूछा—हे देव, इस अवसर्पिणी में कितने तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण और प्रतिनारायण हुए, यह बतलाने की कृपा करें। तब वीरप्रभु की आज्ञा से लोगों को आनंद देने वाले गौतम गणधर वर्णन करने और श्रेणिक राजा सुनने लगे। गणधर बोले ऋषभ, अजित, संभवनाथ, अभिनन्दन, सुमति, पद्म, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, भवरूप वृक्ष के लिये हस्ती के समान विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुंथु, अरह, मल्लि, मदनाशक मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और अन्तिम वर्धमान, ये चौबीस तीर्थंकर हुए।

भरत, सगर, मघवानरेन्द्र, सनत्कुमार, शान्ति, कुंथु, अरह, सुभौम, पद्म, जयसेन, हरिषेण, और ब्रह्मदत्त, ये बारह चक्रवर्ती हुए।

विजय, अचल, धर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदी, नन्दिमित्र, राम और पद्म, ये नव बलराम हुए जानो।

त्रिविष्ट, दुविष्ट, स्वयंभू, पुरुषोत्तम, नरसिंह, पुंडरीक, दत्त, नारायण और कृष्ण, ये नव नारायण हुए।

अश्वग्रीव, तार, मेर, मधुकीट, निसुंभ, प्रहलाद, बलि, रावण और अन्तिम जरासंघ, ये नव प्रतिनारायण हुए।

इन त्रेसठ शलाका पुरुषों के पवित्र चरित्र को अनुक्रम से सुनकर इस मध्यलोक के बीच नितरां वंदनीय संघनायक गौतम गणधर को अपनी राजनीति से समस्त भुवनतल को प्रसन्न करनेवाले श्रेणिक राजा ने अपने हाथों को मस्तक पर रखकर नमस्कार किया। [इस कडवक की रचना पादाकुलक छंद में हुई है]।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पचणमोकार के फल को प्रकाशित करनेवाले सुदर्शन चरित्र मे समस्त देवो द्वारा संस्तुत श्री वर्धमान जिनेन्द्र को नमस्कार करके विषय, पट्टन, नगर, राजा, पर्वत व समवसरण मे आना और महापुराण संबंधी प्रश्न, इन विषयो का वर्णन करने वाली प्रथम संधि समाप्त।

संधि ॥१॥

संधि २

१. राजा श्रेणिक का गौतम गणधर से प्रश्न

गुणों से भरे हुए नाना चरित्रों को सुनकर राजा ने कहा हे भगवन्, पंचनमस्कार रूप पदों का जिसने जैसा फल प्राप्त किया हो, उसे भव्यों को शीघ्र कहिये। इस जन-मनोहर वचन को सुनकर श्री गौतम गणधर कहते हैं—हे जगसुन्दर, जिन-भगवान् के चरणारविन्दों के भ्रमर, सम्पत्ति में पुरन्दर का भी उपहास करनेवाले, तथा अपने यश से गिरि-कन्दराओं को भी पूरित करने वाले हे श्रेणिक नरेन्द्र, जिस प्रकार सागर का जल अत्यन्त अप्रमाण है, उसी प्रकार पंचणमोकार मंत्र का फल है। यद्यपि बात ऐसी है, तो भी मैं तुमसे कुछ रख नहीं छोड़ूंगा। मैं तुम्हें संक्षेप में उसका व्याख्यान करता हूँ। दया के घर अरहंत भगवान् ने कहा है कि यह जगत् ऊँचाई में चौदह रज्जू है; अनन्तानन्त आकाश के बीच स्थित है; और तीन वातवलयों से वेष्टित होकर मुक्त है। वह नीचे वेत्रासन, मध्य में झालर और ऊपर मृदंग के आकार से शोभायमान है। नीचे के भाग में वह नरकबिलों से व्याप्त है, मध्य में द्वीपों और समुद्रों से मंडित, ऊपर कल्पों (कल्पदेवों की भूमियों) की विभूति से विभूपित है; तथा लोक के अग्र भाग में सिद्धों से उद्भासित है। मध्य लोक में पहला जम्बूद्वीप है, जो लवण समुद्र से वलयाकार घिरा हुआ है। विस्तार में वह एक लाख योजन है; एवं आकार में पूर्ण चन्द्रमा के समान शोभायमान है। उसके मध्य भाग में मन्दर पर्वत कैसा स्थित है, जैसे मानों विधि ने उसे जगत् रूपी घर का स्तंभ बनाकर खड़ा किया हो। जहाँ देवों का मेला हुआ करता है उस मन्दर पर्वत की दक्षिण दिशा में अति मनोहर प्रत्यंचा से मण्डित, धनुपाकार भरतक्षेत्र स्थित है; मानों गुणशाली कोटीश्वर-कुबेर ही स्थित हो।

२. अंगदेश का वर्णन

ऐसे उस भरतक्षेत्र में मनोज्ञ, ऋद्धि से समृद्ध व सुप्रसिद्ध अंगदेश है। वहाँ के वनों में बड़े बड़े विशाल अर्जुन वृक्ष परस्पर ऐसी सघनता से भिड़े हुए हैं, जैसे मानों गुरु द्रोणाचार्य और अर्जुन परस्पर युद्ध में भिड़े हों। दुर्योधन और बड़े भीमकाय गज रण में ऐसे गुथे हुए दिखाई देते हैं, जैसे दुर्योधन और भीम गदायुद्ध कर रहे हों। शरभ और भीषण वाणों के झुण्ड ऐसे छाये हुए हैं, जैसे रथों पर चढ़े हुए योद्धाओं की भीषण वाणावलि से आच्छादित हो। इस प्रकार अंगदेश की वनराजि महाभारत सदृश दिखाई देती थी। वहां गोकुलों के

समूह सुविशाल और शीतल दधिशालाओं से युक्त, निरन्तर गउओं द्वारा प्रसूत बच्छड़ों की शोभा सहित तथा तरुणी गोपिकाओं का आलिंगन करते हुए ग्राम युवकों सहित वहां के उपवनों के सदृश ही दिखाई देते थे, जहां सुविशाल, शीतल शाखालय थे, निरन्तर सुगन्धी पुष्पों की शोभा थी, तथा वृक्षों के समूहों पर पुष्पों की रज लगी हुई थी। वहां गावों के खेत उत्तम खाद से खूब उर्वर बनाए गये थे। बहुत से कृषकों से बसे हुए थे, उनपर कर भी स्वल्प लगाया जाता था। अपने अपने भूमिपति द्वारा रक्षित सुदृढ़ कछारों सहित थे। अतएव वे ग्राम उन सामन्तों के समान थे जिन्होंने श्रेष्ठ क्षत्रियत्व द्वारा अपने क्षेत्र को वशीभूत कर लिया था, जो खूब खींचकर बाण चलाते थे, जो ललित करों से युक्त थे, अपने-अपने भूपतियों द्वारा सुरक्षित थे और दृढ़ता से बद्ध-कक्ष रहते थे। वहां के नगरस्थान खूब रत्नों से युक्त एवं सब प्रकार कल्याणपूर्ण थे। अतएव वे उन जिनवरों के समान थे, जिनके गर्भादि कल्याणक देवों द्वारा किये गये थे। ऐसे उस अंगदेश में चम्पापुर नाम का नगर रत्नों का निधान होने से रत्नाकर (सागर) के समान शोभायमान था। वहां अनेक देवालय थे और वह पण्डितों से मनोहर होता हुआ ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह बहुत से विमानों से युक्त तथा देवों से मनोहर देवेन्द्रपुरी ही हो।

३. चंपा नगरी का वर्णन

वह चम्पापुर जल से भरी हुई परिखा, कोट तथा गोपुरों से ऐसा महान् एवं ध्वजाओं से ऐसा संकीर्ण था, जैसे मानों भगवान् का समोसरण ही हो। वह कविजनों से पूर्ण एवं लक्षणों से युक्त रमणियों से ऐसा रमणीक था, जैसे कि रामायण कपियों से युक्त एवं लक्ष्मण सहित राम के चरित्र से रमणीक है। वहां के निवासी गुरुजनों की कान (विनय) मानते थे; वहां के पथ लोगों के गमनागमन से व्याप्त थे; और वहां अन्न से भरे द्रोण दिखाई देते थे; इस प्रकार वह महाभारत के समान था, जिसमें गुरु (भीष्म पितामह) और कर्ण का सम्मान, पार्थ का व्यापार एवं कणभरिय ? द्रोणाचार्य पाये जाते हैं। वह जातियों और उनकी प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में ऐसा विशाल तथा साधुजनों से ऐसा शोभायमान था जैसे जाति वृत्त द्वारा विस्तृत रचना, एवं यति और गणों से अलंकृत छन्द हो। वह अर्थी ब्राह्मणों के द्वारा एवं चारों दिशाओं में अनन्त प्रजा द्वारा उत्पन्न कोलाहल से उस मन्दर पर्वत के समान शोभा को धारण करता था, जो समुद्र-मंथन के लिए स्थापित किया गया था, और जिसके द्वारा चारों दिशाओं में अनन्त जलराशि में क्षोभ उत्पन्न हुआ था। वहां मित्रजन भ्रमण करते थे; और वह अज्ञान को दूर करनेवाले कल्याणकारी विद्वान् गुरुजनों से पवित्र था; जिससे वह उस गगनतल के समान था जहां सूर्य का परिभ्रमण होता है, एवं जहां अन्धकार का अपहरण करनेवाले मंगल, बुध व गुरु नामक ग्रहों का संचार होता है। अथवा उस नगरी में न्याय वर्ता जाता था, और मनोहर लक्ष्मी की शोभा दिखाई देती थी; अतएव वह उस पाताल के समान था, जहां नागों का निवास है, और जहां मनोहर

पद्मावती की शोभा पाई जाती है। अथवा उस नगरी का क्या वर्णन किया जाय, जहां मणियों और रत्नों आदि की संख्या ही नहीं थी। उस पुरी में धाईवाहन नाम का ज्ञानी राजा था जो ऐसा मनोहर और लोगों को वश में करनेवाला था जैसे मानों कामदेव ने उसे अपना बागरूप ही सजाया हो।

४. राजा धाईवाहन की प्रशंसा

वह राजा नई मेधा से युक्त होता हुआ भी, नये मेघ के समान जलमय (जड़मति) नहीं था। वह सोम अर्थात् सौम्य प्रकृति होता हुआ भी, अदोष अर्थात् निर्दोष एवं मदरहित (निरभिमानी) था; सोम (चन्द्र) के समान सदोष नहीं था; और न सोमरस के समान मदयुक्त। वह शूर होता हुआ भी कुवलय (पृथ्वीमंडल) को संताप नहीं पहुंचाता था; जिस प्रकार कि सूर्य कुवलय (कुमुदनी) को सन्ताप पहुंचाता है। वह रज (पाप) समूह से वर्जित था; तो भी विभीषण नहीं था, जिसने रजनीचर (निशाचर) रावण का साथ छोड़ दिया था। वह विबुधपति (विद्वानों में श्रेष्ठ) होता हुआ भी, बृहस्पति व इन्द्र के समान अनिमिष दृष्टिवाला सुर नहीं था; तथा सुरा (वारुणी) की ओर देखता भी नहीं था, जैसे बृहस्पति व इन्द्र सुरों (देवों) के दृष्टिगोचर होते हैं। वह आर्जव गुण का धारी होता हुआ भी, अपने गुरु द्रोण के प्रतिकूल लड़नेवाले अर्जुन के समान नहीं था। नरश्रेष्ठ (अर्थात् मनुष्यों में श्रेष्ठ) होता हुआ भी, वह राष्ट्र की रक्षा की ही इच्छा करता था; और इस प्रकार नरज्येष्ठ (अर्जुन का बड़ा भाई युधिष्ठिर) होता हुआ भी, धृतराष्ट्र से स्नेह करता था। वह बाहुबलि (भुजशाली) होता हुआ भी, भारतदेश भर में श्रेष्ठ था, और इस प्रकार बाहुबलि होकर भी, भरत से जेठा था। वह राम (रमणशील) अथवा दूसरों को आराम देने वाला होता हुआ भी, हलधर (बलराम) नहीं कहलाता था। वह शत्रुकुल को नाश करने के लिए अग्नि के समान होता हुआ भी, अविनीत नहीं था। वह स्वामी होता हुआ भी, स्वामी (अर्थात् कार्त्तिकेय) के समान महेश्वर का साथी नहीं था। वह सारंग (सुन्दर अंगवान्) होता हुआ भी, पुंडरीक (कमलों) को धारण करता था जैसे मानो एक सारंग (मृग) पुण्डरीक (व्याघ्र) का साथी बन गया हो। वह न्याय-विचारक था तथापि अति अभिमानी नहीं था। इसी प्रकार नागों (हाथियों) का विदारक होते हुए भी मृगाधिप (सिंह) नहीं था। वह आदर सहित होते भी, सागर नहीं था जिसमें मछलियां संक्षोभ उत्पन्न करती हैं। वह चतुरों की आशा पूरी करनेवाला होने से चतुरास्य (चतुरानन ब्रह्मा) होता हुआ भी, हाथ में रुद्राक्ष माला नहीं रखता था। वह बिना पंखों के रथ का वाहन रखता हुआ भी, गरुड़ वाहन श्रीधर (अर्थात् नारायण) नहीं था। वह नीस (नृ+ईश-नरेश्वर) था, एवं क्रम (चरणों) की शोभा से आलिंगित था; और इस प्रकार नीश (न+ईश-दरिद्री) होता हुआ भी, कमलाक्षी लक्ष्मी से आलिंगित था। वह गुणवान् और धनवान् था, अतएव परमुखापेक्षी नहीं था, और इस प्रकार वह उस

योद्धा के समान था, जो प्रत्यंचायुक्त धनुष रखता हुआ, (समर में) कभी पराङ्मुख होना नहीं चाहता। सगुण धनुष रखता हुआ भी, बाणों को (निरपराध) दूसरों की ओर नहीं चलाता था। उस जगविख्यात राजा की अभया नाम की रानी थी, जो कामदेव की रति, राम की सीता व इन्द्र की इन्द्राणी के समान थी।

५. ऋषभदास सेठ की गुण-गाथा

उसी नगर में ऋषभदास नाम का सुप्रसिद्ध और धन-संपन्न राजश्रेष्ठी रहता था। वह समस्त कलाओं से सम्पन्न था, और पृथ्वीमंडल भर का प्रिय था; अतएव वह समस्त कलाओं से पूर्ण कुमुद पुष्पों को प्रफुल्लित करनेवाले चन्द्र के समान था। वह नीतिवान् होने से नयों का प्रतिपादन करनेवाले जैनशासन के समान शोभायमान था। अथवा, वह विशेष ज्ञानी होने से गरुड़वाहन माधव के समान था; तथा दानशील होने से वह इन्द्र के हाथी के समान था जिसके सदा मद झरा करता है। वह निर्दोष होने से उस सूर्योदय के समान था जो रात्रि व्यतीत होने पर होता है। वह सबको सन्तोष उत्पन्न करनेवाला होने से उस शीतकाल के समान था जिसमें पौष मास उत्पन्न होता है। वह सबका बड़ा स्नेही था, अतएव उस भैंस के दूध के समान था, जिसमें खूब घी निकलता है। वह उन्नत मेधावी (अर्थात् ऊंची बुद्धिवाला) होने से उस वर्षाऋतु के समान था, जिसमें मेघ ऊपर उठे दिखाई देते हैं। वह सत्य और त्याग गुणों से युक्त होते हुए उस नगर की ऊंची दुकान के समान था, जिसमें अच्छा चावल मिलता है। वह भोगों से युक्त था; अतएव भोग (फल) युक्त नागेन्द्र के समान सुहावना था। वह बहुत सुलक्षणों से युक्त होता हुआ उस व्याकरण के समान शोभायमान था, जिसमें शब्दों के नाना रूप बनाने के नियम रहते हैं। उसके विशाल नेत्र कानों के अन्त तक पहुंच रहे थे; अतएव वह उस अर्जुन के समान था, जिसकी दृष्टि कर्ण की मृत्यु पर थी। वह सद्गुणों से खूब सम्पन्न होता हुआ उस चढ़े हुए धनुष के समान था जिस पर प्रत्यंचा लगी हुई है। तथा धन से सुसम्पन्न होने के कारण वह महाकवि के ऐसे कथाबंध के समान था, जो अर्थ से समृद्ध है। उस सेठ की बहुत लक्षणों से पूर्ण एवं बड़ी विचक्षणा अर्हद्दासी नाम की प्रिय पत्नी थी, जैसी इन्द्र की शची, चन्द्र की रोहिणी एवं मुरारी की श्री (सत्यभामा)।

६. अर्हद्दासी सेठानी तथा सुभगगोप का गुण-वर्णन

वह सेठानी दीर्घाक्षी व शुभ्र दन्तपंक्ति से उद्भासित ऐसी प्रतीत होती थी, मानों दीर्घकालीन रक्षा रूपी विशाल पथों युक्त व रत्नत्रय रूप रत्नों की पंक्ति से शोभायमान धर्म की नगरी ही बसाई गई हो। वह अतिप्रसन्न, कान्तियुक्त और सुखदायी होने से कुमुदनी-वल्लभा चन्द्रलेखा (चन्द्रकला) के समान पृथ्वीमंडल भर को प्यारी थी। वह सुलक्षणों से युक्त व अलंकार धारण किये हुए, लोगों के मन को उसी प्रकार आकृष्ट करती थी, जैसे काव्य के लक्षणों से युक्त अलंकार-प्रचुर

सुकविकृत कथा। कुंकुम (केशर) और कपूर से भूषित एवं तिलक और अंजन लगा कर, वह उस वन राजि के समान शोभायमान थी, जो कुकुम, कर्पूर, तिलक और अंजन वृक्षों से व्याप्त हो।

उदित दिनेश और सन्ध्या के समान परस्पर अनुरक्त उन दोनों सेठ-सेठानी का एक सुभग नाम का ग्वाला था, जो नई बहू के समान अत्यन्त भोला था। वह खूब ही अपने स्वामी की इच्छानुसार चलनेवाला था; अतएव उस कविकृत काव्य के समान था, जो छन्दानुसार चलता है। वह अपने वर्ग के हल्के लोगों को बहुत प्रिय था, जिस प्रकार कि किपुरुषों को सुमेरु पर्वत का पृष्ठभाग प्रिय है। वह गउओं और भैंसों का पालन किया करता था; अतएव उस राजा के समान था, जो पृथ्वी एवं रानियों का पालन करता है। वह क्रीड़ा करता हुआ वन में रमण और भ्रमण किया करता था। वह बन्दरों के समान झाड़ों की डालियों से झूला करता व हरिण के समान उछालें भरा करता था। वह भ्रमर के समान गुनगुनाती हुई तानें छोड़ा करता था, तथा हर्षोत्फुल्ल होकर मयूर के समान नाचा करता था। गाय भैंसों को वन में चरा कर, वह अन्य ग्वालों के साथ हंसमुख होता हुआ, अपने प्रिय घर को लौटता हुआ, ऐसा प्रतीत होता था, जैसे मानों वासुदेव कृष्ण अपने ग्वालबालों सहित प्रसन्नमुख गोठाण को लौट रहे हो।

७. गोपका मुनिराज-दर्शन

एक बार वह ग्वाला उस घर में रहते, देखते, मल्हाते, जूझते, रूंझते, सोते, जागते, करते, उठते, नाचते, चलते, बोलते, भागते, प्रसन्न होते या क्रोध करते, नमोकार मन्त्र को बराबर उच्चारण करता रहता था। इसे देख वह सम्यग्दृष्टि सेठ रुष्ट हुआ। उसने गोप को उसके गोत्र व बाप का नाम ले लेकर बुलाया, हांका मारा और कहा—रे संत्यक्त, अपात्र, निकृष्ट, धीठ, जो मंत्र के शब्द संसार का तारण करनेवाले व मनोज्ञ हैं, उन्हें तू किस कारण जहां तहां घोषित करता और दूषित करता है? इसे सुन कर उस गोप ने सेठ को नमस्कार करते हुए भक्तिभाव से कहा—हे आराध्य नाथ, माघ के महीने में, भीम अरण्य के बीच, सन्ध्या के समय एक निर्ग्रन्थ मुनि योग्य मार्ग से ऐसे आ पहुंचे जैसे मानो योग के मार्ग से सुख व मोक्ष के पथ ही हों। उन्हें देखकर मुझे बहुत हर्ष हुआ। उन आराध्य साधु की वन्दना व स्तुति करके वहां से मैं घर आया। (इस छन्द का नाम मध्यम-वीर विलास है)। उस रात्रि को मेरे मन में एक महान् चिन्ता के कारण मुझे नींद नहीं आई। जैसे मानों निद्रा असती, दुष्चित्ता स्त्री, अपने संकेत से चूककर भटकती फिरी हो।

८. पंचनमोकार मंत्र की प्राप्ति

मैं उन विशुद्ध ज्ञानी साधु का स्मरण करते हुये रात्रि समाप्त होने के समय उठा और अग्नि लेकर लड़खड़ाता हुआ तुरन्त उसी स्थान पर गया

जहाँ वे मुनि थे। जब मैं अपने हाथों को उष्ण करके बारबार उनके शरीर पर लगा रहा था, तभी झट सूर्य का उदय हुआ। तब वे मुनीन्द्र पैंतीस अक्षर बोलकर आकाशमार्ग से विहार कर गये। मैंने वहाँ उन अक्षरों को सुन लिया। इसीलिए उन अक्षरों का मैं यहाँ वहाँ उच्चारण करता हूँ। मैं किञ्चित् भी उपहास नहीं करता। गोप की यह बात सुनकर सेठ ने कहा— इस जग में यह मंत्र दुर्लभ है। इसका तू आलस्य छोड़ अपने चित्त में ध्यान कर। (इस छंद को रसारिणी के नाम से जानो)। इस मंत्र को तूँ उत्तम पैंतीस अक्षरों के रूप में, या सोलह, या पाँच, या दो, या एक अक्षर के रूप में क्रमशः अपने सिर, मुख, गला, वक्षस्थल, और नाभिकमल में ध्यान कर।

९. णमोकार मंत्र का प्रभाव

इस मंत्र के फल से गुणरूपी मणियों के निधानभूत समचतुरस्रसंस्थान, श्रेष्ठ वज्रवृषभनाराचसंहनन के धाम, एक सो आठ लक्षणों के निवास, कर्मरूपी पाश का छेदन करनेवाले, चौंतीस अतिशयों से विशेष शोभावान् केवलज्ञानी, देवेन्द्र के मुकुट-मणियों से घर्षित होनेवाले चरणों से युक्त, राग-द्वेष रहित, अपने सौम्य गुण से पूर्णचन्द्र की कान्ति को भी जीतनेवाले जिनवर होते हैं. चौदह रत्नों को सिद्ध करनेवाले नवनिधियों से समृद्ध चक्रवर्ती होते हैं, अपने प्रतिपक्षियों को जीतनेवाले महापराक्रमी मल्ल बलदेव और वासुदेव होते हैं; महान् गुणों और ऋद्धियों को धारण करनेवाले सोलह स्वर्गों के देव होते हैं; तथा नौ अनुदिश विमानों में एवं पाँच अनुत्तर विमानों में उत्पन्न होनेवाले त्रिभुवन में महान् जीव होते हैं। इस मंत्र से उत्पन्न सुख का वर्णन करने में कौन समर्थ है? इन्द्र भी असमर्थ है? (कडवक का छंद चित्रलेखा नामक पद्धडिया है, जिसके दोनों पद विषम होते हैं)। यदि मनुष्य अतिशय भक्ति से युक्त होकर पंचपरमेष्ठि का स्मरण करे, तो उसे फिर देर नहीं लगती, वह मोक्ष को भी पा जाता है, आकाश में गमन तो कौन सी बड़ी बात है।

१०. व्यसनों के दुष्परिणाम

हे पुत्र, जिस प्रकार आगम में सातों व्यसनों का वर्णन किया गया है, वह सुन! सर्पादिक विषैले प्राणी असह्य दुःख देते हैं, किन्तु इसी एक जन्म में। परन्तु विषय तो करोड़ों जन्मजन्मान्तरों में दुःख उत्पन्न करते हैं, इसमें सन्देह नहीं। विषयासक्त होकर रुद्रदत्त चिरकाल के लिये नरकरूपी वन में जा पड़ा। जो मूर्ख बड़े आदर से, बड़ी आकुलता से जुआ खेलता है, वह क्षोभ में आकर अपनी जननी, बहिन, गृहिणी तथा पुत्र का भी हनन कर डालता है। जूआ खेलते हुए नल तथा युधिष्ठिर विपत्ति में पड़े। मांस खाने से दर्प बढ़ता है, और उस दर्प से मद्य का भी अभिलाषी बनता है, एवं जूआ भी खेलता है और अन्य बहुत से

दोषों में आसक्त होता है। इस प्रकार उसकी अकीर्त्ति फैलती है। इसीलिए इसका त्याग करना चाहिए। मांस का भोजन करनेवाला वन राक्षस मारा गया और नरक को प्राप्त हुआ। मदिरा द्वारा प्रमत्त हुआ मनुष्य कलह करके अपने इष्ट मित्रों की भी हिंसा कर बैठता है, रास्ते में भी गिर पड़ता है, तथा हाथ ऊँचे कर विह्वलता से नाचने लगता है। मद्यपान से मदोन्मत्त होकर समस्त यादव नाश को प्राप्त हुए। वेश्या राक्षसी के समान रक्त चूसनेवाली है; केवल वह अपना वेष सुन्दर दिखलाती है। उसका जो सेवन करता है, वह कायर उच्छिष्ट भोजन खाता है। वेश्या में प्रमत्त होकर यहाँ चारुदत्त सेठ भी निर्धन हो गया और दीन वेश बनाकर बिखरे बालों सहित पराङ्मुख होकर भागता फिरा। जो शूरवीर होते हैं, वे शबर होकर भी उन वनमृगों के समूहों को नहीं मारते जो वन में तृण चरते हैं, और खड़-खड़ आवाज सुनकर भी अत्यन्त डर जाते हैं। इन्हें मूर्ख शिकारी न जाने क्यों मारता है? इन बेचारों ने क्या किया है? आखेट में आसक्त होकर चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त भी नरक को गया। चंचल और ढीठ चोर अपने गुरु तथा मां बाप को भी इष्ट नहीं मानता। वह अपने भुजबल से व छल से उन्हें भी ठगता है, और दूसरों को भी। वह मूर्ख भय के कूप में पड़कर न नींद पाता है और न भूख। (यह विद्युल्लेखा नाम से सुप्रसिद्ध पद्धडिया छन्द है)। चोर पकड़ा जाता है, बाँधकर ले जाया जाता है, एवं मार्गों और चौराहों पर घुमाकर दंडित किया जाता है, तथा नगर के बाहर खंड खंड किया और मारा जाता है।

११. चोरी के कुफल

पराये धन में आसक्त होने से अंगार नामक चोर शूली पर चढ़ाया गया और मरण को प्राप्त हुआ। यह देखकर भी मनुष्य मन में मूर्खता धारण कर चोरी करता है, छोड़ता नहीं। जो इस जन्म में परस्त्री की अभिलाषा करता है वह निःश्वासें लेता है, गाता है, हँसता है, विरह से दुःखी और पतित अवस्था में रहता है। जब उसे प्रेम करने नहीं मिलता तब वह अपने मित्र से कहता है— हे मित्र, तू जा, और प्रार्थना करके शीघ्र उसे मेरे घर लाकर मेरे उर से लगा। वह स्वयं भी सैकड़ों उपाय रचता है। यदि कोई युवती सती हुई और उससे राजी नहीं हुई, तो उसे सुख लाभ नहीं होता। वह लोगों को अपना अतिदीन मुख दिखाता है, और मन में झूरता है। अथवा, यदि कोई चंचला अबला उससे राजी हो गई, तो उसे लेकर किसी देवालय के शिखर पर या किसी सूने घर में जाकर स्वयं उससे रमण करता है। वह थोड़ा भी स्वर सुनकर डर जाता है। मन में थर्राकर शरीर से कंपते हुए, चुपचाप दरकता है, भागता है, और गिरता है। जब उसे कोई हाथ से पकड़ लेता है, तो वह गधे पर चढ़ाया जाता है, निकाला जाता है, तथा मारा जाता है। जगत् में यह सब सहकर, वह (मरने पर) नरक में पड़ता है। रावण आदि अज्ञानी बनकर परस्त्री-रत हुए और चिरकाल के

लिए नाश को प्राप्त हुए। इस प्रकार ये सातों ही व्यसन कष्टदायी हैं। अतः तूँ संयम ग्रहण कर इनको त्याग दे। सेठ के इन वचनों को उस गोप ने अपने मन में स्थिर कर लिया। फिर बहुत दिनों पश्चात् प्रसन्नचित्त होकर एक दिन वह गोप घर से निकलकर गंगानदी को गया। (यह करिमकरभुजा नाम का दुवई छन्द है)। सुन्दर जल और सारस पक्षियों से युक्त, निर्मल, प्रसन्न व सुखदायी नदी सदैव उसी प्रकार शोभायमान होती है जैसे सुन्दर चरणों व सुलक्षणों से युक्त स्वच्छहृदय, हँसमुख, सुखकारी पतिव्रता स्त्री, अथवा सुन्दर शब्दों से युक्त, व्याकरण के नियमों से शुद्ध, निर्दोष, प्रसाद गुणयुक्त आनन्ददायिनी सुकवि कृत कथा।

१२. गंगानदी का वर्णन

वह गंगा नदी प्रफुल्ल कमलरूप अपने मुख से हँस रही थी। घूमती हुई भ्रमरावलीरूपी अलकों सहित (उनके गुँजार के रूप में) बोल रही थी। दीर्घ मछली रूपी नेत्रों से मन को हरण करती थी। सीप के पुट रूपी ओष्ठ-पुटों से धृति (हर्ष) उत्पन्न करती थी। मोती रूपी दंतावलि दिखला रही थी। प्रतिबिम्बित जल के रूप में वह शशिदर्पण देख रही थी। तटवर्ती वृक्षों की शाखाओं द्वारा नाट्य कर रही थी। जल के प्रस्खलन रूप त्रिभंगी प्रकट कर रही थी। सुन्दर चकवारूपी चक्राकार स्तनों के भार से नमन कर रही थी। गम्भीर नीर की भंवर रूप नाभि को धारण करती थी। फेन-पुञ्ज रूप बृहत् हार पहने हुए थी। कल्लोल रूपी विशेष त्रिवली से शोभायमान थी। शतदल नीलकमल रूपी नीलाम्बर की शोभा दे रही थी। जल की खलमलाती कल्लोलों रूपी कटिसूत्र धारण किये हुए थी। मंथर गति से लीलापूर्वक संचार करती हुई वह सागर की ओर बह रही थी, जिस प्रकार कि वेश्या अपने प्रेमी का अनुसरण करती है। सुरसरि (गंगा) को ऐसी शोभायुक्त देखकर वह सुभग गोप मन में हर्षित और शरीर में रोमांचित होकर, कलकल ध्वनि करते हुए ग्वालों के साथ कृष्ण के समान बहुत देर तक क्रीड़ा करता रहा।

१३. गोप-क्रीड़ा

सुभग एक क्षण लुकता व झड़प देता था। एक क्षण में वह लोटता व ग्वाल दल को पीटता था। क्षण में वह छिप जाता, किसी को त्रास देता व नीचे को चला जाता। क्षण में क्रीड़ा करता व ग्रह के समान पीड़ा देता। एक क्षण में शंकित होता और अपना मुख ढंक लेता था। क्षण में वन-वृक्षों की डालों को मोड़ता व लूटता था। एक क्षण में दौड़ता और फिर वापस आता, जैसे कि मन। एक क्षण में दिखाई देता और फिर विलुप्त हो जाता, जैसे घन। उसी समय एक चमक (घबराहट) मन में धारण करके खेत का रखवाला उसके सम्मुख आ पहुंचा। वह बहुत कांपता हुआ सहसा बोला—अरे चल, हे महायशस्वी, खेले मत। मैंने तेरी गउओं को जाते देखा है। वे नदी के दूसरे तट की ओर गम्भीर जल में पहुंच गई हैं। इसे सुन कर अपना सिर धुन कर वह गोप वहां से

चल पड़ा। (यह तोडनक छन्द कहा गया है)। वह गोप, जिसकी आयु थोड़ी रह गई थी, परमेष्ठी पदों का (पंचणमोकारमन्त्र का) स्मरण करके नदी में कूद पड़ा, जैसे मानों वह विष से भरी नागिनी के मुख में या यम की दृष्टि में जापड़ा हो।

१४. नदी में एक खूंट से फंसकर सुभगगोप की मृत्यु

वहाँ जल के बीच एक ठूंठ था, जो ऊपर को उठा और सूखा होने से उस गगन के समान था, जिसके ऊपर शुक्र (ग्रह) का उदय हुआ हो। वहां मछलियाँ भी थीं, और इसलिए वह मीन राशि युक्त गगन के समान था। वह कर्कश और विचित्र (फटकर नुकीला) था, अतएव कर्कराशि और चित्रा नक्षत्र से युक्त गगन के समान था। जल में डूबा हुआ वह खूंटा कैसा दिखाई देता था जैसे मानो उस गोप का प्राण हरण करनेवाला काल ही खड़ा हो। गोप के गोता लगाते ही ठूंठ उसके हृदय में चुभ गया और मर्म स्थलों को ऐसा चीरने लगा जैसे खल के वचन। उस ठूंठ ने उस के हृदय को चीर डाला और उसकी पीठ के मांस का भी भक्षण कर लिया। इस प्रकार उसके कर्म से वह ठूंठ भी मांस-भक्षी राक्षस बन गया। गोप विह्वल होकर अपने अंग को ऐसे छटपटाने लगा, जैसे जल के मध्य जाल में फँसकर मछलियों का समूह छटपटाता है। उसके हाथ-पैर चलने बन्द हो गये, जैसे किसी दुष्ट राजा का ग्राम ऊजड़ होकर वहां प्रजा का आवागमन व करदान की क्रिया बन्द हो जाती है। उस समय गोप ने अपनी देह का शोक छोड़ सहज ही यह निदान बांधा—"यदि इन पंच पदों (अर्थात् पंच परमेष्ठी णमोकार मंत्र) का कोई फल हो तो मेरा अगला जन्म उसी वणिक्कुल में हो, जिससे मैं अपने पापों के मैल को नष्ट करके बहु-सुख रूप मोक्ष को जा सकूं"।

१५. पंच णमोकार मंत्र की महिमा

जिस प्रकार पचेन्द्रियों से मन शोभायमान होता है, पंचवर्ण पुष्पों से उपवन, पंच बाणों से मन्मथ, पंच पांडवों से भारत, पंच अणुव्रतों से भव्य-जन (श्रावक), पंच महाव्रतों से मुनिगण, पांच-पांच भावनाओं से व्रत-क्रम, पंच आचारों से श्रेष्ठ ऋषि, पंच महाकल्याण से जिन, पांच अस्तिकायों से त्रिभुवन, पांच मन्दरों से महीतल, पांच आश्चर्यों से दान का फल, पंचाङ्ग मंत्र से महीपति, पंचविध ज्योतिषी देवों से नभ, तथा पांचसौ योजनों से प्रमाण योजन, उसी प्रकार पंचनमोकार मंत्र सहित मरण करना बड़ा शुभ है। मन को खेंचकर जो आनन्द सहित णमोकार मंत्र के पांच पदों का ध्यान करते हैं, वे नीति का आनन्द लेते हुए अष्टगुणालय-सिद्धालय को प्राप्त करते हैं, ऐसा नयनन्दि कहते हैं।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पंचणमोकार के फल को प्रकाशित करनेवाले सुदर्शनचरित मे त्रिलोक, विषय, पुर, नृपति, सेठ, उसकी गृहिणी, फिर सुभग गोप के मुनि के समीप पुण्यार्जन, नदी के महाजाल मे ठूंठ से हृदय विदारित होने से मरण, इनका वर्णन करनेवाली दूसरी सन्धि समाप्त।

सन्धि ॥२॥

न तो प्रवाल की लालिमा से शोभित तरुणी के अधर में, न भौंरों को नचानेवाले आम में, और न मधुर इक्षु-दंड में, न अमृत में, न कस्तूरी में, न चन्दन में और न चन्द्र में वह रस मिलता है, जो सुकवि रचित अलंकार युक्त काव्य में प्राप्त होता है। रामायण में राम सीता के वियोग के शोक से दुःख को प्राप्त हुए, महाभारत में पांडव और धृतराष्ट्र-पुत्र (कौरव) निरंतर गोत्र-कलह में प्रवृत्त हुए। सुद्रय कथा ढेड, चुगलखोर, चोर व राजा, इनकी घटनाओं से भरी पड़ी है। किन्तु ऐसा एक भी दोष इस सुदर्शनचरित्र में उत्पन्न नहीं हो पाया।

१. सेठानी का स्वप्न

तरंगों युक्त गंगा नदी से जब तक सुभग गोप का जीव जन्मान्तर में नहीं पहुंचा, तभी शुभमति जिनमति सेठानी ने अपनी शैय्या पर सोते हुए निम्न स्वप्न देखे :—देवों के चित्त को हरण करनेवाला एक विशाल पर्वत, नया कल्पतरु, अमरेन्द्र का घर, विशाल समुद्र, शोभायुक्त तथा जाज्वल्यमान अग्नि। प्रातःकाल वह उत्तम शुद्धमति सती शीघ्र ही वहां गई, जहां उसका पति विराजमान था। उससे रात्रि में देखा हुआ अपना स्वप्न कहा। पति ने बतलाया—हे हंसगामिनि प्रिये, लो, शीघ्र उत्तम जिन मन्दिर को चलें। वहां निरंतर उपदेश करनेवाले भगवान् मुनिराज तुम्हारे स्वप्न का पूर्ण फल प्रकट कर सकेंगे। तब वह रमणी अपने हार के मणियों को चलायमान करती हुई चल पड़ी। (इस छन्द को रमणी नामक जान कर कहा है)। वे दोनों पति-पत्नी जिनमन्दिर को गये और वहां मुनि को प्रणाम करके जिनदासी ने अपने रात्रि मे देखे हुए गिरिवर, कल्पतरु, सुरगृह, जलधि और अग्नि-शिखा, इन स्वप्नों को कहा।

२. स्वप्न-फल

सेठानी ने पूछा—इस स्वप्न के दर्शन का क्या फल होगा ? हे परमेश्वर, जल्दी कहिये। यह सुनकर मुनिवर ने नये मेघ के समान स्वर से कहा—हे सुन्दरि, सुनो। तुम्हारे इस स्वप्न में देखे गये उत्तुङ्ग और महाविशाल गिरिवर के फल से तुम्हारा पुत्र सुधीर होगा। पुष्परज की सुगंध से भौंरों को आकृष्ट करनेवाले कल्पतरु के फल से तुम्हारा वह पुत्र त्यागी (दानशील) लक्ष्मीवान् होगा। देवांगनाओं की क्रीड़ा से मनोहर उत्तम सुरगृह के फल से वह सुरों द्वारा वंदनीय होगा। जल की लहरों से आकाश का चुंबन करनेवाले रत्नाकर के फल से वह गुणसमूहों से युक्त व गम्भीर होगा। अतिसघन जड़त्व का विनाश करनेवाले हुताशन के स्वप्न से वह पापरूपी मल को निर्दहन करेगा। तुम्हारा वह पुत्र सुन्दर मनोहर, गुणमणिनिकेत, युवतीजनवल्लभ, मकरकेतु, अपने कुल रूपी मानसरोवर

का राजहंस, निर्मत्सर व बुद्धिमान लोगों की प्रशंसा को प्राप्त करनेवाला होगा। फिर वह साधु होकर एवं उपसर्ग सहन कर ध्यान के द्वारा मोक्ष प्राप्त करेगा। यह सुनकर वे दोनों पति-पत्नी मन में हर्षित हुए, और जिनेन्द्र तथा मुनिराज को नमस्कार करके अपने घर लौट आए। वहां वह गोप उस प्रकार निदान करके मरने पर उसी सेठ की प्रियपत्नी के उदर में अवतार लेकर रहा। वहां गर्भ में स्थित वह ऐसा शोभायमान हुआ जैसे आकाश में स्थित रवि, कमलिनी पत्र पर जल अथवा सघन सीप की पुट में अनुपम मुक्ताफल।

३. सुदर्शन का जन्म

जैसे दूसरों की ऋद्धि को देखकर दुर्जनों का मुख काला पड़ जाता है, वैसे ही उस गर्भिणी सेठानी के दोनों स्तन कृष्णवर्ण हो गये। उसका मुख चन्द्र को जीतता हुआ ऐसा शोभायमान था, जैसे मानों अपने गर्भस्थित पुत्र के यश से उज्ज्वल हो उठा हो। चलने में उसकी गति मन्द हो गई, और बोलने में उसकी वाणी सूक्ष्म। उसके आठों अंग ऐसे शिथिल हो गये कि क्षण-क्षण उसके शरीर में स्खलन प्रकट दिखाई देता था। उसे जिनाभिषेक अच्छे दान आदि विवेकपूर्ण दोहले उत्पन्न होने लगे। फिर पौष मास आने पर व शुक्लपक्ष होने पर चतुर्थी तिथि से संयुक्त बुधवार के दिन शतभिषा नक्षत्र, वरियाण योग, ववा नामक प्रधान प्रथम करण के होने पर व पांच अंश छोड़ नौ मास पूरे होने पर, विशेष पुण्य के प्रभाव से उसे पुत्र उत्पन्न हुआ, मानों जीवगणों को विशाल पाताल (अधोगति) में गिरते हुए देखकर दुःख और पाप का नाश करनेवाला स्वयं धर्म मनुष्य होकर अवतीर्ण हुआ हो।

४. सेठ के घर पुत्र-जन्मोत्सव

वहां उस सुन्दर लक्ष्मी से सुशोभित सेठ के घर अत्यन्त प्रसन्नमुख, पूर्ण पात्र से युक्त, आनन्दध्वनि करते हुए मनोहर प्रजाजनों की कतार बंध गई। नाना प्रवृत्तियों वाले चट्ट, भट्ट और पुरोहित मिल कर आये। वहां ऐसे बाजे बजने लगे जिनमें जोरदार नगाड़ों की ध्वनि भी थी एवं मृदंगों और कंसालों की ताल भी। करड और टिविल की ध्वनि भी थी, एवं बांसुरी और वीणा का नाद भी था। इस वाद्यध्वनि से नगर भर के मयूर नाच उठे, समस्त दिशाओं के मुख भर गये और विरहिणी स्त्रियों का मन झूरने लगा। स रि ग म प ध नी इन सप्त स्वरों से संयुक्त, किन्नरों द्वारा प्रशंसनीय अमृत के समान गायकों का गान भी प्रारंभ हो गया। गज के समान सुमन्दगामी, सुन्दर और विशाल नितंबों से युक्त, उन्नत-स्तन, चन्द्रमुखी नारिवृन्द नृत्य करने लगा। दुर्जनों के शिर का शूल और सज्जनों के आनन्द का मूल, मंगनों (भिखारियों) का अविरल कोलाहल फैलने लगा। सेठ जिनेन्द्र भगवान को सिर नवा कर नमस्कार करता हुआ दान देने लगा। (यह आठ यतियों से युक्त मालिनी छन्द कहा गया है।) उस श्रेष्ठ वणिक् ने सन्तुष्ट

होकर अपने पुत्र का ऐसा जन्मोत्सव किया, जैसा कि सानन्द इन्द्र द्वारा जिनवर का जन्मोत्सव किया जाता है।

५. प्रकृति ने भी जन्मोत्सव मनाया

उस पुत्र के उत्पन्न होने से लोगों को सन्तोष हुआ। आकाश में बड़े-बड़े मेघों ने जल-वृष्टि की। नगर का दुष्ट और पापी वर्ग त्रस्त हुआ। नभ में देवों ने हर्ष और आनन्द की घोषणा की। तुष्टिदायक दिव्य दुंदुभी-घोष हुआ। समस्त वन प्रफुल्लित हो फूलों की वर्षा करने लगा। आनन्दकारी मन्द पवन चलने लगा। बावड़ी और कूपों में अत्यधिक जल भर आया। गउओं के समूहों ने अपने स्तनों से दूध गिराया। आने जाने वाले पथिकों से मार्ग अवरुद्ध हो गया। फिर जन्म से छठे दिन उस वैश्य ने उत्कृष्ट रूप से झटपट छठी का उत्सव मनाया। जब आठ और दो अर्थात् दस दिन व्यतीत हुए तब उस पुत्र की जिनदासी नाम की माता अनुराग सहित उस सुकुमार एवं देवेन्द्र के समान देहधारी बालक को लेकर भक्तिपूर्वक जिनमन्दिर को गई। उसने मुनिराज के दर्शन किये और उनसे पूछा। (यह छन्द मत्तमातंग नामक है)। जैसा मन्दर पर्वत स्थित है, वैसे ही बुधजनों ने कुंभ राशि को कहा है। मेरे पुत्र की इसी राशि का विचार कर, हे मुनिराज, उसका नाम रखा जाय।

६. पुत्र का नामकरण

सेठानी की यह बात सुनकर कामदेव को नाश करनेवाले वे यतीश मेघ के समान ध्वनि करते हुए बोले – हे पुत्री, तूने स्वप्न में सुन्दर और उच्च सुदर्शनमेरु को देखा था, अतएव इस पुत्र का नाम भी सज्जनों और कामिनियों को कर्णमधुर 'सुदर्शन' रखा जाय। इसे सुनकर जिनदासी यतिराज को नमस्कार करके अपने चित्त में खूब हर्षित होती हुई अपने निवास को लौट आई। फिर शुभ मास और शुभ दिन में एक उज्ज्वल और सुविचित्र पालना बांधा गया। उसमें स्थित वह बालक ऐसा बढ़ने लगा जैसे देवपर्वत सुमेरु पर सुरबालक, व्रतपालन में धर्म, प्रिय के अवलोकन में प्रेम तथा नयी वर्षाऋतु में कंद बढ़ता है। (यह दोधक छंद प्रकाशित किया)। जिस प्रकार जगत का अन्धकार दूर करनेवाला चन्द्र, जगत में मदरूपी अन्धकार फैलानेवाला मकरध्वज (कामदेव) अथवा जग के अप्रसन्नतारूप अंधकार को दूर करनेवाला मकरगृह (समुद्र) बढ़ता हुआ सुहावना लगता है; उसी प्रकार सज्जनों का मनवल्लभ वह दुर्लभ पुत्र-रत्न बढ़ता हुआ पुरदेव (ऋषभनाथ) के पुत्र (भरत) के समान सुहावना लगने लगा।

७. बालक्रीड़ा

तरुणी स्त्रियां उस बालक को 'हुरें', 'हुल्ल' आदि उच्चारण करके खिलाने लगीं। वे उसे अपने सघन स्तनों के शिखर (वक्षस्थल) पर रख लेतीं या हाथों में लेकर

चूमने लगतीं। बालक इसके हाथ से उसके हाथ में जाने लगा। जब बालक उसके मुखकमल पर हाथ घालता, तब कोई उसे लेकर झट छोड़ देती। सात मास व्यतीत हो जाने पर उसका अन्न-प्राशन कराया गया, तथा दो वर्ष व्यतीत हो जाने पर मुंडन कराया गया। अब वह बालक घर के आंगन में खेलने लगा, अपरिस्फुट (तोतले) बचन बोलने लगा, धीरे-धीरे पृथ्वी पर पैर रखने लगा, पैजनों की झन-झन ध्वनि करने लगा। घग्घर घव-घव ध्वनियां करता हुआ शोभायमान होने लगा। मम्-मम् ध्वनियों से अन्य बालकों को मोहित करने लगा। सोने की करधनी को खींच-तानकर तोड़ने, एवं उसकी घंटियों की ध्वनि को सुनकर हँसने लगा। वह चलता, मुड़ता व लड़खड़ाता हुआ ऐसा सुहावना प्रतीत होता था, जैसे जिनभगवान के जन्माभिषेक के अवसर पर शतमुख (इन्द्र)। वह इस प्रकार उठता, गिरता, रटता व नाचता था, जैसे वर्षा ऋतु आने पर मयूर-वृन्द। इस प्रकार लीला और क्रीड़ा करते हुए जब उस पुत्र के आठ वर्ष व्यतीत हुए, तब वह सेठ अपनी मनोहर गृहिणी से हर्षपूर्वक बोला।

८. बालक का विद्यारंभ

हे प्रिये, मैं तुझे विस्तार से क्या कहूँ? मुझे अब यह मंत्र (विचार) सूझता है। पढ़ाने के निमित्त से ग्रन्थ, शास्त्र, एवं परिधान वस्त्र भेंट करके इस पुत्र को मैं मुनिवर को तबतक के लिए सौंप दूँ जबतक वह शब्द और अर्थ के ज्ञान (लिखने पढ़ने) में विचक्षण न हो जाय। शिशुकाल में जो गुरु द्वारा शिक्षात्मक उपदेश दिये जाते हैं, वे उसी प्रकार स्थिर हो जाते हैं जैसे कच्चे घड़े में कण। उचित सामग्री से रचित व दोषवर्जित कहो कौन-सा कार्य पुण्य के प्रभाव से सिद्ध नहीं होता? मनस्विनी महिलाओं से घिरा हुआ वह बालक ऐसा शोभायमान हुआ, जैसे हंसिनियों के बीच राजहंस। इस प्रकार माता-पिता उस बालक को लेकर चैत्यालय में गये और वहाँ मुनिवर की ऐसी पूजा की, जैसी इन्द्र द्वारा जिनेन्द्र की की जाती है। मनोज्ञ छत्र और चँदोवा भेंट किये एवं जिनागम की अष्ट प्रकार से पूजा की। फिर मुनिराज ने 'सिद्ध' आदि क्रम से लिख-लिखकर बालक से उच्चारण कराया। मुनिराज के पास लीलापूर्वक पढ़ता हुआ बालक ऐसा सुन्दर प्रतीत हुआ, जैसे एक घड़े से दूसरा घड़ा भरा जा रहा हो। प्रतिदिन मुनिप्रवर प्रसन्न मन से उस सेठ के पुत्र को उत्तम शास्त्र पढ़कर सुनाने लगे, जिस प्रकार ऋषभनाथ ने भरत को पढ़ाया था।

९. नाना विद्याएँ और कलाएँ

सुन्दर सन्धि, धातु, लिंग, अनेक लक्षण (व्याकरण), काव्य, तर्क, छंद, देशी नाम-राशि, दृष्टिज्ञान, लुप्त-मुष्टि ज्ञान, नाग-क्रीड़ा, दावपेंच का चातुर्य, गंध-युक्ति (अर्थात् नाना द्रव्यों को मिलाकर भिन्न-भिन्न सुगंधी वस्तुओं का निर्माण करना)

एवं राजनीति। इनको वह पढ़ता था और फिर गुनता था। उसी प्रकार पत्रछेद, नृत्य, गेय (संगीत), पटवाद्य, वीणावाद्य, खड्ग, कुन्त, व्यूहयन्त्र, चन्द्रवेध्य, मल्लयुद्ध, अतिरमणीक काष्ठकर्म, चित्रकर्म, लेप्यकर्म, धातुवाद, चूर्णयोग, अग्निस्तंभन, जलस्तंभन, इन्द्रजाल, पुष्पमाला, नारीलक्षण वा हस्ति-शिक्षा, इनका ज्ञान प्राप्त करता हुआ वह पुत्र रहने लगा। (इस छंद को कामबाण जानो)। इस प्रकार हर्षपूर्वक सोलह वर्ष व्यतीत होने पर वह नवयौवन में आरूढ़ हुआ। वह ऐसा मधुर प्रतीत होता था, जैसे मानों मनोहर सुरेन्द्र स्वर्ग से आ पड़ा हो।

१०. शरीर के सुलक्षण

युवक सुदर्शन के बाल काले और चिकने थे। सिर छत्र के समान गोल था। भाल दिव्य, उन्नत, विशाल और अर्द्धचन्द्र के समान था। उसकी भ्रूलताएँ ऐसी सुन्दर थीं, मानों कामदेव के धनुष के दो खंड हों। आंखों का जोड़ा ऐसा चंचल और रमणीक था, जैसे मानों दो मच्छ क्रीड़ा कर रहे हों। उसके कुंडलों से युक्त कान कोई अन्य ही शोभा दे रहे थे। उसका चंपा के फूल के समान नासिकावंश मृत्युलोक भर में प्रशंसनीय था। शुद्ध और स्निग्ध दंतपंक्ति मोतियों की भ्रान्ति उत्पन्न करती थी। पके बिबाफल के वर्ण के (लाल) होठ क्यों न लक्ष्मी को इष्ट होंगे? उसका विशाल मुख ऐसा शोभायमान था, जैसे मानों निरभ्र पूर्णचन्द्र ही हो। कंठ का मध्य भाग ऐसा भला दिखाई देता था, जैसे मानों सुरेन्द्र के हाथी की दो सूडें हों। अशोकपत्र को जीतनेवाले हाथ वज्र को चूर-चूर करने में समर्थ थे। गोलाकार वक्षस्थल ऐसा प्रतीत होता था जैसे मानों वह लक्ष्मी का क्रीड़ागृह हो। बीच में उसका कटिभाग स्वमुष्टि-ग्राह्य था, जैसे मानों वह वज्रदंड का मध्यभाग हो। नाभि का छिद्र ऐसा सुगम्भीर था, जैसे मानों अनंगरूपी सर्प का गृह हो। उसका नितंबभाग ऐसा शोभनीय था, जैसे मानों कामराज की पीठ हो। उसकी दोनों स्थूल जंघाएँ तो उपमा-रहित थीं। उसके गूढ़ गुल्फ ऐसे सुन्दर लगते थे, जैसे कामराजा के मंत्री। पैर कूर्माकार सुवर्ण-वर्ण और दीर्घ अंगुलियों से युक्त थे। उसके नखों की पंक्ति खूब चमकीली थी। (यह समानिक छंद है)। नाना प्रकार के ये लक्षण तथा अन्य जो इस संसार में निर्दोष दिखाई देते हैं व कवियों द्वारा वर्णन किये जाते हैं, वे सब धर्म के फल हैं।

११. युवक सुदर्शन के प्रति नगर-नारियों का मोह

सुदर्शन अपने मित्रों सहित नगर में घूमता हुआ ऐसा शोभायमान होता था, जैसे आकाश में तारापुंज सहित चन्द्रमा। उस समय तरुणियों का झुंड उसके सम्मुख ऐसा लगता था, जैसे ऐरावत के सम्मुख करिणियों का समूह। कोई अपने स्तनों को अधउघड़े करके अपने मन के भाव को कहती थी, केवल हाथ नहीं पकड़ती थी। कोई कहती—हे सुभग, कुछ देर स्थिर तो खड़े रहो, जबतक मेरे

ये रंक नयन अपने प्रभु के दर्शन का पूरा सुख न लूट लें। किसी को दर्शनमात्र से ही रति-सुख मिल गया, फिर पुनरुक्तार्थ स्पर्शन की क्या आवश्यकता रही? कोई कहती—हे मनोहर, मेरे आभरण ले ले, और मुझ बुलाती हुई को उत्तर दे। कोई बचन-रहित इतना ही करती थी कि पवन से आहत कदली के समान थर्राती थी। कोई कहती—हे निर्विकार, विरह से मारी जानेवाली मेरी एक बार तो रक्षा कर। मैं अग्नि से तपाई हुई शिला के समान तप्त हूँ, और तू, हे मित्र, परोपकार के समान शीतल है। कोई अपने आभरणों को उल्टे पहनने लगीं व दर्पण में अपने प्रतिबिंब को तिलक देने लगी। मैं उसी का वर्णन करता हूँ और उसी को बड़ा मानता हूँ जिसे देखकर विरक्ति न हो, और जो रति के लोभी मुग्ध नेत्रों को मछली की उछाल प्रदान करे।

१२. नारियों का अनुराग

सुदर्शन को अपने सम्मुख देखकर किसी ने अपने पति का साथ छोड़ दिया। कोई अपने नेत्रों की चंचल झलकें छोड़ती हुई लज्जा से भीत के पीछे छिपकर खड़ी हो गई। कोई बहुमूल्य पयोधर व नाभिदेश प्रकट करती व अपने समस्त शरीर को मोड़ती थी। कोई बालिका मदन के परवश होकर कहती—मैं विरह की ज्वाला को सहन नहीं कर सकती। अनजाने में, हे माता, मुझ विरहातुरा ने अपना हृदय एक हृदयहीन को दे डाला। क्या मैंने अन्य भव में श्रेष्ठ तप संचय नहीं किया जिससे दैव ने मुझे यह पति प्रदान न किया? कोई अपने खिसके हुए वस्त्र का तो ध्यान न रख पाई, किन्तु दूसरी विरहिणी स्त्रियों को धैर्य बँधाने लगी। सच ही है कि उन्मार्ग से चलता हुआ मनुष्य अपने पैर के तलवे की जलन को नहीं देखता। जिस प्रकार जहाँ प्रिय का मुख है वहाँ मन जा रहा है, उसी प्रकार यदि किसी उपाय से वहाँ हाथ भी पहुँच जाते तो वह जल्दी से आलिंगन कर लेती। जब सभी लोग निरंकुश हों तो निग्रह कौन करे? हे शुभमति राजन् (श्रेणिक), नय से आनन्दित जनसमूह युक्त चंपापुर में भ्रमण करनेवाले उस वणिकपुत्र से अनुरक्त न हुई हो, ऐसी कोई स्त्री नहीं थी।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा रचित पंचणमोकार के फल को प्रकाशित करनेवाले सुदर्शनचरित में सुदर्शन का जन्म, सरस बालक्रीड़ा, पुनः कलासमूह-शिक्षण, मनोभिराम यौवन, समस्त पुर सुन्दरियों में उत्पन्न क्षोभ, काम के लक्षण, इनका वर्णन करनेवाली **तृतीय संधि समाप्त।**

संधि ॥ ३ ॥

संधि ४

१. सुदर्शन का मित्र कपिल ब्राह्मण

कुल, बल, प्रगुण पाण्डित्य, रूप, लक्ष्मी, निर्मलयश, आरोग्य और सौभाग्य ये सब महान् धर्म के ही फल हैं।

जिनमति के पुत्र सुदर्शन ने नगर में भ्रमण करते हुये ब्राह्मणपुत्र कपिल को देखा। कपिल गुणसमूह से निर्दोष, अतिशय रम्य, षट्कर्मशील, वेद विज्ञाता, नित्यस्नायी, श्रुत (वेद) की वन्दना करनेवाला, द्विजों और गुरुओं का भक्त, अग्नि का पुजारी, तिल और यव का हवन करनेवाला, चन्दन से लिप्त, गौरवर्ण, कन्धे पर त्रिसूत्र (जनेऊ) तथा सिर पर छत्र धारण किये, निमित्त का ज्ञाता, चित्त में दया और दमन सहित, पितृभक्त, धर्मासक्त, प्रसन्नमुख तथा स्नेहल नेत्रोंवाला था। इन सब गुणों से युक्त देखकर सुदर्शन ने उसे अपना मित्र बना लिया। वह भूषितगात्र वणिकपुत्र बड़े स्नेह से उसे अपने कंठ से लगाकर हर्ष से प्रफुल्लित होता हुआ चला। वे दोनों आगे बाजार के मार्ग पर चले जहाँ उन्होंने एक सुकुमार-शरीर बाला (युवती) को देखा। (यह छंद मदनविलास नामक द्विपदी है)। जो स्वयं लक्ष्मी के समान थी, उसकी क्या उपमा दी जाय? उसकी गति से मानों पराजित और लज्जित होकर हंस अपनी कलत्र (हंसिनियों) सहित मानस सरोवर को चले गये।

२. मनोरमा-दर्शन

उस सुन्दर बालिका के अरुण व अतिकोमल चरणों को देखकर ही तो लालकमल जल में प्रविष्ट हो गये हैं। उसी के पैरों के नखरूपी मणियों से विषण्ण-चित्त और नीरस (हतोत्साह) होकर नक्षत्र आकाश में जाकर ठहरे हैं। उसके गुल्फों की गूढ़ता से विशेष मति-विशाल बृहस्पति भी उपहासित हुआ है। उसकी सुन्दर जंघाओं से तिरस्कृत होकर कदली वृक्ष निःसार होकर रह गया। उसके नितम्ब-बिम्ब को न पाकर ही तो रतिकान्त कामदेव ने अपने अंग को समाप्त कर डाला। उसकी सुन्दर त्रिवली की शोभा को न पहुँचकर जल की तरंगें अपने को सौ टुकड़े करके चली जाती हैं। उसकी नाभि की गंभीरता से पराजित होकर गंगा का आवर्त, भ्रमण करता हुआ स्थिर नहीं हो पाता। उसके मध्य अर्थात् कटिभाग को इतना कृश देखकर सिंह मानों तपस्या करने का भाव चित्त में लेकर पर्वत की गुफा में चला गया। उसकी सुन्दर रोमावली से पराजित होकर मानों लज्जित हुई नागिनी बिल में प्रवेश करती है। उसकी लोहमयी काली रोमावलि की यदि ब्रह्मा रचना न करता, तो उसके मनोहर विशाल स्तनों के भार से उसका मध्यभाग (कटि) अवश्य ही भग्न हो जाता।

३. मनोरमा का सौन्दर्य

उसकी कोमल बाहुओं को देखकर मृणालतन्तु भी उनके गुणों का उमाह करते थे। उसके सुललित पाणिपल्लवों की कंकेलीपत्र भी अभिलाषा करते थे। उसके शब्द को सुनकर अभिभूत हुई कोकिला ने मानों कृष्णत्व धारण किया है। उसके कंठ की तीन रेखाओं से निर्जित होकर ही मानों शंख लज्जा से समुद्र में जा डूबे हैं। उसके अधर की लालिमा से विद्रुमों की लालिमा पराजित हो गई, इसी से तो इन्होंने कठिनता धारण कर ली है। उसके दांतों की कांति द्वारा जीते जाने के कारण निर्मल मुक्ताफल सीपों के भीतर जा बैठे हैं। उसके श्वास की सुगंध को न पाने से ही पवन अति विह्वल हुआ भागता फिरता है। उसके निर्मल मुखचन्द्र के समीप चन्द्रमा ऐसा प्रतिभासित होता है, जैसे वह गिरकर फूटा हुआ खप्पर हो। उसके नासिका-वंश से उपहासित होकर सूआ अपनी नासिका को टेढ़ी बनाकर प्रकट करता है। उसके नयनों का अवलोकन करके हरिणियों ने विस्मित होकर गहन वन में अपनी प्रीति लगाई है। उसकी भौंहों की गोलाई से पराजित होकर ही तो इन्द्रधनुष निर्गुण (प्रत्यंचाहीन) हो गया है। उसके भाल से जीता जाकर कृष्णाष्टमी का चन्द्रमा खेद-वश आज भी क्षीण हुआ दिखाई देता है। उसके केशों द्वारा जीते जाकर भौंरों के झुण्ड रुनझुन करते हुए कहीं भी सुख नहीं पाते। उस सुकुमार बालिका के सुन्दर रूप को देख मन में विस्मित होकर सुदर्शन ने अपने मित्र से पूछा।

४. मनोरमा का परिचय

यह तारा है, या तिलोत्तमा या इन्द्राणी ? या कोई नागकन्या यहां आकर खड़ी हो गई है ? अथवा यह कोई उत्तम देवांगना है ? अथवा यह स्वयं धृति है, या कृति, या सौभाग्य की निधि ? क्या यह कांति है, या कवीन्द्रों द्वारा स्तुत सुबुद्धि (सरस्वती) ? अथवा उत्तम कान्ति से युक्त रोहिणी है या रम्भा ? यह मन्दोदरी है, या जनकसुता, अथवा सुन्दर भुजाओं वाली दमयन्ती ? क्या यह प्रीति है, या रति, अथवा खेचरी ? क्या यह गंगा, उमा अथवा कोई किन्नरी है ? अपने मित्र की यह बात सुनकर कपिल बोला—हे मित्र, तुम नशे में हो, या किसी ग्रह के वशीभूत ? जो सागरदत्त धनिकों में श्रेष्ठ है, जिसके हाथियों का भी धन है, जो लोगों के दुःखों को हरण करनेवाला है, जो पांच अणुव्रतों और अन्य भी तीन गुणव्रतों एवं चार शिक्षाव्रतों तथा अनस्तमित व्रत का पालन करता है, जो जीव-हितकारी सुमित वचन बोलता है, और जो कर्म रूपी वृक्षों को काटनेवाला है; (यह तोड़नक छन्द कहा जाता है) उस सागरदत्त सेठ की सागरसेना नाम की उन्नतस्तनी और अनुपम पत्नी है। उसी से उत्पन्न यह सुरगणिका के समान मनोरमा नाम की कन्या है।

५. कामशास्त्रानुसार स्त्रियों के लक्षण

सुदर्शन के हृदय को मन्मथ के बाण से घायल हुआ जानकर उसका मित्र कपिल बोला युवती का अभिप्राय दुर्लक्ष्य होता है; उसे जानकर ही अनुराग करना चाहिए। यह बात कामी जनों के मन के हितार्थ रचे गये विटगुरुशास्त्र (वात्स्यायन मुनि विरचित कामशास्त्र) द्वारा जानी जा सकती है। जाति, अंश, सत्व, देश, प्रकृतिभाव और इंगित, इनसे विशेषित स्त्रियों के लक्षणों को जो जान लेता है, वही रमणी-रति के सुख को भोग सकता है। युवतियों की जाति चार प्रकार की कही गई है—भद्रा, मंदा, लता और हँसी। भद्रा सर्वांग सुरूपवती होती है। मंदा स्थूलांगी जानना चाहिये। लता लम्बी और लता के समान दुबली-पतली होती है; तथा हँसी देह से हृष्ट-पुष्ट और ठिगनी होती हैं। अंश की अपेक्षा स्त्रियां ऋषि, विद्याधर, यक्ष अथवा राक्षस, इन चार के कुल के अंश को निश्चयतः लिये हुए होती हैं। इनको अनुक्रम से अवश्य जान लीजिये। तापसी अर्थात् ऋषि-कन्याएँ अपने भाव में सीधी सादी होती हैं। खेचरी अर्थात् विद्याधर अंश वाली स्त्रियों को मदिरा-पान और कमलों की सुगंध भाती है। यक्षिणी स्त्रियों को धन इष्ट होता है, और निशाचरी स्त्रियों का लक्षण दुश्चरित्र है। ये निश्चय से चारों प्रकार के अंश कहे गये। अब आठ प्रकार के सत्वों को सुनिये। सारसी, मृगी, ऋष्टि, शशि, हंसी, महिषी, खरी और गुणभ्रष्ट मकरी। इनमें सारसी आलिंगन-प्रिय होती है। वह अपने प्रिय का संग नहीं छोड़ती। वह सरल स्वभावी और स्नेह से क्रीड़ा करनेवाली होती है। अपने प्रिय के विरह में वह बहुत दुःखी होती है, और खीझ-खीझ कर मरती है। मृगी प्रियतम का संयोग, बान्धवों का सम्मान तथा संगीत चाहती है। ऋष्टि अपना स्थान नहीं छोड़ती। दीन और दुःख-विहीन होती है, किन्तु बोलती कठोरता से है। शशि निर्लज्ज और दूसरों के दोषों को देखने वाली होती है, आँखें मीचकर रखती है व भ्रमणशील होती है। हंसी कमल-सरोवरों की क्रीड़ा-प्रिय होती है। महिषी अत्यन्त क्रोधशील कही गई है। खरी जब हँसती है तो जोर के कहकहे लगाती है, तथा चपत व हाथ पैर की मार सह लेती है। मकरी दृढ़ता से आलिंगन करती है, मांसलोलुपी व साहसी होती है; वह रोकी नहीं जा सकती। उनमें और भी दोष होते हैं जिन्हें कौन जान व कह सकता है? (यह पादाकुलक छन्द है)। हे मित्र, अब देश के अनुसार स्त्रियों के लक्षणों को सुनिये। मालवा की स्त्री सब गुणों से सम्पन्न होती है। बनारसी स्त्री क्रीड़ागृहों में, पर्वत, नदी व सरोवरों में क्रीड़ा करना पसन्द करती है।

६. देश-देश की स्त्रियाँ कैसी होती हैं

आबू की निवासिनी स्त्री धन लेकर व दिन निश्चित करके प्रेम करती है। सैन्धवी अर्थात् सिन्धु देश की स्त्री आसक्त और गीत-प्रिय होती है, तथा प्रेमी को

द्रव्य व अपने प्राण भी दे सकती है। कोसल की स्त्री कुटिलता पूर्वक मन अर्पण करती है। सिंहलदेश की स्त्री गुणों में विशेषता रखती है; किन्तु पर-पुरुष से भी रमण करती है। द्रविड़ देश की स्त्री दंत-रस देती नहीं लजाती (दंतक्षत भी सहन करती है)। अंग देश की स्त्री अतिसुरत से विरक्त नहीं होती। लाट देश की स्त्री ललित वार्तालाप से अनुरक्त होती है। गौड़ी विज्ञान द्वारा रतिरस को भंग करती है। कलिंगदेशी स्त्री उपचारों द्वारा राक्षस को भी अनुरक्त बना लेती है; प्रत्यक्ष मनुष्य की तो बात ही क्या? सोरठ देश की स्त्री को चुंबनरस प्रिय लगता है। गुर्जरी अपना कार्य साधना नहीं भूलती। मरहठी विलासिनी व धूर्त होती है। कोंकणवासिनी उपचारों से वश मे आ जाती है। गोल्ली अपने आचरण में निर्मत्सर होती है। कर्नाटी रतिविलास में कुत्सित पाई जाती है। पाटलिपुत्र की स्त्री अपने गुणों का विस्तार करती है। पारियात्र देश की स्त्री पुरुषायत का अनुसरण करती है। हिमवंत देश की स्त्री वशीकरण की विधियां जानती हैं; और मध्य देश की स्त्री अपने प्रेमाचरणों में कोमल होती है। अब मैं इन सब स्त्रियों के अनुक्रम से प्रकृति प्रधान लक्षणों का वर्णन करता हूँ। मनुष्य भव धारण करनेवाली स्त्री तीन प्रकार की होती है—वातप्रकृति, पित्तप्रकृति और श्लेष्म प्रकृति।

७. नारी प्रकृति

वात प्रकृति की स्त्री चंचल, बहुभोजी, बहुप्रलापिनी, कर्कशा, कठोर एवं भुजंगी के समान अति कृष्णांगी, भ्रमणशीला, तथा बहुत जीभ चलानेवाली होती है। ऐसी स्त्री गम्भीर शब्दों युक्त कठिन प्रहारों से सेवन करना चाहिये; शंका न करना चाहिये। जो पित्त प्रकृति स्त्री होती है, उसके नख पिंगलवर्ण, शरीर गोरा व पसीना कड़आ होता है। उसके अंग में मृगी के समान अति उष्णता होती है। वह क्षण क्षण में रुष्ट होती और दिन-दिन धूर्तता करती है। उसे सन्तुष्ट करना चाहिये, प्रिय बोलना चाहिये, तथा शीतल आलिंगन और शीतल गंधविलेपन देना चाहिये। उसके साथ जितना भावे उतना घना रमण करना चाहिये। अब श्लेष्म-प्रकृति की युवती का वर्णन सुनिये। वह कदली के समान कोमल, वर्ण में श्यामल व अतिस्नेहल होती है। उसका श्रोणीतल मृदुल होता है। उसका साधारणरीति से की गई रति द्वारा सन्तोष हो जाता है। दोष दिखाई देने पर वह रोष से कांप उठती है, झट विरक्त हो जाती है, और अंग अर्पित नहीं करती। तब सत्य से, विनय से, दान से, प्रणय से कुछ न कहिये, किसी प्रकार उसका मन आकर्षित किया जाता है। (यहां निश्चय से मदन नामक छंद प्रयोग किया गया है)। स्त्रियों की भिन्न-भिन्न प्रकृतियां जैसे लक्षणों की होती हैं उस प्रकार कहा। जब ये गुण गुंथ कर एक ही में स्थित होते हैं, तब वे संकीर्ण कहलाते हैं।

८. नारी के संकीर्णभाव

जो जाति, अंश, सत्त्व और देशी, ये चार प्रकृतियां कही गई हैं, उनके मेल से ही स्त्री के भावों में प्रधान संकीर्ण भाव उत्पन्न होता है, जैसे चतुरंग सैन्य के बीच राजा। यह स्त्री-भाव भी संक्षेप से तीन प्रकार का कहा गया है- शुद्ध, अशुद्ध व मिश्र गुण युक्त। वह विशुद्ध भाव भी तीन प्रकार का जानो—मंद, तीक्ष्ण और तीक्ष्णतर। कुछ-कुछ लज्जा-क्रम से सम्पन्न दृष्टि द्वारा उसका मन्द भाव जानना चाहिये। दृष्टि भी तीन प्रकार की कही गई है। मृदुल, ललित और कटाक्षवलित। जो दृष्टि हृदय के उत्तम गुणोत्कर्षयुक्त हर्ष से अपने प्रिय मनुष्य की ओर प्रेरित होती है, एवं मुकुलित होती हुई विस्तार को प्राप्त नहीं होती, उसे मृदुल दृष्टि कहा जाता है। मन में उत्पन्न हुए अनुराग से जो विकास को पाती, प्रियतम की ओर जाती और उसी प्रकार चंचल होती है, जैसे जल में मछली, वह दृष्टि ललित कहलाती है।

९. स्त्री की भाव-दृष्टियां

जब कोई स्त्री गुरुजनों के बीच में लज्जा रूपी अंकुश से नियंत्रित करिणी के समान प्रेमभार के वश होकर अपने प्रिय का अनुसरण करती है, तथा सुन्दर कटाक्ष का विक्षेप करती हुई मुड़ती है, तब उसकी उस दृष्टि को विद्वान लोग कटाक्षवलित कहते हैं। जब प्रिय के दर्शन होने पर स्त्री का मलिन मुख निस्सन्देह रूप से उसीप्रकार विकसित हो जाय, जिस प्रकार सूर्य के उदय से कमल सरोवर में नलिन विकसित होता है, ओष्ठपुट फरक उठे व मन ऐसा थर्राने लगे जैसे तीव्र, चटुल पवन के वेग से देवालय की ध्वजा, तथा गण्डस्थल में पसीना दौड़ने लगे, जैसे हस्ती के गण्डस्थल में मद झरने लगता है, तब, हे मित्र, इसे तीक्ष्ण भाव से हुआ जानिये। जब नारियां मुनियों के समान भय, लोभ, मान व लज्जा को त्याग करती हैं, तथा कृष्णपक्ष में चन्द्रमा के समान प्रतिदिन क्षीण होती हैं, पुनः पुन: लम्बी उष्ण श्वासें छोड़ती हैं, तथा कुलमार्ग छोड़ कर उन्मार्ग से चलती हैं और कंपायमान होती हैं, तब यह उनके तीक्ष्णतर भाव के कारण समझना चाहिये। (इस सुन्दर छन्द को मदनावतार कहते हैं)। इस प्रकार यह बुद्धिमानों द्वारा कथित तीनों भेदों सहित शुद्ध भाव कहा गया। अब मैं दूसरे अशुद्ध भाव का स्वरूप कहता हूँ; तुझसे कुछ छिपाऊंगा नहीं।

१०. स्त्री का अशुद्ध भाव

अन्य के प्रति महान् द्वेष को प्राप्त होने से, धन के लोभ से, दुष्टमति पूर्वक तर्क-वितर्क से, दुस्सह सौत का पद प्राप्त होने से (अथवा सौत के पैरों में नमन से), बार बार समीप जाने से, अतिप्रसंग वा अति ईर्ष्या करने से तथा किये गये

प्रच्छन्न दोषों के संस्मरण से, इन कारणों से चंचल मन वाली युवती स्त्रियां अशुद्धभाव को धारण करती हैं। इसके फलस्वरूप स्त्री अपने मुखकमल को विकसित करती है, हाथ देती है, नाभि व स्तन दिखलाती है, ढाकती है और फिर मधुरभाव से उघाड़ती है, केश बन्ध छोड़ती है, तनको मोड़ती है, 'आसक्त हो गया' कह कर पुरुष को लक्ष्य करती है, तथा हटकर अपने को छुपाती है! इस भाव को विचक्षण लोग ही समझ सकते हैं। बुद्धि से ही यह भाव संकीर्णता को प्राप्त होता है। इस भाव से युक्त स्त्री को उत्तम वस्त्रों, अच्छे विभूषणों, चाटु वचनों, भोगों, शरीर-सौन्दर्य तथा चतुर दूत इत्यादि उपायों से अपनी ओर आकर्षित करना चाहिये।

११. इङ्गित वर्णन

हे जिनेन्द्र के चरणरूप कमलों के भृङ्ग (सुदर्शन), सुनो। गमन, निद्रा, भय, रोष, स्नेह, अनमन, दुःख, भूख, काम और निष्काम, ये इंगितों के नाम हैं। गमनेंगित से शून्यालाप होता है, तथा मुख मोड़कर स्नेह से देखती है। निद्रा इंगित से जम्हाई आती है; वह स्त्री आंखों को मीचती और गर्दन झुकाती है। भय इंगित से स्त्री बहुत दीनमुख व कम्पितशरीर होती तथा उसके नेत्र-चचल हो उठते हैं। रोष इंगित से स्त्री अपना ओंठ चबाती व खेद प्रदर्शित करती है, तथा उसकी आंखे लाल हो जातीं, नासिका फरकने लगती और खूब पसीना आने लगता है। स्नेह-इंगित से स्त्री अपने हृदय की गुप्त बात को प्रकट कर देती और मुख को प्रफुल्लित करती है; हे सुभग (या सुहृद्) यह समझ लो। अनमन-इंगित से मुख लाल हो जाता, वाणी शून्य हो जाती तथा नेत्रों में किंचित् अश्रु आ जाते हैं। दुख-इंगित से पहले की कान्ति नष्ट हो जाती है और मुख से स्पष्ट वाणी नहीं निकलती। बुभुक्षा इंगित से कपोल क्षीण हो जाते, गति विचलित होती (लड़खड़ाने लगती) और पैर आगे को नहीं चलते। काम इंगित से स्त्री अपना केश-कलाप छोड़ने लगती और शरीर के समस्त विकार दिखाने लगती है। निष्काम इंगित से स्त्री दोषों को लेती, गुणों को ढाकती वा स्वेच्छा से संचलन करती है। जिस प्रकार धूम के द्वारा अग्नि, तथा फूल से फल की सम्भावना की जाती है, उसी प्रकार बुद्धिमानों द्वारा बतलाये गये इंगितों से (स्त्री) जन के भाव को समझना चाहिये।

१२. त्याज्य स्त्रियों के लक्षण

हे गुणवान मित्र, उक्त प्रकृतियों, सत्वों, भावों, देशिकों, अंशों तथा इंगितों के द्वारा सुन्दर देह व स्नेह करनेवाली स्त्री को जानिये और मानिये। जो बहुभ्रमण हो, अनमनी हो, कोलाहल करनेवाली हो, धनलोलुपी, खल का संग करनेवाली, रुग्णांगी, विकराल, निद्रालु, अविदग्ध, शोक-सम्पन्न, निर्लज्ज, कार्यनाशिनी हो,

उस युवती से रमण मत कीजिये ; उसे त्यागिये। (यह आनन्द छन्द है)। हस्ती के समान प्रचंडभुजशाली वणिक्पुत्र सुदर्शन के स्नेह से युक्त वह द्विजवर कपिल (उससे) कुछ छुपाकर नहीं रखना चाहता था; अतः वह संक्षेप में और भी स्त्री-लक्षण कहने लगा।

१३. सौभाग्यशाली स्त्रियों के लक्षण

जिसकी जंघा, ऊरु व स्तनाग्र प्रशस्त और वृत्ताकार हों, हाथ, अंगुली, नख और नेत्र दीर्घ हों, नासिका सुन्दर सुवर्ण-वर्ण हो और भाल ऊँचा हो, वह बाला सब स्त्रियों में श्रेष्ठ होती है। जिसकी जंघा और ऊरु-युगल काक के समान कुरूप हों, व जिसकी काक जैसी दृष्टि, काक जैसा शब्द, तथा काक जैसी पैरों की अंगुलियां हों, उसकी आयु दीर्घ नहीं होगी, ऐसा जानिये। जिसकी वाणी सुन्दर बांसुरी, वीणा व कलहंस के समान मधुर हो, नाभि और स्तन सुन्दर गोलाकार हों, हाथ सुन्दर हों, गति मातंग के समान लीलायुक्त हो, जो भोली हो व श्यामवर्ण हो, वह बालिका पुत्रादि व लक्ष्मी का निधान होती है। जिसके मुख, नख, होंठ, अधर, हाथ व पैर सभी लाल कमल की कान्तिवाले हों, नाक ऊँची हो और दृष्टि हथिनी जैसी हो, उस बालिका के निश्चय ही सौभाग्य होता है। जो स्त्री अपने बायें हाथ में मृणाल, मत्स्य, पुष्पमाला, शैल ध्वजा, पद्म, गिरि, व गोपुर के चिन्हों को धारण करती है, वह सुख पाती है, और अपने घर में चिरकाल तक आनन्द करती है।

१४. स्त्रियों के शुभ और अशुभ लक्षण

जो स्त्री ऊर्ध्वरेखा तथा चक्र, अंकुश व कुंडल की रेखाओं से विभूषित है, अर्द्धचन्द्र के समान जिसका भाल है व जिसके नख सुन्दर कान्तिवान हैं, तथा जिसके दाँत चिकने मोतियों के समान हैं वह गुणमंजरी चक्रवर्ती की प्रिया होती है। जो तीतरी के समान शब्दालाप करती है, परेवा के समान नर-भोगिनी है, जिसकी भौंहें मिली हुई हों, वह स्त्री कुल को कलंक लगानेवाली और छूंछी होती है, ऐसा विद्वानों ने कहा है। जिसकी नासिका मोटी और चिबड़ी हो वा जो पैर से लंजी हो, वह स्त्री अल्पधनवती होती है। तथा जिसकी गति, शब्द और दृष्टि कौवे के समान हो वह कन्या दुःख का भाजन होती है। (यह त्रिभंगी नामक छंद है)। जिस स्त्री के चरण कछुवे के समान ऊँचे हों, अंगुलियां विषम हों, ओंठ गधी के समान लम्बे हों, जो खोसला (बौनी) हो, जिसके सिर के केश रूखे और ऊपर को उठे रहनेवाले हों, आंखे चंचल हों, हाथ, जंघा और ऊरु मांसल हों, जो गमन में उतावली हो, व जिसके सर्वांग में रोमराशि उठ रही हो, वह स्त्री स्पष्टरूप से अपने पुत्र और पति के वियोग के दुःख से आच्छादित होती है। जिसके मुख पर मूँछे हों, कटि, उर और नाभि में बाल हों, जिसका स्पर्श कठोर हो, और अंग

कठोर हों, वह प्रत्यक्ष राक्षसी है। हे मित्र, उसे छोड़िये। बहुत कहने से क्या? इस प्रकार वचन सुनकर और अपने उस मित्र के गुणों की स्तुति करके वह वणिक्‌पुत्र सुदर्शन कामानल से संतप्त, शून्यमन और क्षीणतन अपने घर वापिस आया।

१५. मनोरमा की काम-दशा

वहाँ जब वह सुकुमार बालिका अनुरक्त-चित्त होकर अपने सुन्दर भवन में पहुँची, तो वह हाथ मोड़ती, केश-कलाप छोड़ती, गले में चमकीला हार घालती और निकालती। एक क्षण में खूब भौंहें मरोड़ती, कोमल शैया का परित्याग करती तथा स्वयं अलीक व ललित किंचित् हँसती। वह (उसी का) ध्यान करती, गाती, व श्वासें लेती। फिर एक क्षण में गाढ़ व दृढ़ आलाप करती, अथवा अपने चमकीले दांतों से अधर को जोर से दबा लेती। वह कुछ-कुछ यहाँ-वहाँ देखती और सोचती, तथा इधर-उधर कुछ हँसती और बोलती। बड़े-बड़े स्तनों के भार से अवनत-देह वह सुन्दरी नये स्नेह से युक्त स्वयं को धैर्य देती, किन्तु क्षण भर में फिर वही सुहावना संबोधन (हे नाथ, हे स्वामी, आदि) पढ़ती और 'मुझ तृषातुर का परित्राण कीजिये' ऐसी मन में रट लगाती थी। श्रेणिक सुनता है और गौतम कहते हैं कि नयनन्दि जगत्स्वामी बुध (भव्य) रूपी कमलों के रवि जिनेन्द्र को छोड़कर अन्य ऐसा कौन है, जिसे मदन ने क्लेश न पहुँचाया हो?

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पंचणमोकार के फल को प्रकाशित करनेवाले सुदर्शनचरित मे मनोहर जाति, पुनः अंश तथा सत्त्व व समस्त देशी, प्रकृति, भाव, देह, इंगित, युवती-लक्षण तथा राजश्रेष्ठि-पुत्र का विरह, इनका वर्णन करनेवाली चौथी संधि समाप्त।

संधि ॥ ४ ॥

१. मनोरमा की कामपीड़ा

गौतम गणधर कहते हैं—हे श्रेणिक राजन्, मनोरमा को यहां वहां किसी भी प्रदेश में अच्छा नहीं लगता था। केवल एक अति दुर्लभ वल्लभ के बिना लोगों से भरा हुआ घर भी बन के समान प्रतीत होता है। कमल, जल से भींगा हुआ पंखा, गान, भूषणविधि, कर्पूरचन्दन, भोजन, शयन या भवन, ये कुछ भी नहीं भाते; चित्त में एक व्याकुलता ही बढ़ती है।

मनोरमा संतप्त होकर पुन पुनः कहती—रे रे खलस्वभावी मकरध्वज, तू भी छल ग्रहण करके मेरी देह को तपा रहा है, क्या यह बात सत्पुरुष के लिये योग्य है? रुद्र ने तो तेरी देह को दग्ध किया था। कहो, महिला के ऊपर कौन वीर नहीं बन जाता? रे अज्ञानी, तू अपने पाँचों बाणों को मेरे हृदय में छेद कर अब दूसरों का कौन बाण से हनन करेगा? वह कमलपत्र के समान विशाललोचन बालिका जहाँ कहीं को भी अवलोकन करती, वहाँ वहाँ उसे उसका प्रेमी ही आता हुआ प्रतीत होता। मानों समस्त जगत् सुदर्शन से ही भर गया हो।

यहाँ जैसी अवस्था मनोरमा की थी, उसी प्रकार वहाँ सुदर्शन की भी थी। स्नेह कभी एकाश्रित घटित नहीं होता। यदि कभी घटित भी हो जाय तो वह स्थिर नहीं होता, जैसे छिद्र युक्त करतल में पानी नहीं ठहरता। सुदर्शन को विरह-पीड़ित एवं रति-विरहित देख ऋषभदास मन में सोचने लगा—यदि मेरा गुणगणों से युक्त पुत्र विवाहित हो जाय तो मेरी कुलसंतति बढ़ने लगे।

२. सुदर्शन के पिता की पुत्र-विवाह संबंधी चिन्ता

कुल-संतति से धर्म का संपादन होता है, और धर्म से पाप क्षीण होता है। पापक्षय से ज्ञान, और ज्ञान से फिर मोक्षरूपी शाश्वतपुरी को गमन किया जा सकता है। इसी से गृहस्थ कुल को बड़ी वस्तु मानते हैं, और यह अवस्था चारों वर्णों के लिये है। तो अब कोई उत्तम कन्या देखना चाहिये, जिससे उसके साथ पुत्र का विवाह किया जा सके। अथवा सारी-द्यूत (चौपड़) खेलते हुए स्वयं सागरदत्त ने एक बार कहा था—"यदि मेरे कोई पुत्री उत्पन्न हुई, तो वह तुम्हारे पुत्र को दी जायगी।" तो अच्छा होगा कि उससे अब उसकी मांग की जाय, देता है या नहीं देता, इस सत्य का पता भी लग जायगा। प्रार्थना-भंग के भय से लोग अपने इष्ट व महान् कार्य की भी अवहेलना (लापरवाही) कर देते हैं। यद्यपि ऐसा है, तो भी ऐसा मान नहीं करना चाहिये जिससे अपने कार्य का नाश हो।

(ऋषभदास जब इस प्रकार विचार कर रहा था तब) उसी बीच प्रार्थी के लिए चिंतामणि के समान वह सागरदत्त सेठ अपने किसी काम से वहां आ पहुँचा। वणिग्वर (ऋषभदास) ने उस विशुद्ध यशस्वी निरुपम धनी सागरदत्त को शीघ्र ही उत्तम आसन पर बैठाया और फिर यथोचित संभाषण करने के पश्चात् अत्यन्त आदर से पूछा।

३. वर-कन्या के पिताओं की बातचीत

कहिये अपने मन की इष्ट बात, जिस कार्य से आप आए हैं, उस सम्बन्ध में क्या किया जाय ? तब उस वणिग्वर ने कहा—ऐसा किया जाय जिससे सदैव अपना स्नेह बढ़ता रहे। जिस कारण से हम आए हैं उसे आप जानते हुए भी पूछते हैं। यद्यपि ऐसी बात है, तो भी मै संबंध (प्रसंग) कहता हूँ। बहुत कहने से क्या ? विवाह रचाया जाय। यह सुनकर जिन भगवान के चरण-कमलों की भ्रमरसम्पत्तिस्वरूप ऋषभदास बोला तुम तो स्पष्ट जानते ही हो कि बालक का विवाह करना है. उसी को आप प्रमाणित (कार्यान्वित) कीजिये। बार-बार तो क्या बोला जाय, जो बात आप पहले ही स्वीकार कर चुके हैं उसी का पालन किया जाय। जिस बात पर तुम्हारा चित्त प्रेरित हुआ है, उसमें हमारा कोई वितर्क नहीं है। (ऋषभदास का) यह वचन सुनकर हर्षोल्लसित हुआ सागरदत्त झट वहाँ से चल पड़ा, और हाथ में उत्तम तांबूल लेकर वहाँ पहुँचा जहाँ ज्योतिष ग्रन्थ का कुशल विद्वान, गुरुजनों का भक्त श्रीधर नाम का ज्योतिषी रहता था। उससे सेठ ने पूछा—सुदर्शन और मनोरमा के विवाह के लिए उत्तम लग्न कहिए। तब ज्योतिषी ने विशेष रूप से बतलाया।

४. ज्योतिषी द्वारा लग्न-शोध और विवाह की तैयारी

स्पष्टतः वैशाख मास में, शुक्लपक्ष की पंचमी तिथि को रविवार के दिन, मूल नक्षत्र, शिवयोग, कपिल करण में, सूर्य के उदय होने से तेरह घड़ी और पचास पल चढ़ जाने पर मिथुन लग्न होगा, जो वधु-वर के मनों को सुख उपजाने-वाला है। ज्योतिषी की यह बात सुनकर सेठ अपने घर चला गया। उसने शीघ्र ही विवाह की समस्त सामग्री एकत्रित की। बांधव-स्वजन व इष्ट-मित्र, कौन ऐसे थे जो प्रसन्न नहीं हुए ? दोनों घरों में सुन्दर मण्डप रचे गये। दोनों घरों में अनुपम तोरण लगाये गये। दोनों घरों में केशर की छटाएँ दी गईं। दोनों ही घरों में रत्नों की रंगावली की गई। दोनों ही घरों में धवल मंगल गान होने लगे। दोनों घरों में गम्भीर तूर्य बजने लगा। दोनों ही घरों में विविध आभरण लिए जाने लगे। दोनों ही घरों में सुन्दर तरुणियों के नृत्य होने लगे। यह उपाख्यान (कहावत) सत्य ही है कि नारियों को कलह, दूध, जामाता और तूर्य

प्रसन्नकारी और प्यारा होता है। जन-मनोहारी, धवल व्यापार करनेवाली मानिनी तरुणी स्त्रियों ने घेरकर वर को मंगल कलशों से खूब स्नान कराया और बहुमूल्य भूषणों से अलंकृत किया।

५. विवाहोत्सव

विवाह की लग्न आने पर वर के हाथ में सूत का कंकण बाँधा गया। सिर पर श्वेत पुष्पों का मुकुट लगाया गया, श्वेत वस्त्र पहनाए गए और चन्दन का लेप किया गया। फिर तुरंग पर चढ़ कर ऊपर छत्र लगाए हुए धीरे-धीरे जामाता मंडप में पहुँचा। तत्पश्चात् वह मातृगृह में प्रविष्ट हुआ, और अपनी प्रिया के अन्तरवस्त्र (परदे) के समीप बैठा। फिर वस्त्र (परदे) को हटाकर मुख का अवलोकन किया गया जिससे उसे अपने नेत्रों के कृतार्थ होने का फल मिला। कर में कर और दृष्टि में दृष्टि पहुँचकर चलायमान ही न होती थी, जैसे कीचड़ में फँसा हुआ ढोर (पशु)। वर कान्ता को लेकर घर से लीला पूर्वक निकला, जैसे सरोवर से सुन्दर हाथी निकले। फिर वहाँ वेदी के मध्य में रखे जलते हुए लाल हुताश (अग्नि) को देखा (साक्षी किया)। वधूवर दोनों उस वेदी के आसपास प्रदक्षिणा देने लगे, जैसे मानों गिरीन्द्र (सुमेरु) के आसपास रवि और रत्न शोभा दे रहे हों, अथवा जैसे रोहिणी और चन्द्र विराज रहे हों, अथवा जैसे बिजली और कंद (मेघ)। उस समय सागरदत्त मन में बहुत प्रसन्न हुआ, और प्रफुल्लमुख होकर इस प्रकार बोला—यह चंपकवर्णी छोकरी (छोटी-सी) कन्या हे कुलीन महानर, मैंने तुम्हें दी। पुनः यह कहते हुए उसने कन्या वर के हाथ में दे दी कि यह नारायण की लक्ष्मी के समान तुम्हारी सुवल्लभा होवे। दायजे में उसने प्रदीप, रतिगृह के समान रमणीक खाट (पलंग) सुवर्ण सहित दिये। वधू-वर में काम जागृत हुआ। (इस कडवक में मौक्तिकदाम छंद का प्रयोग किया गया है)। उन विरह से विह्वल, मत्त और आसक्त वधूवर का ज्योंहीं विवाह हुआ त्योंही मानों सूर्य उन्हें देखने के लिए आया और सबसे उच्च प्रदेश प्राप्त करके उस पर विराजमान हुआ। (अर्थात् मध्याह्न हुआ)।

६. मध्याह्न भोजन (जेवनार)

तब मध्याह्न काल में नये बधूवर सुहृद् (मित्र) और बांधवजनों सहित इन्द्रियवर्ग को आमोद देने वाला भोजन करने लगे। थाल-थाल में बहुत से व्यंजन ऐसे शोभायमान हुए जैसे आकाश के बीच नक्षत्र। मोतियों के पुंज की छवि-सहित कलम (चावलों का) भात बनाया गया जो हरित और नीलमणियों के समान हरी मूँग की दाल से युक्त और नये कांचन के समान रस सहित घृत डालने पर ऐसा भाता था जैसे सन्ध्या की लालिमा से युक्त मृगांक (चन्द्र)। ऐसे खाजा परोसे गये कि ज्योंही उन्हें मुख में डाला त्योंही वे दुर्जन-मैत्री के समान भग्न हुए।

किन्तु भग्न होने पर भी लोग उन्हें छोड़ते नहीं, क्योंकि जिनमें स्नेह (घृत व प्रेम) होता है वे किसे प्यारे नहीं होते ? अच्छे-अच्छे लावण (नमकीन) और मोदक (मिठाइयाँ) लोगों ने खूब पसन्द किये। सज्जन, स्वजन व सुअन्न में मनमोदक (मन को प्रसन्न करनेवाले) गुण होते ही हैं। फिर गोलाकार मांडे लाये गये। वे अति स्वच्छ और पथ्य होने से जिनेन्द्र के निर्दोष व सुमार्गदर्शी गुणों के तुल्य थे। फिर नाना प्रकार के तिम्मण (अचार चटनी) दिये गये जो ऐसे अत्यन्त तीखे थे, जैसे स्त्रियों के मन। लोग मधुर द्राक्षारस को ऐसे पी रहे थे, जैसे छैले धूर्त अधर का पान करते हैं। मधुर को छोड़कर लोग तीखा खा रहे थे; अनुराग के कारण दोष भी गुण दिखाई देने लगते हैं। थक्का दही ऐसा मनोहर स्वाद दे रहा था जैसे स्नेह युक्त प्रिया का मान। गरम-गरम दूध पीते बड़ा अच्छा लग रहा था और हृदय को भी जला रहा था, जैसे छुपकर किया हुआ काम। जब सरस भोजन हो चुका, तब बचे हुए भोजन से लोगों को ऐसी विरक्ति हुई जैसे धूर्त द्वारा धूर्तिनी के साथ काम क्रीड़ा कर लेने के पश्चात् अति तृप्ति से उसका परित्याग किया जाता है।

७. सूर्यास्त-वर्णन

फिर परकार्य के समान अतिशीतल शुद्ध जल लेकर सभी ने गण्डूषों (कुल्लों) द्वारा मुखविवर की शुद्धि की। भोजन करने वाले उन सभी लोगों को कर्पूर मिश्रित श्रीखंड दिया गया (चन्दन लगाया गया)। फिर सुपारी पान एवं सुन्दर बड़ी बड़ी पचरंगी पुष्पमालाएँ दी गईं। फिर नये नये बड़े उत्सव से जन (बाराती) अपने मनोहर घर लौट आये। इतने में ही दिनेन्द्र (सूर्य) मंद-तेज हो गया, व अस्त होते हुए ऐसा विचित्र दिखाई दिया जैसे अर्थवान् (धनी) शोक-चिन्ताओं से विचित्त (उदास) हो जाता है। (उस समय मानो डूबते सूर्य से) निर्दहन हेतुक (जलानेवाली) अग्नि में तेज आ गया; तथा मानिनी स्त्रियों ने भी राग धारण किया। मानों (डूबते सूर्य ने) भवितव्यता को जान कर नभरूपी तरुवर का फल झटपट दे डाला हो, जो यथाकाल अतिपक्व होकर टूट गया और गिर पड़ा, एवं कामराग के रूप लोगों में अनुराग उत्पन्न करने लगा। अथवा मानों नभश्री रूपी स्त्री के स्नान करते समय उसका रवि रूपी सुन्दर कनक-कुंभ खिसक पड़ा हो। (यह चन्द्रलेखा नाम का दुबई छंद है)। फिर प्रहररूपी प्रहारों से आहत और आरक्त (लाल वा लोहूलुहान) हुआ वह संतापयुक्त रवि सागर में निमग्न हो गया। (देखिये तो इस कर्म की गति को ?) उस उर्ध्वलोक के पति को भी निशा राक्षसी ने निगल लिया।

८. रात्रि-वर्णन

बहु-प्रहरों के पश्चात् सूर्य अस्तमित हुआ, (मानों) बहुत प्रहारों से शूरवीर नाश को प्राप्त हुआ। अथवा, क्या कहा जाय—जो वारुणि (पश्चिम दिशा) से

रक्त हुआ, वह वारुणि (मदिरा) में रक्त पुरुष के समान उग्र होकर भी कौन कौन नष्ट नहीं होता ? नभरूपी मरकत के पात्र में उत्तम वन्दना हेतु संध्याराग रूपी केशर, शशि रूपी चंदन, चन्द्रमृग रूपी अत्यन्त श्यामल कस्तूरी, विकसित ग्रह रूपी प्रफुल्ल कमल तथा तारारूपी तंदुल, इन मंगलकरणों (साधन-सामग्री) को लेकर अनुराग युक्त निशा रूपी रमणी उस समय आ पहुंची। वह शोभासम्पन्न वधू-वर को देख कर संतोष से मानों कहीं भी समाती नहीं थी। ऐसे समय में सुदर्शन अपनी मनोवांछाओं को पूरी करनेवाली वधू से युक्त शोभायमान होता हुआ, व रतिगृह में प्रवेश करता हुआ ऐसा प्रतिभासित हुआ जैसे विन्ध्याचल के कुंज में करिणी के साथ हाथी। पलंग के ऊपर स्थित होकर वे दोनों ऐसे रति-आसक्त हुए, जैसे लक्ष्मी और नारायण, अथवा मानों गौरी और त्रिनेत्र (महेश) शोभायमान हों। अथवा मानों रति और मदन प्रत्यक्ष हुए हों। चंदन और तिलक से महकते हुए, विभ्रम-सहित नखों से लगे हुए सुन्दर व्रणदर्शी, भुजाओं और हाथों से युक्त तथा स्तनों के भार से नमित यौवन का, एवं चंदन और तिलक वृक्षों से महामहिमशाली, भ्रान्तिजनक, नभलग्न सुन्दर वृत्तदर्शी, लताओं व पल्लवों से युक्त तथा फलों के भार से झुके हुए वन का सेवन कोई धन्य पुरुष ही करता है।

९. वर-वधू की कामक्रीड़ा

नया वर विविध विकार करता था और नई वधू लज्जित होती थी। कामांध पुरुष जो न करे वह शोभता नहीं (जो करे सो थोड़ा है)। सुदर्शन उसके वस्त्र को खींचता, किन्तु मनोरमा नीविबंधन करती। सुदर्शन कामपूर्ण बातें करता, परन्तु मनोरमा हाथों से अपने कान झांपती। सुदर्शन विलासपूर्ण भाव से कटाक्ष फेंकता, किन्तु मनोरमा सम्मुख निरीक्षण ही न करती (आँख से आँख न मिलाती)। सुदर्शन स्तनों पर हाथ घालता, किन्तु मनोरमा अपने हाथ से उसे झटक देती। सुदर्शन अपने मुख से उसका मुख चूंबता, मनोरमा एक क्षण भर उसमें भी विलम्ब डालती। सुदर्शन दाँतों से उसके होंठ चबाता, मनोरमा हुंकार करती और कांप उठती। सुदर्शन नखों से घाव करता; मनोरमा के अंग में पसीना दौड़ पड़ता। फिर वे दोनों सुन्दर रति का रमण करने लगे। (यह छंद वसंतचत्वर है)। वे वधू-वर हुंकार करते, स्वर छोड़ते, ओंठ काटते, केश बिखराते, तथा नाना प्रकार के करण-बन्ध (भोगासन) करते और फिर संभलते, जैसे कौरवों और पांडवों के सैन्य रणव्यूह में हुंकारें भरते, बाण छोड़ते (क्रोध से) ओंठ चाबते, केश बिखराते तथा नाना प्रकार का शस्त्र-बंध करते और फिर संभलते थे।

१०. सूर्योदय-वर्णन

रक्तचूड़ (मुरगे) द्वारा संकेत पाकर प्रवासी चल पड़े। कौवों के शब्द उठे और शीघ्र ही भय से कांपते हुए कौशिक (उल्लू) छिप गये। तभी जगरूपी सरोवर से तारा रूपी प्रफुल्ल कुमदों से उद्‌भासित रात्रि रूपी कुमुदिनी को प्रत्यूष

रूपी मातंग ने उन्मूलित कर डाला। शशी रूपी हंस पक्षी ने गमन की तैयारी की। सघनतम अंधकार रूपी गज का वैरी रवि रूपी सिंह उदयाचल के शिखर पर दिखाई दिया। पूर्व दिशा रूपी वधू के लीलाकमल के सदृश अरुणवर्ण रवि उद्भासित (उदित) हुआ। जैसे मानो वह योग का सौधर्मादि स्वर्गरूप फल हो, गगन रूपी अशोक का पुष्पगुच्छ हो, दिनश्री रूपी प्रवाल की बेल का कंद हो तथा नभश्री के भाल का केशरमय ललाम बिन्दु हो। तत्पश्चात् चौथे दिन नये घर को बांधा हुआ सूत का कंकन छोड़ा गया। अपनी वल्लभा के साथ खूब क्रीड़ा करते हुए व इच्छित कामभोग भोगते हुए बहुत दिनों के पश्चात् नयनों को आनन्ददायी सुदर्शन के पुत्र उत्पन्न हुआ, जो सुकान्त नाम से प्रसिद्ध हुआ। वह तरुणियों के नयनों व मन का अपहरण करनेवाला, लोगों को प्रसन्न करनेवाला मानों प्रत्यक्ष मकरध्वज ही था।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित, पंचनमस्कार के फल को प्रकाशित करने वाले सुदर्शनचरित में जिस प्रकार मनोरमा अत्यन्त विरहकातर हुई, जैसा विवाह, जैसा मनवांछित भोजन हुआ, दिनेश का अस्त तथा जैसी सुरतक्रीडा व सूर्योदय हुआ, इनका वर्णन करनेवाली पांचवी संधि समाप्त।

संधि ॥ ५ ॥

१. ऋषभदास का मुनिदर्शन

हे सखे, सरस, व्यंजन सहित, मोदकसार (माधुर्य-पूर्ण) तथा प्रमाणसिद्ध (उचित मात्रा में पका हुआ), ऐसा भोजन एवं काव्य-विशेष इस लोक में विरल (दुर्लभ) है।

फिर उसी अवसर पर समस्त संघ से परिवारित, मानों मुनि के वेष में तप के पुंज साधु समाधिगुप्त उपवन में आए। तब ऋषभदास उनकी वन्दना-भक्ति के लिए गया, जैसे हाथी पर बैठकर सुरेन्द्र जिन भगवान की वन्दना के लिये गया था। ऋषभदास के पूछने पर मुनिवर ने उस सिर से प्रणाम करनेवाले वणिग्वर को गृहस्थ धर्म का उपदेश दिया। आप्त, आगम और तत्वों में जो श्रद्धान किया जाय, उसी को सम्यक्त्व जानो। आप्त वह है जो अठारह दोषों से रहित हो। उन्हीं आप्त के द्वारा जो कहा जाय, वही सूत्र अर्थात् आगम होता है। सूत्र भी ऐसा होता है जो परवादियों के नयों से दुर्लंघ्य (अकाट्य) हो, पूर्वापर अविरुद्ध हो, एवं श्लाघ्य हो। जीव, अजीव, आश्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष, ये सात तत्त्व कहे गये हैं। इनमें जो कोई भव्य हैं, वे ही श्रद्धान करते हैं। कोई इनमें आजन्म भी श्रद्धान नहीं करते (वे मिथ्यात्वी हैं)। और क्या मिथ्यात्व के शिरपर सींग होते हैं? इसी मिथ्यात्व के कारण संघश्री मंत्री नरक में गया। क्या पाप से कहीं भी शान्ति मिल सकती है? सम्यक्त्व के बिना घोर और प्रबल तप संचय करने से शरीर का शोषण मात्र होता है। बहुत कहने से क्या, वह तप वैसा ही अकृतार्थ जाता है, जैसे दुर्जन जन के प्रति किया गया उपकार। जिस प्रकार वृक्ष का मूल व धड़ का सिर सारभूत अंग है, उसी प्रकार व्रतों का सार सम्यक्त्व है। इस प्रकार जो समझ लेता है, वह लाखों दुःख विनष्ट कर देता है। इसके पश्चात् मुनीन्द्र ने ऋषभदास को मूल गुणव्रतों का भाषण किया (व्याख्यान करके समझाया)।

२. मद्यपान के दोष

द्विविध पीपल (पीपल और पाकर) ऊमर, बट और फिफर (कठूमर), ये पांचो उदुंबर सूक्ष्म त्रस जीवों से युक्त होते हैं। इसलिए ये पांचों ही न खाने योग्य हैं और न देने योग्य; क्योंकि इनका आगम में निषेध किया गया है। मदिरा जब सड़ा कर बनाई जाती है, तब उसमें बहुत से सूक्ष्म जीव उत्पन्न हो जाते हैं। इसे जो पीता है, वह मनुष्य (उन्मत्त होकर) लोटता है, गाता है, नाचता है; सब जनों की निन्दा करता है, कपिलों (कुत्तों) की वंदना करता है, हँसता है, बिना बुलाए बोलता है; रेंगता है, कूदता है, युवतियों से लगता है,

माता से भी संग करता है, भौंहे मरोड़ता है, गर्जता व रेंकता है, विह्वल होकर मार्ग में जहाँ कहीं भी गिर पड़ता है, चिल्लाता है, पुकारता है, खोजता है, फाड़ता है, मारता है, रूँधता है, बाधता है, जूझता है, तथा मूर्छित होता है। मूर्च्छा युक्त होने पर कुत्ते उसे पुनः पुनः सूंघते हैं और लाँघकर उसके मुख में मूतते हैं। मद्यपान के कारण समस्त यादव कुल समाप्त हो गया, तथा चारुदत्त दुख-परंपरा को प्राप्त हुआ।

३. मांस-भक्षण के दोष

मद्य के दोष कह सुनाये, तुझ से छिपाये नहीं। अब, हे वणीश, मांस के दोष जैसे सुप्रसिद्ध हैं, वैसे मैं कहता हूँ, तू सुन। मांस, शुक्र और शोणित से ही उत्पन्न होता और पशुओं के वध से ही प्राप्त होता है। वह देखने में भी बीभत्स दिखाई देता है, तथा जिनेन्द्र के आगम में घृणित कहा गया है। उसमें जीव उत्पन्न होते हैं, जो दृष्टिगोचर नहीं होते। जो मांस इस प्रकार का होता है, उसे बुद्धिमान कैसे खावे? जो हीन मनुष्य मांस खाता है, उसके अहिंसा भाव नहीं हो सकता। एकचक्र नगर में जो बक नाम का प्रधान राक्षस था, वह मांस खाया करता था, जिसके कारण वह मरकर रौरव नरक में गया। पूर्वकाल में विप्र आकाश में गमन करते थे, किन्तु मांस खाने के कारण भूमि पर आ पड़े। कोई पशु के वध से व मांस-भक्षण से धर्म होता है, ऐसा कहते हैं। (हे गुणालय, यह तोमरेख पुष्पमाल नामक छन्द है।) यदि धर्म ही इस प्रकार का हो, तो पाप कैसा कहा जाय? यदि इसके द्वारा स्वर्ग की प्राप्ति हो तो जीव नरक किसके द्वारा जायेगा?

४. मधु-पान के दोष

वृक्षों से भयानक वन में मधुमक्खियों का छत्र देखकर, निर्दयी लोग उससे मधुरस निचोड़ते हैं, जो विष के समान है। उसे पीना योग्य नहीं। यदि भोजन में एक भी मक्खी दिखाई दे जाय, तो उससे सभी को घृणा हो जाती है। वे मुँह बनाते हैं, खूब थूकते हैं, तथा खाये हुए भोजन का भी वमन कर देते हैं। किन्तु, हाय, हाय, लोग कितने अज्ञान और मूढ़-बुद्धि हैं, तथा इस लोक और परलोक दोनों जन्मों के विरोधी हैं, कि वे जिह्वेन्द्रिय के वशीभूत होकर मक्खियों के छत्र के अंडे व वसा के रस को पी जाते हैं। कुछ लोग लोगों में घोषणा करते हैं कि मधु अति पवित्र है, वह अच्छा पोषण करती है और कुछ भी दूषण नहीं करती। मधु को शुचि शुचि कहते हुए लोग क्षय को प्राप्त हो जाते हैं। वे इस लोकाचार की ओर दृष्टि नहीं देते कि बारह गांव जलाने में जो पाप होता है वही पाप मधु निचोड़नेवाले को होता है। फिर जो जिह्वा का लोभी उसका भक्षण करता है, उसके पापों की संख्या कौन कह सकता है? प्राचीन काल में दुःख और

पाप को प्रकट करनेवाले कलिकाल में मधुबिंदु दृष्टान्त जन-प्रसिद्ध हुआ है। पांच उदुंबर एवं मद्य, मांस और मधु, इनका यदि त्याग किया जाय, तो ये ही श्री अरहन्त के आगम में अष्ट मूलगुण कहे जाते हैं।

५. जीवों के भेद व हिंसा से पाप

अब पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत तथा चार शिक्षाव्रत, जैसे जनमनानन्ददायी होते हैं, उन्हें, हे वणीन्द्र, सुनो। संक्षेप से जिनागम में जीवराशि सिद्ध और भवाश्रित (संसारी) के भेद से दो प्रकार कही गई है। सिद्ध अष्टगुणयुक्त और अनुपम एक प्रकार ही होते हैं। किन्तु भववासी जीव त्रस और स्थावर के भेद से दो प्रकार के जानना चाहिये। त्रस जीव क्रमशः द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय के भेद से चार प्रकार के हैं। और ये भी जल, थल और नभस्तल में उत्पन्न होने के कारण नाना प्रकार के हैं। त्रस जीव कर्म-प्रकृतियों के अनुसार नानाधर्मी होते हैं, जैसे गर्भज तथा सम्मूर्च्छिम, संज्ञी, व असंज्ञी, तथा पर्याप्त और अपर्याप्त। स्थावर जीव अनन्त हैं; तथा वे पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय व वनस्पतिकाय के भेद से पाँच प्रकार के कहे गये हैं। इनकी हिंसा करना तो दूर, हिंसा के चिंतन मात्र से पापी शालिसिक्थ (मत्स्य) मरकर घोर रौरव नरक में जा पड़ा। ऐसा भले प्रकार समझ कर जीवों का वध नहीं करना चाहिये, तथा दूसरे जीव को निश्छल रूप से अपने ही समान देखना चाहिये। इस पर भी उस मनुष्य को क्या कहा जाय, जो हिंसा करता है? (यह छंद हेला नाम द्विपदिका है)। यदि कहीं स्थावर जीव की हिंसा करना अनिवार्य ही हो, तो भी दूसरे अर्थात् त्रस-जीवों की हिंसा तो मन्त्र, औषधि तथा पितृ व देवकार्य के लिए भी नहीं करना चाहिये।

६. अमृषा आदि अणुव्रत व गुणव्रत

द्वितीय अणुव्रत के अनुसार, हे सुभग, ऐसी वाणी बोलना चाहिये जो निश्चय से अपने लिए तथा दूसरों के लिए हितकारी हो। मिथ्या भाषण से वसु राजा होकर भी नरक को प्राप्त हुआ। उसी प्रकार तृतीय अणुव्रत में, हे वणिग्वर, सुन, दूसरे का तृण समान भी धन हरण नहीं करना चाहिये। वणिग्वर के रत्नों का हरण करके श्रीभूति दुःख से संतप्त हुआ, मर कर नरक में गया। चौथे अणुव्रत में परस्त्री का परित्याग तथा अतिचंचल मन के प्रसार का रोक करना चाहिये। रावणादिक सभी यश के प्रसार को समाप्त करनेवाले पर-स्त्री की अभिलाष के कारण नरक में गए। पंचम अणुव्रत में परिग्रह का परिमाण करना चाहिये। 'स्फुटहस्त' लोभ के कारण चिरकाल के लिए नरक में गया। प्रथम गुणव्रत में, हे सुभग, यह स्पष्ट रूप से बतलाया गया है कि दिशाओं और विदिशाओं में गमन का सदा त्याग करना चाहिये। दूसरे गुणव्रत में रति त्याग तथा भोगोपभोग के परिमाण में संकोच करना चाहिये। तीसरे गुणव्रत में जो योग्य है, उसे मैं प्रकाशित

करता हूं। (यह मन्दचार छंद कहा गया है)। साकल, रस्सी, विष, अग्नि व अस्त्र-शस्त्र, इन्हें किसी को देना नहीं चाहिये तथा क्रूर जीवों की ओर मन में उपेक्षा करना चाहिये।

७. सामायिक आदि शिक्षाव्रत

रौरव नरक को उत्पन्न करनेवाले शल्यों, कषायों और मदों का भले प्रकार से त्याग करके चित्त में समता भाव धारण करना चाहिये, तथा दोषमुक्त धर्म का स्मरण करना चाहिये। इस प्रकार से पहला शिक्षाव्रत (सामायिक) होता है। दूसरा शिक्षाव्रत जैसा है, उसे मैं कहता हूं, सुनो। या तो निर्विकार उपवास करे, अथवा रूक्ष आहार, आम्ल आहार वा अर्द्धप्रमाण आहार करे। साथ ही शृङ्गार का त्याग व भूमिशयन करे। ऐसा चारों पर्वों में कामविकार को दमन करके करना चाहिये, ऐसा जानो। तीसरे शिक्षाव्रत में अपनी शक्ति के अनुसार सुखनिधान पात्र-दान देना चाहिये। जिन भगवान ने पात्र तीन प्रकार का कहा है—उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ। जिसने रत्नत्रयरूप परमलाभ प्राप्त कर लिया है और जो व्रतधारी है, ऐसा साधु उत्तम पात्र है। जो श्रावक है, वह मध्यम पात्र कहा गया है। तथा अविरत सम्यक्त्व का धारी हीन पात्र होता है। जो दृढ़तर मिथ्यात्व और मद से उन्मत्त है, वह संक्षेप से अपात्र कहा गया है। तीन प्रकार के पात्र को दान देने से तीन प्रकार का (उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ) फल प्राप्त होता है; जिस प्रकार कि भिन्न-भिन्न पुरुषों के संसर्ग से शील भिन्न प्रकार प्रगट होता है।

८. पात्र-दान का स्वरूप और फल

अग्गिला नाम की ब्राह्मणी पात्रदान देकर दुःखविनाशिनी, यक्षों के कटाक्षों की लक्ष्य तथा देवों और मनुष्यों द्वारा प्रशंसनीय यक्षिणी हुई। पात्रदान के विशेष माहात्म्य से श्रेयांस ने रत्नों की वर्षा प्राप्त की। ऐसा जान कर शीलसंयुक्त परमोत्तम-पात्र को दान देना चाहिये। जिनमन्दिर में, अथवा मार्ग में, अथवा प्रांगण में, सन्तुष्ट मन से उसकी पड़गाहना करके शुचि प्रदेश में उच्चासन देना चाहिये, और उसके दोनों चरणकमल धोने चाहिये। फिर उस जल की वन्दना करके साधु की विधिवत् अर्चना करना चाहिये। उन्हें प्रणाम करना चाहिये और मन-वचन-काय की शुद्धि सहित भावना करनी चाहिये। इस प्रकार जो दान दिया जाता है, वह अविचल तथा वट-बीज के समान बहु फलवान होता है। अपात्र को दिया दान वैसा विफल जाता है, जैसे ऊसर क्षेत्र में बोया हुआ बीज। सुवर्ण, रत्नसमूह, शयन, आसन, धन, धान्य, भवन, भोजन तथा वस्त्र, यह जो कुछ दीन-दुखियों को दिया जाता है, वह कारुण्य-दान कहलाता है। परिग्रह का परित्याग कर, सन्यास ग्रहण करना चाहिये। यह चौथा शिक्षाव्रत कहा गया है। इन श्रावक व्रतों का पालन करके मनुष्य स्वर्ग जाता है, और वहां चंचल हारों और मणियों से भूषित रमणियों का रमण करता हुआ चिरकाल तक रहता है।

९. रात्रि-भोजन के दोष

स्वर्ग से च्युत होकर वह देव उत्तम मनुष्य होता है और सुख भोग कर, फिर तप रूपी अग्नि से तप्त हुआ, कर्मरहित होकर, परम मोक्ष का लाभ पाता है। रात्रि-भोजन के कारण व्रत शोभा नहीं देते। खलजन के प्रति किये गये उपकार क्या हित करेंगे? जिस प्रकार पर्वतों में मंदर पर्वत श्रेष्ठ है, उसी प्रकार व्रतों में रात्रि-भोजन-त्याग सारभूत है। किन्तु लोग अपने मन में योग्यायोग्य का विचार नहीं करते और गाडर-प्रवाह से (भेड़िया-धसान, लकीर के फकीर बन कर) चलते हैं। वे मूर्ख सूर्यास्त हो जाने पर भी भोजन करते हैं; नियम लेकर नही रहते। यदि मनुष्य रात्रि का भोजन नहीं छोड़ते, तो पशुओं और मनुष्यों में अन्तर ही क्या रहा? रात्रि के समय में भूत-राक्षस मिलते हैं, और दृष्टि के अगोचर रहते हुए ही भोजन निगल जाते हैं। रात्रि के समय भोजन में मल, धूल व बाल तथा प्रलयकाल दिखाने वाला सर्पविष, कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। यदि भोजन में घिरिहोल (मक्खी) आदि कीट-पतंग प्रविष्ट हो जाय, तो अदृश्य रोग उत्पन्न होना संभव है। और भी जो दूसरे जीव भ्रमण करते रहते हैं, वे भोजन में अवश्य ही आ गिरते हैं। हृदय के अन्धे इन्हें भी मोड़-माड़ कर खा जाते हैं। इस प्रकार के सैकड़ों दोष स्पष्ट ही रात्रि-भोजन में होते हैं। इसे बूझ कर (समझ कर) हलाहल विष खाना अच्छा, किन्तु शील छोड़ कर रात्रि को भोजन करना अच्छा नहीं।

१०. रात्रि-भोजन से अन्य सब साधनाओं की निष्फलता

हाय, हाय, लोग कैसे मूढ़ और पापग्रस्त हैं कि वे अपना हित भी नहीं जानते। यदि रात्रि को भोजन न किया जाय, तो क्या यह शरीर सहसा ही क्षीण हो जायेगा, या मर जायगा? चाहे पंचाग्नि तप करो, सुहावना पूजा-पाठ करो, जलती हुई अग्नि में चढ़ो या भयंकर पर्वत से नीचे गिरो (भृगुपात करो)। चाहे गजकनखल (तीर्थ) को जाओ, चाहे गंगाजल में स्नान करो, शरीर का मल दूर करो और सिर में गुग्गुल लगाओ; तिल जौ, व घृत का होम दो, तथा सैकड़ों द्विजवरों को प्रणाम करो। चाहे शत्रुओं से कलह करके गोग्रहण में मरो, चाहे ब्राह्मण धर्म का उपदेश दो, चाहे गुरु से दीक्षा लो। चाहे हर (महादेव) की अर्चना करो, और उनके आगे नाचो। इस प्रकार शरीर को चाहे जितना क्षीण करो, किन्तु यदि रात्रि-भोजन किया गया, तो फल कुछ न होगा। (यह अमरपुर-सुन्दर नामक उत्तम छंद है।) जिस प्रकार दूध से भरे हुए घट को सुरा का एक बिन्दुमात्र विनष्ट कर डालता है, उसी प्रकार रात्रि-भोजन से तप का महाफल नष्ट हो जाता है।

११. रात्रि-भोजन के कुपरिणाम

जो मूर्ख जानकर भी त्याग नहीं करते और रात्रि को भोजन करते हैं, वे अगले भव में निरंतर दुःख पाते हैं और धनहीन होते हैं। वे मनुष्य अति,

क्षुद्रकाय, कर्कश-स्वर, कृष्णशरीर, रक्तनेत्र, यमराज जैसे दीर्घदंत, वक्रमुख, छिन्न-ओष्ट, उर्ध्वकेश, स्थूल-नास, कनफटे, फटेपांव, काने, टूंठे (हथकटे) लँगड़े, मंट (बौने), हिंसा के स्थान, मांसभक्षी, पापकर्म और हीनकर्म होते हैं; और हा हा श्वासे भरते हैं (दुःख से संतप्त होते हैं)। तो भी वे जीवन भर न धर्म लेते और न पाते। जहां कुछ सुख देखते हैं, वहां जाते हैं, और खान-पान मांगते हैं। वे चंडिका देवी के आगे जाकर पड़ते हैं, और गिड़गिड़ाते हैं:— हे देवि, आ, और कुछ कार्यसिद्धि दे। किन्तु उन मानवों को कोई पुण्यलब्धि तो है नहीं (अतएव वे पावे कैसे ?) (इसे कामबाण छंद जानो)। पुण्यहीन मनुष्य अहर्निश उद्यम करके अपने को संतापित करता है, तो भी अणुमात्र भी सुख नहीं पाता।

१२. रात्रि-भोजन का फल दरिद्रता

वे लक्ष्मी से विहीन मनुष्य जीर्ण कोपीन धारण किए हुए, करुणा के पात्र, हाथ में लाठी लेकर भीख माँगते हुए महीतल पर भ्रमण करते हैं। वे सूखी-रूखी भिक्षा भी नहीं पाते। वे प्रेषण (चाकरी) करते हैं, कुछ भी ले जाते हैं; (बोझा ढोते हैं), गर्जना सहते हैं, पानी भरते हैं, घर झाड़ने-बुहारते हैं, दोनों पैरों को नमस्कार करते हैं, तब कहीं कुछ धान्य का भुसा पाते हैं, उसे चूर्ण करके पकाते हैं, और घर के कोने में बैठकर खाते है। बालक उनकी हँसी उड़ाते हैं। वे अघाते नहीं, क्लिष्ट जीवन व्यतीत करते हैं, क्रन्दन करते हैं, और अपना सिर धुनते है। रुष्ट होकर चल देते हैं, और देशभर में घूमते हैं। धन की अभिलाषा करते हैं, किन्तु आर्त्तध्यान से ही मरते है। (इसे स्पष्ट चन्द्रलेखा छंद मानो)। ऐसा जानकर जो रात्रि-भोजन का त्याग कर देते हैं, वे दोष-मुक्त होकर सूर्य के समान उद्भासित होते हैं।

१३. रात्रि-भोजन-त्याग से उत्पन्न सुख

रात्रि-भोजन-त्याग का व्रत पालने वाले संपूर्णांग-मनोहर, विमल यशधारी, सूर्य के समान तेजस्वी, सहस्रों आपत्तियों से रहित, देवों द्वारा पूज्य इन्द्रोपम होते हैं। वे शरीर से सुन्दर, मेरु के समान सुधीर, भीषण समरांगण में अद्वितीय वीर, अस्खलित प्रताप, गम्भीरध्वनि, त्रैलोक्यप्रसिद्ध महानुभाव होते हैं। वे अपने शत्रुओं के कृतान्त (काल), महाऋद्धिवान, मकरध्वज के समान सौभाग्यशाली होते हुए दर्पोद्भट व जयश्री-लंपट, सशस्त्रभटों द्वारा सेवित होते हैं। वे मद से घूमते हुए मन्थरगति, सुलक्षण गजवरों पर आरूढ़ होते हैं। उन पर देवों को भी सन्तोष देनेवाले दैदीप्यमान नाना चँवर ढोले जाते हैं। जनमनोहारी, मधुर-स्वर, सैकड़ों श्रेष्ठ गायक उनका गान करते हैं, तथा मनमोहक गजगामिनी भामिनियां उनका सम्मान करती हैं। और भी जो कुछ इस संसार में निर्दोष (सुख) दिखाई देता है, उस सबको, हे सुन्दर, अनस्तमित व्रत का ही फल जानो।

१४. स्त्रियों को रात्रि-भोजन-त्याग के सुफल

जो युवती भी बहुरसात्मक रात्रि-भोजन को विष के समान त्याग देती है, वह आकाश के समान निर्मल व पवित्र उत्तम कुल पाती है। उसके केश घुँघराले, चन्द्र के समान मुख, मृग जैसे नेत्र, स्निग्ध (चमकीले) दांत, लाल ओष्ठ, मधुर स्वर, किसलय सदृश भुजाएँ, कलश जैसे सघन स्तन, क्षीण कटि एवं गुरु नितम्ब होते हैं। वह लोगों में अनुराग उत्पन्न करती है। उसकी गति हंस के समान होती है। वह नई बेल के समान लहलहाती व कोमल होती है। वह समस्त अवयवों में सुलक्षण व विद्वानों द्वारा स्तुत्य होती है। वह श्री (लक्ष्मी) के समान नरेन्द्र की प्राणप्रिया बनती है। उसे यान, पालकी, ध्वजा व मत्तगज तथा उत्तम तुरंग, बड़े बड़े रथ, भटसमूह एवं विविध पुष्पों, फलों तथा पत्रों से सघन उपवन प्राप्त होते हैं, जहां वह मनोहर सहचरियों के साथ क्रीड़ा करती है। (यह रत्नमाला पद्धडिया नामक छन्द प्रकट किया गया है)। इस प्रकार सैकड़ों सुखों को भोगकर, वह वैराग्य धारण कर तप पालती है, और दूसरे की बात क्या, स्वयं इन्द्र के इन्द्रत्व को ढा देती है (जीत लेती है)।

१५. स्त्रियों के रात्रि-भोजन से दुष्परिणाम

किन्तु जो स्त्रियां कुगुरु और कुदेव की भक्त हैं, तथा मद से प्रमत्त होकर रात्रि-भोजन करती हैं, वे मर कर कात्यायनी के समान दुर्निरीक्ष्य (कुरूप) होती हैं। वे रति-लंपट, रंडी, मुंडी, चेटी, दासी, चिपटीनाक, विकृतभाल, पिचके गाल, चौंधे नेत्र, लंबे दांत, हड्डियों से विकराल, कोयले जैसी काली, लंबे स्तनों वाली एवं असुहावनी होती हैं। वे टूंठी, लंगड़ी, मोटी, छोटी, बहरी, अंधी, अतिदुर्गन्धी, कामकाज मात्र करने वाली, पराई चाकरी मात्र करने वाली, बुरी लगने वाली, हीन, दीन, कर्म-शिथिल, मैली, कुचैली, कलहशील, भिखमंगी होकर दुःख सहती हैं। इसी अवस्था में चिरकाल तक रहती हैं। सुख की इच्छा करती है। देव पर (या अपने पति पर) रुष्ट होती हैं और अपने को कोसती हैं। इतने पर भी वे मूढ़ पाप में फँसी हुई त्रिभुवनरम्य धर्म में नहीं लगती।

तत्पश्चात् वणिग्वर ऋषभदास के पूछने पर मुनिवर ने कोई बात छिपाई नहीं और उन्होंने अन्धकूप के दृष्टान्त द्वारा जीव के सुख-दुःख का व्याख्यान किया।

१६. मधु-बिन्दु दृष्टान्त

कोई एक मनुष्य वृक्षों से सघन वन में गया था। वहाँ वह भटक गया और भीलों के मार्ग में पहुँचा। वहाँ उस पर एक शुंड उठाए, गुड़गुड़ाते हुए मदोन्मत्त हाथी ने दौड़कर आक्रमण किया। गज से भयभीत होकर वह मनुष्य भागा, किन्तु उसे कहीं शरण नहीं मिला। जब वह हाथी उस मनुष्य को

पकड़नेवाला ही था, जैसे सिंह हरिण पर झपटे, तब वह बेचारा अरण्य में एक अन्धकूप को देखकर प्रयासपूर्वक दृढ़ काशतृण को पकड़कर उस कूप में लटक गया। त्रस्त होकर जब उसने नीचे को देखा, तो उसे वहां एक अजगर दिखाई दिया और उसने चारों कोनों में चार प्रचंड सर्प भी देखे। वह जिस काश से लटका हुआ था, उसे एक काला और दूसरा श्वेत, ऐसे दो मूषक प्रयासपूर्वक काट रहे थे। इसी बीच वह हाथी दौड़ता हुआ वहां आ पहुँचा और उस मनुष्य को न पाकर, तथा उस अन्धकूप के तटपर एक वृक्ष को देखकर, उसने उस पर दांत से आघात किया। इससे वह वृक्ष कांप गया और उसकी शाखा से मधुमक्खियों द्वारा संचित मीठा मधु झरकर नीचे गिरा। मधुमक्खियों की भिनभिनाहट का शब्द सुनकर अन्धकूप में लटके हुए उस मनुष्य ने झट अपना मुख ऊपर किया। (यह सोलह और दस कलाओं से युक्त विषमपद पादाकुलक छन्द है।) जब वह मनुष्य ऊपर को देख रहा था, तभी खल्वाट-बिल्व संयोगवश (काक-तालीय न्याय से) उसकी जीभ पर एक मधुबिन्दु आ पड़ा। इसे वह अनुराग से चाटने लगा।

१७. दृष्टान्त संसार का रूपक

अब वह मधुमक्खियों का झुंड क्रुद्ध होकर उसकी समस्त देह पर आ लगा, जिस प्रकार कि, कुपूत को अपयश, चन्दन-वृक्ष पर सर्प तथा नीच घर में धूर्त आ लगता है।

इस दृष्टान्त में काननरूप यह संसार है और वह मनुष्य रूप ही जिननाथ द्वारा जीव कहा गया है। भिल्ल-पथ अधर्म का उपलक्षण है, तथा, हे वणीश्वर, वनहस्ती ही मृत्यु कहा गया है। अन्धकूप यह बहुत से दुखों का भाजन देह है। अजगर ही भयावना नरकवास है। चार सर्प अति दुर्धर कषाय हैं, जो जगत को डस रहे हैं। उनसे जीव कैसे छूट सकता है? काश का पुंज आयु है, तथा हे मतिदत्त, काले और श्वेत मूषक, कृष्ण और शुक्ल दो पक्ष हैं। वृक्ष अति दुश्चल कर्मबंध है, तथा मधुबिन्दु चञ्चल इन्द्रिय-सुख हैं। मधुकरियां अप्रमाण व दुस्सह व्याधियां हैं, जो उस मुख उठाए मनुष्य को पीड़ा देती हैं। यह सब जानते हुए भी जीव इसकी अवहेलना करता है, जिस प्रकार कि अशुचि कृमि अशुचि में ही रति मानता है। इस प्रकार इस निस्सार संसार में तप ही परमसार है, जिसके द्वारा हे वणिग्वर, भव भव में किया हुआ कर्ममल नाश को प्राप्त होता है।

१८. सेठ का स्वपुत्र को लोक-व्यवहार का शिक्षण

जिनेन्द्र भी गृहस्थ होते हुए चरित्रहीन अवस्था में ध्यान को प्राप्त नहीं होता, और ध्यान के बिना मनुष्यों को मोक्षरूपी मनोहर नगर पाना दुर्लभ है। मुनि का यह उपदेश सुनकर, वणीन्द्र निर्वेद को प्राप्त हो, वहाँ से लौटा और अपने

घर आया। उसने अपने पुत्र सुदर्शन को संक्षेप में समस्त जनप्रसिद्ध लोक-व्यवहार समझाया। नारियों के दोष ढांकना चाहिये। जो चित्त में हो वही बात बोलना चाहिये। आर्य लोगों के प्रति दाक्षिण्य (सौजन्य) रखना चाहिये, तथा दुष्ट वैरियों के प्रति पराक्रम प्रकट करना चाहिये। गुरुजनों के प्रति विनय और भक्ति दिखलाना चाहिये। विनय से ही लक्ष्मी और कीर्त्ति की प्राप्ति होती है। साधु पुरुषों की सत्य, शौच व निर्मत्सर भाव से रक्षा करनी चाहिये। धर्मी जनों में उनके अभिप्रायानुसार बर्ताव करना चाहिये। अपना काम निकालने के लिए गधे को भी गुरु के समान मानना चाहिये। गर्वीले मनुष्यों के प्रति उनसे भी अधिक गर्जना चाहिये। पापिष्ठ जनों का संग भी त्यागना चाहिये। अपना मर्म किसी को कहना नहीं चाहिये। शरण में आये हुए जीव की रक्षा करना चाहिये। राजकुल और देवकुल की सेवा करना चाहिये। क्रोध, मान और माया का शमन करना चाहिये। कोपाधीन मनुष्य तथा मानी, बहुत मायाचारी एवं लोभाक्रान्त मनुष्य किसी को भी प्यारा नहीं होता।

१९. राजसभा योग्य आचरण

जो अपने मर्म को प्रकट नहीं करता, गुणों का प्रकाशन करता है, एवं ठीक प्रयोजनानुसार चलता है, वह दुर्लभ मनुष्य, देवों को भी प्यारा है, तब मानवों को क्यों न हो? और भी, हे सुन्दर, नयनानन्ददायी (वत्स), नरपति के आगे उसकी सेवा में स्थित होते हुए निम्न बातें नहीं करना चाहिये। दूसरों को धिक्कारना, पांव पसारना, अधमिची आखों से देखना, भौंहें चलाना, हाथ-पांव मोड़ना, अंगुलिया चटकाना, लोगों का उपहास करना, वक्तृता बघारना, खांसना, जम्हाई लेना, आसरा लेकर खड़े होना, केश सँवारना, अंग सजाना, दर्पण देखना, आत्म-प्रशंसा करना, स्वेच्छापूर्वक बोलना, नाक फुलाना, दांत पीसना, दुष्ट क्रीडा (कुचेष्टा) करना, आसन खिसकाना या ठोकना, अंग मरोड़ना तथा दुष्टों की निन्दा करना। इनके अतिरिक्त और भी जो जो बातें सेवाभाव को कलंकित करनेवाली हैं, उन सब को त्यागना चाहिये। अब मैं तो बहुत से सिद्धों से व्याप्त वन में जाकर प्रवेश करता हूँ, तथा अपनी समस्त सम्पत्ति का परित्याग करता हूँ। (यह बुधजनों का नयनरूप मदन छन्द है)। इस पर सुदर्शन ने हंसकर कहा—आपके परोक्ष में मेरे इस घर में निवास करने से क्या लाभ?

२०. ऋषभदास की सुदर्शन को गृहभार सौंपकर मुनि-दीक्षा और स्वर्ग-गमन

मैं भी महाकषायों को जीतनेवाला व संसार का अन्त करनेवाला सुदुर्द्धर तप करूँगा। इस पर उसके पिता ने कहा—हे पुत्र, तू तो अभी राजप्रासाद का उपभोग कर, जो इस भुवन में प्रिय है। हे पुत्र, यदि मेरे समान तू भी

जन्म, जरा व मरण रूपी बंधनों का क्षय करनेवाला तपश्चरण ग्रहण कर लेगा, तो फिर यह कुल किसका मुख देखकर रहेगा? तू ही हमारे कुल का तिलक है। तू ही श्रेष्ठ पुरुष रूप रत्न है। तू ही एक मात्र सुहृद्जनों के हृदय को ढाढ़स बंधानेवाला है। तुझे छोड़कर और कौन है जो इस घर के भार रूपी धुरे को धारण कर सके। जो अज्ञानवश खोटी बातें करके गालियां देता है, तथा रो-रो कर माता से भोजन मांगता है, ऐसे अपने छोटे से पुत्र को छोड़कर जाना क्या तेरे लिए योग्य है? तू अभी जिनभवन निर्माण करा, तथा जिनाभिषेक, जिनपूजा व जिनस्तुति कर। अप्रमाण और सुपवित्र मुनिदान दे; एवं जिनवरों ने जिनशासन में जो कुछ उपदेश दिया है, उसके अनुसार कर। जो कोई मनोहर जिन-मन्दिर निर्माण कराते हैं, वे अन्य जन्म में चिरकाल तक देवगृहों में रमण करते हैं। जो कोई श्रद्धापूर्वक जिनाभिषेक करते हैं या कराते हैं, वे स्वयं भी मेरुपर्वत के शिखर पर अभिषेक पाते हैं। जो भक्ति पूर्वक मनोज्ञ जिनपूजा करते हैं, वे इस संसार में देवों, मनुष्यों एवं नागों के पूज्य बनते हैं। जो जगत्रूपी कमलसरोवर के सूर्य, जिनेन्द्र भगवान की स्तुति करते हैं, उनकी दो सहस्त्र जिह्वाओं द्वारा नागेन्द्र स्तुति करता है। जो शक्तिअनुसार, भक्तिपूर्वक मुनियों को दान देते हैं, वे भोग-भूमियों में सुख भोगकर स्वर्ग जाते हैं। (यह मदनावतार छन्द है)। इस प्रकार अपने पुत्र को उपदेश देकर पश्चात् सुदर्शन के माता-पिता धर्म में आनन्द मानते हुए, समाधिगुप्त मुनि के चरणों को नमस्कार करके तथा तपस्या करके देवलोक को गए।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पंचणमोकार के फल को प्रकाशित करने वाले सुदर्शनचरित में, वणीन्द्र को नंदनवन में मुनिवर द्वारा उपदिष्ट अणुव्रत, गुणव्रत तथा चार शिक्षाव्रत एवं अनस्तमितव्रत तथा ऋषभदास का स्वर्गगमन, इन का वर्णन करनेवाली छठी संधि समाप्त।

संधि ॥ ६ ॥

संधि ७

१. सुदर्शन का सुखी जीवन

पिता के स्वर्ग चलेजाने पर सुदर्शन देव के समान भोग भोगता हुआ तथा शंसा पाता हुआ रहने लगा। कभी वह शक्ति-अनुसार मुनियों के समूह को शुभदान देकर सत्पुण्य लेता कभी भक्ति से जिनेन्द्र का स्तवन, महापूजन व अभिषेक करता। कभी सर्वज्ञ के मन्दिर को जाता व स्वयं जिनेन्द्र के उच्च मन्दिर बनवाता। कभी दिव्य आभरणों से शोभायमान हुआ स्तुति करते हुए वैतालिक-वृन्द द्वारा सेवित होता। कभी सरस नाटक देखता व सुखदायी गीत-गान सुनता। कभी क्रीड़ाघर में विचरण करता हुआ मनोज्ञ चौज (विनोद) द्वारा अपनी प्रिय-पत्नी को वशीभूत करता। कभी हास्य में रोष दिखलाता, अथवा रिझानेवाले आलापों द्वारा सन्तोष उत्पन्न करता। कभी थोड़ा हितकारी वचन बोलता और अपने सुकान्त पुत्र को शिक्षा देता। कभी नाना प्रकार के कार्य में गुंथ जाता और अनेक संकल्प-विकल्प करता। इस प्रकार वह वणीन्द्र चतुरों के बीच मनो-वांछित क्रीड़ा करता। (यह वंशस्थ छंद है)। इस प्रकार अन्तिम कामदेव सुदर्शन उत्तम विनोद करता हुआ रहने लगा, और वह पुण्यवान् राजा का प्रसाद पाने लगा।

२. सुदर्शन पर कपिला का मोह

अपनी सुन्दर वाणी द्वारा त्रैलोक्य का रंजन करनेवाले उत्तम यशस्वी संयमी शिक्षा देते हैं। किन्तु जो लोकप्रिय है, उसको क्या शिक्षा दी जाय? लोक में शुभ और अशुभ प्रत्यक्ष ही दिखाई देता है। धर्म का कितना फल वर्णन किया जाय? क्या हाथ के कंकण को आरसी में देखा जाता है? दर्शन व स्पर्शन की बात छोड़ो, किसी के विषय में सुनने मात्र से ही उसमें स्नेह हो जाता है। कपिल भट्ट पुरोहित की प्रिय पत्नी कपिला ने सुदर्शन के सौन्दर्य की बात सुनी, तब वह मृगलोचना, हंसगामिनी कामदेव के बाणों से आहत हो गई। वह बार-बार अटपटी वाणी बोलती, विह्वल होती व क्षण भर में कांप उठती। फिर एक क्षण में रोमांचित होकर पसीने से व्याप्त हो जाती। (ठीक है) विरह भी एक सन्निपात ज्वर समझा जाता है। उसका सराग मन सब दिशाओं में ऐसा दौड़ता, जैसे हाथी के पांव से मर्दित हुआ तुच्छ जल। कौन ऐसा है, जो स्नेह से संतापित और पवन द्वारा ध्वजापट के समान कंपायमान नहीं हुआ? (कपिला) अपनी सखी से कहती—"हे सखि, मुझे मालव, देशी, गौडी व हिन्दोला राग नहीं सुहाता। विरही के नेह का उपशम करनेवाले कामदेव के पंचमवाण सदृश भावपूर्ण पंचमराग गा।" कपिला के वचनानुसार सखी ने पंचम राग गाया। किन्तु उससे और भी विशेषरूप से उसके हृदय में कामदेव का बाण प्रविष्ट हो गया।

३. कपिला की विरह-वेदना

सुदर्शन से उत्पन्न होनेवाले सुख की लोभी व परोक्ष राग में अनुरक्त उस मुग्धा ने श्वासें छोड़ते हुए तोरण खंभ का सहारा लेकर, अपनी सहेली के आगे कहा—"हे बहिन, तू मेरी वेदना को नहीं जानती, और यदि जानती है, तो भी उसे नहीं ले आती जो सज्जनों के मन और नयनों को आनन्ददायी है; जो ऐसा सुन्दर है, जैसे मानो गोविन्द का पुत्र (प्रद्युम्न) ही हो; जिसने इस नगर की समस्त गणिकाओं को पुष्पबाणों से घायल कर रखा है। ऐसे उत्तम गुणवान उस सुदर्शन को जिसने नहीं पाया, उस स्त्री का जीव स्पष्टतः अतिशय पापी है। उसके विरहानल से, हे सखि, मेरा शरीर ऐसा जल रहा है, जैसे अग्नि द्वारा जीर्ण तृण जले। चन्द्र भी मेरे मन को भाता नहीं है। यह जानकर अब जो तुझे भावे सो कर।" तब उस सहचरी ने मार्ग से जाते हुए सुदर्शन को देखा, तथा हँस कर कपिला को कहा (दिखलाया)।

४. सुदर्शन से कपिला की भेंट और निराशा

उस (कपिला) ने भी उसे स्निग्ध दृष्टि से देखा, और चित्त में अनुराग से हर्षित हो कर कहा—"हे सखि, अपने मनीष्ट के दर्शन से जो सुख होता है, वह किसी दूसरे के स्पर्शन से गाढ़ा नहीं होता। इसलिए, हे सखि, यदि तू मेरी वेदना को जानती है, तो जाकर और प्रिय वचन बोलकर, उस प्रियतम को घर में ले आ।" सखी गई और बोली—"हे पंकज-दल-लोचन, तुम्हारे मित्र के मस्तक में आज वेदना बढ़ रही है।" यह सुन कर वणिग्वर बिना किसी विकल्प (शंका) के शीघ्र ही उसके घर के भीतर प्रविष्ट हुआ। किन्तु जब उसे इधर-उधर देखने पर भी अपना मित्र दिखाई नहीं दिया, तब उसने पूछा कि पीड़ित कपिल कहां है? तब कपिला ने उस कामदेव को हाथ से पकड़ कर कहा—तेरे विरह में परवश होकर मैं प्रति दिन ऐसी क्षीण हो रही हू जैसे यहां कृष्णपक्ष में चन्द्रकला। तुम दिशाओं में (इधर उधर) क्या देखते हो? मेरे ऊपर दया करो। हे सुभग, मेरा चुंबन करके मुझे गाढ़ालिंगन दीजिये। कपिला और कोई बात समझती ही नहीं थी। वह तो केवल रति-सुख की वांछा करती थी। यह अहाना (कहावत) सच है कि 'अर्थी दोष नहीं देखता' (अर्थी दोषं न पश्यति)। तब सुदर्शन बोला—"हे सुंदरि, क्या तू नहीं जानती, तो ले, अपने हितार्थ मेरे मर्म की बात सुन; किन्तु यह किसी दूसरे को कहना मत। मैं पंढ (नपुंसक) हूं, सो जान ले। केवल बाहर से मैं इन्द्रवारुणि (इन्द्रायन-इंदोरन) के फल जैसा सुन्दर दिखाई देता हूं।" इस पर कपिला ने तुरन्त विरक्त हो कर, उस वणीन्द्र को छोड़ दिया। (यह 'मागध-नकुडिया' नाम का छन्द है)। उसी अवसर पर जिनके पति दूर हैं, ऐसी महिलाओं के मन को संतप्त करने वाला सुहावना वसन्त मास आया।

५. वसन्त का आगमन

वसंतराज का अग्रगामी मंदसुगंध मलयाद्रि का पवन हृदय में क्षोभ उत्पन्न करता हुआ प्रसारित होने लगा, और मानिनी महिलाओं के मान का मर्दन करने लगा। जहाँ जहाँ मलयानिल चलता था, वहां वहां मदनानल उद्दीप्त होने लगता। जहां सुन्दर अतिमुक्तलता का पुष्प विकसित हो, वहां भ्रमर क्यों न रस का लोभी हो उठे? जो मंदार पुष्प से अत्यन्त कुपित होता है, वह अपने को कुटज पुष्प पर कैसे समर्पित कर सकता है? भ्रमर भूल कर, श्यामल, कोमल, सरस और सुनिर्मल कदली को छोड़ कर, निष्फल केतकी के स्पर्श का सेवन करता है। ठीक है, जो जिसे रुचे, वही उसे भला है। महकता हुआ तथा विरहिणियों के मन को दमन करता हुआ प्रफुल्लित दमनक किसे इष्ट नहीं है? जिनालयों में सुन्दर पूजा-नृत्य प्रारम्भ हो गये और तरुण विकारयुक्त (शृंगारात्मक) चच्चरी नृत्य करने लगे। कहीं उत्तम हिंडोला गाया जाने लगा, जो कामी जनों के मन को डावाडोल करता है। अभिसारिकायें संकेत को जाने लगीं। जिनके पति बाहर गए हैं, वे अपने कपालों को पीटने लगीं। पथिक अपनी प्रियाओं के विरह में डोलने लगे, जैसे मानों मधुमास ने उनको भुलावे में डाल दिया हो। ऐसे समय में पुष्पों और फलों के समूह से युक्त करंड लेकर वनपाल तत्क्षण राजा की सभा में आ पहुंचा।

६. नाना वादित्रों की ध्वनि

नरेन्द्रों के चूडामणियों से जिसके पांव घिसते थे, ऐसे राजा को अष्टांग नमस्कार करके उस वनपाल ने कहा कि मनोज्ञ उद्यानवन खूब फूल उठा है, और भृङ्गावली वहां एकत्र हो गई है, जिससे वह उपवन शोभायमान है। इसी समय राजा को मार्दलों की धुमधुम ध्वनि सुनाई दी। कांस कनकनाने लगे। विशेष दुंदुभियों की गंभीर दुमदुम-ध्वनि हो उठी। डंद दुमदुमाने और तिउल ढमढमाने लगे। कंसाल-युगल निरन्तर सलसलाने लगे। ताल रणझणाए और ढुक्कों की त्रं त्रं ध्वनि होने लगी। डमरू डमडमाए और डक्का डनडनाए। करड-समूह के थरथरिरे थरथरिरे शब्द तथा झिंझिरि (झांझ) का झिंझिझिंझिं शब्द सुनाई पड़ने लगे। पटहों के थगेदुगेगे थगेदुगेगे, तखेतखिखे शब्द सुनाई दिये। सुन्दर तटखुंदों की किरकिरिरि-किरकिरिरि ध्वनि तथा हाथों में लिये झल्लरियों की झिमझिम ध्वनि फैलने लगी। रुंज रंजुन्, भंभं भंभा, काहल तुरतुर और शंख हूहू ध्वनि करने लगे। ये और अन्य बहुविध-असंख्य तूर्य, आनन्द से पूरित हुए वादक गण अपना अवसर देख सहसा बजाने लगे। (यह मदनावतार नाम का छंद है)। यह तूर्य का निनाद सुनकर शत्रुओं की सेनाएँ मूर्छित हो गयीं, तथा समस्त दिग्गज और दिक्पाल मदहीन हो गये।

७. राजा और प्रजा की उपवन-यात्रा

इस प्रकार के रव से भुवनव्यापी वसन्तोत्साहकारी सुन्दर वाद्य-ध्वनि को सुन कर राजा हर्ष से प्रफुल्लित हो उठा और नगर से निकल कर उद्यानवन की ओर

चल पड़ा। उद्यान-क्रीड़ा में मन लगा कर राजा बुद्धिमानों सहित चलता हुआ ऐसा सुशोभित हुआ जैसे देवों से संसेवित इन्द्र। अन्तःपुर से अलंकृत अभया नाम की रानी भी चली, जैसे इन्द्राणी देवी चल पड़ी हो। कांतिवान, पृथ्वी-मंडल को आनन्ददायी सुदर्शन भी चलते हुए ऐसा शोभायमान हुआ, जैसे जड़ा हुआ हीरामणि। अपने सौभाग्य से रोहिणी को भी तिरस्कृत करने वाली गृहिणी मनोरमा हर्षित हुई चली। उसका सुकान्त नामक पुत्र भी क्रीडा में उत्साह रखता हुआ, अपने सहचरों से अलंकृत होकर चल पड़ा। सेठ का मित्र, जनप्रिय तथा अपनी ऋद्धि में माधव के सदृश कपिलभट्ट भी चला, और उसकी लक्ष्मी के सदृश, अल्पोदरी (क्षीणकटि), कमलपत्राक्षी कपिला नाम की प्रिया भी चली। तथा समस्त लोक मन में सन्तुष्ट हुए चल पड़े (यह उर्वशी नामक छन्द शोभायमान है)। उस नानाप्रकार के वृक्षों से सघन वन में राजा के पहुंचने से ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे मानों नन्दन वन में देवों का आगमन हुआ हो।

८. वनकी वृक्षावली का विलासिनी सदृश सौन्दर्य

जिस प्रकार महान् स्वरयुक्त, विशेषपात्रों से भूषित, चूने से पुते हुए महल (सुधालय) निवासी, उत्तम कविगणों से सेवित, शुभ लक्षणों से अलंकृत और सुन्यायशील राजा शोभायमान होता है; तथा जिस प्रकार महावाणधारी, विशेष वाणपत्रों से भूषित, शुभ लक्षणों का निधान, सुकपिवृन्दों से सेवित, सद्भ्राता लक्ष्मण से अलंकृत सुनायक राम शोभायमान हुए; उसी प्रकार महासरोवर से युक्त, नवीन प्रचुर पत्रों से भूषित, सुख का निधान, सुन्दर वानरों से युक्त, अच्छे लक्ष्मण वृक्षों से अलंकृत, वन्य पशुओं से भरा हुआ वह उपवन शोभायमान हो रहा था। उस वन में राजा ने वृक्षावलि देखी, जहाँ राजहंसों का गमनागमन हो रहा था। जहाँ कदली के अतिकोमल वृक्ष दिखाई दे रहे थे। जो बड़े बड़े लतागृहों से रमणीक थी। जहाँ फूल फूल रहे थे। जो अति निर्मल थी। जहाँ भौंरों की गुंजार हो रही थी। जो बेंतों और बर्र की झाड़ी से अतिमनोहर थी। जहाँ बड़े बड़े ऊँचे माहुलिंग (बिजौरे के वृक्ष) उद्भासित हो रहे थे। जहाँ सुकुमार लताएँ व सुन्दर अशोक के लाल पत्ते, बिंबाफल, दाड़िम के बीजे, चंपक के फूल, विकसित कुमुदिनी, कमल, मयूरपिच्छ, चंदन, केशर, तिलक व अंजन, कर्पूर, बहुभुजंग, सिंह, कांचनवृक्ष, सुन्दर मंड दिखाई देते थे; और जो कोकिलाओं के ललित आलाप से सुशोभित हो रही थी। इस प्रकार वह वृक्षावली एक विलासिनी के समान दिखाई दी, जो राजहंस के समान गमन करती है, जिसकी जंघाएँ और पिंडलियाँ कदली वृक्ष के समान अतिकोमल हैं। जो बड़े लतागृह में रमण करती है; तथा पुष्पों के आभूषण धारण किये हैं। जो अत्यन्त गोरी है। जिसकी रोमावली भ्रमर के समान काली और स्निग्ध है। जिसकी नाभि गोलाकार और गहरी है। जो अति मनोहर है। जिसके स्तन, माहुलिंग के समान पीन, प्रवर और उत्तुङ्ग हैं। जिसकी भुजाएँ लता के समान अति सुकुमार हैं। जिसकी

हथेली रक्ताशोक के पत्तों के समान सुन्दर है। जिसके अधर बिंबाफल सदृश व दांत अनार के दानों के समान सुन्दर और आनन्ददायी हैं। जिसकी सुन्दर नासिका चम्पकपुष्प के समान, आंखें फूली हुई कुमुदनी के पत्र समान, मुख कमल सदृश व केशबन्ध मयूरपिच्छ के समान लोगों के मन को उद्दीपित करनेवाला है। जो चन्दन और केशर से सुन्दरवर्ण दिखाई देती है। जो तिलक और अंजन से आभूषित है। जो कर्पूररस से ओतप्रोत है। जिसकी बहुत से प्रेमीजन सेवा करते हैं। जो हरिवाहन है, कंचनवर्ण है, सुमंडित है, और कोकिला के ललित आलाप सदृश सुभाषिणी है। ऐसे गुणों से परिपूर्ण वह वनपंक्ति वा विलासिनी किसके हृदय को यथार्थत हरण नहीं करती? (यह स्पष्टत. कामलेखा नामक पद्धडिया छंद का प्रयोग है)। राजा के आगमन से वह वनपंक्ति अपने तृणों द्वारा तन से रोमांचित प्रतीत होती थी, और अपने नये पुष्पों और फलों से मानों पूजांजलि प्रस्तुत कर रही थी।

९. रानी द्वारा मनोरमा की प्रशंसा

तब सुख-क्रीडा में दक्ष व नानाप्रकार के भावों व युक्तियों को लक्ष्य करनेवाली सखियों सहित, सागरसेन की पुत्री सुन्दर लीला द्वारा ऐसी शोभायमान हुई, जैसे पृथ्वी विकासमान उत्तम क्रीडाओं के योग्य एवं विविध प्रकार के दृश्यों व लाखों संयोगों से पूरित दिशाओं से युक्त होकर शोभा धारण करती है। उसे आगे जाते हुए देखकर लक्ष्मी द्वारा सेवित अभया महादेवी ने उसकी प्रशंसा की—"अपने बान्धवों व सुहृद्जनों की आंखों को सेंकने वाली, श्रेष्ठ गुणों की भाजन यह युवती बड़ी पुण्यवती है"। इस बीच कपिला ने कहा -"हे देवि, तुम्हें ऐसा कहना योग्य नहीं। लावण्य और सौभाग्य में तुम्हारे समान उत्तम रंभा और तिलोत्तमा भी नहीं है। मेनका, शची व पौलोमी, ये सब अप्सराएँ भी तुम्हारे वैभव के सामने निरभिमान हो जाती हैं। तुम्हारी बुद्धि की तुलना में सरस्वती भी पूरी नहीं उतरती"। यह सुनकर अभया बोला—"हे सखि, मेरी क्या प्रशंसा करती है; पुत्र के बिना नारी की क्या शोभा है? पुत्र ही तो एक कुलरूपी गगन का सूर्य तथा माता के मानरूपी रत्न का रत्नाकर होता है। यदि वह (अपनी उत्पत्ति द्वारा) यौवन का खंडन करता है, तो भी स्त्री के लिए पुत्र परम मंडन है। इसलिए इसकी ही श्रेष्ठ प्रशंसा करना योग्य है, क्योंकि वह पुत्रवती है, व अपने पति की अनुरागिणी है"। तब कपिला ने कहा—"इसके पुत्र कहां से हुआ? इसका पति तो नपुंसक है, ऐसा मैंने किसी के पास से सुना है।"

१०. रानी द्वारा कपिला का मर्म-ज्ञान

इस पर हँसकर झट रानी ने कहा कि वह कुछ नहीं जानती, बड़ी अज्ञान है। वह वणीन्द्र में आसक्तमन होकर उत्तेजित हुई होगी, इसीलिए उसने हास्य से ऐसा

दंभ (छल) किया। इन वचनों से कपिला ने निःश्वास छोड़ा और कुछ कुछ अपने मुँह को खोला। तब अभया देवी ने कहा--"तू मुझ से भी अपना हृदय क्यों छिपाती है ? मुख और नयनों के विकारों से, भाषणों से तथा इंगितों और शरीर की चेष्टाओं के प्रकाश से दूसरे का चित्त जान लिया जाता है। तब, हे सखि, छल करने से क्या लाभ ? जहां विशेष चतुर लोग रहते हैं, वहां किसी के श्वास लेने का भी पता चल जाता है।" तब कपिला कुछ हँसते हुए बोली—"तुम्हारे आगे कहते मुझे लज्जा आती है। हे देवि, तू मुझे अभयदान दे, तो मैं अपनी सारी कहानी कह सुनाऊँ ?" तब अभया ने कहा—"ले, मैंने तुझे अभय दिया। देख लिये जाने पर भी अपना चित्त क्यों छिपाती है ?" यह वचन सुनकर कपिला ने उत्सुकता से अपनी गुप्त बात छिपाई नहीं, और अभया को उत्कंठा पूर्वक कही।

११. कपिला का मर्म-प्रकाशन व रानी का उपहास

इस मनोरमा के कान्त के गुणों को सुनकर मैं उस पर परोक्ष राग से अनुरक्त हो गई। तब मेरी सखी उसे आगे जाते हुए जानकर एक बहाने से उसे मेरे पास लिवा लाई। जब वह वणिग्वर रतिगृह में प्रविष्ट हुआ, तब मैंने उसे हाथ पकड़कर प्रेमपूर्वक कहा—"हे प्रभु, एक बार मुझसे रमण कीजिये व प्रज्वलित होती हुई मेरी मदनाग्नि को शान्त कीजिये।" तब उसने झट मुझसे कहा—"मैं तो नपुंसक हूँ।" मैंने तुरन्त उसका हाथ छोड़ दिया और मुझे बड़ी विरक्ति हुई। इस प्रकार जब कपिला ने अपनी गुप्त बात कही, तब अभया हंसकर बोली---"उस देश की बात रहे, जहां तू भी छैलों के बीच ऐसी बातों में पड़ गई। उस अवलोकन की भावशुद्धि ही क्या जिसके द्वारा बोली से ही दूसरे की बुद्धि का पता न चल सके। मैं तेरी बुद्धि को पांव से कुचलती हूं। मैं अपनी बुद्धि को दूसरे के हृदय में कैसे ठूंस दूं ? हे सखि, चतुर स्त्रियां अपने प्रियतम को उसी प्रकार वश में कर लेती हैं, जिसप्रकार पैर पनही को पहन लेते हैं। तू उसके वचन से भी धोखा खा गई, ऐसा मैं समझती हूँ। किन्तु जब जलपुंज बह गया, तो अब मेरे पालि बांधने से क्या लाभ ?

१२. रानी की कुत्सित प्रतिज्ञा

हे सखि, वह सुदर्शन जिनधर्मानुरागी, दयापरायण, दुर्व्यसनों से मुक्त, सरस्वती-भूषित व प्रशंसाप्राप्त होते हुए पराई नारियों के प्रति सदा नपुंसक है"। अभया की यह बात सुनकर कपिला कुपित हुई और बोली—"हे देवि, इस संसार में अपनी जन्मजात प्रकृति क्या कोई छोड़ सकता है ? मैं एक हीन, दीन सद्गुणों और सद्बुद्धि से वर्जित ब्राह्मणी हूं। इसी से अपनी कान सुनी बात सुनने मुझे लज्जा (शंका) नहीं आई। किन्तु तू त्याग और भोगों से युक्त, अन्तःपुर में प्रधान व ललित और सुन्दर राजरानी है। तू अद्वितीय तीक्ष्णबुद्धि

है, ऐसी समस्त पुरजन प्रशंसा करते हैं। किन्तु तुझे बड़ी चतुर तो मैं जानूं, यदि तू उसके मन को चलायमान कर दे।" इस पर अभयादेवी मदान्ध होकर उछली और गरज कर बोली—"तेरी बातों से मुझे बार-बार हँसी आती है। बुद्धिमान जो कुछ प्रारम्भ करते हैं, वह क्या सम्पन्न नहीं होता? बहुत कहने से क्या? मैं इस कौतुक को करके ही रहूँगी। यदि मैं कामदेव सुदर्शन से रमण न करूँ, तो, हे सखि, मैं अपने गले में फांसी लटका कर मर जाऊँगी। यदि मैं इस प्रतिज्ञा का पालन न करूँ, तो, हे कपिले, मैं लज्जित हूँ।" (यह शालभंजिका नामक सुप्रसिद्ध छन्द है।) इस प्रकार प्रतिज्ञा करके अभया अपने मन में चमक उठी, व चलायमान मन से बावली हुई वहां से आगे बढ़ी।

१३. उद्यान की रंगरेलियां

विलास और हास्य से उत्पन्न भावों का अनुवर्तन करते हुए रानी चलती चलती उद्यानवन में पहुँची। वह लोगों के मन में संक्षोभ उत्पन्न करती हुई ऐसी प्रतीत होती थी, जैसे मानों धनुष से छोड़ी हुई कामदेव की भल्ली (फाल) ही हो। जैसी वह, तैसी और भी सारी नारियाँ क्रीडावन में पहुँचीं। किसी ने मनोहर चमकते हुए आभूषणों से विभूषित अपनी भामिनी से कहा—"तेरे प्रेम के बिना मेरा शून्याकार चित्त कहीं भी नहीं रमता। यह समझकर देरी मत कर। इस उद्यानयात्रा को सफल बना।" कोई अपनी प्रिया को अपने साथ-साथ नहीं ले गया इससे वह रूठ गई और वह उस महामानिनी को मनाने लगा—"एक बार मेरे अपराध को मत ले (क्षमा कर)। इस जन्मभर मैं तेरा ही हूँ।" कोई कामुक रमणी के पैरों लगता व रमग (जघनस्थल) देखने का प्रयत्न करता, तथा पुनः पुनः अपना चित्त समर्पित करता। ठीक ही है, कामासक्त पुरुष क्या-क्या विकल्प नहीं करता? कोई कृशोदरी अपने कर रूपी सुन्दर पल्लवों, नयनरूपी कुसुमों एवं स्तन रूपी फलों को धारण करती हुई ऐसी शोभायमान हो रही थी, जैसे वह मोहिनी लता ही हो।

१४. कानन और कामिनी विलास

जहां-जहां एक मत्तगजेन्द्रगामिनी लीलापूर्वक दृष्टि डालती थी, वहां-वहां उसकी आज्ञा जानने की इच्छा से मन्मथ स्थानबद्ध प्रगट हो जाता था। कोई वर्तुलाकार, स्थूल, पीवर और उत्तुंग स्तनों वाली कामिनी दूसरे माहुलिंगों की ओर देखने लगी। कोई अरुण और कोमल रक्तोत्पलों और अपने करतलों में भेद जानना चाहती थी। वहाँ भ्रमर कभी इस ओर, कभी उस ओर जा रहा था, और इस प्रकार कहीं षट्पद भी दुविधा में पड़ा प्रतीत होता था। किसी कामिनी की क्षीणकटि से रोमराजि मदनभुजंगिनी जैसी प्रगट हो रही थी। कोई मुग्धा कभी नील कमलों की माला की ओर देखती थी, और कभी अपनी मरकत मणियों की मेखला को। कोई अपनी गति

से हंस की भी हंसी उड़ा रही थी ; इसी से तो वह अपने प्रियतम के मन में बस रही थी। किसी अपूर्व धानुष्किनी (धनुर्धारिणी) ने अपने तीक्ष्ण और उज्ज्वल नयनरूपी वाणों से बिंधे हुए (अपने पति) को छोड़कर अबिद्ध को बेध डाला, और इस प्रकार उसने सहसा ही कामदेव को सन्तुष्ट कर लिया। जहां प्रिया जाती, वहीं-वहीं प्रियतम का मन दौड़ता, मानों उसने उसपर कोई अपूर्व मोहन (जादू) कर दिया हो।

१५. प्रेमियों की वक्रोक्तियां

कोई प्रियंगु लताओं से सघन तथा भ्रमण करते हुए भौंरों सहित फूलों की सुगंध से युक्त लतागृह में, परेवा का शब्द सुनकर, लीलापूर्वक अपनी कामिनी से क्रीडा करने लगा। नन्दन वन में नर और नारियां भ्रमण करने तथा परस्पर छलवचनों (वक्रोक्तियों) का आलाप करने लगे। कोई कहता—हे कान्ते, यह अशोक कैसा विकसित (प्रफुल्लित) हो रहा है? वह कहती—'जो अशोक (शोकरहित) हैं, वह अवश्य ही विकसित (प्रसन्न) होगा।' हे प्रिये, ये श्रीफल (नारियल) कितने मीठे हैं ? हे प्रिय, श्रीफल (लक्ष्मी के फल) मीठे होते ही हैं। हे प्रिये, तालाबों पर (अथवा अपने रसों से) यह बकों (पक्षियों) की पंक्ति उड़ रही है, प्रियतम, कहीं रसों के साथ व्रत होते हैं ? हे प्रिये, मैं इस विषधर (तालाब) को जल्दी से पार कर सकता हूँ; यदि तुम विषधर (सर्प) हो, तो मैं तुमसे डरती हूँ।' कोई कहता—'देखो, कौवा कांव-कांव कर रहा है; क्या प्रिय तुमने कं कं कंठ-नाद सुन लिया है ? हे प्रिये, मुझे कंतार (वन) प्रदेश भाते हैं; हे प्रिय, कंता-रत (प्रियाप्रेम) किसे इष्ट नहीं होता ? हे प्रिये, तू वक्रालाप में बड़ी दक्ष है ; तो क्या प्रियतम, तुम से भी अधिक ? हे प्रिये, इस मनोज्ञ, सरस और सुकोमल शल्यकी को तो देखो ? हे प्रिय, ऐसे गुणों से और भी तो विवश होकर सालते हैं (पीड़ा अनुभव करते हैं)।

१६. सरोवर की शोभा

कहीं विदग्ध लोगों द्वारा इस प्रकार सुहावनी व प्रिय वक्रोक्तियां बोली जा रही थीं; और कहीं संगीतरस का प्रयोग तथा रसिक देवों का मनोरंजन किया जा रहा था। तभी राजा व अन्य लोगों ने सरोवर की ओर लक्ष्य किया, जो समस्तरूप से मनोहर था। वह अपने नील रत्नों की पालि (पंक्ति) से अतिविपुल दिखाई दे रहा था। वहां कमलों की सुगंध से भ्रमरपुंज आ मिले थे। देवललनाओं की क्रीडा का कलकल शब्द हो रहा था। मछलियों के पुंज चल रहे थे, मुड़ रहे थे, और उछल रहे थे। कलहंसों के मुखों द्वारा शतदल कमल तोड़े जा रहे थे; तथा डोलते हुए वराहों के झुण्डों द्वारा जड़ें खोदी जा रही थीं। हाथियों की क्रीड़ा से उनके पैरों द्वारा तले (नीचे) का मल (कीचड़) चलायमान

हो कर ऊपर आ रहा था। कमलों से झड़ी हुई रज से जल पिंगवर्ण हो रहा था। पवन से झकोरी हुई तरंगों द्वारा थलभाग पर आघात हो रहा था, मानों वह उसी बहाने नभस्तल को छू रहा हो। वह सरोवर कुवलयों (नील कमलों) से शोभायमान, पुंडरीकों (श्वेत कमलों) के समूहों से आच्छादित, हाथियों, रथांगों (चक्रवाक पक्षियों) तथा सारंगों (चातकों) से उद्भासित था, अतएव वह एक राजा के समान था, जो कुवलय (पृथ्वी-मंडल) पर विराजमान प्रधानों के समूह से शोभायमान तथा हाथियों, रथों और घोड़ों से प्रभावशाली हो। (यह विलासिनी छन्द प्रकाशित किया।) उस सरोवर को देख कर लोग हर्ष से कहीं समाए नहीं, मानों देवों का समूह मानस सरोवर पर आ पहुंचा हो।

१७. रमणियों की जलक्रीड़ा

उद्यानवन में रमण करके चित्त चुरानेवाली नारियाँ सरोवर पर आ पहुँची; और वहां वे जैसी जल-क्रीडा करने लगी, तैसी वर्णन करने में कोई समर्थ नहीं। वहां सरोवर में प्रवेश करने पर, जल कामिनी के पैर पकड़ता। फिर उसके रमण प्रदेश में विश्रम करता, जहां तहां लीन होकर दलन करता, तथा त्रिवली को ढककर वक्षस्थल पर चढ़ता, मुख को चूमकर बाल पकड़ता; और इस प्रकार वह जल कामी पुरुष का अनुसरण करने लगा। हाथ से आहत होने पर दूर उछलता, किन्तु आसक्ति से पुनः ऊपर आ पड़ता। काम की तृष्णा से पीड़ित हुआ मानों पुनः पुनः चारों दिशाओं में घूमता। उसे तरुणियों के शरीर का स्पर्श करते हुए देखकर देव सोचने लगे—'यह जल-पुंज धन्य है'। किसी के जल में डूबने पर उसके आच्छादित उर ऐसे शोभायमान हुए मानों जल में हाथियों के कुंभ हों। किसी के रमण (जघनस्थल) पर उसके प्रेमी ने दृष्टि डाली, जो वहाँ से चलायमान ही नहीं हुई, जैसे मानों कोई ढोरी (गाय आदि पशु) कर्दम में फँस गई हो। किसी के स्तनप्रदेश में वक्र व तीक्ष्ण नख लगा था, मानों मन्मथरूपी हाथी के कुंभस्थल पर अंकुश का घाव हुआ हो।

१८. जलक्रीड़ा में आसक्त नारियों की शोभा

वहां सुन्दर ओठों रूप ऊर्ध्वपत्रवाला, दाँतों की कांतिरूप केशरयुक्त, सुगंधी जिह्वारूपी मकरंद से भास्वर, चंचल नेत्रों रूप भ्रमणशील भौरों सहित तथा सुन्दर मित्रों रूप मित्र (सूर्य) से विकसित कामिनी का मुखरूपी कमल शोभायमान हुआ। कहीं कोई तरुणी अत्यन्त तरलता से मछली के समान सुन्दर कमलों के मधु के लोभ से भ्रमर-पुंज द्वारा आश्रित जल में तैरने लगी। कहीं कोई अपने लाल हाथ और पैर प्रगट करने लगी, और वहाँ भ्रमरगण उन्हें कमल समझकर एकत्र हो पड़ने लगे। कोई केशर के रस से लिप्त अपने स्तनकलश दर्शाने लगी, और इस प्रकार प्रेम से पराधीन प्रियतम के मन को हर्षित करने लगी। कहीं प्रिय अपनी प्रिया के मुख

की सुगंध का अनुसरण करता हुआ हर्ष से दशों दिशाओं में अपने हस्तकमल फेंकने लगा। और कहीं वह प्रिया भी अपने सिर के सघन केशभार को दृढ़ करके अपने हाथों में जल ले उसके उरस्थल को भरने लगी। कहीं कोई आवेग से उछलकर निर्निमेष अपनी प्रिया के अधर का पान करने लगा, जैसे मधुकर कमलिनी का रस पीता है। कहीं कोई रमणी वहाँ अपने प्रियतम का स्पर्श पाकर रोमांचित हुई अपने मन की उत्कंठा का परिहरण करती। कहीं उसके शरीर के संघर्ष से जल में गिरे हुए मणिकटक ऐसे शोभायमान हुए, जैसे मानों चन्द्र और सूर्य आकाश में चमक उठे हों। (यह दिणमणि छन्द है)। जलक्रीड़ा करके लोग सरोवर से बाहर निकले। तब तरुणियों से युक्त अभया रानी अपने शरीर को आभूषित करने लगी।

१९. अभया रानी का साज-शृंगार

अभया रानी के भाल प्रदेश में चमेली की कली पर आसक्त विचित्र भ्रमर लिखा गया। उसके कपोलपट पर आम्रमंजरी से युक्त कस्तूरी की बेल लिखी गई। उसके कानों में चमकीले कुंडल पहनाए गए, मानों राहु के भय से चन्द्र और सूर्य मंडल उस नखरूपी मणियों की किरणों से गगन को उद्योतित करनेवाली मृगनयनी की शरण में आकर प्रविष्ट हुए हों। उसके स्तनों के ऊपर हार लटकने लगा, मानों आकाश गंगा का प्रवाह कल्लोल ले रहा हो; अथवा मानों वह भावों का निधान कामदेव का पाश हो, अथवा मानों वसन्तलक्ष्मी का हिंडोला हो। स्तब्ध स्तनों के आगे लोटता और नमता हुआ भी वह हार गुणवान होने पर भी मध्य आशय (कटि प्रदेश) को प्राप्त नहीं कर पाता था। मेखला ने, जो हुताशन का सेवन किया, इसीसे उसके नितम्ब को पा लिया। पैंजनों की जोड़ी झुनझुन शब्द करती हुई हंसकुलों को सन्तुष्ट करने लगी, मानों घोषणा कर रही हो कि मैंने कुंकुम से लिप्त, दुर्लभ और अत्यन्त भला चरणयुगल पा लिया। हे श्रेणिक राजन्, बहुत कहने से क्या, सब लोग सन्तुष्ट व नयनंदित होकर, देवों को मोहित करनेवाले नगर में लौट आये।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्यके शिष्य नयनन्दि द्वारा रचित, पंचणमोकार फल को प्रकाशित करनेवाले सुदर्शनचरित मे सुदर्शन का विलास, कपिला ब्राह्मणी का छल, वसन्त समयागम पर जिस प्रकार प्रतिज्ञा का संबंध आया, वन मे जलक्रीडा व अभयादेवी का शरीर-शृङ्गार, इनका वर्णन करनेवाली सप्तम संधि समाप्त।

॥ संधि ७ ॥

१. राजमन्दिर की शोभा

कोमल-पद, उदार, छंदानुवर्ती, गंभीर, अर्थसमृद्ध तथा मनोवांछित सौन्दर्य युक्त कलत्र व काव्य इस संसार में किसी (सौभाग्यशाली) को ही प्राप्त होता है।

पूर्व में सरस्वती ने सुदर्शन-चरित्र को कवीन्द्रों से गुप्त करके रखा था, इसीलिये कि नयनों का आनन्द प्राप्त करनेवाले नयनन्दि कवि होंगे, जो सुदर्शन चरित्र की रचना करेंगे।

सुलक्षणों से युक्त, अलंकारों से आभूषित और कांतियुक्त अभयादेवी जहाँ देखो वहाँ ही ऐसी प्यारी दिखाई देती थी, जैसी सुकवि द्वारा रचित कथा। वह अभयादेवी क्रमशः लौटकर राजमंदिर में आई, जो वायु से कंपित ध्वजपताकाओं से लहलहा रहा था; जो प्रवालों और इन्द्रनील मणियों के जाल से विचित्र दिखाई देता था, जो सुन्दर तारों, हारों, कुन्द-पुष्पों व चन्द्र के समान शुभ्र था; जो विचित्र स्तम्भों व सुवर्ण-भित्तियों से जगमगा रहा था; जहाँ मधुर धूम की गंध के लोभी भ्रमर भ्रमण कर रहे थे; जो अपनी अनेक कौतूहलपूर्ण रचनाओं से देवों को भी मोहित कर रहा था; जो गवाक्षों और मत्तवारणों (दालानों) से सुशोभित था; जो रुनझुन करती हुई घंटियों के गुच्छों से आच्छादित था; जहाँ चिकने मोतियों की मालाएँ लटक रहीं थीं; जहाँ हँस के पंखों के विशाल गद्दे बिछे हुए थे; जो पढ़ते हुए शुक-सारिकाओं से मनोहर था; जो अपने मणियों की प्रभा से सूर्य की प्रचुर किरणों की प्रभा को भी जीत रहा था; जो अनेक प्रकार के पुष्पों की गंध से सुन्दर था; तथा जो अपनी उत्तुंगता के माहात्म्य से मंदर (पर्वत) को भी जीत रहा था। (यह वसंतचत्वर छंद है)। वहाँ क्षुधारहित, शिथिलांगी तथा नष्टचित्त (अनमनी) एवं कांतिहीन अभयादेवी को पंडिता ने ऐसी देखा, जैसे पुताई से रहित, जर्जरभित्ति, जीर्णचित्र, व शोभाहीन पुरानी देवकुटी।

२. अभया की विरह-वेदना

उसे देखकर सद्गुणों से सम्पन्न पंडिता ने दौड़कर पूछा--"हे पुत्रि, तू बिस्तर पर क्यों पड़ी हुई है, और ऐसी उन्मनी-दुर्मनी क्यों दिखाई देती है ? इससे मुझे घनी वेदना होती है।" यह सुनकर उस नरेन्द्र-पत्नी ने कहा--"हे पंडिते, जहां तुमसे छुपी कोई बात नहीं, वहां मैं तुमसे क्या कहूँ ?" तब पंडिता ने कहा-- "मुझसे क्यों छिपाती है ? मुझे कुछ भी ज्ञात नहीं है, तू कह तो सही ?" तब अभया बोली--"मैं तुमसे छिपाती नहीं हूं। पंडिते सुन। मैं अपने अन्तरंग की बात कहती हूं। यदि मैं सुदर्शन का प्रेम पा सकी तो मदन मुझे पीड़ा नहीं

पहुँचायेगा। और यदि उस सौभाग्यशाली का समागम नहीं हुआ, तो, हे माता, मैं जी न सकूँगी, यह निश्चित है।" तब उस बुद्धिमती पंडिता ने दोनों हाथों से अपने कान ढाँकते हुए कहा--"हे पुत्रि, जो कुछ तूने कहा, उसपर मैं थुथकारती हूँ। मरे वह जिसे तू सुहाती न हो। तू तो तबतक जीये, जबतक यह पृथ्वी है। किन्तु वह वणिग्वर तो बुद्धिमानों में श्रेष्ठ है, जिनेन्द्र के चरणकमलों का भक्त है, तथा पंच अणुव्रत आदि शुभ श्रावकव्रतों को दृढ़ता से धारण करता है।

३. पंडिता का रानी को सम्बोधन

जो सम्यक्त्वरूपी रत्न से अलंकृत व लक्ष्मीरूपी प्रणयिनी से आलिङ्गित है, तथा जो अपयश के काम को दूर से ही त्यागता है, वह पराई स्त्री को कैसे स्वीकार करेगा? अनुराग उसी से करना चाहिए जो उसे माने। किन्तु जो अनुनय करनेवाले की अवहेलना करे, तो जिस सोने को पहनने से कान टूटें, उसकी दूर से ही पूजा भली। मैं उसी को स्नेह मानती हूँ, जो पिंचुक के पंखे के समान दोनों ओर रंगा हुआ और मनोरम हो। उस प्रेम से क्या लाभ जो मोरपंख के समान केवल एक ही बाजू सुन्दर व अभिरमणीक है। कहाँ तू, और कहाँ वह? आलिंगन कैसे बने? तू दूरवर्ती का स्नेह शीघ्र छोड़ दे।।" पंडिता का यह वचन सुनकर अभया महादेवी बोली "यहाँ तेरा यह सिखापन और वहाँ सुदर्शन में मेरी रुचि?

४. रानी का उन्माद

हे पंडिते, जिस उपाय से बने, उस उपाय से सौभाग्यशाली को मेरे पास ले आ, और भूमिपर गिरती हुई मुझे बचाले। विरह से मरती हुई के प्रति निष्ठुर क्यों होती है ॥१॥ धीरता, बुद्धि, मान, लज्जा, भय और सुमर्यादा तभी तक टिकते हैं, जब तक शरीर को विह्वल बनानेवाला मदन प्रकट नहीं होता ॥२॥ जिसके अदर्शन से दाह और दर्शन से पसीना आता है, उसके ऊपर विरक्त होना, हे माता, यह किससे बन सकता है? ॥३॥ यदि कोमल बाहु-लताओं के अलिंगन का सुख नहीं भी हो, तो भी यहां अपने सुन्दर वल्लभ के दर्शन मात्र से ही क्या-क्या नहीं मिल जाता? ॥४॥ प्रियतम ऐसा कोई व्यक्ति होता है कि जिसके बिना कहीं भी चित्त नहीं रमता। जैसा-जैसा सम्बोधन कराया जाता है, वैसे-वैसे हृदय और भी अधिक अनुरक्त होता जाता है ॥५॥ जिसके श्रवण मात्र से, हे माता, हृदय में संतोष होता है, उसके साथ संबंध से न जाने कितना सुख प्राप्त होगा ॥६॥ परस्पर न मिलनेवाले तथा एक दूसरे से दूर स्थित व्यक्तियों में भी स्नेह देखा जाता है। यद्यपि सूर्य आकाशतल में है, तो भी इस पृथ्वी पर नलिनी को उसका सुख मिलता है ॥७॥ अभया का वचन सुनकर, पंडिता बोली-हे पुत्रि, जो कार्य खूब सोच-बिचार पूर्वक किया जाता है, वह सब प्रकार सुन्दर होता है। जो

बात दीर्घकाल तक सुखदायी हो, भले प्रकार विचार ली गई हो, व अति श्रेष्ठ हो, उसका व्यतिक्रम (उल्लंघन) नहीं करना चाहिए। ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिये जो पश्चात्ताप उत्पन्न करे।

५. पंडिता का रानी को पुनः हितोपदेश

उत्तम जाति और कुल में उत्पन्न एवं गुणयुक्त कुलपुत्री का एक ही पति होता है, जो देवों और ब्राह्मणों द्वारा दिया गया है; भले ही वह धनविहीन हो, बहुत रोगों से ग्रसित हो, पङ्गु व ठूठा हो, दुर्बल व दुर्गन्धी हो, चाहे क्रूरचित्त, चिड़चिड़ा, बहरा व अन्धा हो। उसे छोड़कर दूसरा चाहे बड़ा लक्ष्मीवान हो, चाहे सुरेन्द्र हो अथवा स्वयं मकरध्वज हो, तो भी वह महासती द्वारा वर्जनीय है। सती स्त्री को भय, दाक्षिण्य व लोभ नहीं करना चाहिये। गृहकर्म में, सन्तान के पालन-पोषण में, पति-प्रेम में, तथा देह को सजाने में स्त्री अपनी इच्छानुसार चल सकती है। किन्तु इन बातों को छोड़कर और स्वेच्छाचरण स्त्री के लिए निषिद्ध और विरुद्ध है। देखो, अमृता नाम की महादेवी, परपुरुष में अनुरक्त होने के कारण कोढ़ से सड़ी और नरक को गई। और भी स्त्रियां बहुत अनर्थकारी और बहुत अपयश की भाजन हुई हैं, जिनको कौन गिन सकता है? तू उनके मार्ग से मत चल। स्वर्ग को छोड़कर, नरक की वांछा क्यों करती है? वही खाना चाहिये जो पच जाय व अंगों व उपांगों को स्वास्थ्यप्रद हो। इसके अतिरिक्त मुझे इस बात पर हँसी आती है कि घर में ऋद्धि होते हुए भी भीख मांगते फिरा जाय। तेरा पति त्रिभुवन में सुप्रसिद्ध है, और ऐसा सुन्दर है जैसे मानों प्रत्यक्ष मकरध्वज ही हो। (पंडिता के इतना कहने पर भी) अभया महादेवी केवल हँसकर बोली—जो तूने हितकारी वचन कहा, उस सबको, हे माता, मैं भले प्रकार जानती हूं।

६. रानी का प्रत्युत्तर

मैं जानती हूं कि वह वणिग्वर बड़ा गुणवान है व पराई युवतियों से विरक्त है। किन्तु, हे माता, मेरा हृदय और कहीं लगता ही नहीं है॥१॥ मैं भी उपाख्यान (उपदेशात्मक दृष्टान्त) जानती हूं। तू क्या बहुत बतलाती है? हे अम्बे, दूसरे को उपदेश देने में कौन पंडित नहीं है?॥२॥ मैं जानती हूं कि कुलपुत्रियों के लिए संसार में एक अपना पति ही सेवन करना योग्य है। परन्तु, हे माता, मैं क्या करूँ, उसके ऊपर मेरा मन गड़ गया है॥३॥ मैं जानती हूं कि परपुरुष के ऊपर आसक्ति नहीं करना चाहिए, किन्तु कितना ही पुनः-पुनः कहो, आवो अति दुर्लंघ्य है॥४॥ जानती हूं कि मेरा कान्त मकरध्वज के समान सुन्दर है, किन्तु, हे माता, मेरे मन में तो सुदर्शन की बाय लग गई है॥५॥ जानती हूं कि तूने मुझ मोहाकुल को हित और मित शिक्षा दी है; किन्तु मैंने आज उपवन को

जाते हुए एक बड़ी प्रतिज्ञा की है ॥६॥ कपिला के साथ बातचीत करते हुए वहां मैंने ऐसा कह डाला है कि यदि मैं सुदर्शन का रमण न करूं तो निश्चय ही मर जाऊँगी। यह सुनकर पंडिता ने हँसकर कहा—एक खीले के लिए देवालय का नाश कर डालना उचित नहीं। आवेग में आकर शील को छोड़, जननिन्द्य-कार्य नहीं करना चाहिये। उत्तम सुवर्ण के कलश पर क्या खप्पर (ठीकरा) का ढक्कन दिया जाता है ? ॥६॥

७. पंडिता द्वारा शील की प्रशंसा

अन्य दिव्य आभरणों के पास में शील भी युवतियों का मंडन कहा गया है। दशानन जिसे हरकर ले गया, पुराणों के अनुसार, वही सीता अग्नि द्वारा जलाई नहीं जा सकी। उसी प्रकार शील में सुदृढ़ अनन्तमती, खग व किरात के उपसर्ग से बच गई। रोहिणी तीव्र जल की धारा में पड़कर भी शील के प्रभाव से नदी द्वारा बहाई नहीं गई। नारायण, बलदेव, चक्रवर्ती तथा तीर्थंकरों की माताएँ आज भी त्रिभुवन में विख्यात हैं। वे सब शीलरूपी कमलसरोवरों की हंसिनी थीं। अतएव नागों, मनुष्यों, विधाधरों और देवों द्वारा प्रशंसित हुईं। हे माता, जलकर राख का ढेर हो जाना अच्छा, किन्तु मदन के उन्माद से उत्पन्न कुशील (दुराचार) अच्छा नहीं। शीलवान की बुधजन सराहना करते हैं। शील से विवर्जित मनुष्य किस काम का ? ऐसा जानकर, हे महासती माता, शील का परिपालन करना चाहिये। नहीं तो, हे देवि, लाभ की अभिलाषा करते हुए तेरे मूलधन का छेद (विनाश) हो जायगा ॥७॥

८. स्त्री-हठ दुर्निवार है

शील से रहित होने पर तेरा लोगों में कर्ण-कटु 'हाय, हाय' का कोलाहल ही उठेगा। शीलविहीन की राज्यश्री चली जायगी। शीलविहीन का मरण होगा। यह सुनकर अभया महादेवी ने रोष से प्रज्वलित होकर कहा—"परोपदेश देने में सब कोई बड़ा ज्ञानी और सयाना बन जाता है। बहुत कहने से क्या ? यद्यपि मेरा बड़ा हाहाकार (धिक्कार) होगा, यदि दुर्लभ सम्पत्ति चली जाय, और मेरा मरण भी हो जाय, तो भी, हे पंडिते, किसी के कहने से मैं अपनी बात नहीं छोड़ूँगी। मैंने जो प्रतीज्ञा की है, उस पर मैं अपने को दृढ़ रक्खूंगी। सुदर्शन के वियोग में मेरा मन झूर रहा है। क्या दूध की अभिलाषा को कांजी पूर्ण कर सकती है ? अतएव वह सुन्दर व विदग्ध सुदर्शन अवश्य ही यहाँ लाया जाय। पैर भले ही जल जाँय, किन्तु हृदय तो न जले। यदि किसी प्रकार प्रिय का समागम नहीं किया जा सका, तो निस्सन्देह शीघ्र ही मेरा मरण हो जायगा।" यह सुनकर पंडिता विचारने लगी कि संसार में 'गोह की पकड़' सुनी जाती है; किन्तु स्त्री का ग्राह (हठ) उससे भी बड़ा है, जिसके कारण समस्त सचराचर जगत दुःखी है।

९. भवितव्यता टल नहीं सकती

इस संसार में गीध श्मशान से पृथक् नहीं हो सकता। भौंरा पङ्कज पर बैठे बिना नहीं रह सकता। तुम्बर और नारद का गीत छूट नहीं सकता। पण्डित लोगों का विवेक भ्रष्ट नहीं हो सकता। दुर्जन का दुष्ट स्वभाव छूटता नहीं, और निर्धन के चित्त का विषाद दूर होता नहीं। महाधनवान का लोभ नहीं छूटता। यम की मारने की बुद्धि नष्ट नहीं हो सकती। यौवन में अभिमान आये बिना नहीं रहता, और वल्लभ में चिपटा हुआ चित्त हट नहीं सकता। महान हाथियों का झुंड विन्ध्य पर्वत को नहीं छोड़ता। सिद्धों का समूह मोक्ष से हटता नहीं। पापी के पाप का कलंक मिटता नहीं। कामी के चित्त से काम छूटता नहीं। इसी प्रकार इस रानी का दुराग्रह छूटनेवाला नहीं। (यह मौक्तिकदाम छंद है) अथवा जो कुछ, जिस प्रकार, जिसके द्वारा, जहाँ अवश्य होनेवाला है, वह उसी प्रकार, उसी देहधारी के द्वारा, वहीं पर एकांग रूप से घटित होकर ही रहेगा।

१०. दुर्भावना की जीत

वार वार कितनी चिंता की जाय और कितना वार वार झूरा जाय? इस वसुधाधिप पत्नी (राजरानी) का दोष भी क्या है, जबकि त्रैलोक्य ही भवितव्यता के अधीन है? तो लो, मैं भी इस शरीर-लावण्य के वर्ण से शोभायमान इस सुन्दरी की अभ्यर्थनानुसार करती हूँ। जिसकी अनुचरी होकर रहना, उसी की इच्छानुसार चलना भी चाहिये। ऐसा सोचकर फिर पण्डिता ने कहा—हे सुन्दरि, धैर्य धारण कर, जबतक मैं जाकर उस उत्तम वणिक् को लेकर आती हूँ। वह तेरे उर पर लटकता हुआ हार बनकर रहे। ऐसा कहकर पण्डिता वहाँ गई, जहाँ प्रजापतियों (कुम्हारों) के घर थे। वहाँ जाकर उसने एक चक्का चलाने वाले कुम्हार से कहा कि मुझे मिट्टी के अच्छे सात पुतले बना दे। आज रात को अभयारानी अपने कामदेव व्रत को सफल करेगी, और उसके माहात्म्य से वह अपने दुर्लभ मनोवांछित फल को प्राप्त करेगी।

११. पंडिता द्वारा पुतलों की कल्पना

तब उस चक्र चलानेवाले कुम्हार ने पुतले बनाये और उन्हें पण्डिता के आगे लाकर रखा। वे ऐसे प्रतीत होते थे, जैसे मानों ब्रह्मा ने स्वयं उन्हें घड़ा हो। मानों स्वर्ग से सात सुर आ गिरे हों। वे सातों मानों हर्षितांग होकर खेल रहे हों। मानों सातों चल रहे हों, डोल रहे हों, व भ्रमण कर रहे हों। सातों मानों रंगरेलियाँ कर रहे हों, मानों थिरक रहे हों। सातों मानों कनखियाँ ले रहे हों, हँस रहे हों। सातों मानों हाथ से हाथ पीट रहे हों। सातों मानों ज्ञान का विचार कर रहे हों; गुन रहे हों। सातों मानों अभया के विकल्प को जान रहे हों, और सातों मानों अपना सिर धुन रहे हों। सातों मानों वणिक् के

आगमन को जान रहे हों, और सातों ही मानो उसके गुणों की स्तुति कर रहे हों। सातों मानों अभया पर हाहाकार ध्वनि कर रहे हों, और सातों मानों उसके मरण की रट लगा रहे हों। उन सातों पुतलों को अपने घर लाकर पण्डिता ने शंका छोड़ वस्त्र से किस प्रकार ढँककर रख दिया, जिस प्रकार समस्त दोषगुणों के द्वारा ढँक दिये जाते हैं।

१२. द्वारपालों से संघर्ष

फिर पण्डिता चुपचाप अपने घर में रही। प्रतिपदा का दिन आने पर उस विदुषी ने प्रसन्न मुख होकर सहसा एक पुतले को संचालित किया। मंद मंद चलते हुये, स्थान स्थान पर उसे रखते हुए, और इस प्रकार सन्ध्या का समय करते हुये वह राजप्रासाद के प्रथम द्वार पर पहुँची। वहाँ यष्टिधारी पहरेदार ने उससे पूछा—'यह क्या है ?' तब पण्डिता ने लाल आँखें करके रोष प्रकट करते हुए कहा—'इस चिंता से तुम्हें क्या ?' इन वचनों से रक्षपाल कुपित हुई और पण्डिता की ओर भृकुटी तान कर बोली—'एक तो तूँ बिना पूछे प्रवेश कर रही है, और दूसरे पूछने पर कोप करती है। अपना कोई गुप्त कार्य रचने के हेतु प्रवेश करते हुए तुझे क्या हो गया है ? यदि इस रचना (कार्य) से कोई दोष (अनिष्ट) उत्पन्न हुआ, तो राजा हमें दण्ड देगा।" यह कहकर प्रतिहारियों ने प्रवेश करती हुई पण्डिता का उपरना (ओढ़नी) इस प्रकार खींच लिया, जैसे पूर्वकाल में सगर के पुत्रों ने क्रोधित होकर गंगा के प्रवाह को खींचा था।

१३. द्वारपालों को पंडिता की धमकी

इस पर पंडिता ने उस पुतले को फोड़ डाला, और दंभ से लाल आँखें करके कहा—"आज देवी अपने गृह में पुतले को सजाकर उसको जगानेवाली थी। तुमने इस पुतले को फोड़ डाला। अब कल तुम सब गर्वीले द्वारपालों के सिर कटवा डालूँगी। अब तुम्हारी रक्षा कोई नहीं कर सकता, चाहे वह बुद्ध या सिद्ध खगेन्द्र (गरुड़) हो, या स्कन्द (कार्तिकेय), इन्द्र या देववृन्द, वह यक्ष हो चाहे राक्षस, चन्द्र, सूर्य, राजा, नाग अथवा क्रूर काल। भले ही वह नारायण हो, या ब्रह्मा (स्थविर), अथवा लम्बोदर ; अब किसी के द्वारा भी तुम्हारी रक्षा नहीं हो सकती।" यह सुनकर चित्त में भयभीत होकर उन्होंने सिर नवाते हुए कहा—"हमारी ऐसी दुर्दशा कराना उचित नहीं। (यह कामावतार छंद कहा गया है) बहुत वचन-विस्तार से क्या, अब तू जब अगली बार अपना पुतला लाएगी, तब यदि मैं अंगुली भी उठाऊँ, तो तू रोष करना।"

१४. द्वारपालों का वशीकरण

द्वारपालों का यह वचन सुनकर बुद्धिमती पंडिता शान्त हुई और बोली—"क्या राजनीति मैं नहीं जानती, जो मैं कोई लोकविरुद्ध वस्तु लेकर आऊँगी ?

तुमने मुझ पर यों ही गर्जना की, तथा एक अनाथ व दीन के समान मुझे लज्जित किया। और फिर दंभ करके मुझे मना रहे हो। सिर काटकर उस पर अक्षत फेंकने से क्या लाभ? यद्यपि तुमने बहुत अयुक्त कार्य किया है, तथापि एकबार मैं तुम्हें सर्वथा क्षमा करती हूँ। अपने स्वामी के चरणकमलों के अनुरक्त, हे पुत्रो, तुम दीर्घायु हो। तुम्हारा सिर अमृत से सींचा जाय और तुम्हें दिनोंदिन राजा का प्रसाद प्राप्त हो।" इसी क्रम से पंडिता ने सातों मणिसार द्वार अपने वश में कर लिए। इसी बीच यहाँ पाप-मल का नाश करनेवाला सुदर्शन सेठ अष्टमी के दिन मुनि को नमस्कार करके, उपवास ले, एवं समस्त आरम्भ का परित्याग करके, शुद्धमन होकर श्मशान की ओर चला। किन्तु उठते समय उसका वस्त्र फँस गया, मानों पुन पुनः उसका निवारण कर रहा हो कि तू उपसर्ग के योग्य नहीं है।

१५. सुदर्शन को अपशकुन हुए

किसी के मुख से वचन निकल पड़ा—'कहाँ जा रहे हो'। एक तरफ किसी ने छींक दिया। एक तमाल को भी जीतनेवाली (अत्यन्त काली) स्त्री जिसके सिर के बाल छूटे हुए थे, टकरा गई। पीछे से कुत्ता रुष्ट होकर उसके वस्त्र का अञ्चल खींचने लगा। फिर उसके दाहिनी ओर गधा आ खड़ा हुआ। फिर उसने एक निकृष्ट कोढ़ी को आते देखा। आगे एक उद्धत काला सांप मार्ग काट कर निकल गया। सम्मुख चलस्वभावी दुर्गन्ध वायु आई। कुछ दूर पर एक कांटों के झाड़ पर रिष्ट (कौवा) किटकिटाता हुआ बैठा दिखाई दिया। बाँई ओर एक शृगाली कर्कश स्वर से फेत्कार करती हुई बैठी थी। ऐसे तथा और भी अनेक अपशकुन उसे मार्ग में पुन. पुन दिखाई दिये। तथापि व्रत में अत्यन्त आसक्त-मन होते हुए वणीन्द्र ने उन सबकी उपेक्षा की।

१६. श्मशान का दृश्य

चलते-चलते सुदर्शन श्मशान में पहुँचा, जहाँ कुत्ते घुर्राते हुए भिड़ रहे थे। जहाँ नाना शरीरों का मांस पड़ा हुआ सड़ रहा था। जो घू घू करते हुए घुग्घुओं से अमङ्गल रूप था। जो शृगालियों द्वारा छोड़ी हुई फेत्कारों से भीषण था। जहाँ किलकिलाते हुए बैतालों का कोलाहल हो रहा था। जहाँ प्रज्वलित अग्नि की ज्वालाएँ उठ रही थीं। जहाँ शाकिनियों का संकेतयुक्त भाषण हो रहा था। जहाँ पिशित (मांस) के लाभ के लिए गीध चक्कर लगा रहे थे। जहाँ मृतकों के केशों के ढेर लग रहे थे। जहाँ योगियों की हुङ्कार ध्वनि सुनाई दे रही थी, व मंत्रशक्ति से पर-विद्या का स्तम्भन किया जा रहा था। जहाँ विविध रुण्डों की बहुत से मुण्डों की माला धारण किये हुये कापालिक, मस्तकों की परीक्षा करते हुए घूम रहा था। ऐसे उस श्मशान में पहुँच कर वणीश्वर अपने मन में जिनेश्वर

का स्मरण करते हुये कार्योत्सर्ग मुद्रा में खड़ा हो गया। इतने में ही निशाचरों का दलन करनेवाला सूर्य प्रहरों के व्यतीत होने से, अपनी किरणों का प्रसार करता हुआ भी भवितव्यतावश अस्त हो गया; जिस प्रकार कि दानवों का दलन करने वाला शूरवीर (अथवा सुर-देव) भी प्रहारों से आहत होकर, पाँव पसार कर भवितव्यतावश मृत्यु को प्राप्त होता है।

१७. सायंकाल का दृश्य

मित्र (सूर्य) के वियोग में मुरझाई हुई नलिनी के पुष्प-कोष का विकास उसी प्रकार नहीं हुआ, जिस प्रकार अपने मित्र (प्रियतम) के वियोग में एक महासती लज्जित होकर अपना चूड़ाबंध प्रकट नहीं करती। वह अत्यन्त शोक से अपने ललित अंगों को शिथिल और भ्रमररूपी नयनों से युक्त पंकजरूपी मुख को मलिन कर रही थी। उसी के दुःख से दुखित होकर मानों चकवे अपनी चकवियों का संग छोड़कर रह रहे थे। आज भी चकवा उसी क्रम को चला रहा है। इस प्रकार अपनी स्वीकृत बात को कोई विरला ही पालन करता है। कुमुदों के समूह दुर्जनों के समान दिखाई दिये, चूँकि वे मित्र (सूर्य या सुहृद) का विनाश होने पर भी विकसित हुए।

स्नान करके श्रुतिधर, लोकाचार से, तथा द्विजवर (श्रेष्ठ ब्राह्मण) सन्ध्या-वन्दन हेतु सूर्य को मानों जलाञ्जली देने लगे। किन्तु अस्त हो जाने के कारण स्पष्टतः वह उसे पा तो नहीं रहा था। रात्रि का समय हो जाने से नभोमंडल (अन्धकार से) आच्छादित हो गया, मानों वह मेघमालाओं से विराजित हो गया हो। उस समय आकाश में अपनी विमल प्रभा से युक्त अर्द्धचन्द्र उदित होकर ऐसा शोभायमान हुआ, मानों नभश्री ने लोगों को अपना स्फटिक का कटोरा दिखलाया हो।

१८. कामिनियों की काम-लीलाएँ

उसी समय नक्षत्रों का समूह भी चमक उठा, मानों आकाश-लक्ष्मी ने पुष्पों का पुंज बिखेर दिया हो। ऐसे समय में स्थूल स्तनोंवाली कामिनियाँ प्रहृष्ट होकर अपने आभूषण धारण करने लगीं। कोई कहती—हे सखी, गुणरूपी रत्नों के खान वल्लभ को मनाकर झट ले आ। कोई अपनी सौत की ईर्षा करती और अपने प्रियतम को खींचकर उसे केशों से पकड़ती। किसी का प्रिय कांत रुष्ट होकर बाहर जाने लगा, तो वह उसे बलपूर्वक अपने हार से बांधकर रोकने लगीं। कोई, जब उसका पति हर्षित होकर आलिंगन के लिये आया, तो वह खेल करती हुई छिपकर खड़ी हो गई। कोई अपने प्रिय का पुनः पुनः आलिंगन कर उसे अपने सघन स्तनों से वक्षस्थल पर चपेटने लगी। किसी की मानिनी के मुख पर दृष्टि पड़ गई,

मानों सुन्दर कमल पर भ्रमरपंक्ति आ बैठी। कोई सौन्दर्यहीन दुर्भागिनी अपने प्रिय को किसी अन्य पर आसक्त-मन देखकर झूरने लगी कि रे दुष्ट हताश खल विधि, तूने मुझे सुन्दर सौभाग्यशालिनी क्यों न बनाया ?

१९. वेश्याएँ और उनके प्रेमी

कहीं सुन्दर शृङ्गार करके गुण्डे वेश्या को देखकर टरटराने लगे। कहीं वेश्या अपने प्रेमियों का अपमान करती, और लंगड़े धनवान का भी सम्मान करती। कहीं एक गुण्डा रतिरमण करके, सन्तुष्ट हो, खोटा दाम देकर लापता हो गया। कहीं दासी प्रेमी के सेवक से संलग्न हो गई, और फिर उसकी कांछ पकड़ कर भाड़ा मांगने लगी। कहीं एक सर्वांग-सुन्दर वेश्या अपने हावभावों से प्रेमी का मन हरण करने लगी। इस प्रकार क्रमश जब अर्द्धरात्रि व्यतीत हो गई, तब चन्द्र मन्द-प्रकाश हो गया—"हाय, यह वणीन्द्र उपसर्ग सहेगा। उस सज्जन की विपत्ति को कौन देखे ?" यही सोचकर मानों चन्द्र अस्त हो गया, और भ्रमर-समूह तथा जंगली भैंसे के समान कृष्णवर्ण अन्धकार फैल गया। मानों विधि ने जगरूपी वस्त्र को नीली के रस में डुबा दिया हो; अथवा मानों अभया का अपयश प्रकट होकर दिखाई देने लगा हो।

२०. पंडिता का सुदर्शन को प्रलोभन

अन्धकार फैला देखकर पंडिता वहां गई जहां सेठों का अग्रणी सुदर्शन ध्यान-योग में स्थित था। वह प्रणाम करते हुए उसके पैरों से लग गई और बोली—यदि तुम्हारे धर्म में जीवदया है, तो तुम उस अनुरागवती, खिन्नगात्री राजपत्नी के जीव की रक्षा करो। हे स्वामी, जिसके द्वारा विरहाग्नि से जलती हुई स्त्री के जीवन की आशा न हो सके, उस मेलापक मंत्र से क्या लाभ ? अतएव देर मत करो। आओ, आओ, शीघ्र चलकर उस उन्मीलित-नेत्र, सुकुमार गात्री का आलिंगन करो। भला कहो तो, जिनेन्द्र सन्तुष्ट होकर भी तुम्हें कौन-सी बात प्रदान करेगा ? लो, आज ही तुम्हारे ध्यान का फल तुम्हें मिल रहा है। तुम मानिनी स्त्री के चित्तरूपी कमल के मित्र (सूर्य-सुहृद्) हो। (यह सारीय नाम का छंद कहा गया)। प्रणयसहित, रोमांचित-शरीर, सगुण, सुन्दर चरणों व सुन्दर मुखवाली राजपत्नी अभयादेवी ऐसी शोभायमान है, जैसी जलसहित, कंटीली, राजहंसों को खूब अपने आसपास भ्रमण करानेवाली व पत्रों से युक्त पद्मिनी।

२१. अभया के प्रेम का संदेश

अभया बिना भूषण के भी बहुत सुन्दर दिखाई देती है। भूषित होने पर तो वह त्रिभुवन में सर्वश्रेष्ठ हो जाती है। कहा जाता है कि अप्सराएँ देवों और

मनुष्यों को मोह लेती हैं। किन्तु वे उसके पैरों में बांधने लायक भी शोभा नहीं पातीं। यदि वह सप्तस्वरयुक्त वीणा बजा दे, तो मुनियों के भी कामज्वर ला देती है। जो अपने रूप से सूर्य को भी स्तब्ध कर देती है, वैसी क्या बिना पुण्य के मिल सकती है ? ऐसी अभया तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा कर रही है। आओ-आओ, वह तुम्हारे उमाह में बैठी है। पंडिता के इतना कहने पर भी सुदर्शन का मन जरा भी नहीं भीगा। क्या नदी के वेग से सागर में क्षोभ उत्पन्न किया जा सकता है ? वहां से लौटकर पंडिता ने नमस्कार करते हुए, जब वह वृत्तान्त सुनाया, तब अभया भय छोड़ बोली—"अब यहां कोई दूसरा उपाय नहीं है। तू पुनः उसके पास जा। यदि वह किसी प्रकार भी आने के लिए तैयार न हो, तो उसे जबरदस्ती उठाकर ले आ; यही मुझे भाता है। मैं उसके साथ पुरुषायित करूंगी। जो बात दैवाधीन है, उसको कौन निवारण कर सकता है ? जो रुचे, उसे अवश्य (पराधीन) होने पर भी अपने वश में करना ही चाहिये। क्या विष के भय से नागमणि छोड़ देना उचित है ? तू क्यों आशंका करती है ? यहां जो कोई करंब (कड़वी तूंबी) खाएगा, वह, हे माता, लोक में फजीहत होता हुआ स्वयं विडम्बना भोगेगा।

२२. पंडिता का सुदर्शन को जबर्दस्ती राजप्रासाद में ले जाना

तब पंडिता ने जाकर, कामदेव स्वरूप सुदर्शन की आंखें झप दीं, और उसे शीघ्र उठा लिया। आती हुई उसे जब किसी ने पूछा, तब उस विदुषी ने उत्तर दिया—राजा की प्रतिमा में अति अनुराग-युक्त हुई अभयादेवी पुतले को जगाएगी। किन्तु वह पुतला भग्न हो गया, अतएव हे पुत्र, मैं स्वयं जा कर यह दूसरा पुतला लेकर आई हूं। जब किसी और दूसरे ने भक्तिभाव से पूछा, तब उसने उसका निरसन कर दिया—तुम्हें इस चिन्ता से क्या ? किसी अन्य ने कहा—हे माता, मुझे कहो तो, तुम इस समय कहां गई थीं ? वह बोली—अरे, कहने से क्या लाभ ? मेरे मार्ग में छूत हो गई, हूं हूं, हे पुत्रो, हटो, दूर हटो। इस प्रकार उत्तर देते हुए, वह वहां पहुंची, जहां पौरद्वार के द्वारपाल थे। फिर उस विदुषी ने भयरहित होकर प्रासाद के सातों द्वारों में प्रवेश किया। द्वारपाल निश्चल खड़े रहे, मानों उन्हें किसी ने भींत पर लिखा हो।

२३. रानी के शयनागार में सुदर्शन का धर्म-संकट

लोगों के चित्त को प्रसन्न करने वाले उस राजप्रासाद में प्रविष्ट हो, पंडिता ने पंडित सुदर्शन को गद्दे पर ला छोड़ा। ऐसे समय में वह राजश्रेष्ठीपुत्र, सज्जनों का आनन्ददायी, देवों और साधुओं की वंदना करने वाला, धर्मरूपी रथ पर आरूढ, धैर्य में मंदर पर्वत के समान स्थिर, ऋद्धि में पुरंदर, तेज में दिनेश्वर तथा बुद्धि से जिनेश्वर, भावना में निष्ठित, कामोत्सर्ग में संस्थित, सुभग व अक्रोधी-सुदर्शन चिन्तन करने लगा—क्या मैं वह प्रेमकांड करूं, जो पंडिता ने बतलाया है ? हाय, हाय,

वह तो बुद्धिमानों के लिए बड़ा निन्दनीय है। उसका तो विचार करना भी बुरा है। जो कोई काम से खंडित नहीं हुआ, वही सराहनीय पंडित है। (यह उण्हिया नाम का छंद है) सत्पुरुष का मन गम्भीर होता है। वह विपत्ति में भी कायर नहीं बनता। क्या सुरों द्वारा मंथन के आरम्भ होने पर सागर अपनी मर्यादा छोड़ देता है ?

२४. सुदर्शन की धर्म-भावना व भीष्म-प्रतिज्ञा

रे निहीन-दीन जीव, तू इन कारणों से पाप का आस्रव करता है :—परिग्रह के अप्रमाण से, मद्यपान व मांस भोजन द्वारा; ज्ञानी, संतों, संयमियों, देवों और साधुओं की निन्दा से; संक्लिष्ट, दुष्ट, ढीठ और क्रूर देवों की वन्दना करने से; कालकूट मिश्रित अन्न का भोजन देने से; वस्तुओं, स्त्री, धन, इष्ट व नष्ट का शोक करने से, झूठी गवाही, झूठे नापतोल व नकली द्रव्य देने से; काम, क्रोध, लोभ, मोह, मान और दम्भ की भावनाओं से; दूध में पानी, घृत में तेल व अनाज में धूल के मिश्रण से। इसी प्रकार जहाँ-तहाँ हास्य, रोष व खीज करने से, राजा वैरी, चोर, जार तथा स्त्री की कथा चलाने से; देश, राष्ट्र, ग्राम, सीमा दुर्ग व शैल (पहाड़ी वन) जलाने से; स्थूल व सूक्ष्म प्राणियों व जीवों के विदारण से; तथा लोलुप चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, व स्पर्शेन्द्रियों की प्रेरणा से। इस प्रकार चिंतन करके उस वणीन्द्र ने उत्तम प्रतिज्ञा ले ली। (यह अर्द्धजातिक चित्र नाम का छंद है)। यदि मैं इस अवसर पर यम के आघात से किसी प्रकार उबर (निकल) गया तो कल दिन होते ही जिनेन्द्र द्वारा उपदिष्ट तप ले लूँगा।

२५. अभया का प्रेम-प्रस्ताव

इस प्रकार, जब सुदर्शन व्रतपूर्ण सुप्रतिज्ञा ले रहा था, तभी राजपत्नी सहसा उसकी ओर देखकर सोचने लगी—'यह शृङ्गारहीन होते हुए भी साक्षात् कामदेव है। यदि यह अपने शरीर को आभूषित कर ले, तब तो समस्त जगत को मोहित कर लेगा; विरहाग्नि से संतप्त मेरा चित्त तो है ही कितना ? फिर वह अपनी स्वच्छ निमीलित आँखों सहित बोली—'तपाये हुए सुवर्ण के सदृश, अपने मुख से चन्द्र को जीतनेवाले, तथा स्त्रियों के चित्त में मद उत्पन्न करनेवाले, हे नाथ, आप क्या सोच रहे हैं ? हे सुन्दर, इस जन्म में तुम अविपर्विन जिनधर्म में प्रयास करके स्वर्गवास ही तो पाओगे। किन्तु उस सुख से क्या लाभ, जो दुःखपूर्वक प्राप्त हो ? इसलिये लो, तुम इस प्रत्यक्ष रतिसुख का आदर करो। तुम अविचारी मत बनो। संसार में वही सार है, जो भोगने में मीठा और सोचने में स्वमनोष्ट (अपना मनचाहा) है। दूसरा जन्म किसने देखा है ? जो कुछ कौलागम में कहा गया है, उसको ध्यान में लाओ। हे प्रत्यक्ष कामदेव, तुम देर क्यों लगाते हो। (यह सुन्दर पदपंक्ति युक्त लीलाछन्द है)। हे सुन्दर,

यदि हम दोनों प्रेम से काल व्यतीत करें, तो कहो, उस मनोहर स्वर्ग को प्राप्त करके भी क्या करेंगे ?

२६. उसके प्रेम को स्वीकार करने के सुख

हे सुभग, यदि तू ऐसे मन्दिर की इच्छा करता है, जो शंख, कुंद, चन्द्र, तुषार, हीरा, गौरी व गंगा की तरंगावली के सदृश शुभ्र हो, जो प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठम, सप्तम, अष्ठम आदि अन्यान्य माणिक्य भूमियों की जगमगाहट से समस्त दिशाओं को उज्ज्वल कर रहा हो; जहाँ विविध पुष्प-पुञ्जों की किंजल्क से सम्मिश्रित कस्तूरी, कर्पूर व केशर की आमोद से भ्रमर दौड़ रहे हों, तथा जो चलती हुई स्त्रियों के पैरों के पैजनों के झनकार की ध्वनि से उन्मत्त होकर नाचनेवाले मोरों से उद्भासित हो। यदि तू ऐसी बालिकाओं की इच्छा करता है जिनके बाल भौरों के समान काले हों, जो कुवलय सदृश श्यामल हों; जो मकरध्वज से आलोड़ित, अत्यन्त भोली, किसलय सदृश कोमल, स्तनों के भार से आक्रान्त, चन्द्र की कान्ति को जीतनेवाली तथा वज्र के समान कृशोदरी हों; जो हार लटकाये हुए, लोगों के मन को हरण करनेवाली रति की सहोदरी हों। हे वणीन्द्र, यदि तू ऐसा उत्तम राजकुल चाहता है जहाँ सिर पर विविध छत्र विराजमान हों, जो ध्वजाओं से समाकुल हो, लोगों को सुन्दर दिखाई दे; और जहाँ नित्य उत्सवों द्वारा मंगल कार्य रचा जाता हो। यदि तू मनोज्ञ और चंचल घोड़ों, मद झरते हुए उत्तुंग शैल सदृश हाथियों, सुवर्ण और मणियों की किरणों से स्नावित श्रेष्ठ रथों एवं सेवा में आये हुए, व प्रणाम करते हुए समस्त किंकरों की इच्छा करता है, तो हे सुभग, मेरा उपभोग कर और इस महीतल पर राजा बन। तू उस शंखनिधि के कथानक को सच्चा सिद्ध मत कर।

२७. देवों में कामविकार के पौराणिक दृष्टान्त

हे सुभग, क्या तूने कहीं यह विख्यात बात नहीं सुनी ? परस्त्रीगमन तो देवों में भी हुआ है। गौरी के परोक्ष में मदनाग्नि से संतप्त होकर हर (महादेव) गंगा से रमण करने के लिए कैलाश पर पहुँचे। गोपियों के सौन्दर्य से सॅरक्त होकर दनुजारि-नारायण (कृष्ण) रति का उपभोग करने के लिए रात्रि में संकेत-स्थल पर गये। ब्रह्मा ने तिलोत्तमा अप्सरा के विरह में रीछनी को भी नहीं छोड़ा; उसका भी वन में उपभोग किया। सूर्य ने कुन्ती का अभिगमन किया, जिससे उसे पुत्र उत्पन्न हुआ जो भुवन में कर्ण नाम से सुप्रसिद्ध है। श्री विश्वामित्र ने प्रिया का रमण किया; जिसे देख लेने के कारण उन्होंने चन्द्र को मृगचिह्न के आघात से सकलंक कर दिया। अहल्या के साथ रति में आसक्त इन्द्र को प्रत्यक्ष देखकर गौतम ने उसे सहस्र-भग और फिर सहस्राक्ष बना दिया। इस समस्त वृत्तान्त को जानकर तू बात मान ले। (यह निस्संदेह मदनावतार छंद है)।

ऐसे और भी सैकड़ों दृष्टान्त देकर उस हंसगामिनी कामिनी ने नानाप्रकार के उपायों से पुनः पुनः वणिग्वर को क्षोभित करने का प्रयत्न किया।

२८. अभया की लुभाऊ काम-चेष्टाएँ

वह जनमनोहारी विविध उत्तम आभूषणों को धारण करके उसके निकट आती, भौंहें मरोड़ती, अधर काटती, विशाल सघन स्तन उघाड़ती, और तत्क्षण उन्हें छुपा लेती; नाभि की ओर देखती, पुनः पुनः नीवि-बंधन को शिथिल करती; केश छोड़ती, अंग मरोड़ती, कटाक्ष देती, मुख विकसाती, पांव लगती और फिर आलिंगन करती; धीरे धीरे नख घट्टन करती, व अधर चाटती; मनमाने अव्यक्त वचन बोलती तथा भले प्रकार चुंबन करती। ऐसी व अन्य नाना प्रकार की काम चेष्टाओं से यद्यपि उसने क्षोभ उत्पन्न करने का प्रयत्न किया, तो भी वह जिनदासी का पुत्र सुदर्शन चलायमान नहीं हुआ और ऐसा स्थिर रहा, जैसे मानो वह काष्ठ का ही गया हो। (यह निश्चय से मदन छंद कहा गया है)। तो भी अभया हटी नहीं। वह नाना प्रकार के उपाय सोचती ही रही; जिस प्रकार स्वर्गंगा कैलाश के आसपास घूमती रही।

२९. अभया की सुदर्शन को भर्त्सना

फिर वह रुष्ट हो उठी, और डॉटने लगी—रे दर्पिष्ठ, ढीठ, शिथिल अधरोष्ठ वाले, पिशुन (शैतान) के अवतार, रे रे किरात, तूने इतना पुण्य कहां कमाया है, जो तू सन्तोष भर मेरे मुख का चुंबन कर सके? क्या तूने देवस्थान का ब्रह्मा या भानु का पूजन किया है, जो तू अपने दांतों से मेरे ताम्रवर्ण अधरबिंब को काटे व नाभि में रति करे? क्या तूने ऐसा भृगुपात किया है, जो तू नखों से भग्न रति सुखदायी मेरे सघन स्तनों से लग सके? क्या तूने अन्य जन्म में उत्तम वैष्णव धर्म धारण करके गहन वन का लंघन कर, अपना मथन किया है, व कुरुक्षेत्र का ग्रहण किया है, जो तू, रे हताश, वणिग्दास, मेरे केशों का ग्रहण पा सके? क्या तूने सैकड़ों दुखों का दलन करने वाले गजकनखल में अखंड पितृपिंड पाड़ा (दिया) है, जो तू नृप के चित्त का दमन करने वाले विशाल और रमणीक मेरे रमणस्थान का आरोहण करे? उसे तू पा ही कहां सकता है? क्या तू ने रमणीक व घोर तप संचय किया है, जो तू मेरे लटकते हुए हार वाले सुन्दर उरस्थल पर आघात करे? इसके भी ऊपर अब मैं तुझ से क्या कहूं? तूं मुक्तभाव से (धर्म ध्यान का बंधन छोड़ कर) अपना मुख भी तो देख। (इसे स्पष्ट चन्द्रलेखा छंद जानो)। मैंने तुझसे साम व भेद नीति से बात की; तुझे फटकारा भी; तो भी तू कुछ नहीं बोलता। तू ने अपने मन में यह कैसा दृढ़ असह्य आग्रह किया है, जो तू अभी भी मुझ पर (काम के) बाण छोड़ रहा है?

३०. अभया का अन्तिम प्रलोभन और धमकी

अभी भी मैं तुझ पर अनुराग रखती हूं। मैं जन्म भर तेरे पैरों को नहीं छोड़ूंगी। अभी भी तू विषय सुख का उपभोग कर। भला, कह तो, मोक्ष को किसने जाकर देखा है? अथवा, यदि तू किसी कारणवश आज मेरी अवहेलना करता है, तो ले, कल तेरा कार्य सिद्ध (समाप्त) हो। यदि इतना ही ताप मैं तुझे न दूं; यदि तुझे सगोत्र क्षय को न पहुंचा दूं, तो मैं बेचारी अभया नाम ही न रखूं (अर्थात् छोड़ दूं)। मैं अब पूर्ववत् पातिव्रत सेवी (या पति के पदों की सेविका) हो गई। अतः यदि मैं तेरा नाश न कर डालूं, तो सब लोगों के देखते हुए मैं अपने आप फांसी पर लटक कर मर जाउंगी। बहुत क्या? अब मैं स्त्री-ढाढ़स (साहस) करके दिखाती हूं। मरकर भी मैं तुझे छोड़ूंगी नहीं। फिर भी मैं तेरा घोर उपसर्ग करूंगी। इस प्रकार पुनः पुन खूब कहकर वह सुन्दरी अपने शयन पर जा पड़ी। वह राजरानी ऐसी प्रतीत हुई जैसे मानों नागिनी निष्पंद पड़ी हो।

३१. सुदर्शन और अभया की विरोधी मानसिक दशाएं

तब यहां सुदर्शन अपने कर्त्तव्य का विचार करने लगा; उधर अभया सोचने लगी मैं इस मनोज्ञ का रमण न कर पाई। सुदर्शन सोचता, जल जाय यह नारी; अभया सोचती, यह मेरे सुख का शत्रु हुआ। सुदर्शन सोचता, मैं उबर जाऊं; अभया सोचती, इस सुन्दर को पकड़ रखूं। सुदर्शन कर्मों के नाश करने की बात सोचता; अभया रति अभिलाषा की बात सोचती। सुदर्शन ज्ञान लाभ की बात सोचता, अभया सोचती, मेरे अंग में दाह हो रहा है। सुदर्शन मोक्ष मार्ग की चिन्ता करता; अभया चिन्ता करती मैं भोग न भोग सकी। सुदर्शन विचारता कि मैं कर्म का क्षय करूं; अभया सोचती, मैंने अधर्म किया। सुदर्शन सोचता कि जग अनित्य है, अभया चिन्ता करती कि मरी मृत्यु आ पहुंची। सुदर्शन हृदय में विचारता, रे जीव, तू दुराचारिणी के साहस की अवहेलना कर; तथा अतिशयों और कल्याणकों से युक्त अर्हन्तों की आराधना कर।

३२. सम्यक्चारित्र की दुर्लभता

पाताल में शेषनाग का पाना सुलभ है। कामातुर के विरह की दाह सुलभ है। नया मेघ आने पर जल का प्रवाह सुलभ है। हीरों की खान में हीरे की प्राप्ति सुलभ है। काश्मीर में केशरपिंड सुलभ है। मानसरोवर में कमलषंड सुलभ है। नाना द्वीपों में विविध भांड सुलभ हैं। पाषाण से हिरण्य खंड पाना सुलभ है। मलयाचल में सुगंधयुक्त वायु सुलभ है। गगनांगन में तारापुंज सुलभ है। स्वामी का कार्य कर देने पर उसका प्रसाद सुलभ है। ईर्ष्यालु व्यक्ति में कषाय सुलभ है। रविकांत मणिद्वारा अग्नि सुलभ है। उत्तम लक्षण शास्त्र

(व्याकरण) में पदों का समास सुलभ है। आगम में धर्मोपदेश सुलभ है। सुकविजनों में विशेष बुद्धि सुलभ है। मनुष्य-भव में प्रिय कलत्र सुलभ है। किन्तु बड़ी दुर्लभ है, जिन शासन के अनुसार एक अति पवित्र वस्तु, जिसे मैं पहले कभी न प्राप्त कर सका। उस सम्यक्चारित्र को मैं कैसे नष्ट कर दूँ? इस प्रकार विकल्प करता हुआ, जब सुदर्शन अव्याकुलचित्त से स्थित था, तब अभया देवी व्याकुल होकर अपने मन में पुनः पुनः सोचने लगी।

३३. अभया का पश्चात्ताप

कहाँ वसन्त और कहाँ वह उपवन रहा? कहाँ नरेन्द्र क्रीड़ा को गया? कहाँ मैं हर्ष सहित वहाँ को चली? और कहाँ उस दुष्टा ने हर्ष से उल्लसित होकर वह बात कही? कहाँ से पंडिता इस मूर्ख को ले आई? हाय, मैंने इस होते हुए कार्य को नहीं समझा। हाय, मैंने ऐसी भावना भाई जिससे मरण और कर्मबंधन की प्राप्ति होती है। मुझे कपिला ने जब इस ओर प्रेरित किया, तभी पंडिता ने मुझे रोका। मैं इस (सुदर्शन) के गुणों को जानती हुई भी निर्गुण होकर, इस दुराग्रह में क्यों लग पड़ी? भले ही कोई अपने गुणों के कारण काम का विषय होने से रुचिकर हो, किन्तु यदि वह अपने वश का नहीं, तो उसे छोड़ देना उचित है; जिस प्रकार कि प्रत्यंचायुक्त धनुष के सदृश बाण भी रुचिकर होता है, तो भी चूँकि वह मुट्ठी में नहीं समाता, इसलिए छोड़ दिया जाता है। इसके पास न खाना सुहाता है और न पीना; योंही गले की दाह से मर जाना पड़ेगा। परदारगमन बड़ा विरूद्ध आचरण है, तथा दुस्सह नरक के दुःख का हरकारा है। अतएव जब तक कोई कुछ भी जान नहीं पाया, तब तक इसे (सुदर्शन को) वहीं छुड़वा देना उचित है। ऐसा विचार कर घबराहट के साथ अभया महादेवी ने वणिग्वर को चारों ओर से लपेट लिया, जैसे मानों चंदन वृक्ष को विष की लता ने वेष्टित कर लिया हो।

३४. अभया का कपट-जाल

उसे शीघ्र उठाकर ज्योंही वह चली, त्योंही रात्रि व्यतीत हो गई और सूर्य उदित हो गया। प्रातःकाल हुआ देख वह तुरन्त घबरा उठी और उसने तत्काल उस चरमशरीरी सुदर्शन को अपने शयन पर जा डाला। जिस प्रकार चन्द्रनखा लक्ष्मण से रुष्ट हुई थी, तथा जिस प्रकार पहले धृष्टा वीरवती दत्त से; व जिसप्रकार कनकमाला प्रद्युम्न से क्रुद्ध हुई थी, उसी प्रकार अभया वणीन्द्र के प्रति विकराल हो उठी। उसने द्वितीया के चन्द्र के आकार सूचिमुखरूप अपने ही हाथों के नखों से अपने शरीर को फाड़ डाला। उसके रुधिर से विलिप्त सघन स्तन ऐसे दीखने लगे, जैसे मानों सुवर्ण के कलश केशर से सींचे गये हों। अपने हाथों से छाती पीटती हुई वह हताश यह कहती हुई झटपट उठी—"यह संड

मुसंडा, परांगना में अनुरक्त-चित्त, महामाया का दिया (भेजा) हुआ कहाँ से आ पहुँचा ? अरे देखो, इस बनिये ने मेरे सुन्दर अंगों को नोंच डाला। जब तक यह मुझे मार न डाले, तबतक, हे लोगो, मिलकर दौड़ो, दौड़ो।"

३५. पुरुष और स्त्री का चित्त-भेद

ज्यों ही अभया ने पुकार मचाई, त्यों ही वणिग्वर सुदर्शन अपने मन में चिन्तन करने लगा - पुरुष अपने चित्त में उमाहा रहता है; और महिला अन्य पुरुष की वांछा करती है। पुरुष अनुरक्त होकर उसके निकट जाता है; तो महिला उसकी ओर वक्रदृष्टि से देखती है। पुरुष खूब गाढ़ आलिङ्गन करता है; तब महिला का चित्त कहीं अन्यत्र भ्रमण करता है। पुरुष स्नेहपूर्ण सद्भाव प्रगट करता है; तब महिला कपट मिथ्याचारों द्वारा उसका मनोरञ्जन करती है। पुरुष धन लाकर घर में रखता है; महिला उसे भी चुरा कर रखती है। पुरुष अनेक प्रकार से पूछता है; तो महिला झूठी बातें बनाकर उत्तर देती है। पुरुष अपनी गृहिणी में चित्त लगाता है; और महिला अपने यार में आसक्त होती है। यदि पुरुष कार्यवश घर छोड़कर कहीं जाता है, तो उतने ही में महिला दूसरे घर में घूम आती है; जैसे गाय हारों (खलिहानों) में चरकर आ जाती है।

३६. स्त्री क्या नहीं कर सकती ?

यदि गमनागमन करनेवाले पक्षियों का आकाश में, व जलचरों का पानी में चरणमार्ग दिखाई दे जाय, यदि दर्पण में प्रतिबिम्ब किसी प्रकार हाथ से ग्रहण करने में आ जावे; यदि पारे का रस सुई के मुख पर बिल्कुल स्थिर हो जावे; तो ही स्त्री का चित्त अनुरक्त होकर किसी अन्य पुरुष के ऊपर चलायमान न होवे ॥१॥ महिला काम के वश होकर न जाने क्या क्या उपाय करती और कराती है; और जब उपायों में असफल होकर विरक्त हो जाती है, तो स्वयं मर जाती है, मार डालती है या मरवा डालती है। यदि मरण की बात छोड़ दो, तो वह सैकड़ों बहानों से अपने सुहृदों को भी पकड़वा देती है. वह स्वयं को कलङ्कित करती है और दूसरों को कलङ्कित कराती है. एवं बहुत अनर्थ प्रकट करती है। वह अग्नि की ज्वालाओं के पुञ्ज समान प्रज्वलित होकर दूसरों के प्राणों का घात करा डालती है ॥२॥ युवती एक नदी के सदृश विषम, वक्र, नीचरत, गहरी, बहुविभ्रम, उभय-पक्षों में दूषण लगानेवाली, मन्दगति एवं सलौने (सुन्दर पुरुष व लवण समुद्र) का आश्रय लेनेवाली होती है। वह अग्नि की धूमावलि के सदृश उत्तम घर को मैला करनेवाली तथा साहंकार (अहंकारयुक्त तथा अंधकारपूर्ण काली) होती है, एवं विषशक्ति के समान मरणकारिणी तथा तलवार की धार के समान तीखी होती है ॥३॥ जिस प्रकार हरिण के सींगों, बांस के मूलों, मंजिष्ठ लता की जड़ों, अंकुशों, सर्पों और मकरों व डाढ़ों, नदी के बलनों, खलजनों, अश्वग्रीवाओं तथा

शरडों (करकैंटों) की वक्रता छूटती नहीं, उसी प्रकार उनके पास से अधिक जिनकी वक्रता कभी छूटती नहीं, उन स्त्रियों के द्वारा सुरत के बहाने कामी पुरुषों के हृदय (प्राणों) का तृण के समान विनाश किया जाता है ।।४।। स्त्री कपट-पूर्वक ही चलती, कपट से बोलती वा टेढ़ी भौंहें करती; कपटभाव से अपने स्तन व नाभि दिखलाती, कपट से पुनः पुनः मुस्कराती एवं कपटयुक्त होकर अपने अंग मटकाती है। वह कपट से सैकड़ों चापलूसियाँ दिखाती, कपट से सौगंध खाती, कपट से कहती 'तुम्हीं मेरे वल्लभ हो,' और कपट से चित्तका हरण करती है ।।५।। दृष्टिदर्शन, स्नेह, सद्भाव, उपकार, चाटुवचन, दान, संग, विश्वासकरण, कुलकार्य, बड़ाई, विनय, धनक्षय, धिक्कार, मरण इन सभी बातों की मर्यादा से च्युत हुई, तुच्छ, कलुषित व भीषण नारी किस प्रकार नहीं मानती, जिस प्रकार एक क्षुद्र, मलिन व भयंकर वर्षाकालीन गिरिनदी ।।६।। काव्य, लक्षण (व्याकरण), तर्क, निघण्टु, छंद, अलंकार, सिद्धान्त के चरण और करणादि भेद, जीवों के अनेक शुभ व अशुभ रूप कर्मप्रकृति के बन्धन, मन्त्र-तन्त्र व शकुन, ये सभी शास्त्र जाने जा सकते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं; केवल एक स्त्री चरित्र को छोड़कर ।।७।। घोड़े, गधे, सिंह, व्याघ्र, आशीविष (अजगर) व साँप, इनका भी चित्त किसी प्रकार जाना जा सकता है, किन्तु इस पृथ्वी की पीठ पर कौन ऐसा है, जो मिथ्या-चार में प्रवृत्त स्त्री के चित्त को अणुमात्र भी समझने में समर्थ हो? विचित्र ग्रहचक्र, समुद्र का जल, व बालू का पुंज, इनका प्रमाण किसी प्रकार जान भी लिया जाय, तो भी स्त्री का चरित्र जाना नहीं जा सकता ।।८।। खल, अग्नि, नखीले, सींगोंवाले, व डाढ़ोंवाले पशु, राजकुल, शत्रु, सरिता, मित्र, कपटी, रात्रि, मूर्ख, व्यसनी, ठग व दूत, बहुत क्या, सम्भव है इनका भी विश्वास उत्पन्न हो जाय, तो भी स्त्री का अणुमात्र भी विश्वास नहीं किया जा सकता, भले ही उसमें सहस्रों गुण हों ।।९।। नारी चोर होती है, निर्लज्ज, लोभी और चलचित्त होती है। मायाविनी, साहसी, झूठ की खान, परपुरुष-मोहित व शीलगुण-हीन तथा सद्भाव-द्रोहिणी होती है। उसके ऐसे गुण जानते हुए भी जो कोई उसमें प्रतीति करता है, वह नाना दुःखों को प्राप्त होता है व तिल-तिल काटा जाता है ।।१०।। स्त्री के विश्वास से ही यशोधर मरा, साकेतपुर का अधिपति देवरति राज्य से भ्रष्ट हुआ, तथा नौ सहस्र नागों का बलधारी कीचक भी स्त्री का विश्वास करके प्रनष्ट हुआ। और भी जो कोई स्त्री की बुद्धि पर विश्वास करेंगे, उन सभी के गलकन्दल में यम का पाश पड़ेगा ।।११।। जिसप्रकार भौंहों से, जैसी दृष्टि से तथा जैसे वचन बोलने में स्त्री वक्र होती है, उसी प्रकार वह हृदय से भी वक्र होती है। वह स्वेच्छाचार करके पश्चात् लोगों के बीच बार बार गर्जती है। ढीठ स्त्री झूठ पुकार मचाकर और रोदन करके दूसरे को मरवा डालती है। हाय-हाय, स्त्री रूठकर क्या क्या नहीं करती? कुछ मत कहो ।।१२।।

(अभया की) उस पुकार को सुनकर, शूरवीर लोग शीघ्र ही धनुष और बाणों से सज्जित होकर विद्युत् की तेजी से दौड़ पड़े; जिस प्रकार कि गर्जना

करता हुआ, इन्द्रधनुषयुक्त सूर्यप्रभाधारी व विद्युत की चमक को लिये हुये, वर्षाकाल में नया मेघ प्रकट होता है।

३७. राजा को खबर और उसका रोष

तब लोगों को दौड़ते हुए देख कर राजा ने पूछा—"क्या कहीं गिरि के समान तुंग मदोन्मत्त हाथी छूट पड़ा है, या कोई महाधनी पुरुष बंदीगृह में डाला गया है, अथवा कोई अभिमानी शत्रु मेरे साथ युद्ध करने के लिए प्रवृत्त हो गया है॥ १॥ अथवा यहाँ कोई नटों का तमाशा हो रहा है अथवा कोई बड़ा कौतुक उत्पन्न हुआ है ?" तब किसी एक मनुष्य ने, नमन करते हुए, राजा को वृत्तान्त सुनाया कि जिस प्रकार सरोवर में घुस कर एक गजपति पद्मिनी का विध्वंस कर डालता है, उसी प्रकार सुदर्शन ने महाराज की अभया देवी को कलुषित किया है॥ २॥ यह सुन कर राजा लाल आंखें करके, ओंठ काटता हुआ, नकुए फुलाता हुआ, भाल पर त्रिबली खेंच कर, भौंहें मरोड़ कर, शरीर से कांपते हुए, खूब पसीने से भींग कर, भूतल पर हाथ पटक कर, रोषपूर्ण हो, इस प्रकार बोला॥ ३॥ कौन ऐसा है, जो मृगतृष्णिका को पीये, वज्र की सूई को खावे, विष के फूल चबाये, समुद्र की लहरों को सुखा दे, यम की दाढ़ों को तोड़ ले (अथवा यम की दाढ़ी को नोच ले) गरुड़ के परवों को उखाड़ ले; एवं कौन ऐसा बली है, जो छल से व बलात्कार से मेरी प्रिया का उपभोग कर ले॥ ४॥ जो कोई अग्नि, सर्प, वैरी, तथा चतुर जार की उपेक्षा करता है, वह दीर्घकाल तक सुख नहीं पा सकता। वह शीघ्र ही बड़ी आपत्ति देखता है। दुष्ट लोगों का निग्रह करना और सज्जनों का पालन करना योग्य है, और यही राजा का भूषण है। (यह पृथ्वी छंद कहा गया है)॥ ५॥ रे रे भटो, जल्दी करो, जल्दी करो, जाओ, जाओ; और अभया को सहारा दो। तथा उस परपुरुष को पकड़ो, पकड़ो, पीटो, और तिल तिल काट कर क्षणभर में मार डालो।'

३८. भटों की अपनी-अपनी डींग

राजा का यह बचन सुन कर किसी ने अपनी तलवार पर दृष्टि डाली; किसी ने उदार व गुणवती व मुष्टिग्राह्य कटिवाली उत्तम कलत्र के समान प्रत्यंचा चढ़े हुए धनुष की ओर देखा और उसे अपनी मुट्ठी में लिया। किसी ने अपनी असिधेनुका (तेग) को चमचमाया, मानों काल ने अपनी जिह्वा निकाल कर दिखलाई हो। किसी ने कहा—'जिस पर मेरा स्वामी रूठा है, उसकी मैं ओंठ सहित नाक काट डालूंगा।' कोई बोल उठा—'आज का दिन धन्य है, जो हमारे देव-देव ने हमें प्रेषण (काम कर दिखलाने का आदेश) दिया। मैं हाथोंहाथ (जल्दी-जल्दी) जाता हूं और इन्द्रजीत के समान उसको मार कर धर देता हूं।' किसी ने कहा—'मैं भी जाता हूं और जैसा अर्जुन कर्ण से भिड़ा था, वैसा शत्रु से जा लगता हूं।'

किसी ने कहा—'मैं अब राम बनता हूं और विट (नकली) सुग्रीव का मान दलन करता हूं।' किसी ने कहा—'मेरे लिये ही तो शत्रु पर्याप्त नहीं, योद्धाओं का समूह क्यों भेजा जा रहा है ?' किसी ने कहा—'गर्जना क्यों कर रहे हो, विरला ही कोई ऐसा होता है, जो अपने स्वामी का कार्य सिद्ध कर दिखावे।' इस प्रकार गरज कर, यशलंपटी सुभटों ने दौड़ कर वणिग्वर सुदर्शन को चारों ओर से ऐसा घेर लिया, जैसे कहीं किसी बड़े हाथी को कुत्ते घेर लें।

३९. खबर पाने पर मनोरमा की दशा

जब वणिग्वर मार डालने के लिये ले जाया गया, तब नगर में लोगों ने हाहाकार मचाया। किसी ने यह बात उसकी प्रफुल्लकमल सदृश मुखवाली पत्नी को जा कही—"तेरा कान्त राजा की पत्नी के प्रति चूक गया है; इसलिए वह दुःसह मरणावस्था को प्राप्त हुआ है।" यह सुन कर मनोरमा उठती, गिरती, उरस्थल को हाथों से पीटती, आंखों के आंसुओं से स्तनों को सींचती व तन को पसीने के बिन्दुओं से आच्छादित करती, मणिमय हारों के डोरों को तोड़ती, मुख की सुगन्धि वायु के कारण एकत्र होते हुए भौरों का निवारण करती, अति दीर्घ और उष्ण श्वास छोड़ती, पवन से आहत लता सदृश कांपती तथा 'हाय-हाय नाथ, यह आपने क्या किया ?' ऐसा कहती हुई, चलते-चलते उस स्थान पर पहुंची। उन समस्त भटों की पुनः पुनः निंदा करती हुई मनोरमा ऐसी प्रतीत हुई, जैसी केशग्रहण के समय मन में रुष्ट हुई, रुदन करती हुई पांचाली (द्रौपदी)।

४०. मनोरमा-विलाप

मनोरमा पुकार मचाने लगी—हाय-हाय नाथ, आपको छोड़ कर मुझे कौन सहारा देगा ? हाय-हाय, नाथ-नाथ, जगत् सुन्दर, संपदा में प्रत्यक्ष पुरंदर। हाय-हाय नाथ, जन-वल्लभ, अमरांगनाओं के मन-दुर्लभ। हाय-हाय नाथ, आनन्ददायी, जिनेन्द्रों और महर्षियों का वन्दन करने वाले, हाय-हाय मकरध्वज, हिंसादिक दोषों के निर्लोभी (त्यागी)। हाय-हाय नाथ, यह क्या सोचा जो आपने जाकर पर स्त्री का सेवन किया ? हाय-हाय नाथ, आपका व्रत भंग हुआ। वज्र के स्तंभ में यह घुन कैसे आ लगा ? हाय-हाय नाथ, इस परस्पर विरोधी बात पर मेरे चित्त में भरोसा नहीं होता। मैं जान गई कि समस्त सुर और असुर नपुंसक हैं, जब कि किसी ने भी मेरे कान्त की रक्षा नहीं की। हाय-हाय, मैं किससे कहूं ? पराये दुःख से कोई भी दुखी नहीं होता।

४१. वह सुख-संस्मरण

हाय-हाय नाथ, सुदर्शन, सुन्दर, चन्द्रमुख, सुजन, सलोने, सलक्षण, जिनमति के सुपुत्र, मुझे स्मरण आता है, तुम्हारे प्रथम समागम (दर्शन) के पश्चात् भारी

विरहवेदना ; फिर वह विवाह के समय का पाणिग्रहण और तारामेलन। मुझे स्मरण आता है वह प्रतिदिन का रतिगृह में गाढ़ आलिंगन तथा हाव, भाव, विलास और विभ्रम सहित बोलचाल। स्मरण आता है वह उपवन के बीच सरोवर में की गई जलक्रीड़ा, अनजाने मनोहर अव्यक्त वचन व अधरपीड़न। स्मरण आता है वह नये कोमल पत्रों से युक्त नील कमल द्वारा ताड़न, तथा मुक्ताफलों की छटावलि का बांधना और तोड़ना। स्मरण करती हूं वह सुगन्धि द्रव्यों का विलेपन, अंगों का भूषण, बार-बार का मनाना तथा प्रेम का रूसना। स्मरण करती हूं वह अपना बहुमान से पूरित होकर जल्दी जल्दी चल पड़ना, तथा आपके द्वारा प्रेमवचनों से संबोधित करना और करपल्लव पकड़ना। स्मरण करती हूं सुगन्धि केशरपिंड से अपना पिंगलवर्ण किया जाना तथा भौंरों से युक्त कल्पवृक्ष की मंजरी के कर्णपूर बना कर पहनाये जाना। स्मरण करती हूं अपने सुन्दर कपोलों पर पत्रावलि का लिखा जाना, धीरे-धीरे स्तनों का पीड़न व उत्तम केशों का ग्रहण। इतने पर भी मेरा वज्रमय हृदय फूट नहीं जाता। (यह सुप्रसिद्ध रासाकुलक छंद कहा गया)। हाय-हाय-हाय, रे विधि, दुष्ट, खल, रे तोड़ी (त्रुटित भग्न), तेरा नाश क्यों न हो? तूने मुझे एक निधि दिखलाकर फिर मेरी आँखों को क्यों उपाड़ डाला?

४२. इधर मनोरमा और उधर सुदर्शन का चिंतन

यदि मेघ आकाश में न चढ़े, यदि सूखे वृक्ष फल देने लगे, यदि मृगों के मारे सिंह मरने लगें, यदि मदन के बाण जिनेन्द्र के मन को हरण कर ले, यदि देव नरक में और नारकी स्वर्ग में, तथा मिथ्यामति त्रिभुवन के अग्रभाग (मोक्ष) में जाने लगे; यदि सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान से समृद्ध सिद्ध भी संसार में उत्पन्न होने लगे, तो ही तू परदारगमन कर सकता है; और हे चरमशरीरी, तू इनका मारा मर सकता है। जैसे जैसे मनोरमा यह कह रही थी, तैसे तैसे सुदर्शन चिन्तन कर रहा था - किसका पुत्र, व किसका घर और कलत्र? परमार्थ से न कोई शत्रु है और न मित्र। केवल मैंने भी संसार में भ्रमण करते हुए अन्यभव में इन पर प्रहार किया होगा, जिसके कारण ये अपने हाथों में तीक्ष्ण शस्त्र ले, निमित्त पाकर, मुझपर प्रहार करने में लग गये हैं। तीन लोक में कहीं भी अर्जित कर्म का फल दिये बिना नाश नहीं हो सकता। (स्वभाव से तो) मैं रत्नत्रय से संयुक्त, ऊर्ध्वगति, नानाप्रकार के बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थों (परिग्रहों) से जिनेन्द्र के समान परित्यक्त शुद्ध आत्मा हूँ।

४३. व्यन्तर देव द्वारा सुदर्शन की रक्षा

जब सुदर्शन इस प्रकार पुन पुन अपने मन में चिन्तन कर रहा था, तभी दर्पोद्भट योद्धा उसपर टूट पड़े। वे कहने लगे—'ले, अपने इष्टदेव का स्मरण कर ले।' यह कहकर वे उसके गले पर तलवारों के प्रहार करने लगे। उसी

अवसर पर वहाँ एक व्यन्तर आ पहुँचा। शत्रु और मित्र, कहो किसका दिखाई नहीं देता ? उस व्यन्तर ने उन समस्त भटों का स्तम्भन कर दिया और उनके तलवारों के प्रहारों को पुष्पमालाओं जैसा कर दिया। तब आकाश में देवों को आनन्द हुआ और उन्होंने जय-जय ध्वनि के साथ पुष्प-वृष्टि की। देवों द्वारा आकाश में ताड़ित दुंदुभी बजने लगी, मानों जीवलोक में इस प्रकार घोषणा कर रही हो कि यदि अपने मन में राग और द्वेष का त्याग करके लेशमात्र भी व्रतों का पालन किया जाय, तो देवों और मनुष्यों की पूजा प्राप्त करना तो आश्चर्य ही क्या, निर्दोष और पूज्य मोक्ष भी प्राप्त किया जा सकता है। उत्तम सम्यग्दर्शन रूपी आभूषण को धारण करनेवाले भव्यजनों द्वारा जिनेन्द्र का स्मरण करने पर, उनका समस्त पाप शीघ्र ही उसी प्रकार नष्ट हो जाता है, जिस प्रकार सूर्य के उदित होने पर अन्धकार।

४४. धर्मध्यान का प्रभाव

अति दुर्द्धर, अंजनपर्वत के समान कृष्णकाय, दिग्गजों को भी त्रासदायी, मेघ के समान गर्जना करनेवाला उन्मत्त हाथी, उस पर कोई आघात नहीं कर सकता जो अपने मन में जिनेन्द्र का स्मरण कर रहा हो ॥१॥ सोकर उठा हुआ, गज का अभिलाषी, महाबलशाली, लोलुपता से जीभ को लपलपाता हुआ, सक्रोध मृगेन्द्र भी उस पर अपने पंजे का आघात नहीं कर सकता, जो अपने मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण कर रहा हो ॥२॥ तमाल वृक्ष के सदृश झंपड (विकराल) शिरवाला, सूर्य के समान भीषण नेत्रों से युक्त, रौद्र पिशाच भी उसपर प्रसन्न हो जाता है, जो अपने मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण कर रहा हो ॥३॥ अपनी बढ़ती हुई तरंगों से आकाश का भी व्यतिक्रमण करनेवाला, जलचर जीवों द्वारा प्रकाशित कोलाहल से युक्त अथाह समुद्र भी उसके लिए गोपद मात्र हो जाता है, जिसके मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥४॥ अपने चमचमाते फणमणि के द्वारा दिगन्तों को निरुद्ध करनेवाला, यम के समान त्रैलोक्य के लिए क्षयंकर, क्रूर फणीन्द्र भी उलटकर उसको नहीं डसता, जिसके मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥५॥ दुःसंचार नदी में, दुर्गम पर्वत पर, असंख्य वृक्षों से युक्त भीषण मार्ग में कहीं भी चोर-डाकुओं का गिरोह उसपर लग नहीं सकता, जिसके मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥६॥ घृत से सिक्त के समान तीव्रता से जलता हुआ, जगत्त्रय को अपनी ज्वालाओं से निगलता हुआ अग्नि भी उसके लिए चन्द्र के समान शीतल हो जाता है, जिसके मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥७॥ जिसकी ओर से बांधवों और सज्जनों ने अपनी आँखें मींच ली हों, जो अनेक प्रकार से दुःखदायी हो, ऐसा सांकलों का बंधन भी उसका विघटित हो जाता है, जिसके मन में देवों के इन्द्र जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥८॥ मनोहर इन्द्रियों के सुखों को नष्ट करनेवाला भगंदर, शूल, श्लेष्म, आदि व्याधियों से युक्त रोग भी उसका मंद

(साधारण) ज्वर के समान नष्ट हो जाता है, जिसके मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥९॥ दुर्लभ पाशव्यूह रचकर भी शत्रुदल उसे मार नहीं सकता व कृपाण भी उसके लिए कमल जैसा कोमल हो जाता है, जिसके मन में जिनेन्द्र देव का स्मरण हो ॥१०॥ जिस प्रकार गारुड़िकों (मंत्रवादियों) द्वारा श्रेष्ठ खगेन्द्र (गरुड़) का स्मरण करने पर विष नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार नयनों को आनन्ददायी जिनेन्द्र का स्मरण करनेवाले भव्यजनों का उपसर्ग निवारण हो जाता है।

इस प्रकार माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पंचणमोकार फल को प्रकाशित करने वाले सुदर्शनचरित में पंडिता व अभया का वार्तालाप, कूट पुतलों को बनवा कर सुदर्शन को क्षोभ उत्पन्न करना, पुन प्रभात होने पर हाहाकार मचना, नरेन्द्र के भटों का स्तंभन व देवों की जयजयकार, इन सबका वर्णन करने वाली आठवीं संधि समाप्त।

॥ संधि ८ ॥

संधि ९

१. व्यंतरदेव की युद्धलीला

उस वणिग्वर के कारण वह उद्‌भट-भ्रकुटी युक्त, भयंकर-मुख व्यंतर देव, भटों के समूह का स्तम्भन करके महायुद्ध में राजा से ऐसा भिड़ा, जैसे एक सिंह दूसरे सिंह से भिड़े। चंपापुर रूपी उत्तम कमल के सूर्य, दुष्ट शत्रु रूपी पुष्प-समूह को चूर करने वाले तथा अपने प्रताप से सुरेन्द्र को भी भयभीत करने वाले धाईवाहण नरेन्द्र को झट से उसके गुप्तचर पुरुषों ने जाकर वह सब वृत्तान्त कह सुनाया जो उन्होंने मसान के बीच देखा था। वे बोले—"हे देव-देव, उस बनिये ने आपके भृत्यों को अवरुद्ध कर दिया। वे प्रहार करते समय स्तम्भित हो गये हैं।" तब राजा ने दूसरे भट भेजे, किन्तु उस व्यंतर ने उन्हें भी भयभीत कर डाला। अन्य अन्य जो जो भट प्रकट हुए, वे सभी झट से ही उसने निष्प्राण बना दिये। उसी समय किसी एक बुद्धिमान ने सहसा राजा को नमन करके कहा—"हे देव, वहां उस वणिग्वर का पक्षपाती कोई एक बड़ा साहसी देव या राक्षस प्रगट हुआ है। उसका भी सैन्य बड़ा भारी दिखाई देता है, जैसे मानो समुद्र ने अपनी मर्यादा छोड़ दी हो।" यह सुन कर राजा क्रोध से जल उठा, जैसे मानों अग्नि पर घृत सींच दिया गया हो। वह बोला—"त्रिभुवन में जो कोई उस वणिक् का पक्ष करेगा, उसे मैं आज ही यम के मुख में भेज दूंगा।" राजा के वचन से गम्भीर समरतूर्य बजने लगा, जैसे मानो प्रलयकाल का मेघ गरज रहा हो। उस रणभेरी को सुन कर कोई योद्धा ऐसा पुलकित हुआ और फूल उठा कि उसका तंग कवच ही टूट गया। कोई भट अपना प्रत्यंचा चढ़ा हुआ धनुष ग्रहण करते, उस मुनिवर के समान दिखाई दिया, जो सगुणधर्म का उपदेश देता है। कोई भट अपने दोनों तरकसों से ऐसा चमक उठा, जैसे मानों खगेश्वर (गरुड़) आकाश में उड़ रहा हो। कोई विजयलक्ष्मी रूपी विलासिनी की वांछा करने लगा। (यह विलासिनी छंद कहा गया)। कोई सुभट रण के आवेग से एक बड़ा खम्भा उखाड़ कर दौड़ पड़ा, जैसे मानों मद झराता हुआ, स्थिर और स्थूल सूंड वाला, दुर्निवार ऐरावत हाथी प्रगट हुआ हो।

२. भट-भार्याओं की वीरतापूर्ण कामनाएं

कोई स्त्री अपने पति के गले से लग कर कहने लगी कि वहां उद्भट भटों के साथ तुमुल संग्राम करके सुविशाल ध्वजपताकाएं लेते आइये, जिससे मैं घर की वन्दनमालाएं बनाऊंगी। कोई कहती कि आप जा कर मेरे लिए सिन्दूर से लिप्त व चमकीले मोतियों से अलंकृत, शत्रु के गजों के सिरों का पुंज लेते आइये, जिससे मैं अपने घर में मंगल घट स्थापित करूंगी। कोई कामिनी कामातुर हुई कहने

लगी कि यदि तुम्हें कोई बड़ी अप्सरा हर कर ले गई (युद्ध में तुम्हारी मृत्यु हो गई), तो मैं अपनी देह को तिल तिल टुकड़े करके स्वयं घात कर लूंगी, और इस प्रकार निश्चय से तुम्हें स्त्री-वध का दोष लगाऊंगी। कोई कहती—'अपने प्रभु का कार्य सम्पन्न कीजिये, हाथियों और घोड़ों के समूह का घात कीजिये, समस्त प्रबल शत्रु-बल की बलि चढ़ाइये और इस प्रकार मेरे घर में विजयलक्ष्मी को ले आइये।' इस प्रकार राजा अपने समस्त सैन्य को सजा कर अपने मंडलीक राजाओं के साथ चलता हुआ इस प्रकार शोभायमान हुआ, जैसे मानों युग के अन्त में पृथ्वी को आच्छादित करता हुआ समुद्र उछल रहा हो।

३. राजा के सैन्य का भीषण-संचार

राजा का सैन्य चल पड़ा और पृथ्वीतल को रौंदने लगा। वह आकाश को भरते हुए सोहने व अत्यन्त डर उत्पन्न करने लगा। वह नागों के समूह का दलन करता, भीड़भाड़ के साथ चलता, विष के बाण छोड़ता और लोगों के धैर्य का अपहरण करता। जल और स्थल को चलायमान, शत्रुओं के सैन्य में खलभलाहट तथा भय-रस को उत्पन्न करता हुआ वह सैन्य दशों दिशाओं में फैल गया। घोड़ों की कतार मिल कर चली। ध्वजापट लहलहाने लगा और आकाश को छूता हुआ, सूर्य का स्पर्श करने लगा। भेरियों की ध्वनि होने लगी, करभ श्वासें लेने लगा, रथ ढलकने लगा और भट-जन चारों ओर घूमने लगे। धूलिकापुंज घूमने और बहुलता से चलने लगा। वह नभस्तल में चढ़ता और महीतल पर आ पड़ता। कायर धड़का और गजवर गरजा। वह मदजल बहाने व पृथ्वी को कंपायमान करने लगा। उसने मद की सुगन्ध फैलाई, जिससे भ्रमर-समूह गुंजार करने लगा। (यह कुसुम-विलासिका नाम द्विपदी कही गई)। इस प्रकार अपने चतुरंग सैन्य से सुसज्जित नरपति, जैसे जैसे निकट पहुंचा, तैसे ही वहां रजनीचर अपने माया निर्मित सैन्य सहित उसके सम्मुख आ डटा।

४. राजा और निशाचर की सेनाओं का संघर्ष

तब उस राजा और निशाचर की सेनाएं युद्ध के आवेग से प्लावित होकर गरजने और परस्पर भिड़ने लगीं। वे सेनाएं मिथुनों (स्त्री-पुरुषों के जोड़ों) के समान रोमांचित-गात्र थीं व मिथुनों जैसी नेत्रों को चंचल कर रही थीं। वे मिथुनों जैसी रोष से उद्दीपित थीं, और मिथुनो के समान ही उनके मुख से उच्छ्वास दौड़ रहे थे। मिथुनों जैसे उनका परस्पर संबंध हो रहा था, व मिथुनों जैसे ही वे नानाप्रकार के मुद्रा-बंधों में मदान्ध हो रहे थे। मिथुनों के समान वे अपने आहरण (शस्त्र व आभरण) बखेर रहे थे, और मिथुनों के समान पैर उठा रहे थे। मिथुनों जैसे खूब स्वर छोड़ रहे थे, और मिथुनों जैसे ही पुनः पुनः कुछ हंस रहे थे। मिथुनों जैसे उनके भालों पर पसीना आ रहा था, और मिथुनों के समान वे करवाल (कृपाण व हाथों से केश) खैंच रहे थे। मिथुनों जैसे वे

वक्षस्थलों पर आघात कर रहे थे, और मिथुनों जैसे मूर्च्छा से विकल-शरीर हो रहे थे। तब राजा के सैन्य के समक्ष वह निशाचर की सेना कांपने, चलने, स्खलित होने, त्रस्त होने, खिसकने, श्वासें छोड़ने व भागने लगी, जिस प्रकार कि नई वधू भयभीत दिखाई देती है।

५. संग्राम से उठी धूलिरज का आलंकारिक वर्णन

तब उस व्यंतर ने अपने सैन्य को धीरज बँधाया, जिससे वह गंभीर कलकल ध्वनि करता हुआ फिर से युद्ध में भिड़ गया। इसी समय सहसा धूलिरज उठकर मानों दोनों सैन्यों को युद्ध से रोकने लगा। वह उनके मानों पैरों लगकर मनाने लगा। फटकार दिये जाने पर भी वह कटाक्षों से उनकी कटि पर स्थिति प्राप्त करता। वहां से अपमानित होने पर भी रुष्ट नहीं होता, और वक्षस्थल में प्रेरणा करता हुआ दिखाई देता। वह योद्धाओं के दुर्निवार घातों से मानों शंकित होता, और दृष्टि-प्रसार को मानों बलपूर्वक ढक देता। वह कानों में लगकर मानों कहने लगा कि तेरे जिस अधरबिंब को रतिगृह में तेरी मनोहर रमणी ने अपने दांतों से खंडित किया है, व जिस विशाल-वक्षस्थल को उसने अपनी बाहुओं से आलिंगित किया है, उसे अब शिवकामिनी को नहीं देना चाहिए, मेरी यह अभ्यर्थना भी मानिये। वह केशों में लगकर मानों रोष प्रकट करता और आकाश में जाकर मानों देवों में हाहाकार मचाता। उस क्षण समर में प्रहार करते हुए सुभटों ने रुधिर की नदी बहा दी; मानों काल ने देवों और मनुष्यों को भय देनेवाली अपनी जीभ पसार दी हो।

६. रुधिर-वाहिनी का आलंकारिक वर्णन

सिरिगिरि के रूप में नानाप्रकार के वृक्षों से नमित, ध्वजाओं, चमरों व चिह्नों (ध्वजों) रूपी कल्लोलों से युक्त, उत्तम श्वेत अश्वोंरूपी फेन से उज्ज्वल, सहस्रों रथों रूपी ग्राहों की पंक्ति से युक्त, जगमगाते हुए खड्ग रूपी मछलियों से क्षुब्ध, बड़े बड़े हाथी रूपी खड्गों (गेंडों) से अत्यन्त क्षोभित, शब्दायमान तूर्यरूपी पक्षियों से व्याप्त, चलबलाती हुई आंतों रूपी डिंड से भरी, कुंभस्थलोंरूपी शुक्तिपुटों से चूरित, बहुत से दांतों रूपी रत्नों व बहुमूल्य मोतियों से बिखरी, गिरे हुए भटों के विकसित मुखों रूपी प्रफुल्ल कमलों से व्याप्त, गृद्धावलि रूपी भ्रमरावली से भ्रमित और मुखरित, तलवारों की धारों रूपी जल के पूर से विषम तथा बाणों के जाल रूपी सुदृढ़ पटी हुई भूमि के कारण सुगम वह रुधिर का प्रवाह एक नदी के समान शोभायमान हुआ। (यह विसिलोय पद्धडिया छंद कहा गया)। 'मैं कुलीन (पृथ्वी में लीन) होने पर अपमानित होता हूँ, और ऊपर उछलते हुए अकुलीन (पृथ्वी से असंलग्न) कहलाता हूँ' ऐसा सोचकर, मानों धूलिरज ने अपने को उस रुधिर की नदी में फेंक दिया।

७. हस्ति-युद्ध

अपने सैन्यों को परस्पर भिड़े हुए देखकर नरेन्द्र और निशिचर कुपित हुए और सन्नद्ध होकर, मत्त गजेन्द्रों पर आरूढ़ हो दौड़ पड़े। वे हाथी अलसी के फूलों के वर्ण के, अति दुर्द्धर, प्रतिपक्षी हस्तियों के लिए दारुण, श्वेत दांतोंवाले, पिंगल नेत्रों से युक्त तथा सूंड के मुख में रक्तवर्ण थे। वे मनोहर हाथी मोटाई में तीन हाथ, ऊँचाई में सात हाथ, गोलाई में दस हाथ तथा लम्बाई में नौ हाथ थे। वे पिछले भाग में नीचे को झुके हुए, अगले भाग में ऊपर को उठे हुए, पूँछ और सूंड से लम्बे तथा पीठ की रीढ़ (मेरुदंड) से विराजमान और दृढ़ होते हुए, चलायमान पर्वतों के समान शोभायमान थे। वे अपने पदों के भार से वसुधातल को झुका रहे थे; पाताल के समस्त नागों को चूरित कर रहे थे; तथा अपने कानों के तीव्र वायुवेग से समस्त समुद्रों को कंपायमान कर रहे थे। वे अत्यन्त गम्भीर थे; अपनी घोर गर्जना से समस्त वन को बहरा कर रहे थे, तथा कुम्भस्थल पर लिप्त चटकदार सिन्दूर से दशों दिशामुखों को अरुण-वर्ण बना रहे थे। वे हाथी दौड़ते, मुड़ते, सम्मुख खड़े होते, उर से उरस्थल को भिड़ाते, दंताग्रों से दांतों को तोड़कर सूंड से सूंड लपेट लेते थे। फिर वे तिरछे हो जाते, जूझते और क्षणमात्र भी निश्चल नहीं होते थे। (यह अट्ठाईस मात्राओं से युक्त विज्जुला द्विपदी है)। फिर राजा के हाथी ने निशाचर के गज पर अपने दांतों के अग्रभाग से प्रहार किया और फिर उसको गिराकर उसके मार्ग में खड़ा हो गया, जैसे मानों किसी साहुकार ने अपने आसामी (ऋणी) को करोड़ रत्न ऋण रूप दिये हों, जिन्हें वापिस मांगने पर ऋणी उसके चरणों में गिरकर रह जाये, और साहूकार अपना ऋण वसूल करने पर अड़ा रहे।

८. राक्षस और नरेश की परस्पर गर्वोक्तियाँ

ऐसे अवसर पर अपने मन में व्यथित होकर वह पिशाच एक दूसरे गज पर आरूढ़ हुआ और बोला—"रे-रे भूगोचर, पापराशि, समरांगण को छोड़कर भाग, भाग, नानाप्रकार के उत्तम शस्त्र हाथों में लिए हुए तेरे किंकरों की जो अवस्था हुई, वही दशा कहीं तेरी न हो जाय ?" निशाचर के ऐसा कहने पर राजा ने उसे फटकारा—'तुझे ऐसा कहते हुए लाज नहीं आती ? तू अपने को क्षण भर के लिए क्यों धोखा दे रहा है ? क्या चतुर भूगोचर लक्ष्मण ने दशानन का बध नहीं किया था ? जहाँ मेरे हाथी ने तेरे हाथी को मार डाला, वहाँ तू क्या प्रतिस्पर्द्धा करता है ? अथवा यदि तुझमें शक्ति है, तो आकर मुझसे भिड़। राक्षस को भी भयभीत करनेवाला मैं यहां आ पहुँचा हूँ।" इसप्रकार वे दोनों उत्तम हाथियों पर सवार हुए दुर्द्धर रोष को प्राप्त हो गये और गर्जना करते हुए परस्पर भिड़ गए, जैसे मानों पर्वत पर स्थित प्रबल सिंह परस्पर भिड़ गये हों।

९. दोनों मल्लों का युद्ध

दोनों ही बड़े अक्खड, गर्व से उद्भट और देह से तेजस्वी ऐसे प्रतीत होते थे, जैसे सुर और असुर हों। वे ऐसे मात्सर्ययुक्त थे, जैसे मानों शनिश्चर हों। वे युद्ध में कुशल, व अप्सराओं को सन्तुष्ट करनेवाले थे। वे समुद्र के समान गंभीर ध्वनि युक्त होते हुए अपने कार्य की घोषणा कर रहे थे। वे लक्ष्मी से अभिराम व सैन्य के स्वामी होते हुए ऐसे भयावने हो उठे, जैसे राम और रावण। वे एक दूसरे के सम्मुख आए, परस्पर शस्त्र प्रहार करने लगे, आघात होने पर घूमने लगे और रक्त से लथपथ हो गए। वे दोनों ऐसे सुन्दर थे, जैसे मंदराचल। वे भयवर्जित और देवों के भी पूज्य थे। (यह सिद्धक छंद की सुन्दर रचना है)। तब राजा ने निशाचर के मद झरते हुए विशाल हस्ति-प्रवर को अपने दीर्घ बाणों से ऐसा आच्छादित कर दिया, जैसे मलयाचल विषधरों से आच्छादित हो।

१०. निशाचर राजा के हाथी पर आ कूदा

वह दर्पीला हाथी रूठा होकर भी समर में प्रवृत्त हुआ। तब राजा ने उसे अपने बाणों के जाल से पूर दिया, और फिर उस निशाचर पर सैकड़ों बाण चलाए। वे बाण प्रत्यंचा से प्रेरित होकर सीधे दौड़ते हुए ऐसे शोभायमान हुए, जैसे मुनि अपने गुणों से प्रेरित होकर ऋजु गति से मोक्ष की ओर गमन करते हैं। उस अवसर पर जब तक अपना हाथी आहत होकर गिर नहीं पाया, तभी सहसा ही वह यातुधान (राक्षस) अंग के राजा के हाथी पर ऐसा जा चढ़ा, जैसे सिंह पर्वत पर जा कूदता है। वहां निशाचर और राजा, दोनों नानाप्रकार के शस्त्रों को त्याग कर युद्ध करने लगे। वे दोनों कोहनियों से, हाथ पकड़ने छोड़ने व धक्कों से, सिंह के समान झपटों से, उरस्थलों की ढकेलों से, तथा एक दूसरे के पार्श्व में मछली जैसी उछालों द्वारा परस्पर पेलापेली करने लगे। इस प्रकार क्रोधयुक्त व अतुल पराक्रम से शोभायमान शरीरधारी वे दोनों युद्ध करते हुए हाथी पर से नीचे गिर पड़े, जैसे मानों गगनांगन से दो क्रूरग्रह आ गिरे हों।

११. फिर दोनों रथारूढ हुए

फिर राजा एक ऐसे उत्तम रथ पर सवार हुआ जो स्वर्ण-जटित था, जिस पर सुन्दर चिन्हध्वज उठा हुआ था, जो मणियों की किरणों से जगमगा रहा था, जिसमें मंद मंद घंटियों का स्वर उत्पन्न हो रहा था, जो मनोवेग से चल रहा था, जिसमें घंटे टनटना रहे थे, जो धूप के धूम्र से व्याप्त था, जहां भ्रमर गुंजार कर रहे थे, जिसकी सांकलें खनखना रही थीं, जो नाना प्रकार की हलचलों से चंचल था तथा जिसके घोड़े हिनहिना रहे थे। ज्यों ही राजा ऐसे रथ पर चढ़ा, त्योंही वह निशाचर भी शीघ्र ही, तत्क्षण एक दूसरे रथ पर आरूढ हो गया। वह एक क्षण

भी कहीं रुकता नहीं था, और समर में आगे बढ़ रहा था। (यह अमरपुरसुन्दरी द्विपदी कही गई)। वह चंपनरेश का उत्तम रथ, निशाचर के रथ से आक्रान्त होकर ऐसा शोभायमान हुआ, जैसे प्रचुर सुवर्ण की कान्ति से चमकता हुआ देवपर्वत (सुमेरु) दिवाकर से आक्रान्त हुआ (शोभता) है।

१२. दोनों का रथ-युद्ध

तब अपने रथ पर आरूढ़, लोगों के हृदय को सुखदायी, प्रवर पराक्रमी अंगनाथ ने अपने धनुष को खींचा, जिससे बड़ी टंकार-ध्वनि हुई। सुर और असुर मन में डर उठे। धरणि खूब थर्रा गई। दिग्गज पीछे हट गये। मनुष्यों को भय का ज्वर आ गया। खेचरसमूह खलखला उठे। पर्वतों के शिखर टलटलाने लगे। विषधर सलसला उठे और समुद्र भी झलझला उठे। तब वह निशाचर दूसरों को छोड़, प्रगटरूप से प्रत्यंचा चढ़ाकर, धनुष को लेकर आ डटा। तब राजा ने उस पर अपनी बाणावली छोड़ी। उसी समय निशाचर ने उसके धनुष और छत्र को खंडित कर दिया, जिससे वे पृथ्वी पर जा पड़े। (यह चारुपद-पंक्ति नामक सुन्दर द्विपदी है, इसमें सन्देह नहीं)। उस अवसर पर चंपाधीश ने तुरन्त निशाचर पर अपनी शक्ति छोड़ी, जो उसके हृदय में जा लगी और प्राणप्रिय विलासिनी के समान उसे मूर्च्छा उत्पन्न करने लगी।

१३. निशाचर की पराजय व मूर्छा

तब, जब आकाश-प्रांगण में सुरांगनाएं एकत्र थी, सुर और असुर परस्पर बातचीत कर रहे थे व अपने शरीर की कान्ति से प्रकाश फैला रहे थे, तभी महिला के पराभव से उत्पन्न हुए उस महायुद्ध में देवों से शंकित न होकर, तथा घन के समान गरज कर मन में क्रोधयुक्त राजा ने, निशाचर को फिर भी पराजित कर दिया, जिस प्रकार राहु सूर्य को जीत लेता है। तब वह निशाचर अपने मुख से कातर हो गया व अत्यन्त दुर्निवार शक्ति के प्रहार से, शरीर से कांपते हुए, मूर्च्छा को प्राप्त हो गया। वह जीयेगा या नहीं, इसमें संशय दिखाई देने लगा। इस अवसर पर जब राजा कोप-युक्त था, तब उस लंबबाहु वणिग्वर का कोई शरण नहीं रहा; उसकी मृत्यु आ पहुंची। हाय, क्या किया जाय? किससे कहा जाय? ऐसी बात जिस क्षण चल रही थी, उसी क्षण वह पिशाच अपनी वेदना को शांत कर, सचेत हो उठा। वह निशाचर राजा के ऊपर ऐसा दौड़ पड़ा, जैसे मानों पर्वत पर वज्रदंड आ पड़ा हो। वह अपनी नानाविध विक्रियाओं सहित संग्राम में घटोत्कच के समान विचरण करने लगा।

१४. निशाचर की विक्रियाएं

निशाचर भ्रमण करते रुकता ही नहीं था। वह मातंगों का दलन करता, तुरंगों का हनन करता, भटसमूहों को घायल करता, रथों के अंग अंग का दलन

करता, नरेन्द्रों का मर्दन करता। वह पक्षी का रूप धारण करता, फिर बन्दर का, व क्षण मात्र में चकवे का। फिर एक क्षण में ही वह कपोत, कुरंग या तुरंग बन जाता। फिर एक क्षण में बलाक, चकोर व मयूर का रूप धारण करता। फिर क्षण में ही नकुल, सर्प, मत्स्य या तरक्ष (तेंदुआ) बन जाता। फिर वह विशाल वाराह का रूप धारण करता, और फिर एक क्षण में ही भौंरा (बर्रे) बन जाता। फिर विकराल स्यार और फिर एक क्षण में मराल बन जाता। फिर सुन्दर गजेन्द्र और फिर एक क्षण में मृगेन्द्र बन जाता। व फिर वह मोटा भैंसा, गधा या ऊंट बन जाता। वह अनेक प्रकार के मुंह बनाता, व अनेक समर्थ हाथों की विक्रिया करता। तो भी उसे देखकर, नरेन्द्र अपने मन में कंपायमान नहीं हुआ। (यह लोगों को अभिराम मौक्तिकदाम छंद प्रकाशित किया गया)। राजा जिस किसी भी रूप में उसे अपने सम्मुख देखता, उस उस पर प्रहार करते रुकता नहीं था, जैसे मानों रावण के युद्ध में राम व कौरवों के सैन्य में भीम विचरण कर रहा हो।

१५. निशाचर और राजा का विक्रियायुद्ध

राक्षस ने एक दुर्निरीक्ष्य काला मूषक छोड़ा; उस पर धाईवाहन ने अत्यन्त रुष्ट विडाल छोड़ा। राक्षस ने सुन्दर चंचल तुरंग छोड़ा; धाईवाहन ने उस पर तीक्ष्ण सींगों वाला भैंसा छोड़ा। राक्षस ने विशालकाय मत्तहाथी छोड़ा; धाईवाहन ने लंबी जीभवाला दारुण सिंह छोड़ा। राक्षस ने आकाश में उठता हुआ मेघ प्रकट किया; तब धाईवाहन ने तुरन्त ही घोर पवन चला दिया। राक्षस ने प्रज्वलित अग्नि प्रकट की; धाईवाहन ने जलवृष्टि युक्त मेघ प्रकट किया। राक्षस ने सूखा अस्खलित वृक्ष प्रकट किया; धाईवाहन ने जलता हुआ पावक छोड़ा। जिस क्षण राक्षस ने पत्थरों से पूर्ण शैल प्रकट किया; उसी क्षण धाईवाहन ने प्रचंड वज्रदंड छोड़ा। राक्षस ने विशाल स्फुरायमान चन्द्र छोड़ा; धाईवाहन ने उसकी प्रभा को हरण करनेवाले राहु को छोड़ा। राक्षस ने झट से भीषण अन्धकार छोड़ा; तो धाईवाहन ने अनेक किरणों से प्रकाशमान भानु छोड़ा। जब राक्षस ने मत्स्यपूर्ण सागर प्रकट किया; तभी धाईवाहन ने कन्दराओं से युक्त मंदर पर्वत प्रकट किया। राक्षस ने प्रदीर्घ नागपाश प्रेषित किया; धाईवाहन ने अपना चमचमाता हुआ गरुड़ रूप बाण छोड़ा। तब वह निशाचर राजा के साथ युद्ध करते करते संग्राम से भाग गया, और तत्क्षण फिर लौट आया। (यह तोणक छंद कहा गया)। तब राजा ने निशाचर से कहा—"रे निर्लज्ज, यदि तू रणांगण से भागा, तो फिर लौटकर क्यों आया? भाग जा, भाग जा, नहीं तो मैं तुझे मार डालूँगा।"

१६. निशाचर के दुगने दुगने मायारूप

जब राजा ने आँखें फाड़कर ये वचन कहे न कहे, तभी निशाचर ने भल्ली का प्रहार करके उसे मूर्च्छित कर दिया। अथवा कौन अभिमानी है, जो आपत्ति में

नहीं पड़ता ? फिर चेतना प्राप्त करके वह नृपश्रेष्ठ उस पिशाच पर ऐसा टूट पड़ा, जैसा हाथी सिंह के प्रति दौड़े। अपनी बिजली के समान चमचमाती हुई तलवारों से मनोहर निशाचर और नृप दोनों मेघों के समान भिड़ गये। एकक्षण में चंपापुरी के राजा ने उस यातुधान पर तलवार से आघात किया, जिससे उसके दो टुकड़े हो गये। किन्तु अब राजा पर दो निशाचर आक्रमण करने लगे। राजा ने उन दोनों को भी काट डाला, तो चार निशाचर बन गये। जब राजा ने उन चारों को मारा, तब मारो मारो कहते हुए झट क्रोधपूर्ण आठ निशाचर बन गये। राजा ने आठ को मारा, तो सोलह चमक उठे। सोलह के मारे जाने पर बत्तीस दौड़ पड़े। ज्योंही उन बत्तीसों को दो टुकड़े किये, त्योंही चौसठ उत्पन्न हो गये। जब वे चौसठ मारे गये, तो तत्क्षण एक सौ अट्ठाईस विशालकाय निशाचर उठ खड़े हुए। उन अतिरौद्ररूप निशाचरों से घिरा चंपापति ऐसा शोभायमान हुआ, जैसा दुगने दुगने द्वीप-समुद्रों से आवेष्टित जंबूद्वीप।

१७. सुदर्शन द्वारा राजा की रक्षा

उन निशाचरों ने पुनः पुन राजा को कैसा वेष्टित किया, जैसा कर्मों के द्वारा संसारी जीव। कोई कितना ही बलवान व गुणों से गौरवशाली क्यों न हो, वह बहुतों से आक्रान्त होने पर अकेला क्या कर सकता है ? अतएव उस अवसर पर वह राजा वहाँ से भाग गया, जैसे सिंहों के समूह से त्रस्त हुआ हाथी। तब निशाचर ने अपनी विक्रिया को समेट लिया, जिस प्रकार कि ग्रीष्म ऋतु का आगमन होने पर दिनेश रात्रि को संकुचित कर लेता है। आगे आगे राजा दौड़ता और उसके पीछे पीछे वह व्यंतर देव, जिसप्रकार कि पूर्वोपार्जित कर्म जीव का पीछा करता है। तब उस रजनीचर ने अपना कृपाण खींचकर, भागते हुए राजा से कहा—"तू उस सुदर्शन की ही शरण में जा। अन्य किसकी शक्ति है जो तेरी रक्षा कर सके ?" यह सुनकर राजा गलितमान होकर सुदर्शन की शरण में गया और अतिदीन भाव सहित भय से कांपते हुए बोला (अपने प्राणदान की प्रार्थना की)। तब सुदर्शन ने अपना योग छोड़कर राजा की रक्षा की, व तलवारों से भीषण योद्धाजनों से उसे छुड़ाया। अपकार करनेवाले के प्रति भी उपकार करे ऐसा सुदर्शन को छोड़ दूसरा कौन है ?

१८. राजा द्वारा सुदर्शन से क्षमा-याचना

वह राजा तो दूर रहे, जिसका धर्म में भाव हो उसे देव भी नमन करते हैं। इसी बीच उस निशाचर ने आदरपूर्वक समस्त सैन्य को जीवित कर दिया। फिर उसने राजा से वह कपटयुक्त स्त्रीचरित्र की बात कही, जो देवों को भी दुर्लंघ्य है। यद्यपि कामदेव की गोदी में भी बैठ जाय तो भी स्त्री अन्य पुरुष की अभिलाषा करती ही है। तेरी अग्रमहिषी इस अतिसुन्दर सुदर्शन पर मोहित हो गई। उसने

अन्धेरे में इस वणीन्द्र को उठवा मंगाया, किन्तु वणीन्द्र सुमेरु के समान निश्चल शरीर रहा। तब सूर्योदय होने पर घबराई हुई रानी ने अपना शरीर फाड़ लिया और हाहाकार मचा दिया। सहसा तेरे द्वारा प्रेषित किंकरों से जब सुदर्शन तीक्ष्ण तलवारों से मारा जाने लगा, तब मैंने अपने आसन को कंपायमान होने से सब वृत्तान्त जान लिया। फिर मैंने यहाँ आकर तेरे भृत्य-समूह को कीलित किया। जो चरमशरीरी होते हैं, वे मारने से मरते नहीं, और हमारे जैसे देव उनके उपसर्गों का हरण करते हैं। जब तू सुसज्जित होकर यहां आया, तब मैंने अपना मायारूपी सैन्य निर्माण किया। अनन्तर विपक्षियों को मारने का जो वृत्तान्त है, वह, हे नृपति, तेरे भी प्रत्यक्ष है। तब राजा पश्चात्ताप करता हुआ पुन: भक्तिपूर्वक सुदर्शन को मनाने लगा—मुझे क्षमा करो। मेरे दोषों का विचार करने से क्या लाभ? यह सुनकर वणिग्वर ने कहा—हे राजन्, सत्पुरुष के बहुत गुणों से क्या, उनके दो ही गुण पर्याप्त हैं—अर्थात् उसके मन में रोष बिजली की चमक के समान क्षणस्थायी और मैत्री पत्थर की रेखा के समान चिरस्थायी होते हैं।

१९. राजा का अर्द्धराज्य समर्पण व सुदर्शन द्वारा अस्वीकार

तब राजा ने कहा—सत्पुरुष के उपशम ही परम योग्य है। वह ऐसा शुद्ध स्वभाव और स्वच्छमन होता है कि दूसरों के उपहास से व दुर्जनों की निंदा से, चार द्वारा दर्पण के समान उद्भासित होता है; तथा निर्मल होकर और भी अधिक चमक उठता है। मैं तुम्हारा अपकार करके ढीठता से आकर तुम्हारे चरणों की शरण में प्रविष्ट हुआ हूँ। मुझ अपकीर्ति कमानेवाले की तुमने रक्षा की है। तुम्हीं ने मुझे यह राज्य और मनुष्य-जीवन प्रदान किया है। तुम्हीं मेरे बन्धु, इष्ट, सुहृद् व सज्जन हो। तुम गुणों की राशि व श्रेय का अर्जन करनेवाले हो। हे, हे, सुन्दर वणिग्वर, तुम्हारे उपकार का इस जगत् में कोई प्रत्युपकार नहीं। यद्यपि बात ऐसी है, तो भी मेरी एक बात मानिए। आप मेरे सुखकारी आधे राज्य का उपभोग कीजिये। इस पर उस वणिग्वर ने उत्तर दिया—"ढलते हुए दिन की सुख-सामग्री के समान इन्द्र-धनुष की कान्ति को प्रकाशित करनेवाले राज्य से, हे राजन, मेरे मन की क्या अभिलाषा पूर्ण होगी?

२०. राजा द्वारा प्रलोभन तथा सुदर्शन का वैराग्य

संपत्ति की सम्हाल से, राजनीति के पालन से, शत्रुवंश के साथ युद्ध से व दुष्ट जीवों के निग्रह से एक जीवनमात्र के लिए अमित पाप का उपार्जन किया। इससे, हे नरेन्द्र, कौन सी कार्यसिद्धि हुई? अतएव तू ही इस राज्य-ऋद्धि का उपभोग कर। मैं तो दुस्सह तपश्चरण करूंगा और भवसमुद्र को पार करूंगा।" तब राजा इस प्रकार बोला—"तू तप कैसे करेगा? अभी भी तेरी युवावस्था है और तेरा पुत्र भी बहुत छोटा सा है। इसलिए, हे तात, उसका लालन-पालन

कर, जब तक वह समर्थ न हो जाय। और तू भी सुन्दर भोगों का उपभोग कर, एवं अपने इष्ट, मित्र व बंधुओं को सुखी बना। तत्पश्चात् तपस्या करना।" तब उस वणिग्वर ने कहा- हे राजन, सर्वदा ही यम से कोई नहीं छूटता, चाहे वह बाल हो या युवा या वृद्ध। विशेषतः इस अवसर्पिणी काल में जीवन पानी के बुदबुदे के समान क्षणभंगुर होता है।

२१. सुदर्शन द्वारा जीवन की क्षणभंगुरता का निरूपण

जो कोई यौवन में उत्तम तप धारण करते हैं, वे सहज ही भवसागर से तर जाते हैं। यौवन पहाड़ी नदी के वेग के तुल्य है जो शीघ्र समाप्त हो जाता है। वृद्धत्व से सारा शरीर ढीला हो जाता है। जगरूपी अग्नि की अपूर्व ज्वालाओं से संतप्त होकर समस्त गात्र सिकुड़ जाता है। पीठ का मध्य भाग धनुष के समान टेढ़ा हो जाता है। नीची-ऊंची भूमि, गोबर आदि अपवित्र वस्तु, जल व मूत्र, व पैर के नीचे रस्सी या सॉप, इनका दृष्टि के द्वारा कोई अन्तर ही दिखाई नहीं पड़ता। वृद्ध पुरुष (कमर झुका कर) मानों महीतल पर अपने गिरे हुए यौवन को ढूंढ़ता है, और कुकविकृत काव्य के समान पद पद पर स्खलित होता है। वह पवन से आहत वृक्ष के समान थर्राता है, और उसके कान दुष्पुत्र के समान कोई बात सुनते ही नहीं हैं। इसलिए जब तक बालबच्चे परस्पर लड़ते-भिड़ते व कहते-सुनते नहीं हैं, तभी तक मैं तपश्चरण करके मोक्षरूपी गृह में जा चढ़ूंगा, जिससे पुनः संसाररूपी कूप में न पड़ूं। प्रेम वही है जो द्वेष प्रकट न करे। वही भोजन है जो मुनियों के आहार से शेष रहे। वही प्रजा है जो पाप न कराये, और वही धर्म है जिसमें कोई दंभभाव न हो। वही सत्कवि है, जो जिनवर का स्तवन करे। वही शूर है जो इन्द्रियों को जीते। दिव्य आभरण और विलेपन तभी तक सुन्दर दिखाई देते हैं, जबतक वे मनुष्य के शरीर मे लगकर अत्यन्त दुर्गन्धी और बिट्टाल (दूषित) नहीं हो जाते।

२२. संसार की क्षणभंगुरता से पूर्व महापुरुषों में विरक्ति के उदाहरण

पूर्वकाल में ऋषभदेव ने नीलांजना के मरण का हेतु पाकर तपश्चरण ग्रहण किया। उनके अन्य पुत्र भी भरत चक्रवर्ती की सेवा करना पसन्द न करके दीक्षित हो गये। सगर राजा अपने पुत्रों के मरण की बात सुन कर, राज्यश्री को छोड़ सहसा श्रमण हो गया। देवयुगल द्वारा वर्णन सुनकर सनत्कुमार विरक्त हो गया, और तपस्या करने लगा। राघव(राम) ने भी छह मास तक लक्ष्मण (के मृतक शरीर) को लिए फिरने के पश्चात् प्रव्रज्या का पालन किया। पशुओं का वध करके उनका विवाह होगा, ऐसा सुनकर ही कुमार नेमिनाथ ने मुनिव्रत धारण कर लिया। और भी दूसरे जिनेन्द्र भ्रमर के समान काले मेघों को विलीन, व उल्कापात हुआ देख दुर्द्धर तप में प्रवृत्त हो गये। मैं भी इसी प्रकार निर्ग्रन्थ होता हूँ। जिससे महापुरुष

जांय वही पंथ है (महाजनो येन गतः स पन्था)। मैंने उसी समय प्रतिज्ञा कर ली थी कि यदि इस उपसर्ग से छूट गया, तो मैं दिगम्बरी दीक्षा ले लूँगा और पाणिपात्र में (हाथों में) भोजन करूँगा।

२३. राजा द्वारा सुदर्शन की स्तुति

सुदर्शन के इस प्रकार वचन सुनकर गूँगे के समान निरुत्तर हुआ वह सपरिग्रह नरेश इस प्रकार वर्णन करने लगा। परमात्म की भावना करनेवाले, वंदारक-वृन्द द्वारा वंदितपद, हे वणीन्द्र, तुम्हारे सदृश पुरुष ही तो जिनेन्द्र कहलाता है। तुम्हारे समस्त गुणों का वर्णन कौन कर सकता है ? लोग मोहग्रस्त होकर घरगृहस्थी का पालन करते हैं। वे कुछ भी पाप का विचार नहीं करते। दूसरों को धोखा देते हैं; कृषि, कबाड़ व सेवा को ही अच्छा मानते हैं; तप के नाम से उनके शरीर में ज्वर चढ़ आता है। (ऐसा लोक स्वभाव होते हुए भी) जो कोई प्राप्त हुई अपनी सम्पदा का त्याग कर महाव्रत लेता है, वह धन्य है। (इस प्रकार सुदर्शन का गुणगान करके) जब राजा नगर में वापिस आया, तब इसी बीच, रस्सी की फांसी बनाकर और वृक्ष से लटककर अभया ने आत्मघात कर लिया। इस प्रकार मरकर वह पाटलिपुत्र नगर में व्यंतरी उत्पन्न हुई। पंडिता भी अपने मन में संत्रस्त होकर, शीघ्र ही उसी पाटलिपुत्र की ओर भाग गई। वहाँ पहुँचकर पंडिता देवदत्ता गणिका के घर रहने लगी। इस प्रकार समवसरण में जिनेन्द्र के प्रत्यक्ष, नयों का आनन्द लेनेवाले गौतम गणि ने व्याख्यान किया।

इति माणिक्यनंदि त्रैविद्यके शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित, पंचणमोकार के फल को प्रकाशित करनेवाले, सुदर्शनचरित मे, महासंग्राम समाप्त हो जाने पर, राजा का वणिग्वर को राज्यश्री समर्पित करना, सुदर्शन द्वारा उसका ग्रहण नहीं किया जाना, अभया का मरकर व्यंतरी उत्पन्न होना, व पंडिता का पाटलिपुत्र नगर मे जाना, इनका वर्णन करनेवाली नौवीं संधि समाप्त।

॥ संधि ९ ॥

संधि १०

१. जिन-मन्दिर का आलंकारिक वर्णन

उस भयानक श्मशान में परम प्रशंसा को प्राप्त करके वह वणीश्वर सुदर्शन अपने तामस रहित मन से चिन्तन करने लगा—जहां मरण और जन्म रूपी अथाह जल भरा है, जिसमें बहुत सी कपटरूपी भंवरें विद्यमान हैं, जहां नानाप्रकार के चित्तरूपी घोर वातों की ध्वनि हो रही है, जो राग और द्वेष रूपी जलचरों से भरा हुआ है, जो क्रोध व लोभ रूपी बड़वानल से भीषण है, एवं दुर्गति रूपी लहरों से युक्त है, ऐसे इस संसाररूपी रौद्र समुद्र में जीव पुण्यों के बिना धर्मरूपी रत्न की प्राप्ति नहीं कर पाता। देवों और मानवों की प्रशंसा प्राप्त करनेवाला सुदर्शन इस प्रकार चिन्तन कर व पुत्र को अपना गृहस्थ पद देकर लोगों सहित जिनालय में पहुंचा। वह जिनालय अशोक वृक्ष तथा यक्ष और यक्षिणियों से सुन्दर था: जैसे मानों कुबेर का क्रीड़ा-मन्दिर हो, जो शोक रहित यक्ष यक्षिणियों से सुन्दर दिखाई देता है। वह रोहिणि (सोपान पंक्ति) से मनोहर तथा बड़े-बड़े चंदोवों व उनके सितारों से देदीप्यमान होता हुआ आकाश के समान दिखाई देता था, जो रोहिणी नक्षत्र से मनोहर तथा पूर्णचन्द्र एवं ताराओं से प्रकाशमान हो। जो चक्रेश्वरी देवी से अलंकृत तथा पवित्र योगियों के समूह से शोभायमान होता हुआ उस सरोवर के समान था, जो चकवा-चकवियों से सुन्दर व उत्तम हंसयुगलों के समूहों से शोभायमान हो। वहां घंटों की घर्घर ध्वनि एवं दिव्य कुंभ, शंख, तूर्य और चामरों की शोभा हो रही थी, जिससे वह एक हस्ती के समान प्रतीत होता था। वहां श्रावकों का गमनागमन हो रहा था; अतएव वह एक वन के समान प्रतीत होता था, जहां श्वापद (वन्यपशु) आते-जाते दिखाई देते हैं। वह मोक्ष-मार्ग दिखाने वाला था, अतएव वह एक धनुष के समान था, जो बाण छोड़ने के मार्ग को लक्ष्य करता है। उस जिनालय के दर्शन कर सुदर्शन बहुत हर्षित हुआ। (यह निःश्रेणी नामक छंद कहा गया)। उस सुन्दर जिनमन्दिर में, अपने कुलरूपी नभस्तल के चन्द्र वणीन्द्र ने, मोह को जीतनेवाले जिनेन्द्र की स्तुति प्रारम्भ की।

२. जिनेन्द्र-स्तुति

नमस्कार करते हुए देवों के मस्तक पर के मुकुटों के मणियों की किरणों से चुम्बितचरण, भगवन्, तुम्हारी जय हो। हे समस्त त्रैलोक्य में धर्म की हलचल मचाने वाले, जय हो आप की। जय-जय, हे केवलज्ञाननिधि। जय हो, हे भव्यरूपी कमलों को प्रफुल्लित करनेवाले सूर्य। हे इन्द्रियरूपी शत्रु-योधाओं का दलन करनेवाले, जय हो। हे परमार्थ को जाननेवाले जय हो। जय हो, जरा और मरण का विनाश करनेवाले। जय-जय-जय, हे निर्ग्रन्थ देव। जय हो आपकी, जो निर्दोष सूर्य की किरणों के समूह के सदृश शरीर की प्रभा को धारण करते हैं,

धातुओं से रहित हैं, स्व-पर हितकारी हैं, एवं चतुर्मुखी हैं। जय हो आपकी, जो प्रकृष्ट गुणसमूहों से विभूषित हैं, व असुरों, सुरों व मनुष्यों से प्रशंसित हैं। जय हो, हे अमेय केवलज्ञान के धारी; जय हो, हे मान के क्षयकारी; जय हो, हे निष्काम मदनविनाशी। जय हो, हे कुनयरूपी हस्तियों के सिंह। जय हो, हे त्रैलोक्य के लोगों पर कृपा करनेवाले। जय हो, हे लोभ के विनाशक सुपार्श्व। जय हो, हे निष्कर्म व यम के दूतों के त्रासक। जय हो, हे मोक्षलक्ष्मी से संयुक्त, मलरहित, संसार में स्तुत्य। जय हो, हे संसार के आश्रयदाता व समवसरण से संयुक्त। हे सुमुनिराज, रोगद्वेष रहित, सुगन्ध प्रसारक, सुरों के हितकारी व लेश्याओं से हीन। जय हो, हे निष्पाप भगवन्, नखों की वृद्धि से रहित, हे पूज्यों के पूज्य वासुपूज्य भगवन्। यदि कोई समस्त आकाशतल के पार जा सके, तो ही हमारे जैसा आदपरंपरानुयायी, आपके गुणों का वर्णन कर सकता है।

३. विमलवाहन मुनि का वर्णन

हे भगवन्, आपके नाम ग्रहण मात्र से खलजन क्षुब्ध (भयभीत) हो जाता है, हस्ति अपना दर्प छोड़ देता है, सर्प भी निर्विष हो जाता है, व विष भी अमृतरूप से प्रवृत्त होने लगता है। अग्निशीतल हो जाता है व केशरी आक्रमण करता हुआ भी रुक जाता है। वज्र के समान कठोर दृढ़ व उद्भट पैरों की बेड़ियां टूट जाती हैं, तथा अन्य घोर उपसर्ग भी मिट जाते हैं। इस प्रकार जब सुदर्शन चित्त में हर्षित होकर, मोक्ष के हेतुभूत जिनेन्द्र देव की स्तुति कर रहा था, तभी उसने वहां सुरेन्द्र द्वारा वंदनीय एक मुनिराज को बैठे देखा। वे मुनिराज तप रूपी अग्नि से तपाये हुए, मोह से त्यक्त, व सिद्धिरूपी कान्ता में अनुरक्त, मदों से रहित, नेत्रों को इष्ट एवं शरीर के मैल से लिप्त थे ॥ १ ॥ उनका द्वेष नष्ट हो गया था, शुक्ल लेश्या प्रकट हो गई थी और वे संयमों के समूह रूप धन के धारी थे (अर्थात् बड़े तपोधन थे)। वे त्रैलोक्य-बन्धु थे, ज्ञान-सिन्धु व भव्यरूपी कमलों के मित्र (सूर्य समान हितैषी) थे। वे अलंघ्य शक्ति के धारी थे, ब्रह्मयोगी थे, प्रयत्नपूर्वक जीवों की रक्षा करनेवाले थे, एवं जिनेन्द्र द्वारा कहे गए सात तत्त्वों का अवधिज्ञानपूर्वक भाषण करनेवाले थे ॥ २ ॥ वे गिरीन्द्र के समान धीर, दोषों से भीरु, तथा पापरूपी पंक से उद्धार करनेवाले थे। वे दुःखरूपी फूलों को धारण करनेवाली त्रिशल्य रूपी बेल को तोड़ने में एक अद्वितीय हस्ती थे। वे प्रसन्नमूर्त्ति, सूर्य के समान देदीप्यमान, शीलरूपी जल के सागर, प्रमादों के विनाशक, मेघ के समान गंभीर-ध्वनि, संयमी व दयापरायण थे ॥ ३ ॥ वे महाकषाय व नोकषाय रूप भीषण शत्रुओं के विनाशक, अहिंसा मार्ग के अवलंबी, ज्ञानी, नग्न, व कर्मबन्ध को छोड़नेवाले थे; एवं कुतीर्थ (अधर्म) में पैर नहीं रखते थे, परिग्रहों से मुक्त थे तथा मनुष्यों और देवों को सन्तोष देनेवाले थे। (यह लघु-गुरु क्रम से तीन वार सोलह अर्थात् अड़तालीस अक्षरों से युक्त पंचचामर छंद है)॥ ४ ॥ वे मुनि

शान्त-चित्त, जिन-भक्त, रत्नत्रय-परिपालक, तप से तप्त, मदरहित और पंचाचार से युक्त थे।

४. व्याघ्र भील का वर्णन

उन विमलवाहन नामक मुनिराज का अभिनन्दन करके नमस्कार करते हुए, वणिग्वर सुदर्शन ने उनसे अपने भवांतर पूछे। मुनिराज ने उससे कोई बात छिपा कर नहीं रखी। वे जिनवरों की वंदना करके सब वृत्तान्त बतलाने लगे। इसी जंबूद्वीप में सुमेरुपर्वत की दक्षिण दिशा में, अपने मध्य में गंगा और सिन्धु नदियों से युक्त, प्रसिद्ध व धन-समृद्ध भरतक्षेत्र है। उसके विन्ध्य देश के कोसल प्रदेश में मेघनाद भूमिपाल नामका राजा था। उसकी भार्या वसुन्धरी से लोकपाल नामका दिव्यशरीर पुत्र उत्पन्न हुआ। एक दिन राजमहल के सिंहद्वार पर सब लोग इस प्रकार पुकार करते हुए आए—" हे देव, हे देव, रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। इस प्रकार कांपते हुए मनुष्यों के समूह को देखकर व उनके वचन सुनकर, विस्मित हो राजा ने अपने अनंतबुद्धि नामक मंत्री से पूछा। उसने कहा कि राजधानी से दक्षिण दिशा की ओर विन्ध्यपर्वत में एक पराक्रमी भील रहता है, जिसका नाम व्याघ्र है। वह सिंह के समान मदोन्मत्त हाथियों के कुंभों के विदारण में प्रसक्त रहता है, रक्त-नेत्र है, हाथ में प्रचंड चापदंड और बाण लिए रहता है, लंबी दाढ़ी रखता है, व मेघ के समान काले शरीरवाला है। उसके बाल ऊपर को उठे व बिखरे हुये हैं। वह भयंकर वेष रखता है, युद्ध में अजेय है और यमराज के समान क्रूरचित्त है। वह बड़े-बड़े स्थूलस्तनोंवाली कुरंगिणी नामक भार्या से युक्त है। वह दुर्निवार व मोटे आकार का है। वह रोष करता है, लोगों को त्रास देता है और पुनः उसी पर्वत में प्रवेश कर जाता है। वह मेघ में बिजली की छटा के समान क्षण में दिखाई देता व क्षण में ही लुप्त हो जाता है।

५. व्याघ्र भील से संग्राम

इसी कारण यह समस्त प्रजा करुण क्रन्दन करती हुई यहां आई है। यह सुनकर भूमिपाल राजा ने कुपित होकर कहा—"वह क्षुद्र क्या कर सकता है ?" फिर उन्होंने अपने अनंत नामक अनंतबलशाली सेनापति को आज्ञा दी। वह पुलकितगात्र होकर अपने भटसमूह व घोड़ों और हाथियों सहित चल पड़ा। अनंत सेनापति वहां पहुँचा। किन्तु पुलिन्द ने उसे जीत डाला। अनंत भयभीत होकर भाग आया। तब राजा रुष्ट हुआ। वह गर्व से बोला और उसने सेना को धीर बंधाया। फिर वह अपने ध्वज-चिह्नों व छत्र सहित झट से स्वयं वहां गया। किन्तु उसका हाथ अपने नग्न खड्ग पर न पड़ा, तभी उसके पुत्र लोकपाल ने कहा—"आप शूरों के शूर हैं, प्रताप से सूर्य समान हैं, व महाराजों के भी राजा हैं, यह किरात आपके तुल्य नहीं। क्या कोई सिंह क्रुद्ध होकर जीभ लपलपाता हुआ, एक स्यार पर आक्रमण करता है ? हे देव, आप (व्यर्थ) मोह में पड़ गये

हैं।" इतना कह कर उस बालक ने शत्रु को हांका मारा और ऐसा युद्ध किया जो देवों को भी असाध्य हो। उसने अपने कृपाण से उस किरात का सिर काट लिया। राजा प्रसन्न होकर अपने नगर में लौट आया। उस समरांगण में घोड़ों के समूह के मारे जाने पर, गजपंक्ति के नष्ट हो जाने पर, तथा उद्भट भटों का मर्दन हो जाने पर, विधिवशात् तलवार से कटकर, मरकर वह शबर —

६. सुदर्शन के पूर्व जन्मों का वृत्तान्त

वत्सदेश में एक ग्वाले का कुत्ता हुआ। वह सिंह के समान भयंकर था। एक दिन वह गौओं के साथ कोशाम्बी मे आया व परिभ्रमण करता हुआ जिनमन्दिर में आकर रह गया। और जो कुरंगी नाम की शबरी थी वह यथाकाल मरकर काशीदेश की वाराणसी नगरी में एक सुन्दर महिषी हुई। भवांतर में जो किरात था, और फिर जो बेचारा श्वान हुआ था, वह मरकर, दुर्गाह्य अंगदेश में, अकंप चंपापुरी के बीच, क्रोधशील व लोभी सिंहनी नामक सिंह की प्रिया का पुत्र हुआ। वह खल कुलक्षयकारी कर्म करने लगा, मानों पुत्र के बहाने यमराज ही आ गया हो। तत्पश्चात् वह गौओं की रक्षा करनेवाला सुभग (गोपाल) हुआ। उसने वन में इन्द्रियों को जीतनेवाले साधु के दर्शन किये और नमो अरहंतादि पद का ज्ञान प्राप्त किया, जिसके फलस्वरूप वहां से मरकर तू सुदर्शन हुआ है। अब तू घोर उपसर्ग सहकर, तप के द्वारा अनुपम केवल ज्ञान प्राप्त कर, स्पर्श, गंध, शब्द, व चक्षुरहित अनन्त-चतुष्टय व मोक्ष प्राप्त करेगा। और जो वह भील की प्रिया थी, तथा दूसरे भव में महिषी हुई थी, वह कराल काल के वश, यम के दांतों के बीच पड़ी।

७. इन्द्रियों की लोलुपता के दुष्परिणाम

वह चंपानगर के श्यामल नामक रजक की यशोवती नामक भार्या की वत्सिनी नामक पुत्री हुई। वह विधवा हो गई, तब उसने अनस्तमित-व्रत धारण कर लिया, जिसके फलस्वरूप, जैनधर्म के पुण्योदय से, मरकर, तेरी प्रिय भार्या मनोरमा हुई। वह भी देव और मनुष्य गति के सुखों को भोगकर निश्चय से मोक्ष जावेगी। इस प्रकार मैंने तुझे जो होनेवाला है, और जो हो चुका, वह वृत्तान्त कह सुनाया। मदोन्मत, मांसल-गात्र मातंग, स्पर्श इन्द्रिय के वशीभूत होकर, सघन वन में पकड़ा जाता है। मीन, अगाध जल के बीच उछलते-कूदते व चलते हुए मांस में प्रसक्त होकर (रसना इन्द्रिय की लोलुपता से) फँस जाती है। सुन्दर शरीर भौंरा रुनझुन करता हुआ, सुगंध के लोभ से, कमल पर बैठकर नाश को प्राप्त होता है। चिकना, नवीन अंगधारी पतंग आकाश में उड़ता हुआ, हर्ष से, चमकीले पदार्थ से आकृष्ट हो, अग्नि में प्रवेश करता है। तथा सुन्दर कुरंग वन के बीच भ्रमण करता व मृगी से रमण करता हुआ, मधुर गीत से आकृष्ट हो, जीवन को समाप्त कर बैठता

है। इस प्रकार मन में वशीभूत हो, सुख की लालसा से, विषयासक्त हो, मरकर जीव पुनः इस दुःखपूर्ण संसार में भ्रमण करते हैं।

८. इन्द्रियों के वशीभूत हुए देवों व महापुरुषों की विडम्बना

स्पर्श इन्द्रिय के वश से चंग मरण को प्राप्त हुआ, तथा रसना इन्द्रिय के कारण सुभौम नृप। उसी प्रकार गंध का लोभी गंधमित्र, दृष्टि (चक्षु इन्द्रिय) के कारण सहस्रभट व श्रवणेन्द्रिय के रस से गंधर्वदत्त, मरण को प्राप्त हुये। जो कोई अपनी पांचों इन्द्रियों को प्रसार करने से नहीं रोकता, वह स्वयं अपने हाथ से अंगार खींचने का काम करता है। जो प्रसिद्ध व महामानी देव कहे जाते हैं; वे भी चित्त के वशीभूत होकर क्षय को प्राप्त हुये। ब्रह्मा तिलोत्तमा की काय को देखकर, मन के वशीभूत हो, चतुर्मुख हो गया। जो अनन्त कहा जाता है, वह भी अपने मन को न रोक सका; उसने भी उन्मत्त होकर गोपों की गोपयों को ग्रहण किया। महादेव सती (पार्वती) को अपने आधे शरीर में तथा सिर पर सुरसिंधु (गंगा) को बैठाए हुए है। इस प्रकार वह भी मन का लोभी व मदान्ध हुआ है। जो समस्त सुरों और असुरों के मस्तक का शूल था, जिसने ऊँचे पर्वत (कैलाश) को जड़ से हिला दिया था; जिसकी लीलाएँ व काम-काज, सदैव शोभायमान थे, जिसका भ्राता विभीषण था, वह लंका का प्रधान, जगत्त्रय में प्रसिद्ध रावण, रामचन्द्र की अखंडसतीत्व से मंडित पत्नी को देखकर मोहित हो गया, और कामवासना-युक्त मन से उसको हर ले गया; जिसके फलस्वरूप वह रणांगण में लक्ष्मण के चक्र से मारा गया और नरक में पड़कर दुःख सहने लगा। उस भरतेश्वर (अर्ककीर्ति) का पुत्र भी सुलोचना के लोभ में पड़ गया, जिसके कारण वह कषायवश, मेघनाद द्वारा समरांगण में बन्धन को प्राप्त हुआ।

९. इन्द्रिय-विजय के महा सुफल

महान् गंगा को पार करते हुए, पाराशर ने चलित मन हो, लज्जा छोड़, केवट की कन्या का आलिंगन किया, जिससे उसके गर्भ में तपस्वी महामुनि व्यास उत्पन्न हुए। द्रौपदी के केशग्रह के प्रसंग से महाभारत हुआ। इस प्रकार इस जग में, इस मन (कामासक्तमन) के द्वारा कौन-कौन विडम्बित नहीं हुए, केवल एक जिनेन्द्र को छोड़कर। इस संसार में जिसका मन अपने वशीभूत हो गया, उसका त्रैलोक्य में यश भ्रमण करने लगता है; मनुष्य, देव और विद्याधर उसकी सेवा करते हैं, तथा नागेन्द्र और नरेन्द्र उसके गुणसमूह की स्तुति करते हैं। विद्वेषी महान् शत्रु उससे त्रस्त हो जाते हैं, तथा कुत्सित विघ्न उसके कदापि दुर्लंघ्य नहीं होते। बलवान्, उद्धत हाथी उसके आगे खड़े रहते हैं, और चंचल घोड़े कहीं समाते नहीं हैं। उसके अच्छे-अच्छे मंत्र, यंत्र और तंत्र स्फुरायमान हो जाते हैं, व शासनदेवता उसके सब काम करते हैं। धनी लोग उसे अपने

श्रेष्ठ धन-भंडार अर्पित करते हैं। उसे अनेकों अभेद (अक्षय) उपहार प्राप्त होते है। वह मनुष्य मनोवांछित महान् सुखों का उपभोग कर मरने के पश्चात् उत्तम देव होता है, और वहां विशाल विमान में दुःखरहित, पूज्य व मनोज्ञ सुख प्राप्त करता है। किन्तु जो कोई चंचलमन होता है, वह दुःखरूपी जल में डूब जाता है; वह पराई लक्ष्मी व पराई सुन्दर स्त्रियों को देखकर तिल-तिल खीझता है।

१०. नरजन्म और धर्म की दुर्लभता

पर्वतों में श्रेष्ठ मेरु पर्वत है। कुंजरों में ऐरावत, नागों में शेषनाग, प्रासादों में देवगृह, सागरों में क्षीरोदधि, देवों में इन्द्र और जन्मों में नरजन्म श्रेष्ठ है। ऐसे नरजन्म को पाकर जो मूर्ख धर्म नहीं करता, वह शाश्वत सुख रूपी लक्ष्मी (मोक्ष) को आते हुए कुहनी देता है (धक्का देकर निकालता है)। इस दुर्लभ मनुष्य-जन्म को पाकर भी जीव सुखदायी धर्म का चिन्तन नहीं करता। क्षण-क्षण हर्ष मानता हुआ चलता है, व अपनी गलती हुई आयु को कुछ नहीं समझता। 'तुम चिरजीवी हो' सुनकर बड़ा हर्षित होता है। 'मर जावो' सुनकर रोष करता है। जानता नहीं कि काल मुझ पर उसी प्रकार अकस्मात् आ पड़ेगा, जिस प्रकार मत्स्य के ऊपर जाल। चमचमाते हुए मयूर के पंखों को, गजेन्द्र के दांत को, मृग के चर्म को, गैंडे की अस्थि को, कृमिरुह (रेशम) से बनी लोइयां व कंबल, इन सब को लोगों ने पवित्र मानकर प्रशंसा की है। मृतक मनुष्य किसी को इष्ट नहीं होता। उसके निजी बांधव भी उसे अनिष्ट समझ बाहर निकाल देते हैं। उसे छूते भी नहीं हैं, जैसे मानों वह काला सांप हो। उस क्षण प्रिय पत्नी व पुत्र, अपनी मात्र चिन्ता करते हैं। अतएव शरीर की स्थिति को विनश्वर जानकर झटपट, आत्महित में प्रयत्न करना चाहिये। रे मनुष्यो, धर्मरूपी प्रदीप को लो, जिससे लौटकर पुनः जन्मरूपी कूप में न गिरो। इस प्रकार मुनीन्द्र की वाणी सुनकर सुदर्शन ने अपने हाथों को सिर पर चढ़ाया और तत्काल महागुणों की खान धर्म को स्वीकार किया। हे श्रेणिक राजन्, ऐसा जानो। इस प्रकार गौतम गणधर ने उस नयों से प्रसादयुक्त शासन का व्याख्यान किया, जो निश्चय ही सुन्दर कला (सम्यक्ज्ञान) से युक्त है, समस्त भूमंडल को प्रिय तथा अज्ञान का नाश करनेवाला है, जिस प्रकार कि चन्द्र सुन्दर कलाओं का धारी, कुमुदिनी को प्रिय तथा अन्धकार का विनाशक होता है।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा रचित, पंचणमोकार के फल को प्रकाशित करने वाले सुदर्शनचरित में, किरात, फिर श्वान, फिर सुभगगोप और फिर सुदर्शन, एवं कुरंगी, फिर महिषी, फिर वत्सिनी नामकी धोबीकी पुत्री, और फिर उत्पन्न हुई मनोरमा, इसप्रकार कथित चार जन्मान्तर, इनका वर्णन करनेवाली दसवीं संधि समाप्त ॥

संधि ॥१०॥

१. राजा धाईवाहन का वैराग्य

वणिग्वर सुदर्शन ने उन मुनिराज के पास से अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुन कर, संसार से विरक्त हो, तपश्चरण धारण कर लिया, जिस प्रकार कि प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने किया था। उनके तपश्चरण का समाचार सुन कर अपने मन में संसार के भय से त्रस्त हो धाईवाहन राजा एकटक दृष्टि लगा कर पुनः पुनः चिन्तन करने लगा। "नारी का चरित्र बड़ा विचित्र है, जिसे देव भी नहीं जान सकते। मैं अज्ञानी उसके प्रमाण को कैसे जान सकता हूं? मेरी पत्नी झटपट दंभ प्रकाशित करके मर गई। इस निमित्त को लेकर वह सुदर्शन विरक्त हो गया, तथा उसने मनोज्ञ राज्य को रज्जु के समान छोड़कर, सुपूज्य व सुशिक्ष्य (संयमात्मक) दिगंबरी दीक्षा ग्रहण की। और मैं इन्द्रिय-लंपट होता हुआ कुछ भी नहीं समझ रहा हूं। मैं महान् और अनन्त पाप करता हुआ शंकित नहीं होता। ज्ञात नहीं, मैं मर कर भविष्य में कहां उत्पन्न होऊंगा।" इस प्रकार अपने चित्त में विचार करके उस राजा ने अपने समस्त देश का राज्य अपने पुत्र को दे दिया और मुनीन्द्र को नमस्कार करके स्वयं निर्दोष दिगंबर मुनि हो गया। उसकी समस्त प्रिय पत्नियां भी उद्विग्न हो उठीं और फिर वे सभी, हे मुकुटधारी नरेश (श्रेणिक), गर्व छोड़ दीक्षित हो गईं। यह सब देखकर दूसरे कितने ही लोगों ने व्रत धारण किया और कितनों ने महाशल्य के सदृश मिथ्यात्व का परित्याग किया॥

२. गोचरी के समय नगर में सुदर्शन मुनि की चर्चा

उन नरपति प्रमुख समस्त मुनियों ने चतुर्थ व्रत (चतुर्थभक्त रूप उपवास) धारण किया, और फिर अन्य दिन चम्पानगरी में तपलक्ष्मी से विभूषित (मुनि धर्मानुसार) गोचरी प्रगट की। जहां पर उन्होंने राज्यश्री का उपभोग किया था, वहीं पर अब भिक्षाचरण किया। उनके न लोभ था, न लज्जा, न भय और न अभिमान। उनको यदि प्रेम था तो तपश्चर्या से। प्रत्येक साधु उच्च व नीच गृह का विचार न कर, घर के प्रांगण में पहुंचता व क्रमशः एक मार्ग से दूसरे मार्ग में भ्रमण करता, जिस प्रकार कि चन्द्र विशाल नभांगन में ऊंच-नीच ग्रहों का विचार न कर क्रमशः प्रत्येक नक्षत्र में भ्रमण करता है। सुदर्शन मुनि का सौन्दर्य देखने के लिए, यौवनवती नारियां एक दूसरे के अंग से अंग का घर्षण करती हुई, व मेखला को स्खलित करती हुई दौड़ पड़ीं। कोई बोली—"हे सखि, पहले भी इस (सुदर्शन ने) नगर को क्षोभित किया था व कपिलभट्ट की प्रिया विपरीत भाव में प्रवृत्त हुई थी, किन्तु इसने—'मैं तो नपुंसक हूं' ऐसा प्रत्युत्तर दे कर उसको भुलावे में डाल दिया।" कोई बोली—"इसने नरेन्द्र की वल्लभा अभया की भी इच्छा

नहीं की, जिससे उसने प्रभातकाल में ढोंग रचा, और अंत में लज्जित हो, वृक्ष से लटक कर आत्मघात कर लिया।" कोई बोली—"इसने अपनी कान्ता मनोरमा को छोड़ कर, दीक्षा रूपी वधू का वरण किया है। हे मुग्धे, तू क्यों इसकी ओर कटाक्ष से निरीक्षण करती है? वह तेरी ओर ध्यान नहीं देता। री चन्द्रगृहीत (बावली), दूर हट, दूर हट। हे सखि, हे सखि, इसको अपने मन में मत बसा; उसके पीछे लग कर मत दौड़। इससे केवल लोगों में तेरी निर्लज्जता का प्रकाशन और उपहास होगा।" सुदर्शन मुनि अपनी दृष्टि चार हाथ आगे पृथ्वी पर देते हुए चलते व अत्यन्त मौनव्रत से रहते। वे ऐसी स्त्री-कथा नहीं करते, जिससे कामरस की उत्पत्ति हो। उन्होंने हास्य, रतिपूर्वक अवलोकन, परिग्रह, अपनी पूर्व रति के स्मरण का परित्याग कर दिया है। वे अब सुन्दर लड़ियों युक्त हार, सुन्दर कंकन, कुंडल व शेखर आदि आभरण धारण नहीं करते। वे स्त्री, तिर्यंच व नपुंसकों से रहित स्थान में वास करते व इन्द्रियों का दमन करते हैं। (यह मकराकृति छंद है। इसे कोई लताकुसुम भी कहते हैं।) नगर में चर्या करके वे मुनि लीलापूर्वक मंद गति से हस्ती की सूंड के समान हाथों को नीचे लटकाए हुए स्मृतिकरणवश (सामायिक के काल का ध्यान रखते हुए) जिनमंदिर को गए।

३. मुनिधर्म का पालन

वहां जिन मन्दिर में उसने अपने गुरु को नमस्कार करके, तथा अशन, खान, पान एवं स्वाद, इन चारों प्रकार की तृष्णा को छोड़, तत्क्षण प्रत्याख्यान ग्रहण किया। गुरु ने जिस प्रकार कहा, उसी प्रकार सुदर्शन ने समस्त कृति-कर्म का पठन किया। पांच उत्तम व्रत, पंच समिति, पचेन्द्रिय जय, षडावश्यक, केशलौंच, अचेलकत्व, अस्नान, क्षितिशयन, अदंतवण, स्थिति-भोजन और एक भक्त, ये अट्ठाईस मूल गुण कहे गए हैं। चौदह मल और बत्तीस अंतराय, इनका वह (सुदर्शन) प्रमादरहित पालन करने लगा। सोलह उद्गम के, सोलह उत्पादन के दश एषणा के, एवं इंगाल, धूम, संयोजन एवं प्रमाण, इन छयालीस दोषों को छोड़ता हुआ वह धर्मध्यान करता हुआ रहने लगा। वह न रति करता और न अरति, न हास्य और न जुगुप्सा, वह न निद्रा के वश होता, और न पूजा-सत्कार की वांछा करता॥ ३॥

४. सुदर्शन मुनि की साधनाएं

सुदर्शन ग्रीष्म काल में पर्वत की शिला के ऊपर आतापन योग करता, वर्षाकाल में वृक्ष के नीचे, एवं शीतकाल में बाहर खुले में निवास करता। वह अपने मन में एक परमतत्त्व का ध्यान करता; तथा राग और द्वेष, इन दो का निवारण करता। शरीर के कांटों रूप तीन शल्यों को दूर करता। चार कषाय रूप दुर्जनों का निर्दलन करता। पांच आस्रव-द्वारों का निरोध करता। छह जीव-निकायों की हिंसा न करता। सप्तभयों को अपने चित्त से योजित नहीं

करता। आठ मदरूपी दुष्टों को दूर से त्यागता। नौ प्रकार के ब्रह्मचर्य का निर्वाह करता। दशलक्षण धर्म की आराधना करता। ग्यारह श्रावकगुणों का भाषण करता। बारह प्रकार के तप से अपने शरीर को सुखाता। तेरह प्रकार के चरित्र का परिपालन करता। चौदह प्रकार की जीवराशियों पर दयादृष्टि रखता। पन्द्रह प्रकार के प्रमादों से भय खाता। सोलह स्वर्ग स्थानों की इच्छा न करता। सत्रह प्रकार के असंयमों को छोड़ता। अठारह संपरायों का मर्दन करता। उन्नीस नाह (धम्मकहा) के अध्ययनों तथा असमाधि-स्थानों की जानकारी प्राप्त करता। इक्कीस शबल दोषों का मंथन करता, तथा बाईस परीषहों को सहन करता। सूत्रकृतांग के तेईस अध्ययनों व चौबीस जैन तीर्थंकरों की वाणी का व्याख्यान करता। पच्चीस भावनाओं का उद्गोपन करता। छब्बीस पृथ्वियों की परिभावना करता। मुनियों के सत्ताइस गुणों का उत्कर्ष करता। अट्ठाइस प्रकार के आचार प्रकट करता। उनतीस पापश्रुतों को दूर रखता। तीस मोह के स्थानों को चकनाचूर करता। इकतीस मल वादों (दूषितवादों) से घृणा करता, तथा बत्तीस जिनोपदेशों की वांछा करता था। इधर कुसुमपुर में जो पंडिता भाग कर आई थी, उसने देवदत्ता के समक्ष प्रसन्नता से यह कथा कही।

५. पंडिता ने देवदत्ता को सुदर्शन का पूर्ववृत्त सुनाया।

इसी उत्तम भरतक्षेत्र के अंगदेश में चम्पा का राजा धाईवाहन है, जो अभयादेवी से संयुक्त तथा त्रैलोक्य का मोहक है। उसी चंपा नगरी में ऋषभदास नामका वणिक् रहता था। उसकी अर्हद्दासी नाम की गुणवती भार्या थी। उसके सुदर्शन नामका पुत्र उत्पन्न हुआ, जो युवा होने पर त्रिभुवन में विख्यात हुआ। वहीं पर सागरसेन नाम का एक दूसरा वणिक् रहता था, जिसकी सागरसेना नाम की भार्या थी। उसकी मनोरमा नाम की सुन्दर पुत्री का विवाह सुदर्शन के साथ हुआ। उनके सुकान्त नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। इसी बीच उपवन में एक मुनि आये। उस मुनि के पास धर्मश्रवण करके, ऋषभदास ने जिनदीक्षा ले ली। उसी नगर में कपिल भट्ट नाम के राजा का प्रिय पुरोहित रहता था। उसकी कपिला नाम की मनोष्ट भार्या थी, जो सुदर्शन से रमण करने के लिये उत्कंठित हुई। उसने अपनी सखी के द्वारा, मित्र के बहाने, सुदर्शन को अपने पास बुला लिया। सुदर्शन ने अपने को नपुंसक कहकर उससे छुटकारा पाया, और उसने भी उसकी इच्छा छोड़ दी। फिर वसन्त ऋतु में नंदनवन फूल उठा, और राजा पुरजनों के साथ वहाँ को चला। यहाँ अभयमती रानी ने वन को जाते हुए व कपिला के साथ क्रीड़ापूर्वक बातचीत करते हुए, यह प्रतिज्ञा ले ली कि यदि मैं उस वणिग्वर के साथ रमण न करूँ तो आत्मघात कर लूंगी। प्रेम में क्या दुष्कर है? रानी ने घर आकर यह बात मुझसे कही। मैंने उसे पुन पुनः रोका। किन्तु वह पंख लगी चींटी के सदृश क्षुद्रतावश उत्तेजित हो चमक उठी।

६. देवदत्ता की भीषण प्रतिज्ञा

उसकी बात सुनकर, मैंने भी पुतले बनवाए, और उन्हें प्रगट नहीं किया। फिर प्रतिपदा आदि तिथियों में रात्रि के समय द्वारपालों के साथ कलह करके, मैंने उन्हें (पुतलों को) फोड़ डाला। फिर कपट प्रकाशित करके व भटों (द्वारपालों) को डराकर, मैं उस वणिग्वर को ले आई और उसे रानी को समर्पित कर दिया। उसने उसे बहुत मनाया। किन्तु जब वह नहीं माना, तब रानी ने अपने नखों से अपने स्तनों को नोंच, व लोगों को पुकार कर, उस गुणवान को मरवा डालने का प्रयत्न किया। किन्तु उसी समय वहाँ एक निशाचर प्रकट हो गया। उसने राजा के भटसमूह को स्तम्भित कर दिया और फिर युद्ध करके राजा से कहा कि तू उस लम्बितबाहु वणिग्वर के शरण में प्रविष्ट हो। राजा ने उस वणिक् को अपनी राज्यश्री देना चाहा। किन्तु उसने उसे स्वीकार नहीं किया, व तप धारण कर लिया। अभया ने त्रस्त होकर आत्मघात कर लिया, और मैं भागकर यहाँ आ गई। जब पंडिता ने इस प्रकार वृत्तान्त सुनाया, तब उस स्थूलस्तना गणिका ने हँसकर सहसा कहा—"मैं समझती हूँ कि वह कपिला (ब्राह्मणी) व अभयारानी (इस कार्य में) दक्ष नहीं थीं। करणबंध, प्रेम-प्रवर्तन, रतिकर्म, एवं कोमलता से नख-घट्टन आदि मेरे कुल के विज्ञान हैं, और मैं इन सब कलाओं को जानती हूँ। जो वह वणिग्वर था, सो मुनिवर हो गया, ऐसा तू ने क्यों वर्णन किया? जो-जो गले से गरजते थे, ऐसे किन-किन को मैंने अपने में अनुरक्त नहीं बनाया? यदि मैं उसे दृष्टि में पड़ते ही तपश्चरण से भ्रष्ट कर, अपने वश में न करूँ, तो, हे त्रिभुवन-परमेश्वरि, कुण्डेश्वरि, मैं तेरे चरणों के आगे अपना बलिदान कर दूँगी।" नगर में प्रसिद्धि हुई और सुदर्शन के दर्शन के लिए युवती स्त्रियाँ ऐसी मोहित हो उठीं, जैसे सूर्य के उदित होने पर कमलिनी-वन।

७. सुदर्शन मुनि विहार करते हुए पाटलिपुत्र पहुँचे

इसी बीच यहाँ अपने गुरु से पूछकर, देवों और मनुष्यों द्वारा प्रशंसित सुदर्शन मुनि जिनेन्द्र के चरणकमल-युगलों की वन्दना करते हुए, विहार करने लगे। उन्होंने साकेत में जाकर ऋषभ, अजित, अभिनन्दन, सुमति और अनन्त, इन तीर्थंकरों को प्रणाम किया। श्रावस्ती में संभव जिनेन्द्र की वन्दना की, और फिर कौशाम्बी में पद्मप्रभ की। फिर बनारस में पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथ की, तथा चन्द्रपुरी में चन्द्रप्रभ भगवान की स्तुति की। काकन्दी में भगवान पुष्पदंत, भद्दिलपुर में भट्टारक शीतलनाथ, सिंहपुर में श्रेयांस जिनेश्वर, चंपा में परमेश्वर वासुपूज्य, काम्पिल्य में जगद्गुरु विमलदेव, रत्नपुरी में देवों द्वारा नमितचरण धर्मनाथ, गजपुर में शान्ति, कुन्थु और अरहनाथ जिनवर, मिथिला में मल्लि और नमि तीर्थंकर, तथा राजगृह में मुनिसुव्रत, एवं शौरीपुर में उन्होंने अरिष्टनेमि की वन्दना की, व कुण्डलपुर में त्रैलोक्य-नमित अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान का अभिनन्दन

किया। इस प्रकार विहार करते हुए, तप से तपाए हुए सुदर्शन मुनि पाटलिपुत्र नगर में आकर पहुँचे। वहाँ वे मुनिराज कुसुमपुर में चर्या (भिक्षाचर्या) के लिए प्रविष्ट हुए। तब धवलगृह के ऊपर चढ़ी हुई पंडिता ने उन्हें अकस्मात् देखा।

८. पंडिता ने देवदत्ता को सुदर्शन का परिचय कराया

उस विदुषी ने मुनिराज को देखकर, मुस्कुराते हुए अपने हाथ की अंगुली से बालमृगनयना देवदत्ता को संकेत दिखाकर कहा—"यही वह है जो चंपानगरी में प्रसिद्ध हुआ। यही है वह जिनदासी का पुत्र। यही है वह, जिसने उस नगर में क्षोभ उत्पन्न कर दिया था। यही उस सुन्दरी मनोरमा का पति है। यही वह कपिल भट्ट का परम मित्र है। और यही है वह, जिसने कपिला से छल किया था। इसी में अभया ने अपना मन आसक्त किया था। और इसी को मैंने घर में लाकर डाल दिया था। यही है वह, जो उसके वश में नहीं आया और यही है जो अपने शरीर की आसक्ति छोड़ (ध्यान में) स्थित रहा। इसी को मरवा डालने के लिए भेजा गया, और वह अपने पुण्य के कारण किसी प्रकार बच गया। इसी को राजा ने राज्य दिया, किन्तु यह परमकार्य (मोक्ष-साधन) के ही चिन्तन में लीन रहा। यही है वह जो अपने सौन्दर्य से कामदेव है, और यही वह है, जो अभया के मरण का कारण हुआ। यही है वह, जो उसी समय श्रमण हो गया। यही है वह, जो गुणरूपी रत्नों की राशि है। यही है वह, जिसके कारण मैं वहां से भागी। और यही है वह जिसके लिए तू म्लान हुई है। यही वह महागुणशाली है, जिसके ऊपर तू बार-बार अपना गर्व करती है।" इन वचनों को सुनकर गणिका ने अपनी दासी को अपने पास से "शीघ्र ही प्रासाद के नीचे मुनि को ठहराओ," ऐसा कह कर भेजा।

९. रत्न-खचित कपाटों को देख सुदर्शन मुनि का वैराग्यभाव

फिर मणिरत्नों से खचित दृढ़ व कठिन कपाटों के पल्लों को देखकर, मुनिवर जिन-प्रतिमा योग में स्थित हुए चिन्तन करने लगे—"जो मित्र कपट करे, उससे क्या लाभ? वह कैसा सज्जन, जो दूसरों का उपहास करे? वह कैसा राजा, जो लोगों को संताप दे? वह कैसा स्नेह, जो अप्रिय प्रगट करे? पापकारी धर्म की प्राप्ति से क्या लाभ? ऊसर क्षेत्र में बीज बोने से क्या? सौन्दर्य-विहीन कमल कैसा; व कलंक लगा मनुष्य कैसा? वह फूल कैसा जो गंधरहित हो, और वह शूर कैसा जो समर में पराजित हो? जो सौंपे कार्य में शंका करे, वह सेवक कैसा? और वह तुरंग कैसा, जिसका उरस्थल ढका हुआ हो? कृपण के हाथ में पड़े हुए द्रव्य से क्या लाभ? वह कैसा काव्य, जो लक्षणों (व्याकरण शुद्धि व अलंकार आदि साहित्य के गुणों) से दूषित हो? नीरस नट के नृत्य से क्या लाभ? वह कैसा साधु जो इन्द्रिय-लंपट हो? जिस प्रकार अग्नि तृण व काष्ठ से, तथा सागर लाखों नदियों से तृप्ति नहीं पाता, उसी प्रकार तृष्णातुर जीव भी भोगों से संतुष्ट नहीं होता।

१०. विलासिनी द्वारा मुनि का प्रलोभन

मैं भी बिजली से भी अधिक चपल विषयसुखों के परवश होकर, बहुत विपत्तियों में पड़ा। इस प्रकार जब सुदर्शन मुनि विरक्त भाव से अपने मन में पुनः पुनः विचार कर रहे थे, तभी उमा के चरण-कमलों की भ्रमरी, वह सुन्दरी उनकी ओर विलासपूर्ण दृष्टि से अवलोकन करती हुई उन मुनिवरनाथ के पास आई, जो क्षमा के निवासस्थान व तपरूपी लक्ष्मी से संयुक्त थे। वह कहने लगी—"तू अपने को दुख में क्यों डाल रहा है? हे सुन्दर, सुखसमूह का भोग कर। तप करके तो सुख दूसरे भव में प्राप्त किया जाता है। गौ के थन को छोड़कर सींग को दुहने से क्या लाभ? तू सोलह आभरणों के योग्य है; फिर तू मल से लिप्त और नंगा क्यों रहता है? क्यों तू व्यर्थ ही अपने शरीर को संतापित कर रहा है? मेरे हितार्थ वचन पर विचार कर। अथवा, यदि तुझे तप का आग्रह ही लग गया है, तो भी तू सुख भोगकर, पीछे नग्न हो जाना। तू कोमल महिलाओं का रमण क्यों नहीं करता? हाय-हाय, तू कैसा दैव से छला गया है? अरे, पूर्णचन्द्रवदना, अतिस्थूल नितम्बोंवाली, चक्रस्तनी, विलास-चंचल-नयना, सुन्दर रमणीजनों का उपभोग कर।"

११. विलासिनी की कामलीला व मुनि की निश्चलता

"तू तप से परभव में क्या पाएगा? परभव किसने देखा है? क्योंकि जीवन थोड़े से दिनों का है, अतएव मनोवांछित भोगों को भोगना योग्य है?" किन्तु जिसने अपने शरीर को जीर्ण तृण के समान मान लिया था, उसका मन इन वचनों से कैसे भिद सकता था? तब फिर वह सुन्दरी लोगों के मन को मोहित करनेवाले हाव, भाव, विलास और विभ्रम प्रकट करने लगी। कुछ सीत्कार, बहुत कुछ शरीर की मटकन धीरे-धीरे काम-चेष्टा, स्तन-पीडन, हाथों से प्रहार (अंग-स्पर्श) सुन्दर अधरों का पीड़न (काटना), जीभ से चाटना, आंखें मींचना, काममुद्रा ग्रहण करना, धीरे-धीरे नखों का संघटन, एवं नाना भोगमुद्राओं का विपरिवर्तन, ये सब पाकर भी जिसका हृदय नहीं भिदा, उसके समान इस भुवन में कौन कहा जा सकता? वही पुरुष धन्य है, कृतार्थ है और भवसमुद्र के पार करने में समर्थ है। इस प्रकार जब तीन रात्रि-दिन निकल गए, तब उस सुन्दरी ने निराश होकर मुनि को श्मशान में जाकर डाल दिया। वहां मुनि शरीर के उपसर्ग के कारण त्रिविध निर्वेद से युक्त, रत्नत्रय धारण किये हुए व नग्न तथा उदासीन-चित्त हुए स्थित रहे।

१२. देवांगना के विमान का वर्णन

वहां जब वे मुनिवर चतुर्विध आहार का त्याग किये हुए स्थित थे, तभी, हे श्रेणिक राजन्, एक दूसरी विस्मयजनक घटना उत्पन्न हुई। वह अत्यन्त विविध

प्रकार के चित्रों तथा गोल स्तूपाकार शिखर से युक्त, घग्घरसमूह (घाघरा परिकर ?) से घव-घव शब्द करता हुआ, घंटियों के स्वर का रूनझुन् शब्द करते हुए, टनटनाते हुए घंटों से युक्त, जगमगाते हुए रत्नों की प्रभा से प्रभासमान, फहराते हुए ध्वजपटों से विशाल, मणिमय गवाक्षों व मणिमय कपाटों से युक्त, नृत्य करती हुई शालभंजिकाओं से सुसज्जित, द्वारपर मत्तवारणों (ओटों) से अंकित, पत्रावलि के नानारूप आकारों से सुन्दर, पचरंगे चंदोवे से संयुक्त, नाना रत्नों के झूमकों से झूलते हुए, धूप की गंध से दिशाओं को सुवासित करते हुए, गुमगुमाते हुए भौंरों से घिरे, तीव्र सूर्यकिरणों को पराजित करते हुए, देव-विमान से भी अधिक विशिष्ट, ऐसे विमान में चढ़कर एक देवांगना हर्ष से नाचती घूमने की इच्छा से नभस्तल में जाती हुई प्रगट हुई।

१३. मुनिराज के ऊपर आकर विमान कैसा स्थिर हुआ

जब वह विमान मुनिवर सुदर्शन के ऊपर पहुंचा, तब वह थर्रा कर ऐसा स्थिर हो गया, जैसे पूर्वकाल में कैलाश पर्वत पर बालि मुनि के ऊपर पुष्पक विमान स्थिर हुआ था। जैसे कायरचित्त मनुष्य भटों के भीषण संग्राम में प्रवृत्त नहीं होता। जैसे देव का स्वर्ग से नरक में पतन नहीं होता। जैसे सुपुण्यवान जिनवर के सम्मुख मानविकार की प्रवृत्ति नहीं होती। जैसे उत्तम सुवर्ण में मलकलंक नहीं रहता। जैसे मूर्ख लोगों की वाणी पदों के समास में प्रवृत्त नहीं होती। जैसे यम का पाश लोकाग्र में वास करनेवाले सिद्धों पर नहीं चलता। जैसे सूर्य के प्रकाश में अंधकार नहीं आ पाता। जैसे कुकवियों की रचना सुन्दर कवित्व में प्रवृत्त नहीं होती। जैसे मन की शुद्धि से शुद्ध मुनि की स्नान करने में प्रवृत्ति नहीं होती। जैसे पाप का लेप सम्यक्ज्ञानी पुरुष में उत्पन्न नहीं होता। जैसे उपशमधारी में संक्लेश भाव उत्पन्न नहीं होता। जैसे स्नेह-हीन व्यक्ति में रतिविलास नहीं चलता। जैसे मानुषोत्तर के ऊपर मनुष्य-गमन नहीं होता। जैसे शुद्ध सिद्ध में संसारोत्पत्ति नहीं होती। तथा जिस प्रकार केवलज्ञानी में खानपान रूप प्रवृत्ति नहीं होती। उसी प्रकार वह विमान मुनीश्वर के सिर पर से आगे नहीं बढ़ सका। वह देवविमान नभ में चलते चलते थर्रा कर स्थिर हो गया। किन्तु फिर भी वह भूमि-तल पर नहीं गिरा, यही मेरे मन में बड़ा आश्चर्य है।

१४. देवांगना का रोष

मुनि के तपश्चरण के प्रवर माहात्म्य से चन्द्र भी आकाश से आ गिरता है; फिर दूसरे किसी की तो गणना ही क्या है? ऐसा जान कर जिनवर-धर्म में लगना चाहिये। अपने विमान को आकाश में डोलते हुए देखकर, वह व्यंतरी रोषपूर्वक बोली—"किसने सोते हुए सिंह को रौंदा है? किसने नारायण की

नाभि से उत्पन्न कमल को तोड़ा है ? किसने खड्ग से व्योमांगन को ताड़ित किया है ? किसने गर्व से कालाग्नि को फाड़ा है ? किसने मुष्टि से चन्द्र को गिराया है ? किसने कैलाश में विश्वेश्वर (महादेव) पर धाड़ा मारा है ? किसने राशिगत शनिश्चर को रुष्ट किया है ? किसने घूंट से समुद्र को सुखाया है ? किसने शेष नाग के फणामंडप का मर्दन किया है ? किसने अपनी शक्ति से रण में भद्र हाथी को जीता है ? किसने सुमेरु पर्वत को चलायमान किया है ? किस मूर्ख ने कालानल को प्रज्वलित किया है ? कौन ऐसा है, जो सूर्य के रथ को रोके ? और कौन है वह, जो इस मनानन्ददायी विमान को रोके ? जो कोई विमान का निरोध करता है उसका मैं सिर रूपी कमल तोड़ लूंगी। कौन ऐसा कालप्रेरित है, जो मुझे क्षुब्ध करना चाहता है ?

१५. व्यंतरी का पूर्वजन्म स्मरण व मुनि का उपसर्ग

फिर जब उस व्यंतरी ने दशों दिशाओं में अवलोकन किया, तब उसे श्मशान में मुनिराज दिखाई दिये। उन्हें देख उसे अपने पूर्व जन्म का वृत्तान्त स्मरण हो आया, और वह झट से अग्नि की ज्वाला के समान प्रज्वलित हो उठी। पूर्व जन्म का स्मरण कर उस व्यंतरी ने मुनि का घोर उपसर्ग करना प्रारम्भ कर दिया—"पकड़ो, दौड़ो-दौड़ो, मारो-मारो" कहते हुए निशाचर चारों दिशाओं में किलकिलाने लगे। चारों दिशाओं में रुंड दड़दड़ाने लगे, मुंड हड़हड़ाने लगे, और अजगर तड़तड़ाने लगे। चारों दिशाओं में मशक (मच्छर) गुनगुनाए, भौंरे रुणरुणाए, उल्लू घू घू करने लगे और भैंसे सू सू करने लगे। कौवे करकराए और कुत्ते गुरगुराने लगे। वानर कुलकुलाने और हाथी गुड़गुड़ाने लगे। सर्प सलसलाने, और ऊंट फिक्कार करने लगे। चारों दिशाओं में अग्नि की ज्वालाएं उठने लगीं। चारों दिशाओं में रुधिर झलझलाने लगा। मुनि के चारों ओर पुन पुनः खड्ग धारण किये हुए निशाचर घूमने लगे, मानों प्रलय के समय कल्लोलधारी सागर उछल रहे हों।

१६. भूतों और वेतालों की उद्वेगकारिणी माया

फिर वे निशाचर नाना वेश धारण करके, दशों दिशाओं में ऐसे फैले कि माते (समाते) नहीं थे। वे एक क्षण में सिंह, शरभ, व व्याघ्र रूप विकराल मुख बना कर, रूं-रूं करते हुए दौड़े। अन्य वेताल कपाल लेकर आए, और उन्हें मुनि के व्रत को नष्ट करने के लिए उनके आगे डालने लगे। अन्य भैरुंड मांस के टुकड़े खाने लगे, और अन्य केश लहराते हुए नरशीर्ष (मनुष्यों की खोपड़ियां) लेने लगे। अन्य अपने नाशापुटों से, ओठों से हाथ के प्रकोष्ठों द्वारा सुसकने लगे। दूसरे मरे हुए नरकंकाल के लिए तृषित हो उठे। कोई अभद्र गधों के स्वरों से रेंकने लगे। दूसरे स्याही के समान कृष्णवर्ण व लम्बकर्ण हंसने लगे।

दूसरे लोहू से लथपथ मृतशरीरों पर चढ़कर चिल्लाने लगे। अन्य गलित वस्त्र (नग्न) होकर व हाथ पसार कर नाचने लगे। अन्य सौ मुख, लाल आंखें और बहुत सी भुजाओं को बनाकर आए। अन्य कीड़ों से पूर्ण अति दुर्गन्धि बनकर शीघ्र मर गए। अन्य रुंड बनकर अप्रमाण उड़ाने मारने लगे। तथा अन्य मुंड बनकर ललकारें और हांके छोड़ने लगे। अन्य बड़ी-बड़ी डाढ़ों व विकराल भृकुटियों से युक्त मदोन्मत्त हुए, मारो-मारो कहते हुए, व अंग पर ताल ठोंकते हुए आ पहुंचे। इस प्रकार की विक्रियाओं द्वारा भूतों ने जल, थल, व आकाश को भर दिया, मानों यमने अपने को नानारूपों द्वारा दिखलाया हो।

१७. महान् उपसर्गों के बीच सुदर्शन मुनि की स्थिरता

इतना होने पर भी श्रमण सुदर्शन अपने योग से विचलित नहीं हुए। वे उसी प्रकार निष्कंप व अगर्व (निर्विकार) बने रहे, जिस प्रकार कि प्रकाशमान सुमेरु पर्वत तीक्ष्ण व चपल पवन के आघात होने पर भी अडोल बना रहता है। तब उन निशाचरों ने आकाश में ऐसा चपल मेघ उत्पन्न किया, जिससे जल बरसने लगा, सूर्य ढक गया; तथा निरन्तर जलप्रवाह से मत्स्य और मगर सब ओर दौड़ने लगे। वह मेघ चपल बिजली युक्त तड़तड़ाने तथा देवों, मृगों, वनचरों तथा विषधरों को भयभीत करने लगा। लोग त्रस्त होने लगे, शरीर सूखने लगा, और वे भयरहित वन में प्रविष्ट होने लगे। जल में, थल में, महीतल पर अत्यधिक जल बहने लगा। फिर सब लोग कहने लगे—"क्या प्रलय के दिन का अवसर आ गया? चारों दिशाओं में पृथ्वी को भरता हुआ महान् जल प्रसार हो गया। कहां चलो, कहां भागो, कहां जिओ, और किससे कहो? अपने पुत्रों तथा प्रियाओं सहित कहां प्रवेश करके सुख पाओ? असाधारण जलवृष्टि से महीमंडल झलझला उठा। घर और नगर बहने लगे। पर्वत शिखर टलटलाने लगे। फिर वे दुष्ट कलकलाने, गिलगिलाने, आकाश में मिलने एवं घोर ध्वनि करने लगे, तथा बार-बार अतिप्रबल हल व मुसल दिखलाने लगे। किन्तु इतने पर भी वह गुणनिधान मुनि अपने चण (ध्यान) से विचलित नहीं हुआ। (यह दश-दश लघु मात्राओं द्वारा शशितिलक नामक छंद कहा गया)। जिस मुनिनाथ ने अपने तन, मन व वचन का निरोध कर लिया, उसको भला महान् जलप्रवाह से ही कैसे वशीभूत किया जा सकता है?

१८. व्यंतरी द्वारा घोरतर उपसर्ग और मुनि की वही निश्चलता

फिर उस व्यंतरी ने ऐसा महान् अनल निर्माण किया जो वृक्षों की शाखाओं के परस्पर संघर्षण से उत्पादित स्फुलिंगों से लालवर्ण हो रहा था तथा जिसने धूलि के भार से समस्त भुवनतलको भर दिया। किन्तु जब इससे भी वह धीर साधु अपने योग से विचलित नहीं हुआ, और वह अपने समस्त परिग्रह को छोड़, गुणों का आवास व गंभीर बना रहा, तब वह व्यंतरी तीव्र कोप से कांप उठी,

और अपने मुख से प्रचंड अलाप छोड़ती हुई बोली—"पूर्व काल में भी मैंने तुझे श्मशान से मंगवाकर मनाया। फिर प्रभात होने पर पुकार मचाकर दंभ से तेरा अपमान कराया। उस समय एक राक्षस ने आकर तेरी रक्षा की। किन्तु अब कौन तेरी रक्षा करता है?" ऐसा कहकर वह अक्षय दुःखपूर्ण पाताल में गई और अपने बाहुदंडों से उसने धरापीठ को ऊँचा उठा लिया, जिससे ऊँचा महापर्वत-चक्र भी कंपित हो गया। इससे अपने गंडों में मद बहाते हुए हाथी भी संत्रस्त हो उठे, और उनके चीत्कार शब्द से सिंह रुष्ट हो उठे। सिंहों की दहाड़ से दिशा-चक्र आपूरित हो गया। इससे सागर पर्यन्त गिरते हुए दिग्गजों ने चीत्कार छोड़ी। उनके गिर पड़ने से भूमंडल डोलने लगा। उससे झल (तरंगों) युक्त सातों सागर उछलने लगे। उनकी कल्लोल-माला द्वारा व्योमांगन का उल्लंघन हो गया। इससे चन्द्र, सूर्य व तारामंडल झटपट झकझोर गये। इस प्रकार मानों अकाल (असमय) में ही प्रलयकाल उपस्थित हो गया। (इस प्रकार यह मंदारदाम छंद स्पष्ट कहा गया)। अभया व्यंतरी ने त्रैलोक्यमंडल को संतापित कर डाला। तथापि वह उस ध्यानस्थ मुनि के एक रोम को भी कंपित न कर पाई।

१९. सुदर्शन का पूर्व उदाहरणों का स्मरण और स्वयं दृढ़ रहने का निश्चय

वह श्रमण चिन्तन करने लगा—"सूर्य गगनतल का भूषण है। प्रणय-रोष स्नेह का, मद करिवर का, कलश धवलगृह का, और उपशम तप का भूषण है।" वह अपने कुलरूपी नभस्तल का चन्द्र ऋषि पुनः सोचने लगा, कि श्रुतधर मुनिवर को किस प्रकार उत्तम क्षमा, मार्दव व आर्जवभाव से लाभ हुआ। अपने विमान पर आरूढ़ विद्युद्दंष्ट्र व्यंतर ने संयमी को दुर्गम पंचनदी संगम पर क्षोभ पहुँचाया, किन्तु वह संयमी क्षुब्ध नहीं हुआ। फिर कामदेव को जीतनेवाले बालि भट्टारक को दशानन (रावण) ने रुष्ट होकर, व भृकुटि खेचकर, पर्वत से उतरकर व उसके तल में प्रवेश कर, अष्टापद पर्वत को उठाया। किन्तु फिर भी वह मुनिश्रेष्ठ चलायमान न हुआ। उसी प्रकार गजकुमार खीलों से कीले जाने पर भी उद्वेलित नहीं हुआ। पर्वत पर कुलभूषण मुनिवरों ने एक असुर द्वारा किए गए उपसर्ग सहे और क्षमा धारण की। प्राचीन काल में दंडक राजा ने अत्यन्त कषाय के वशीभूत होकर पृथ्वीमंडल के चन्द्र पांच सौ मुनीन्द्रों को शस्त्रों से हूला और यंत्रों से पेला। सीतांगदेव ने माया वेश बनाकर राघव (रामचन्द्र) का उपसर्ग किया, तो भी वह उनका योग भंग नहीं कर सका। कौरव-कुल के योद्धाओं ने तप्तलोह से जो उपसर्ग किया, उसे आत्मसंयम में प्रवृत्त पांडुपुत्रों ने सहन किया। दुष्ट शठ कमठ ने अभंगरूप से लगातार दिन-रात पार्श्वनाथ का उपसर्ग किया; किन्तु उन्हें उससे मोक्ष का ही लाभ हुआ। इसी प्रकार अन्यान्य गुणधारी यतिवरों ने ईर्षारहित भाव से मनुष्यों और देवों द्वारा किये गये उपसर्गों

को सहन कर स्वकार्य सिद्ध किया था। उन समस्त मुनियों ने जो आदर्श दिखलाया है, उससे मैं भी विचलित नहीं होऊँगा।

२०. रक्षक निशाचर व्यंतरी को ललकारता है

ऐसे समय में वहां भृकुटि से भीषण, असाधारण रोषपूर्ण नेत्रयुक्त, द्वितीया के चन्द्र सदृश डाढ़ों वाला, हाथों में शस्त्र लिए वही निशाचर आ पहुँचा। उसने हांक लगाई—"री पापिनि, दुष्ट-बुद्धि, निहीन, ठहर-ठहर; अब तू कहां जायगी? अथवा तू अभी जीती हुई भाग जा, नहीं तो तेरे प्राण ले लूँगा।" तब उस व्यंतरी ने दर्प के साथ कहा—"रे पिशाच, आ-आ। ले मेरे प्राण। अरे मूर्ख, तू किस साहस से ऐसा विचारहीन हो रहा है? इस नगोड़े के लिए प्रमाद मत कर। मैं तेरे प्राण ले लूँगी। रे हताश, भाग जा, भाग जा! किन्तु रे पापराशि, अब तू मेरे पास से कहां जायगा? तेरे सिर के ऊपर यह सजा हुआ दुर्निवार, प्राणहारी कालवज्र क्या न पड़े?" ऐसा कहकर उस व्यंतरी ने अपने हाथ में विद्युतपुंज रूपी तेज व उग्र खड्ग लेकर उसके उरस्थल पर प्रहार किया, जिससे वह निशाचर अल्प मूर्च्छा को प्राप्त हो गया। किन्तु पुनः चेतना प्राप्त करके उस राक्षस ने कहा "री निहीन व्यंतरी, मुझ पर तूने जो निर्दयता के साथ असाध्य आघात किया, उससे मेरा वक्षस्थल भिद गया। अब उसका कुछ बदला ले। आ आ।" फिर उसने उस पापिनी पर प्रबल दिव्य शस्त्र छोड़े। किन्तु वे सब उसे असार (निष्तेज) होकर लगे। तब उस निशाचर ने रोष के वशीभूत होकर अपने धनुष पर दीर्घ शिशिर बाण रक्खा, और उसे सहसा छोड़ दिया; जिस प्रकार कोई दुःखी-चित्त होकर अपने सिर को हाथ पर रक्खे और दीर्घ ठंडा स्वर छोड़े।

२१. शिशिर और ग्रीष्म बाणों का प्रयोग

वह अति श्वेत बाण ऐसा दौड़ा, जैसे मानों हिमकणों के मिष से किसी सत्पुरुष का अति उज्ज्वल यश प्रसार कर रहा हो। तथा उसने ऐसा रोमांच प्रगट किया, जैसे मानों वह अभिनव प्रणय कर रहा हो। उस शिशिर बाण के प्रहार से भिदकर वह व्यंतरी बोली—"यह सहसा शीत की बाधा उत्पन्न करनेवाली, सर्व दोषों की खान तेरी शक्ति मैंने देख ली। तू पुरुषकार (पौरुष) से वर्जित है। यद्यपि तू भयत्रस्त होकर अपलाप (प्रलाप) कर रहा है, किन्तु व्याघ्री के पंजे में पड़कर हरिण जीता हुआ कहाँ जायगा? अभी भी तू, जबतक मैं तेरा सिर नहीं तोड़ती तबतक, अपने घर भाग जा, और शीतल जल पी।" ऐसा कहते ही उस व्यंतरी ने अपनी प्रभा से चमकता हुआ ग्रीष्म नामक बाण छोड़ा। उसके प्रभाव से धूलि-प्रवाह धगधगाने लगा। रज का बवंडर घूमने लगा। कीचड़ में शूकर लोटने लगा। कुंडी का जल सूखने लगा, और दावानल जलने लगा। दुस्सह जलतृष्णा से जिह्वादल फूटने लगा, और लोग तरुतल की शरण लेने लगे।

(यह अपने विषम पदों से मनोहर, मणिशेखर नामक छंद कहा गया)। फल (तीर का अग्रभाग) और सुन्दर पंख सहित सीधा बाण तथा दान व सुपात्रों सहित नर, कहाँ, किसे नहीं सुहाता ? परन्तु धनुष की प्रत्यंचा से छूटा हुआ शर, और धर्मगुण से हीन नर, भुवन को संताप देता है ॥२१॥

२२. निशाचर द्वारा वर्षा-बाण का प्रयोग व व्यंतरी का पराजय

वह ग्रीष्म शर, जल में, स्थल में, व गगन में प्रलय की अग्नि के समान प्रगट हुआ। तब उस निशाचर ने भी कुछ हँसकर उसे वर्षाबाण से विनष्ट कर डाला। वह अप्रमाण बाण जब चला, तो आकाश में जा मिला। उसके कारण घनपटल अत्यन्त चंचल होकर गड़गड़ाने लगा, मानों वह पृथ्वीमंडल पर, व लोगों के घरों पर गिर रहा हो। उसे सुनकर, अपना सिर धुनते हुए, अग्नि रोने-चिल्लाने व नाचने लगा, तड़तड़ाने लगा और तट पर गिरने लगा। पर्वतों को फोड़ने व लोगों को डराने लगा। तो भी पर्वतों के शिखर पर, बहुत से कन्दराओं में वह प्रचुर जलसमूह प्रसार करता हुआ व बरसता हुआ रुकता नहीं था। समस्त जन भयविकल हुए कहाँ जायें ? तब वह व्यंतरी उस निशाचर से डरी और थर्राई ; एवं वह दर्पिष्ट भागी, जिस प्रकार कि प्रकाशमान सूर्य के सम्मुख निशा नष्ट होती है। तब वह मुनिवर अपने हृदय में विधिवत् नयों के व्याख्यान से जगत् को आनन्दित करनेवाले, देवों, मनुष्यों तथा नागों से सेवित जिनदेव के चरणों का स्मरण करने लगा।

इस प्रकार माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पंचणमोकार फल को प्रकाशित करने वाले सुदर्शनचरित में, सुदर्शन मुनि की कथा सुन कर देवदत्ता का अपने घर में उनको क्षोभ पहुंचाना, फिर श्मशान में अपने जन्मान्तर का स्मरण कर अभया व्यंतरी द्वारा उपसर्ग किया जाना, इनका वर्णन करने वाली ग्यारहवी संधि समाप्त।

॥ संधि ११ ॥

१. माया-गज का निर्माण और उसपर आरूढ हो सुरेन्द्र का आगमन

तत्पश्चात् वहां उस अवसर पर सातवें दिन मनुष्यों और देवों के वंदनीय, सुदर्शन मुनीन्द्र के घातिचतुष्क (चार घातिया कर्म) का विनाश हो गया, और उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। जब उन मुनिराज को अविकल केवलज्ञान हुआ, तब देवलोक में सुरेन्द्र ने एक दीर्घशुंड गजवर को आज्ञा दी। उसने सुविस्तीर्ण, मनोहर शरीर धारण किया। उसने बत्तीस मुख बनाये और उनके दूने अर्थात् चौंसठ मदरक्त नेत्र। प्रत्येक शोभा-सम्पन्न मुख में आठ-आठ दांत थे, और फिर प्रत्येक दांत में एक एक जलचरों से शोभायमान महान् सरोवर था। प्रत्येक सरोवर में एक-एक निर्मल कमलिनी थी, और प्रत्येक कमलिनी में बत्तीस कमल थे। प्रत्येक कमल में बत्तीस पत्र थे, और प्रत्येक पत्र पर परमेष्ठी भक्त, रसभाव में कुशल, शरीर से विकसित बत्तीस बत्तीस अप्सराएँ नृत्य कर रहीं थीं। करीन्द्र ने जितना जम्बूद्वीप का विस्तार है, उतना अपने शरीर का विस्तार किया। उस गजेन्द्र पर आरूढ़ होकर सुरेन्द्र आया और अपने मन में अनुराग सहित इस प्रकार स्तुति करने लगा।

२. इन्द्र द्वारा सुदर्शन केवली की स्तुति

जय हो, हे जनमनहारी; जय हो, हे भवभयहारी। जय हो, हे महायश-धारी; मुनिगणरूपी नभ के चन्द्र। जय हो, हे कामदेव के सुदृढ़ विनाशक। जय हो, हे मेघध्वनिकारक; जय हो, हे उत्तमपद को प्राप्त व श्रेष्ठों द्वारा चरणों में नमस्कृत। जय हो, हे दया के पथ को निर्माण करने वाले (अहिंसोपदेशक) जय हो, हे तपरूपी रथ के वाहक। जय हो, हे अन्धकाररूपी वन के दाहक। जय हो, हे नयरूपी जल के ह्रद (कुण्ड)। जय हो, हे सैकड़ों भवों का मथन करनेवाले। जय हो, हे इन्द्र नमित। जय हो, हे शम और दम में रत। जय हो, हे रज (कर्ममल) से रहित। हे भगवन्, आप करुणारूपी रात्रि के चन्द्र हैं, कलिकाल के मल रूपी अन्धकार को हरण करनेवाले हैं, देवों और मनुष्यों के समूहों द्वारा वंदित हैं; भव्यरूपी कमलों के दिवाकर हैं, और गुणों के रत्नाकर हैं। हे भगवन्, जगत् में कौन ऐसा है, जो आपका मन में स्मरण न करता हो ?

३. इन्द्र की स्तुति हो जाने पर कुबेर द्वारा समोसरण की रचना

आप वीतराग हैं, और मान से युक्त हैं। आप मोहरूपी अंधकार के लिए सूर्य हैं। आप बुद्ध हैं, सिद्ध हैं, निर्ग्रन्थ हैं। आप मित्रों और शत्रुओं के लिए मध्यस्थ हैं। आप शूरों में शूरवीर हैं। आप (ज्ञान के) गंभीर पारावार हैं।

आप निःसंग हैं, आप निर्द्वन्द्व हैं, देवों द्वारा भक्ति से वंदनीय हैं। आप त्रैलोक्य के पूज्यों के भी पूज्य हैं; तथा निश्चय ही कर्मरूपी पर्वतों के वज्र हैं। आपने बंध और मोक्ष का चिन्तन किया है, और अव्याबाध ज्ञान को प्राप्त किया है। आप समस्त साधुओं के स्वामी हैं व दुर्लभ लोकाग्र (मोक्ष) के गामी हैं। आप सर्वज्ञ हैं, और भव्यों के लिए आनन्दभूत हैं। (यह विद्युन्माला छंद है)। इस प्रकार केवली सुदर्शन मुनि की इन्द्र ने स्तुति की। तत्पश्चात् शीघ्र ही कुवेर यक्ष ने बारह गणों (भागों) से युक्त चतुर्दिक सभामंडप निर्माण किया, और उसके मध्य में भद्रपीठ पर कर्ममलरहित मुनि विराजमान हुए।

४. केवली भगवान् के विशेष अतिशय

चन्द्र व दुग्ध के समान धवल दो चमर, देवों द्वारा भौंरों को तुष्टि उत्पन्न करनेवाली पुष्प-वृष्टि, लोगों को प्रसन्न करनेवाला दुंदुभि-घोष, अपूर्व रवि के समान दिव्य भामंडल, तीनों जगत् का शोक दूर करनेवाला अशोक वृक्ष, तथा पाप का नाश करनेवाली सुमनोज्ञवाणी, इनसे युक्त वह उत्तम केवलज्ञानी मुनि ऐसा शोभायमान हुआ, जैसे मानों साक्षात् जिनेन्द्र समोसरण में विराजमान हों। और भी समस्त विशेष अतिशय उसी प्रकार प्रगट हुए, जैसे जिनवर के होते हैं। (इसे निश्चयत चन्द्रलेखा छंद जानो)। वहाँ अति उपशान्त व बहुत भक्ति के भार से निमित, एवं संसार से विरक्त, उन्हीं में चित्त लगानेवाले भव्यजनों के पूछने पर वे महामुनि उन्हें इस प्रकार उपदेश देने लगे।

५. सुदर्शन केवली का उपदेश व व्यन्तरी का वैराग्यभाव

दोषों से रहित अरहंतदेव, ऋषि गुरु, तथा रत्नत्रय का ध्यान करना चाहिये। अहिंसा-लक्षणात्मक धर्म ही गुणकारी होता है। उसमें भी उत्तम मोक्षमार्ग निर्ग्रन्थ धर्म ही है। यह बात मिथ्यात्व के परवश हुआ जीव नहीं मानता, और वह मोहान्ध व अज्ञानी हुआ पाप करता है। यह जीव अनादि-निधन है, और वह संसार में उसी प्रकार भ्रमण करता है, जैसे समुद्र में मछली। चारों गतियों में दुःख सहता हुआ वह उत्पन्न होता, और मरता रहता है। वह मनुष्य-जन्म नहीं पाता। यदि पा ही जाय, तो उस धर्म को नहीं सुनता जो विरोध रहित है। यदि सुनता भी है, तो उसे हृदय में नहीं रखता। और यदि रखता है, तो तपश्चरण से डरता है। तप के बिना ध्यान उत्पन्न नहीं होता और ध्यान के बिना मोक्ष नहीं प्राप्त होता। (मुनि का यह उपदेश सुनकर) वह व्यंतरी भी उपशान्त हो गई और नमन करती हुई बोली "हे मुनिवर, इतना कीजिये कि रौरव नरक में गिरती हुई दुर्नयवती मुझे दया करके तप की दीक्षा दीजिये।"

६. व्यंतरी व नगरजनों का सम्यक्त्वधारण व मुनिराज का मोक्षगमन

तब मधुर वाणी द्वारा मुनिवर ने इस प्रकार कहा—"देव, तिर्यंच व नरक के जीवों को तप योग्य नहीं होता। किन्तु तेरे लिये निःशंकादि आठ गुणरूपी रत्नों का निधान एक सम्यक्त्व ही पापनाशक हो सकता है।" तब उस व्यंतरी ने दुःखहारी और सुखकारी सम्यक्त्व तुरन्त धारण कर लिया, और मिथ्यात्व को छोड़ दिया। इस आश्चर्य को सुनकर नगर के लोगों में खलभली मच गई, और वे मुनिदर्शनोत्साह के रस सहित वहाँ आ पहुँचे। उन लोगों ने ज्ञानदर्शी मुनि की वाणी सुनकर, मिथ्यात्व का परित्याग कर दिया, और उनकी स्तुति करके व्रत धारण कर लिया। तब उस पंडिता ने भी दुर्नीति से विरक्त होकर, देवदत्ता सहित उसी समय तपश्चरण धारण कर लिया। यहाँ उनकी गृहिणी (मनोरमा) भी, केवल ज्ञान उत्पन्न होने की बात सुनकर, तुरन्त घर छोड़ आर्यिका हो गई। फिर वह बहुत दिनों तक पीतादि शुभ लेश्या युक्त सन्यास पालन करके देवलोक को गई। सुदर्शन केवली की जो कर्मस्थितियां (चार अघातियां कर्म) अवशेष रही थीं, वे सब भी जली हुई रस्सी के समान थोड़े काल में ही क्षय को प्राप्त हो गईं। फिर पौष मास की पंचमी तिथि को उत्तम सोमवार के दिन, धनिष्ठा नक्षत्र में एक प्रहर शेष रहने पर वे मुनि उपसर्ग सहन कर, व कर्ममल-पटल को त्याग कर एक समय मात्र में लोक के अग्रभाग (मोक्ष) पर जा पहुंचे। वहां वे मुनीश्वर, अठारह दोषों से रहित, गुण-संयुक्त, अपने पूर्व शरीर से किंचित् न्यून आकार से निर्वाण में स्थित हो गए। वे परमेश्वर मुझे अविकाररूप से बोधि प्रदान करें।

७. पंचनमोकार का माहात्म्य

क्षायिक सम्यक्त्व में अपना अनुराग बांधनेवाले, हे महाराजाधिराज श्रेणिक, जहां उत्तम पंचनमोकार में रत होकर, एक ग्वाले ने शिवसुख प्राप्त कर लिया, वहां यदि अन्य कोई भी मनुष्य शुद्धभाव से युक्त होकर, एकचित्त से पाचों पदों का ध्यान करे, और समस्त पूजाविधान भी करे, तो वह क्यों न सिद्धि रूपी वधू के मन को आकर्षित करेगा? अथवा, यदि उस दुर्लभ मोक्ष स्थान को रहने दिया जाय, तो भी इस संसार में ही वह लोगों का अनुराग प्राप्त कर लेता है। यदि कोई मंदक्रिय आलसी भी विधिवत् पूजा करे, तो ग्रह, राक्षस व भूत उसके वश में हो जाते हैं। पूजा के प्रभाव से गलगंडादिक सैंकड़ों रोग क्षय हो जाते हैं, तथा विष व उपविष दृष्टि में भी नहीं आते; बिच्छू, सांप व मूषक नहीं डसते, विघ्न नहीं होते, और दुर्जन भय खाने लगते हैं। यह उपदेश सुनकर, मगधेश्वर जिनेश्वर की स्तुति करके, विपुलाचल पर्वत से उतर कर अपने राजभवन को लौट गये, और वहां ऐसे शोभायमान हुए जैसे पूर्वकाल में मंदरगिरि के सामने स्थिर भरतेश्वर साकेत में शोभायमान हुए थे।

८. इस कथा की श्रुत-परम्परा

इस ग्रन्थ की बुधजनों को तुष्टि देनेवाले अर्थ (कथावस्तु) की सृष्टि अरहन्तों ने की थी। फिर उस कथा की ग्रन्थसिद्धि, जनमनोहारी गौतम नामक गणधर ने और अनुक्रम से सुधर्म व जम्बूस्वामी, (इन तीन केवलियों) ने, फिर स्वर्गगामी विष्णुदत्त ने, फिर नन्दिमित्र, अपराजित, सुरपूजित गोवर्द्धन और फिर भद्रबाहु परमेश्वर (इन पांच श्रुत-केवलियों) ने, फिर विशाख मुनीश्वर, प्रोष्ठिल, क्षत्रिय, धर्मप्रवर्त्तक जय, नाग, सिद्धार्थ मुनि, तपश्री-रंजित धृतिसेन, विजयसेन, बुद्धिल, गंगदेव और धर्मसेन (इन ग्यारह दशपूर्वियों) ने, फिर नक्षत्र, जय को प्राप्त जयपाल मुनि, पांडु, मनोविजयी ध्रुवसेन और भयरहित कंसाचार्य (इन पांच एकादशांग धारकों) ने, और फिर नरश्रेष्ठ सुभद्र, यशोभद्र, लोहार्य और शिवकोटि (इन चार एकांगधारियों) ने, इस क्रम से इन सब पृथ्वीमंडल के चन्द्र गणधरदेव मुनीन्द्रों ने, तथा अन्य मुनियों ने अविकल रूप से जैसा प्रवचन में भाषित किया है, तैसा ही मैंने यह पंचनमस्कार मंत्र के फल का कथन किया।

९. कवि नयनन्दि की गुरू-परम्परा

महावीर जिनेन्द्र के महान् तीर्थ में, महान् कुन्दकुन्दान्वय की क्रमागत परंपरा में सुनक्ष (नक्षत्र) नाम के आचार्य हुए। तथा तत्पश्चात् पद्मनन्दि, फिर विष्णुनन्दि, फिर नन्दिनन्दि हुए। तत्पश्चात् जिनोपदिष्ट धर्म की शुभरश्मियों से विशुद्ध अनेक ग्रन्थों के कर्ता, समस्त जगत् में प्रसिद्ध, भवसमुद्र की नौकारूप महा विश्वनन्दि हुए। तत्पश्चात् क्षमाशील सैद्धान्तिक विशाखनन्दि हुए। उनके शिष्य हुए गणी रामनन्दि, जो जिनेन्द्रागम का उपदेश देने में एकचित्त थे, तपश्चरण में नियमरूप लब्धि से युक्त थे, एवं नरेन्द्रों और देवेन्द्रों द्वारा आनन्दपूर्वक वंदनीय थे। उनके शिष्य महापण्डित माणिक्यनन्दि हुए जो अशेष ग्रंथों के पारगामी, तपस्वी थे, अंगों के ज्ञाता, भव्यरूपी कमलों के सूर्य, गुणों के निवासभूत एवं त्रैलोक्य को आनन्ददायी थे। उनके प्रथम शिष्य हुए जगविख्यात व अनिंद्य मुनि नयनन्दि। उन्होंने इस बुधजनों द्वारा अभिनन्दित अबाध सुदर्शननाथ के चरित्र की रचना की।

१०. काव्यरचना का स्थान, राज्य व काल

वनों, ग्रामों और पुरवरों के निवेश, सुप्रसिद्ध अवन्ती नामक देश में सुरपति-पुरी (इन्द्रपुरी) के समान विबुध (देवों या विद्वानों) जनों की इष्ट गौरवशाली धारा नगरी है। वहां, रण में दुर्द्धर शत्रु रूपी महान् पर्वतों के वज्र, ऋद्धि में देव और असुरों को आश्चर्य उत्पन्न करनेवाला, त्रिभुवन-नारायण-श्रीनिकेत उपाधिधारी नरेन्द्र-पुंगव भोजदेव हैं। उसी नगर में अपने मणियों के समूह की प्रभा से सूर्य

के प्रकाश को फीका कर देनेवाला एक बड़ा विहार जिनमन्दिर है। वहीं नृपविक्रमकाल के (वि० सं०) ग्यारह सौ संवत्सर व्यतीत होने पर, कुशल नयनन्दि ने अमात्सर्यभाव से, यह केवलि-चरित्र रचा। जो कोई इसे पढ़े, सुने, भावना करे या लिखे, वह शीघ्र ही शाश्वत सुख का लाभ पावे। पृथ्वीमंडल के चन्द्र, नर-देवासुर-वंद्य नयनन्दि मुनि को, देव निर्मलमति देवें एवं भव्यजनों को जिनेन्द्र की मंगलवाणी प्रदान करें।

इति माणिक्यनन्दि त्रैविद्य के शिष्य नयनन्दि द्वारा विरचित पंचणमोकारके फल को प्रकाशित करनेवाले सुदर्शनचरित में गजेन्द्र का विस्तार, सुरवरेन्द्र की स्तुति तथा मुनीन्द्र का समामंडप, उनका मोक्षवासगमन, नमोकार पदों का फल और समस्त साधुओं की नामावली, इनका वर्णन करनेवाली बारहवीं संधि समाप्त।

संधि ॥ १२ ॥

इति सुदर्शनचरित समाप्त

सुदंसणचरिउ

टिप्पण

सुदंसण चरिउ की चार उपलब्ध प्रतियों में से क प्रति में प्रचुरता से सरल संस्कृत व कहीं कहीं हिन्दी, गुजराती एवं संस्कृत मिश्रित गुजराती अथवा गुजराती, मिश्रित संस्कृत भाषाओं में टिप्पण प्रति के पत्रों में ऊपर-नीचे, दाहिने-बाँयें चारों ओर लिखे हुए मिलते हैं। ख प्रति में बहुत थोड़े तथा घ में यत्र-तत्र टिप्पण हैं, जिन्हें इसी में सम्मिलित कर लिया गया है। इनके संपादन में प्रत्येक कडवक के आदि में संधि व कडवक संख्या दे दी गयी है।

संधि—१

१-१.

३. इह–जगति। ४. जसु–वीरस्वामिनः। ५. ण तित्ति पत्तु–तृप्ति न प्राप्त। ६. सेलराइं–शैलराजमेरुः टलटलियउ–चलितः। जम्माहिसेइ–जन्माभिषेके। ८ उत्तसिय–उत्त्रस्तः। १०. रत्तियाइ–रक्तया णाइं–उत्प्रेक्षते। १३. वयणु–मुखम्। वियप्पइ–विकल्पते। १४. चाएं–त्यागेन। विढप्पइ–गच्छति, व्याप्नोति।

१-२.

१. अप्पवीणु अप्रवीण। चाउ–त्याग.। दविणु–द्रव्यम्। ३ विरएमि–रचयामि। अउव्वु–अपूर्वं। ४. कीरइ क्रियते। संभरणु–संस्मरणं। सइं–स्वयं। मइ–मति। ८. तहो चरम तीर्थंकृत। ६ आयन्नहो–आकर्णयत्। १०. पिहु–पृथु। ११. महिहरासु–मेरो। १३. नईउ–नद्यः।

१-३.

१ पुंडुच्छुवणइं–पुंड्रेक्षुवनानि। २. धुत्त–धूर्त्त। ३ वेस व–वेश्येव। णित्तुसु–निस्तुषं। सुयपंतिय–शुकपंक्तिः। ४ मेरएं–मर्यादया। ६. कमलकोसे–कमलगर्भे, कमलमध्ये। ८. विलसइ–विलसति। ६. सुरहं वि णहि णिलउ–सुराणामपि न निलयः एवंभूतः।

१-४.

१. साल–प्राकारः वृक्षाश्च। सोण–रक्त पेसल–मनोज्ञ। पवाल–विद्रुम. किसलयश्च। २. तियसिंदु व–त्रिदशेन्द्र इव। विबुहयणमणिट्ठु–विबुधजनानां मनोऽभीष्टं। रंभा–केलि, कदली, देवांगना च। ४. धम्म–धर्मः धनुश्च। अमय–अमृतं, पक्षे मोक्षः। कुसुमसर–पुष्पबाण, पक्षे कुसुमैरुपलक्षितानि सरांसि। ८. उअहि व–उदधिरिव। परमहिहरिंद उक्कंपचत्तु–मेरुरिव परराजानां भयत्यक्तः।

१-५.

१. णह–नख । अरुणकय–रक्तकृत । णहयलु–नभः । गयउलु–गजकुलः । २. सिरिवहुवरु–लक्ष्मीवधूवरः । इहरण-सउण-अणुणिय-फलु–याचकपक्षिदत्तफलः । अहण–अघन । ३. विसहरु–धरणेन्द्र । तिय–स्त्री । ४. वरकलनिवहु–वरकलानिवह, द्विसप्ततिकलाः । सरु–शब्दः । ५ णियपह–निजप्रभा । तव–ताप । रवियरु–रविकरः । ६ थिरयरु–स्थिरतरः । ७. तिरयणहरु–रत्नत्रयधारकः । १०. संवलिए–आवेष्टिते ।

१-६.

३. सहा–सभा; सेलसीमे–पर्वतसीम्नि । ५. सेहरो–भुजशिखरं । ६ हिट्ठ–हृष्ट । ७ वलग्गो–चटितः । नवेमेहि–नवमेघे । पुण्णिमिंदो–पूर्णचन्द्रः । ८. पयट्टा–मार्गे प्रवृत्ताः । तरंगा–कल्लोलाः । ९ गया–गजाः । १०. णिओ–नृपः । छत्त–छत्र । तरंगरहिल्लिउ–लहरीयुक्तः ।

१-७.

१. दिणेसअस्स-चंचलो–दिनेशाश्ववत् चंचलः । २. आहओ–चलितः । हओ–हयः । ३. भेसओ–भीषकः । एसओ–देशकः । ४. फास–स्पर्श, मैथुनं । ५. सुरंगणाण दुल्लहा–सुरांगनानां दुर्लभा । ६. सेलसंकडे–शैलसंकटे । १०. धओ धए विलग्गओ–ध्वजो ध्वजे विलग्नः । फरो–फरकः । णसेइ–नश्यति । १३. णराहिवाणुराइणी–नराधिपानुरागिणी । णमंतओ–नमन् । १६. जंतओ–गच्छन् ।

१-८.

१ पत्थिवेण राज्ञा । २ पयडु णं वाहइ–प्रकटं व्याहुर्यात । ३ बरहिणीहि–मयूरैः । वबइ–व्रजति । ४ तिणरोमेहि–तृणरोमभिः । पमिज्जइ–प्रस्विद्यति । ६. तिहुवणसिरिहि णाहु–त्रिभुवनश्रियो नाथ । आवइ-आगच्छति । ९ महिवाले–श्रेणिकेन । सक्काणए–इन्द्राज्ञया ।

१-९.

१ णहि-नभसि । २. छाय-शोभा । ४. जिणकेयणाइँ-जिनगृहाणि । परिहा-परिखा । ५ धय-ध्वजा । हर-गृह । ६. मंगलदव्वट्ठ-शृंगारकलशादि । ७ मेहलउ-मेखला । हरिवीढु-सिंहासनं । सहसवत्तु-सहस्रपत्रं । ८ अच्छिज्जमाणु-अस्पृश्यमानः । ९. तंदु-आलस्यं । १०. णह-नख । छाहिचत्तु-छायात्यक्तः । ११. वहु-वधु । पंक्ति ६ में पाठांतरः (क) चउ जक्ख धम्मचक्केण जुत्त = (ख) चउसट्ठि-जक्ख-चक्केण जुत्त

१-१०.

२ हियमियउवएसणु-हितमितोपदेश । ३ सकइभासणु-सत्कविभि सह भाषणं । ५ विद्दंसणु-विध्वंसनं । ६. अणियत्तणु-अनिवर्त्तनं । सुपहुत्तहो-राज्ञः फलं । ९. पय-पद । ११. पुरएउ-वृषभः ।

१-११.

१, सयमहिण--इंद्रेण । ५. इसु--बाण । ६. सरण-स्मरणं, चिंता । ६. जलय-जलद् । १०. सहसयर-सूर्य । जुइवलय-द्युतिवलय, भामंडल । ११. सुरमुरय-देवदुंदुभिः । १७. ससिरे स्वशिरसि । पहिट्ठउ-प्रहृष्टः ।

१-१२.

१. गणहर-गौतम । २. सिरी-बलभद्र । ५. संसो-प्रशस्यः । ८. चरिमिल्लु जिणिंदो-चतुर्विंशतितमः जिनः । ६ णिवइ-नृपतिः । १० विक्खाओ-द्वादशचक्रिणः १२ पउमो-पद्म । १४. णारायण-लक्ष्मण । १६. आसग्गीओ आदि—अश्वग्रीव-तारक-मेरक-मधुसूदन-मधुक्रीड-निसुंभ-बलि-रावण-जरासंधाः -इति नव । १८. वंदो-स्तुत्यः ।

संधि—२

२-१.

इंदिदिर-भ्रमर । ८. जगु-जगत् । ६ थक्कउ-स्थितः । तिपवण-वातत्रय । १० हेट्ठए मज्झुप्परि-अधः, मध्ये, ऊर्ध्वं । १२. कप्प-स्वर्ग । १३ जंबूदीवं-वुहिवलइल्लउ-जंबूद्वीपः समुद्रवेष्टितः । १४. पुण्ण-वर्त्तुलः । १६. सेलहो-शैलस्य । दाहिण-दक्षिण । गुणभासुरु-ज्यायुक्तं । धणु-धनुः ।

२-२

गुरु-अज्जुण-गांगेयः तृतीयपांडव कुकुभवृक्षश्च । गय-गजकुमारः गजश्च । ३. सरहभीस—रथेन सह भीष्मः, सरथः गांगेयः । भारहसरिस महाभारतसदृशा । वाणावलि-वरणे वृक्षः । ४. सुविसालाइं सिसिरसाहालइं-उपवनसदृशानि गोकुलानि, शोभनविविधसुकुमारपत्रादियुक्ताः शालवृक्षाः । ५. तरुनिकायलग्गिर पोमारइं-तरूणां समूहे लग्नानि पद्मरजांसि । १०. णज्जइ-ज्ञायते ।

२-३

२. कइयण-कपिः कविश्च । ३. भारह व्व-भारतमिव । वावरिय-व्यापृत । पंथ-पार्थ, अर्जुन । ५ पय-प्रजा । अणंत-नारायण । ७. णायवंतु-नागसहितं, पक्षे न्याययुक्तं । १०. सरु-शरः । सज्जिउ-सृष्टः ।

२-४

१. जडमउ-जलमयः, जडमय । सोमु वि-चंद्रोऽपि । २. रयणियरु-रजनीचर । ३. ण णिहालउ-अनिमिषो न । ४. णरजेट्ठु वि-युधिष्ठिरोऽपि । पत्थिवभयरट्ठु-राजहंसः । ८. चउरासु-चतुरास्य ब्रह्मा । अक्खरहियकरु-अक्षमाला, राज्ञः पक्षे पाशरहितकरः । ६ णीसु-नरेश्वरः, दरिद्री च ।

२-५.

१. तहि-चंपापुर्यां। २. गणिसमउ व्व-गणधर इव। णयवंतउ-नयवान्। ३. सवियाणउ-सविज्ञानः, पक्षे सगरुडयानः। ४ उग्गवणु-उद्गम। पओसउ-पुष्टिः पौषमासश्च। ६. आवणु-रक्षणं। ९. अरुहदासि-जिनमती। १०. सइ-सची। सिय-श्री।

२-६.

५. उअयदिणेस संझ जिह रत्तउ-उदित सूर्ये यथा संध्या रक्ता। ६. तहो-श्रेष्ठिनः। ९. कवि जिह-कपिर्यथा। पालंबहि प्ररोहैः। तंबागणु-गो।

२-७.

२. चेवंतु-जग्राहान। ३. सो मंतु-स मंत्र नमस्कार। अच्चंतु-अत्यंतं। ४. गोत्तेण-नाम्ना। संचत्त-रहित। ६. णम्मंतु-नमन। भो णाह आराह-हे आराध्यनाथ शृणु। ७ माहम्मि मासम्मि-माघमासे। पंथु-मार्ग। ८ जोएण-योगेन। हिटठु-हृष्ट। ६. मज्झिम्म-वीरविलास अंत लघुः।

२-८.

१ रायच्छेयए जामए विबुद्धु-रात्रिछेदे यामे विबुद्धः। २ वह्णु-वहिन। ६. तेण-कारणेन। ६. सोलह [अक्खर]—अरहंत सिद्ध आइरिय उवज्झाय साहू। पंच [अक्खर]—अ सि आ उ सा। दु [सद्द]- अरहंत सिद्ध। एक्क [सद्द]—अरहंत, अर्हं, ओं, ह्रीं, अ।

२-९.

५ घट्ठ-घृष्ट। ६ सोमत्त-सौम्य च। २ वज्जरिसहसंहणणधाम—वज्रवृषभनाराचसंहननधाम १४ ण चिरावइ-संसारे चिरं न तिष्ठति। १५. णहे गमु केत्तियमेत्तउ-आकाशगमनं कियन्मात्रं।

२-१०.

१. आयण्ण-आकर्णय। २ सप्पाइ दुक्ख-सर्पादि दुःखं। ५ जूउ-प्रथमव्यसनं। ६ च्छोहजुत्त-क्षुधादोषेण युक्त। ७ विहुरु पत्तु-कष्टं प्राप्तः। ८. जूउ वि-द्यूतमपि। सज्जु-सहितः। १३. रच्छहे—रथ्यायां, मार्गे। १५ वेस-वेश्या। रत्ताघरिसण-रक्ताकर्षणा। १६ तहो जो वसेइ-तस्या गृहे यो वसति। उच्छिट्ठउ असेइ-उच्छिष्टं अश्नाति। २० तिण-तृण। खडक्कउ-खडखडाट। २१ मउ-मृगः। २५. छूढु- क्षिप्तः। २६ रहे-रथ्यायां।

२-११

१. परवसुरयहो-परद्रव्यरतस्य। अंगारयहो-अंगारचौरस्य। इय णियवि-इति दृष्ट्वाऽपि। ५. आणि-आनय। महु-मम। ६. सुणवि श्रुत्वा। रयं-रतं। सरं-स्वरं। १४. तुमं-त्वं गोपः। सवणि-श्रवणे कर्णे। १५. सुरसरिहे-गंगायां। १६. पय-पयः पदं च।

२-१२

२. मीणहि-मत्स्यैः। दीहरक्खमीणहि मणु हरंति—स्त्री अपि दीर्घलोचनैर्मनो हरति। सिप्पियउडेहि-शुक्तिभि। ४ साहबाहडे-शाखाबाहुं। ५. णाहि-नाभि। ६. उम्मी-लहर। ८. वेसा इव-वेश्या इव नदी। सायरु-सादरं सागरं च। ९. गंजोलिय-उल्लसित। सुहउ-सुभगः गोपः। सुरसरि-गंगा।

२-१३

१. फडा-भडागहती। ३. आणणगं-मुखं। ४. घणो-मेघ। ५. लइ रक्ख-समक्ख-पृथिव्यां राक्षसः प्रत्यक्षः। पहुत्तु-प्राप्त। ५ इलरक्ख-गोपालः। ६. सो-पादपूरणे। १०. विस-पानीय। (क) विसभरियहि गगाणइयहि वा पाठः।

२-१४

२. कक्कड-कर्कटराशि, कठोरता च। ४ जाइ-जातः। ५ पलासु-राक्षस.। ६. उव्विविरु-हल्लित सन्। ७. पए-जले। ६. आयहँ-एतेपाम्।

२-१५

२ पंचसिलीमुहेहि-पञ्चबाणैः। वम्महु-कन्दर्प। ७. पंचंगे मंतें-पञ्चाङ्ग-मन्त्रेण: (१) प्रधानबुद्धि (२) द्रव्यभण्डार (३) स्वकीयबुद्धि (४) विषमस्थानक (५) चतुरङ्गसेना। ८. पचसयहि पमाणु जोयणु जिह-पञ्चशतलघुयोजनैर्महायोजन यथा शोभते।

संधि ३

३-१.

शार्दूल विक्रीडित [छंद]। गोमूकला-राज्यभ्रष्टा। ७. डेडा-टंटा। डेडा-कोडिय [चोररज्जणिरदा]—ढेढवाडानी कोडि हवी भारते। आहासिदा सुद्धए-कि भूते भारते(?) सुद्धए-वच्छसुदये शास्त्रे। ९ जाव ज्जमि णउ गच्छइ-यावज्जीव मुक्तो न भवति। १०. सयणयले-शय्यातले। सविणय-स्वप्नान्। ११ कप्पयरु-कल्पतरुः। १३ पसरम्मि-प्रभाते। कंतु-अर्हद्दास। १५ जाहु-आवां यावः। १८ जिणदासिए-जिनमत्या। १६ सुरहरु-देवगृहं।

३-२.

१ परमेसरु कहि-कथय हे स्वामिन्। ३. भर-भार। ४. चाइउ-त्यागी। हरु-घर। १२. गोवो-गोपः। वणिपिउउयरे-वणिक्प्रियाउदरे। १३. तहि गब्भए-तस्या गर्भे। अब्भए णाइं रवि-अभ्रे रविरिव। १४. सिप्पिउडए-शुक्तिपुटे निविडे। णितुल्लु-अनुपमं।

३-३.

२. जियससहरु-जितचन्द्र। ३. तिहे-तस्याः। ४ तगुभंगइं-त्रिवलीभंगे। ६. पोसे-पौष मासे। बुहवारए-बुधवारे। ७ सयभिस-सतभिषा नक्षत्र।

३-४.

१. तहि–तत्र। अइपहसियवत्ता–अतिप्रहसितवक्त्रा। २. मणहरपयराई घोसमाणा-मनोहरपदराजी जल्पमाना। मिलेवि–मिलित्वा। आनया–आनता। चट्टभट्टा–भट्टकाः। ४ दिम्मुहासेसपूरं–दिङ्मुखाशेषपूरं। ६. दुरगदयसमुद्दं सण्णियं–द्विरदगतिगामिनी सामुद्रिकरूपस्वी। वम्मरद्दं–मनोजरुद्रं। ८. चायं–त्यागं। वसुहय जइ–अष्ट यति। ६. वणिजेट्ठे–वणिक्मध्ये ज्येष्ठ। णियसुयहो किउ जम्मुच्छउ–वृषभदासेन स्वकीयपुत्रस्य जन्ममहोत्सव' कृत। १०. जइ–जगति।

३-५.

१. तेण पुत्तेण जाएण–तेन पुत्रेन जातन एवंभूतं जातं। २०. पोरत्थगणतट्ठु–नगरलोकगणः त्रस्त। ३. फुल्लपप्फुल्ल मेल्लेइ वणु सव्वु–ऋतुपुष्प सर्वत्र। ४. आणदयारी–सुगन्धशीतल। ५ पहिएहिं पहु रुद्धु–पथिकैः पथः रुद्ध। ६. उक्किट्ठकमसेण–उत्कृष्टमहोत्सव कृत.। वइसेण–वृषभदासेन। ७. साणुराय–सानुराग.। १०. बुहयणहि–ज्योतिषशास्त्रज्ञैः।

३-६.

१. पइट्ठरईसो–प्रकृष्टरतीश कन्दर्परहित। ५ सोहणमासदिणे–शोभमानमासे पक्षे दिने वारे नक्षत्रचन्द्रवले। पालणय सुरचित्त –सुवर्णशृंखलान् रत्नजटितं रूपानी दोरी, मोमाना झूबक (गुज०)। ६. महीहर–मेरु। सुरवच्छो–कल्पवृक्षः। तत्थ–पालन। ६. ससहरु जिह–चन्द्रमावत।

३-७.

१०. सिहिगणु–मयूरसमूहः। १२ मणहरिणिए घरिणिए–मनोहर्या गृहिण्या।

३-८

१. पडिहासइ...मज्झु मम प्रतिभासते मत्रविचार.। २. परिहाणु वत्थु देविणु–परिधानवस्त्रं दत्वा। ३ सद्दत्थ–शब्दार्थ। ४. गुरुसिक्खालण–लग्गहि–गुरूणां शिक्षा बालत्वे दत्ता लगति। ५. सामग्गिरइय–सामग्रीने सालग्रहणार्थ मेलिता (गुज० सं०)। ६. सोहइ परिमिउ माणंसणीहि–सुदर्शनकुमार स्त्रीभिः वेष्टित शोभते। ८. उवणियछत्तहचोल्लह–उपनीतानि छत्राणि चेलानि च बद्धा। वसुभेय–अष्टभेद। सुयहो–श्रुतस्य। ६. सो–सुदर्शन।

३-९.

संधि लिंग–पंचसंधिधातुपाठलिंगानुशासन। लक्खणेक्क—इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नः–पिशली–शाकटायन –जैनेन्द्रः–कालापक–सारस्वत–रूपमालादि। ३. छंददेसि–देशभाषा। णामरासि–ज्योतिष्क। ४. लुक्कमुट्ठि–मुट्ठि[ष्टि]ग्राह्यवस्तुज्ञानं। ६. रायणित्ति–राजनीति। ६. वीणावज्ज–वीणवाद्य। १०. वूहदंत–चक्रव्यूहादिरचना। ११. चंदवेज्झ–चन्द्रवेधविद्या। १४ लेययम्म–लेपकर्म। धाउवाय–धातुवादः। १५. वारिरुंभ–जलस्तम्भन–रणविद्या। १७. णारिलक्ख–स्त्रीणां

लक्षणसामुद्रिक। हत्थिसिक्ख-गजपरीक्षा। १८. जाणमाणु-यानशिविकादिनां मानं। २०. सुक्खए-सौख्येन शुष्क इव।

३-१०.

१. जस्स-यस्य......निरय लक्षणानि। आयवत्तवित्तसीसु-छत्राकारवृत्त-मस्तकं। ३. दुहंडु-दुष्करं। ४ चंचलच्छिदंदु-चंचलाक्षीद्वन्द्वं। दंदु-(घ) युगलं। ६. मच्चुलोय-मनुष्यलोक। मोत्तियाण दिण्ण भंति-मुक्ताफलानां भ्रान्ति ददति। ६. णिरब्भ-गताभ्र। भाइ-भाति। १२. वत्त-पत्र। १३. वच्छु-वक्षस्थल। चक्कलं-विशालं। हम्मु-गृह। १८. गूढगुप्फ-ढींचणा गूढ [छिपे हुए गुल्फ]! १६. कुम्मायार-कूर्माकार पादनी पाटली (गुज०)! २०. णहाण पंति-नखानां श्रेणि।

३-११.

१. सुहिसहिउ-सुहृत्सहितः। भाइ-भाति। २ सरइ समुहु-आगच्छति सन्मुखं अवलोकनार्थं। ३. मणइंगिउ कहइ ण करे धरेइ-कामवाञ्छा न कथयति कुमारस्य हस्ते धरति। ४. धवलिंति-ध्रुवं तृप्ति [प्राप्नुवन्ति]। ५. रुन्तत्थें-ऋतुउत्सवे[रतोत्सवे]भोगसमये। ७. गिरिविमुक्क एन्तिउ करेइ-गिरिवाए पामुक्ता बुंबारवं कुर्वन्ति। पवणहय-वायुहता। १०. दप्पणि णियबिबए तिलउ देइ-दर्पणं गृहीत्वा ललाटे तिलकं ददाति। १२. लोयणहँ-लोचनानाम्।

३-१२

३. क वि पयडइ-कापि प्रकटी करोति। ५ अणहियए-अनंगे। ११. हे णरवइ-हे श्रेणिक। सा ण वि तिय रत्तिय जा ण तहो-यस्य सुदर्शनस्य सर्वाः स्त्रिय रक्ताः जाताः। पुष्पिका —इमाण कयवण्णनो-एतेषां कृतवर्णनम्।

संधि-४

४-१

१. कुलु बलु......-यस्य सुदर्शनस्य महाधर्मस्य फलं उत्तमकुलं पराक्रमादि वर्ण्यते। ३ कविलं-राज्ञ पुरोहितं। ४ कय छह कम्मं-देव पूजा, ब्राह्मणानां भक्ति, गायत्रीमंत्रजाप, पर . आदिकसंयमव्रतविधानं। विणयपविनाण-विनयविज्ञानं, विनयवान्। णिच्चसुण्हाणं-सदासुस्नानं। ७. दयदमचित्तं-दया, पञ्चेन्द्रियदमनेषु चित्तम्। पियरासत्त-पितृ, पितुः आज्ञाधीनं। ९. णेहलुलग्गो-स्नेहेन अनुलग्नः। कंठविलग्गो-कपिलमित्रस्य कंठे विलग्न। १०. हरिसविसट्टो-हर्षेण पुलकितः। छुडु जि पयट्टो-यदाऽग्रे चलितः, प्रवृत्तः। आवणमग्गे-हट्टमार्गे। ११. दिट्ठा बाला-एवंभूता मनोरमा नाम्नी रतिः सुदर्शनेन दृष्टा इति सम्बन्ध। १२. जा लच्छिसम-या मनोरमा लक्ष्मीसमाना। तहि का उवम-तस्याः का उपमा। गइए-गमनेन। १२-१३. सकलत्तइं णिरुणिजियइं·········माणसि पत्तइं—स्त्रीसहिताः हंसाः गत्या निर्जिताः; सकलत्रा राजहंसाः मानसरः प्राप्ताः।

४-२.

१. जाहे चरण सारुण अइकोमल–यस्याः मनोरमायाः चरणौ पादौ रक्तौ कोमलौ ! २. जाहे पाय……… विचित्तइं–यस्याः मनोरमायाः पादयोः नखमणि-विचित्रतां निरीक्ष्य। णहे ठिय णक्खत्तइं–तिरस्कृतानि इव नभसि स्थितानि नक्षत्राणि। ३. जाहे गुप्फ–यस्याः मनोरमायाः गूढगुल्फाः। उवहसियउ ··· विप्पइ-मया विशेषमतिः विप्रः मंत्री जितः, अथवा मतिविकल्प। ४. रंभउ–कदली-गर्भस्तम्भ। ५ अलहंतें– अलभमानेन कंदर्पेण। रइकंतें–कंदर्पेण। ६. तिवलि–उदरे रेखात्रयं। जलउम्मिउ–जलउर्मी, लहरी। सयसक्करु वखहि–शतखंडत्वं गच्छति लहरी समुद्रे प्रविष्टा वा! ८. जाहे मज्झु किसु–यस्याः मनोरमायाः मध्यप्रदेश कटिविभागं संकीर्णं। ९. सुरोमावलिए पराज्जिय णाइणि बिले पइसइ–रोमावल्या पराजिता नागिनी बिले प्रविष्टा। १०. ण वि विहि विरयंतउ–विधाता विरचिता न यदि। ११. गुरुथण–गरिष्टस्तनाः। मज्झु मध्यप्रदेश। अवसु–अवश्य।

४-३.

१. जाहे ·· बहिउ–यस्या मनोरमाया. कोमलबाहू दृष्ट्वा कमलदंड ····· लता इव। बिस–मृणाल। करहि–करोति। तग्गुणउम्माहउ–भुजागुणवाञ्छा करोति। २. कंकेल्लिदलहि वि अहिलसियइ–अशोकवृक्षपत्रै वाञ्छितौ। ३ अहिहवियए माहवियए–अभिभूतया पराभवं प्राप्तं दुःखं प्राप्तया कोकिलया। ५. विद्दुम–प्रवालाः। कढिणत्तणु–कठिनत्वम्। ७. जाहे सास सुरहि–यस्या मुखे श्वाससुगंधो। णउ थिरुवि धावइ–स्थिरो न गच्छति शीघ्रं धावति। ८. मुहयंदसयासए–मुखचन्द्राश्रयेण। णिवडणखप्पर व्व ससि भासए–घटद्विगुणं द्विखण्डं खपरमिव चन्द्रः शोभते। ९. सवंक पयड सुउ णासिय–शुका सवक्रा नासिका प्रकटयन्ति। १०. विंभिएहिं–विस्मितैः। गहणहि–वनेषु। ११. सुरधणु जित्तउ–इन्द्रधनु जितम्। जाहे भालि··· ससि–यस्याः मनोरमाया. भालस्थलेन कपोलेन जित. चन्द्रः कृष्णाष्टम्या.। १२. खेयहो–आकाशे। १३. केसहि जाए जित्त अलिसत्थ वि–यस्याः मनोरमायाः मस्तकैः कृत्वा भ्रमरसमूहः शेषनागो वा पाताले गम [गतः]। १४ सोमालियहे तहे बालियहे रूउ णियच्छिवि – सुदर्शनेन एवम्भूताया मनोरमायाः रूपं निरीक्ष्य कपिलमित्र पृष्ट। मुहयरू–मोहकर। १५ विंभियमणेण–विस्मितमनसा। सहयरु–कपिलः।

४-४.

१. कि णायवहू–कि वा नागकन्या घटते हे मित्र। २. देववरंगण–देवस्य अप्सरा। दिही–धृति। अमी–एषा। सोहग्गणिही–सौभाग्यनिधीव। ३. कइंद-थुआ–कवीन्द्रस्तुता। ५ पीइ-रई–प्रीति-रति कंदर्पस्य भार्या। खेयरिया–कि वा विद्याधरी। ६. कविलो–पुरोहितः। हे सुहि–हे सुदर्शन। ७. णिहाण–निधाने। इब्भ–धनाढ्यः। ११ उत्तुंगथणा··· सायरसेण–तस्य सागरदत्तस्य भार्या सागरसेना अस्ति उत्तुंग–कठिनस्तना। १२. तीए जणिया–सागरसेनयानया पुत्री जनिता।

४-५.

१. तहो हियर्य-तस्य हृदयं चित्ताभिप्रायं ज्ञात्वा । वम्महं सरवणियं-कन्दर्प-शरेन व्रणितम् । सुहिणा-सुहृत्कपिलेन । तो-ततः, तदनंतरं तस्मात् कारणात् । २. दुलक्खु-दुर्लक्ष्यः अज्ञातः । अहिवाओ-अभिप्रायः । जाणेविणु कीरइ अणुराओ-युवतीनां अभिप्रायं ज्ञात्वा, स अनुरागः स्त्रीणां अभिप्रायं [ज्ञात्वा कर्त्तव्यः] । ३. हियत्थें-हितार्थेन । विडगुरुसत्थें-कामशास्त्रेण कामीगुरुकथितेन । ४. पयइ-स्त्रीणां प्रकृति वातपित्तादि । ५. एयाणं जो जाणइ लक्खं -एतासां सप्तानां यः कामी लक्ष जानाति । ६. भद्दा लयहंसी-चतुःप्रकारा युवतीनां जातिः—१. भद्रा २. मन्दा ३. लता ४. हंमी । मन्दाजाति स्थूलांगा । ७. भद्दा सव्वंगेहि सरूवी-सर्वांगेषु स्वरूपा भद्राजाति । ८ दीघंगलया-ताडलतादीर्घाङ्गा । समंसलदेहें अणुआ-समांसला देहे परिपूर्णा, सुपुष्टदेहा । ९. असंसउ-अप्रशस्तः । अणु परिवाडीए-अनुक्रमेण । १०. णूणं-नूनं, निश्चयेन । उज्जुअ-सरलपरिणाम । ११. खेयरियाणं-विद्याधरीणां अंसे । मइरावाणं-मदिरापानं । भावइ-इच्छति । भावइ कमला-कमलपुष्पादिक वल्लभां विद्याधरीणाम् । १२ दविणं इट्टं जक्खणियाणं-द्रव्यं वल्लभं यक्षिणीणां अंशत । दुचरित्तं-व्यभिचारी च लम्पटं च । १३ अट्ठविहइं आयण्णइ संतइ-स्त्रीणां अष्टविधा संतति कथ्यते । १४ सारसी ·····मयरी-एतासां स्वभावाः सारसी पक्षिणी, मृगी, कागड; शशली, महिसी, गद्दभी, मकरमच्छी । १५. ताणं मज्झे-तासां मध्ये । पियपासं-प्रियपार्श्वं सारसपक्षी वत् । १६. उज्जुअसीला कीलयणेहें-क्रीडनस्नेहेन उद्यमशीला । झिज्जिवि मरइ णविय पियविरहें-भर्त्तविरहेन भूरयित्वा भूरयित्वा मरइ, प्रियविरहेन दुक्खिता सता । १८ ण मुयइ-न जानाति, न जल्पनं, न मुंचति क्षणमात्रं । रिट्ठी-कागडी । परलीणा--परपुरुषेषु लीना रक्ता वा पराधीन स्वभावा । फरुसं-कठिन । १९ णिग्घिण निर्दया, निर्गुणा वा । पीलियमयणा-मदनपीडिता । २० कीलिणि-क्रीडनशीला । धयरट्ठी-हंसी । अइ कोवाउर-अति कोपातुर । २१. गुरुणायं-गुरुशब्दम् । सहइ चवेडं करकमघायं-चपेटा हस्तपादघातं सहते खरी । २२ गाहामिस-ग्राह्यमत्स्य । साहससारा-साहसवती । अप्पडिरुद्धा-निरंकुशा, आज्ञारहिता । २३. को कलओ-कः ज्ञातो । २४ देसीउ-देशोद्भवाः । कीलाहरहि-क्रीडागृहेषु २५. वाणारसियकयायर—वाणारसी देशोद्भवास्त्रीकृतादरा ।

४-६.

१. अब्बुय-अर्बुद; दिणमाणु करेप्पिणु-दिवससंरूपां कृत्वा रमती । २. आसत्ती पियगेहहो...वि दइयहो—प्रियगृहे[आ]सक्ता द्रव्यं निजप्राणानपि भर्त्तुः ददाति । ३. कुडिलवत्तु मणु अप्पइ-वक्रचित्तेन हृदयं अर्प[य]ति ; गुणविसेसि पररप्पइ-परपुरुषं प्रति रमति गुणैः कृत्वा रज्यते ; रूप-यौवन-वचनबलादिगुणाः । ४. दिविडि...ण लज्जइ-द्रविडदेशजस्त्रीमुखाश्लेषं चुम्बनं ददती न लज्जते । वरसुरयहो जिवि पुज्जइ-भर्त्तुः सुरतकाले वा भर्त्ता सुष्ठु रक्तस्य मन्यते । ५. लाडिय रंजइ-लाडदेशजस्त्री मनोहर वचनै. रज्यते। विण्णाणेण...भिज्जइ-विज्ञानेन कृत्वा गउडदेशजा स्त्री रति रम्यते[रमते] । ६. कालिंगी उवयारहिं रक्खु

वि–कलिंगदेशजस्त्री उपकारैः द्रव्य-वस्त्र-मुक्ताफलादिकैः रक्ष्या[रक्षणीया]। रञ्जइ... पच्चक्खु वि–उपकारैः कृत्वा मनुष्यः प्रत्यक्षं किं न रज्यते, अपितु रज्यते [०त एव]। ७ गुज्जरि णियकज्जहो णउ मुल्लइ–गुर्जरी स्त्री स्वकीयकार्यं करोति स्वकीयकार्यात्। ९. गोल्ली आरणारि णिम्मच्छर–गोलवाडी स्त्री रूप-यौवन-धनादि[षु]निर्मत्सरा न। रइविलासे कण्णाडी कोच्छर–भोगक्रीडायां कर्णाटस्त्री चतुरा-डाही सुरतकाले। १०. पाडलिया णियगुण वित्थारइ–पाटलीपुत्रदेशजस्त्री स्वकीयगुणमहिमा विस्तारयति। पारयत्ति–पारयात्रिकस्य स्त्री। पुरिसायु उसारइ–पुरुषस्य आयुः उत्सारयति, परपुरुषे रक्ता। ११. हिमवंतिणि–हेमाचलजा सवालखी स्त्री। वसियरणइं–वशीकरण काम [कार्यार्थं]–कोटल-जडी-मूली [?]। कोमलमज्झएसतियकरणइं–कोमलमध्यदेशः स्त्रीणां करण। १२. कहमि–हे प्रधानपुरुष! स्त्रीणां प्रकृतिः स्वभावं कथयामि अनुक्रमेण। पयइ–प्रकृतिः। १३. सा वि तिविह–सा प्रकृतिः त्रिधा। कय कृता। वायपित्तसिभल-सम —वात-पित्त-श्लेष्मा प्रकृतिः।

४-७.

२. बहुयपलाविणि–वाचाल लव लव करइ (गुज०)। कक्कसफरसिणि–कर्कशस्पर्शा। ३. किण्हंगी–कृष्णाङ्गी। गोजीहालिय–गोजिह्वासदृशी। ५. सा सद्दगहीरहि कढिण-पहारहि सेविज्जइ–सा वायुप्रकृतिस्त्री शब्दगम्भीरैः कठिनप्रहारैः सेव्यते। ७. पित्तल–पित्तप्रकृतिमती स्त्री। णहपिंगल नखपिङ्गला। ८. गोरीकाय–गौरवर्णशरीरा चम्पकवती। कडुयपसेयं–कटुकप्रस्वेदं। १०. रूसइ–कोपइ काम कोप करइ, गगजां करइ (गुज०)। ११. पिउ भासेवी–प्रियवचनेन भाषया। १५. सिंभलपयइ–श्लेष्मप्रकृति स्त्री। जुअई–युवती। १६. कयली–कदलीवत्। १७. मउ-मृदु। साणीयल–भग। १९. साहारणकए–साधारणकृते रतिभोग क्रियते। दिहि धृति। २०. झत्ति विरप्पइ–शीघ्रं विरक्ता भवति। २१. दाणें पणएं–पुष्पताम्बूलपक्वान्नदानेन [प्रणयेन]। २४. लक्खियउ लक्षिताः ज्ञाताः। अक्खियउ–कथिताः। पयइउ जाउ विभिन्नउ–याः प्रकृतय विभिन्नाः पृथक् पृथक् प्रकृतयः मिश्राः भवन्ति। २५. संकिण्णउ–मिश्राः।

४-८.

१. संकिण्णउ·········देसिउ–यथा प्रकृतयः मिश्रा तथा जाति, अंश, सन्तति, देश एते मिश्राः। भद्रा, मन्दा, मिश्रा। लनाहंसी जाति मिश्रा। २. चउरंग (सेण्ण)–अश्व, हस्ति, रथ, पदाति। तियभावपहाण–स्त्रीभावेन प्रधान। ४. तिपयारउ–त्रिप्रकार। मंदु तिक्खु तिक्खउरउ-स्त्रीणां शुद्धभावः त्रिधा–मन्दभाव, तीक्ष्णभावः, तीक्ष्णतरभाव। ५. ईसि ईसि लज्जंकमणिट्ठिए–ईषत् ईषत् लोचन मनोवल्लभे घोलयति। मंदभाउ जाणिज्जइ दिट्ठिए–मन्दभावः स्त्रीणां लोचनेन कृत्वा ज्ञायते। ६. दिट्ठि तिविह–दृष्टि त्रिप्रकाश। मउल तह लुलिया–मुकुला दृष्टि, लुलित दृष्टि कटाक्ष। परकलिया– परज्ञाता, चतुरेण ज्ञायते। ७. हिययविहियवरगुणउक्करिसें–हृदयकृत-भर्त्तुः गुणोत्कर्षेण हर्षेण। पियमाणसे जा पेल्लियहरिसें–या दृष्टिः हर्षेण प्रेरिता प्रियमनुष्यः वल्लभः भर्त्ता। ९. अणुराएण–प्रीत्या। वियसइ पिययमे वच्चइ–प्रियतमे दृष्टे सति विकसति वारं वारं।

४-९.

करिणिव्व-हस्तिनीव। २. सुकडक्खवलियत्ति-सुकटाक्षचलनं कोपि बुधः कलयति। ३. वियसइ······ ···मुहमलिणु-मुखमलिनं प्रिये दृष्टे विकसति। ४ उट्ठ-उडु थरहरहि-ओष्ठपुटं स्फुरति। देवउल धउ जेम-देवगृहध्वजा इव। ५. धावइ पसेओ वि गंडयले-प्रिय दृष्टे सति गण्डस्थले प्रस्वेदं धावति उत्पद्यते। मयगलहो णं दाणु-हस्तिनः दानमिव। ६. अणुदियहुं-अनुदिनं, अहोरात्रि, निरन्तरं। ७. दीहुण्ह-दीर्घोष्ण। ६-७. मुणि जेम "वज्जंति। परिहरिवि""चल्लंति-मुनयः यथा भय-लोभ-गुरुणां लज्जा एतान् वर्जयन्ति मुञ्चन्ति तथा स्त्रियः कुलमार्गं मुक्त्वा उन्मार्गं चलन्ति। बहुलम्मि·········खिज्जंत-कृष्णपक्षे यथा चन्द्रः दिने दिने क्षीणो भवति तथा स्त्रियः क्षीणा. [भवन्ति] इत्यर्थ.। ८. बहुसंसियउ सुद्धभाउ-बहुभि. जनै. प्रशंसितः शुद्धभावः। १०. दुइजउ कहमि-द्वितीयः अशुभभावः कथयामि। भाउ असुद्धउ एयहि-एतै. कृत्वा स्त्रीणां अशुद्धभावो परिणामो भवति।

४-१०.

१. अण्णदेस · गुरुक्कें एतेन अन्यदेशगमनलोभेन इत्थं युवत्या अशुद्धभावो भवति। दुट्ठमइ-दुष्टमति। २ दुसहेण-दुःसहेण। सवत्तिपयणमणें-सपत्नीपदनमनेन। वार वार ·· ···अतोगमणें-वारं वारं कृतं बाह्यगमनेन गृहे गृहे भ्रमन्त्या अशुद्धभावो भवति। ३ अइपसंग ·······करणें-अन्यपुरुषस्य अतीव-प्रसङ्गेन। पच्छण्णदोससंभरणें-व्यभिचारादिदोषस्मरणेन। ५. तें-तेनाशुद्धभावेनैव करोति। णाहि-नाभौ। ६. कउण-विज्ञानेन। ७. आसण्णउ भणेवि-भर्त्तारं समीपं ज्ञात्वा, यदि समीपं भर्त्तारं पश्यति अन्य भणित्वा उत्सारयति। ८. संकिण्णत्तहो णिज्जइ-मिश्रत्वं प्राप्यते शुद्धाशुद्धभाव। ९-१०. वरणिवसणहि ··· ···घिप्पइ एह उवायहि-एतैः कृत्वा स्त्रीणां मिश्रः शुद्धाशुद्धभावो भवति। एतैः उपायैः कृत्वा एतासां मिश्रभावः गृह्यते। १०. पडु दूएण-पटदर्शनेन।

४-११.

१. दुरेह-द्विरेफ। मुणि-जानाहि। २. भुक्खा-क्षुधाग्नि। ३. गमणिगिए-गमनेङ्गितया यस्याः स्त्रियः गमनचेष्टया। सुण्णालाउ-वृथाजल्पनं। वलियाणणु परिणिएइ-पश्चात् मुखवलनं कृत्वा पश्यति। चारु-वारं वारं। ४. णिद्दिंगिए जंभाइय हवेइ-निद्रेङ्गितया, यस्याः निद्रालक्षणेन बगाइ (बगासी-जम्हाई) करइ। लोयण-मउलंगी माणवेई-मुकुलितलोचना ज्ञायते। ५. भयइंगिए-भयेङ्गितया, भयलक्षणेन। सुदीणवयण दीनमुखा दीनवचना वा। वेविरतणु-कम्पितशरीरा स्त्री। तरलंति णयण-लोचनं तरडावइ [तरलायति]। ६. रोसिगिए-यस्याः युवत्याः [क्रोधेङ्गितं] क्रोध-लक्षणं विद्यते तस्याः क्रोधलक्षणयुवत्याः। सुखेउ-सुखेदः। फुरियणास-नाकमरडइ, नाकफरकावइ (गुज०)। सुसेउ-सुस्वेदः। ७ णेहिंगिए-[स्नेहेङ्गितया] स्नेहलक्षणया स्त्रिया। ८. मुहरायचत्तु-मुखरागरहिता, मुखकलाररहिता। गिर सुण्ण-शून्यं वचनं जल्पति। ९. दुक्खिगिए-[दुःखेङ्गितया] दुःखलक्षणवत्या। णासइ पुव्वच्छाय-पूर्व-

शोभा नश्यति। णीसरइ–निःसरति। १०. खामकवोल–क्षीणकपोल। वियलइ मय–[विगलति मदः] मदरहिता। ११. णिस्सेसु वि दावइ तणुवियारु–समस्तशरीरगुप्तस्थानं दर्शयति। १३. धूमें अणलु संभाविज्जइ–यथा धूम्रेन कृत्वा वैश्वानरं ज्ञायते। १४. इंगियहि–इङ्गितैः, लक्षणैः, चेष्टाभिः, चिह्नैः। जणभाउ भाविज्जइ–लोकानां भावः ज्ञायते।

४-१२.

१. भो मित्त–भो मित्र! एतैः कृत्वा स्त्रीणां लक्षणं जानीहि। २. जाईहि पयईहि–जातिभिः प्रकृतिभिः। ३. भावेहि–भावैः। ७. जाणेसु–जानीहि। ८. बहुभमणु–बहुभ्रमण। १०. खलसंग–दुर्जनसङ्ग। दमियंग–दमिताङ्गा। ११. णिद्दालु–निद्रालुः। १२. अवियड्ढ–अविदग्धा मूर्खा। सोयड्ढ–शोकाढ्य। १५. मा रमसु–एवम्भूता मा रमस्व। १७-१८. दियवरु वणिवरसुयहो थीलक्खणु कहइ–[द्विजवर] कपिलः सुदर्शनस्य स्त्रीलक्षणं कथयति। १८. संकित्तउ–संकीर्त्तनं।

४-१३.

१. पसत्थ–प्रशस्त। जंघोरु थणग्गवित्ता–जङ्घा, उरु-हृदयः, थणग्ग–स्तनाग्र, वृत्ताः प्रशस्ताः यस्याः २. पईह–प्रदीर्घाः। ४. ति उत्तरंती हवेइ–स्त्रीषु उत्कृष्टा भवति। ५ कायस्स–काकस्य। जंघोरुजुयं अभद्दं जङ्घा उरुयुग्म अभद्रं। ६. कायसद्दं–काकशब्दं। ७. काउ–काकः। जीए–यस्याः। ८. दीहाउसु णत्थि तीए–तस्याः दीर्घायुर्नास्ति। १० सुवित्त–वृत्ताकार, पाणी–हस्त।

पंक्ति ८ पर उद्धरण :—

> लम्बोदरी-स्थूलशिरा-रक्ताक्षी-पिङ्गलोचना।
> पतिनोपार्जितं द्रव्यं अन्येन सह भक्षयेत्॥

१२. पुत्ताइयलच्छी–पुत्रादिकलक्ष्मी। १३. सव्वे रत्त वि छाय जाय–सर्वाः रक्तछायाः यस्याः। १४. णासुच्चओ–नासा उच्चैस्तरा। सिधुर–हस्ति। जीए–यस्याः। १५. सुहवत्तु–सौभाग्यत्व, सौभाग्य। १७-१८. विस-झस-दाम........चिरु अहिणंदइ णियघरे–यस्याः [वामे] करे शेषनाग, मत्स्य, माला, शिला, ध्वजा कमल, गिरि, गोपुराणि [चिह्नाङ्कितानि भवन्ति सा निजगृहे चिरं] वर्द्धमाना भवति धन धान्य-पुत्रादि[ना]!

४-१४.

१. उद्धरेह–ऊर्ध्वरेखा। राइय–कमल। ३. तित्तिरच्छि–[तित्तिराक्षी] तित्तिरपक्षीना सारखी [सदृश] दृष्टि। पारेवय......भोयणिया–पारापतवत् नरभोगिनी लम्पटा भवति। ४. छिच्छइ–कुलटा स्त्री। ५ थोरसुमथरणासा–स्थूलनासा, वक्रनासा, नासिकामुखमध्यगाः ताः सर्वाः दुःखिता ज्ञेया धनशीलविवर्जिताः। लंजिया–लञ्जिका। थोवधणवंती–स्तोकधनवती। ६. वायसगइ-सद्द-दिट्ठी–काकगति यस्याः, शब्दः दृष्टिश्च। ८. कुम्मुण्णचलण–कूर्मोन्नतचरण। खोसला–ह्स्वा, वामनी। १०. उत्तावलिय–शीघ्र। ११. सा फुडु......छाइया—पुत्र-भर्तृवियोगेन छादिता।

१४ इय गिर सुणेवि–कपिलस्य वचनं स्त्रीवर्णनं तथा लक्षणं श्रुत्वा। तहो–तस्याः।
१५. सुण्णमणु–असावधान। झिज्जंततणु–शरीर झूरन्तम् धूजन्तम्। वणिसुउ–सुदर्शनः।
पंक्ति ३–६ पर उद्धरण

(१) पिङ्गाक्षी–कूपगल्ली–खर–परुष–रवा स्थूल–जङ्घोर्द्ध्वकेशी।
रक्ताक्षी–वक्रनासा–प्रविरलदशना · · · ·ताल्वोष्ठजिह्वा ॥
शू · · · · · ङ्गी–सेङ्गितभ्रू कुचयुगविषमा वामना चातिदीर्घा।
कन्यैषा वर्जनीया सुखधनरहिता दुष्टशीला च नित्यम् ॥

(२) मृदङ्गमृगजङ्घा च मृगाक्षी च मृगोदरी।
हंसगत्या समा नारी राजपत्नी भविष्यति ॥

४-१५.

१. तहिँ · · · · · पत्त–यद्यपि मन्दिरं प्राप्ता मनोरमा। सुकुमालाबाला-रत्तचित्त—चम्पानगर्यां सागरदत्त-सागरसेना, तयोः पुत्री मनोरमा सुदर्शनदर्शनात् कामपीडिता सति स्वगृहे गता एवं करोति। ५ गाढिउ · · · ·आलवेइ–गाढं दृढं यथा आलापं विलापं करोति। ६ जोयइ–योजयति। ७ थणहर–स्तनभार। णविय–नत। ८ संबोहणु पर ताहि तिसाइहि–हे प्राणनाथ! हे स्वामिन्! हे वल्लभ! हे सुदर्शन! त्राहि त्राहि! रक्ष रक्ष! मां मनोरमां इति भणति। लहेइ–महाति, करोति। ९ बुहणलिणरवि–बुधकमलसूर्यः। १७ मुयवि–मुक्त्वा। आयामिउ–आनामितः। पुष्पिका :— जाइउ–जातय.।

सन्धि–५

५-१.

उद्धरण— १. तहिँ जे णमंति ण सीसं कस्स वि भुवणे वि जे महासुहडा।
रागंधा-गलियबला रुलंति महिलाण चलणजुयले ॥

१. पएसि–प्रदेशे। २. एक्केण वि विणुवल्लहेण–एकेन वल्लभेन सुदर्शनेन विना। ५ सा–मनोरमा। ६. सउरिसहो–सुपुरुषस्य शूरेश्वरस्य। ७. तव दड्ढु देहु–तव देहो भस्मसात् कृतः। गेहु–नरः। ८. पंचवाण–उन्मादन, मोहन, शोषण, सन्तापन, मारण। ९ सयवत्त··· विसाल–शतपत्रवत् विशाललोचना १०. सुहउ–सुभग, सुदर्शन। सुहदंसण · · · · णाइँ–जगत् सुदर्शनेन भृतमिव। ११. तासु–सुदर्शनस्य; जा तहिँ · · · · · तहि अवत्थ–या अवस्था तस्या मनोरमायाः वर्त्तते, सा अवस्था तस्य सुदर्शनस्य तत्र वर्त्तते। एक्कासिउ णेहु ण घडइ–एकाश्रितः एकवस्तूनि एकजने स्नेहो न घटते। १३. णियवि–दृष्ट्वा। रइ विरहियउ–रतिविरहितः। १४. परिणाविउ होइ–परिणीतो भवति। महु–मम।

५-२.

२ ताए-तेन बोधिना। ५. खेलंतें-क्रीडता। ६ काय वि-काऽपि। ८. अब्भत्थए -अभ्यर्थना। अवहेरहि-अवधीरयति, अनादरं करोति। ९. अत्थिय-याचक।

११. उद्धरण—दद्यात् सौम्यादृशं वाचमभ्युत्थानमथासनं।
शक्त्या भोजन-ताम्बूलं शत्रावपि गृहागते॥
एह्यागच्छ समाश्रयासनमिदं कस्माच्चिराद् दृश्यते।
का वार्त्ता अतिदुर्बलोसि भवान्प्रीतास्मि ते दर्शनात्॥
एवं नीचजने पि कर्तुमुचितं प्राप्ते गृहं सर्वदा।
धर्मोऽयं गृहमेधिनां निगदितः प्राज्ञैर्लघुस्वर्गदः॥

५-३.

१. पभणहु-कथ्यताम्। णिय मणिट्ठु-निजमनोऽभीष्टं कार्यम्। ३ ओया जेणम्हइँ-येन कारणेन वयं आगता। ५. इंदिदिरसंपइ-भ्रमरसम्पत्। ६. बालहो... जाएहो-बालयोः पुत्री-पुत्रयो विवाह कर्त्तव्यः। ७. पडिवण्णउ-अङ्गीकृतम्। ८ वियक्कु णत्थि-वितर्क-विचारः नास्ति। १०. तंबोलहत्थु-ताम्बूलहस्त श्रेष्ठी। जोइसगंथकुसलु-ज्योतिष्कग्रन्थकुशलः। ११. जोइसिउ-ज्योतिष्क.। गुरुयणवसिउ-गुरुजनवशीकृतः। १२. सुहदंसणहो-सुदशनस्य। वरलग्गु कहो-वरलग्न कथय। तेण वि-श्रीधरेण [नाम्ना] ज्योतिष्केन।

५-४.

१. सुज्जवारए-[सूर्यवारे] रविवारे। २. सिवजोयए-शिवयोगे। मूलरिक्खे-मूलनक्षत्रे। पंक्ति १-४:— वैशाख[मासे]शुक्लेपक्षे पञ्चम्यां तिथौ रविवारे मूलनक्षत्रे कौलवकरणे शिव नाम योगे घटी-दिवसे पल ४५ मिथुनलग्नवहमाने लग्नः [स्थापितः]। १०. सच्चुवहाणु-सत्यः पाख्यानः एषः। ११. समरट्टियहिँ तरट्टियहिँ-सगर्वाभिः स्त्रीभिः।

५-५.

१. समच्चिउ-[समर्चितः] पूजितः। २. सियपरिहण-श्वेतपरिधान.। माउहरम्मि पइट्ठु-मातृगृहे प्रविष्टः। ७. णिकेयहो-गृहात् मण्डपात्। लेविणु कंत विणिग्गउ-कान्तां भार्यां गृहीत्वा, भार्या स्कन्धे कृत्वा विनिर्गतः। सराउ सपीलु-सरोवरात् हस्तीव। ९. पयक्खिण दिति-प्रदक्षिणां द्वावपि पार्श्वयोर्दत्तौ। ९. गिरिदहो.........सहंति-उदयाद्रि-पर्वते रत्नादेवीसमेतः सूर्य इव शोभते। १०. विज्जुलकंद—विद्युत्-मेघौ। १४. पईवउ-प्रदीपाः। खट्ट-पल्यङ्कः। समप्पइ-समर्पयति। १६ आसत्तहिँ-आसक्तयोस्तयोः।

५-६.

१. इंदियवग्गमोयणं-[इन्द्रियवर्गमोदनं] पञ्चेन्द्रियाणां आनन्दकारी भोजनम्। २. आहुंजेइ-भुङ्क्ते। ४. कलविभत्तु-कलमशालिनो ओदनम्।

८. मोया-[मोदका] मोदकसमूह। मणमोया-मनमोदकाः। ९. उवणिय-उपनीताः। १०. णाणा तिम्मणाइँ-नानाप्रकारशाकानि। तिम्मणाइँ-स्त्रीमनानि [स्त्रीमनाः]। १३. मरट्ट-गर्वः। १४. रहसंकिउ-एकान्ते कृतम् दुष्टकार्यमिव। १५. केहउ-कीदृशम्। १६. गेण्हिवि णिरु-सुसंगृहीत्वा। अइतित्तिए-अतितृप्त्या।

५-७.

३. जेमियणराहँ-भुक्तनराणाम्। ५. पूयहलु-पूगफलः। पण्णु-[पर्णः]पान। १०. णं अत्थवंतु सोवयविचित्तु-यः अर्थवान् न च पदार्थवान् स व्रतेषु चित्तो भवति, सूर्य पक्षे अस्ताचले वर्त्तते उद्गम अस्तंगमन-प्रतिज्ञाचित्तो। ११. णिड्डहणहेउ-निर्दहन हेतु। हुयवहहो तेउ-वैश्वानरस्य तेजः। १२. माणिणि वि ताउ-पश्चिम[दिशा]स्त्रियः। राउ-रागः। १३. जाणिवि भवित्ति-कालेन भवितव्यतां ज्ञात्वा स्त्रीषु पुरुषमिलनं भविष्यति [इति] भवितव्यतां ज्ञात्वा। १४. णहतरुवरासु फलु-गगनवृक्षस्य फलम्। १६. जणजणिय राउ-लोकानां रागमुत्पाद्य। कंदप्पराउ-कन्दर्पस्य रागपुञ्ज इव सूर्यः वा कन्दर्पराजा। १७-१८. णहसिरितियाहे रविकणयकुंभु ल्हसियउ-नभःश्री स्त्रियः रविः कनककुम्भ इव पतितः पश्चिमदिशायाम्। १९. णहसिरितियाहि चंदुज्जलाहि इति वा पाठः। २० पहराहउ आरत्तउ संताव-जुओ-चतुः प्रहारैः [प्रहरैः] हत आरक्त सन्तापयुक्त। रवि सायरे जाम निमज्जइ [सूर्यः] पश्चिमसमुद्रे पतति यावत्। २१. सो उद्धवइ-उर्द्धवम् पतत् सूर्यः। णिसि रक्खसिए-रात्रिराक्षस्याः।

५-८.

१. सूर-पराक्रमी, सूर्यश्च; अत्थमियउ-मरणं अस्तं च। २. जो वारुणिहि रत्तु-यः वारुण्यां दिशायां रक्त सूर्यः सन्। वारुणी-मद्यं, सूर्य पक्षे पश्चिम दिशा। कवणु ण कवणु णासए-कः कः न नश्यति, अपितु नश्यति एव। ३. णहमरगयभायणु-नभोमरकतभाजनः। संझाराउ घुसिणु-सन्ध्याराग एव केशरः। ४. गह-मङ्गल, बुध, बृहस्पति नक्षत्राणि। कुवलय-कमलानि। ५. मंगलकर-णुराइय णिसितरुणि पराइय-मङ्गलकरणार्थं प्रीत्या रात्रिस्त्री आगता। ६ णं संतोसें कहि मि ण माइय-रात्रिस्त्री सन्तोषेन [कुत्रापि] न माता [मान्ती ?] विस्तारं प्राप्ता। ७. वहुअए जुउ रइहरे पइसतउ-वध्वा युक्तः रतिगृहे प्रविशन्; यत्र समा च वधूवर रतिगृहे याति तत्र समा च रात्रिस्त्री सामग्रीं कृत्वा वर्धापनार्थं आगता। ८. पडिहासइ-प्रतिभाषते। करिणिए-करिण्या। ९. सिरिचक्कइं-श्री [चक्रेण]—नारायण इव। १०. गोरि तियक्खइँ-गौरी-ईश्वरौ। रइमयणइँ-रतिरानी-मदनौ। पयक्खइँ हुयइँ-प्रत्यक्षौ जातौ। ११ चंदणतिलयहि महमहिउ-वनपक्षे चन्दनवृक्ष-तिलकवृक्षैः महिमाटः। णहलग्गचारुवण दावइ-नभो लग्न चारुवृक्षवनं दापयति-दर्शयति, [वधूपक्षे रतिक्रीडायां] नखलग्नचारुव्रणं दापयति। १२ जोव्वणु वणु वण्णउ सेवइ-यः सुदर्शनः मनोरमायाः यौवनवनं सेवते स धन्यः।

उद्धरण :—बाहुद्वन्द्वमृणालमास्यकमलं लावण्यलीलावती
श्रोणी-तीरलता च नेत्र-सफरी धम्मिल्ल-से[शै]वालयं[कं]।

नारीणां स्तन-चक्रवाकयुगलं कन्दर्पदावानले
दग्धानामवगाहनाय विधिना नारी-सरो निर्मितम् ॥

५-९.

१. करइ वियार विविह अहिणववर–नवीनवरः नानाप्रकारविकारं करोति। णववहुया विलज्जए–नवीनवधू मनोरमा लज्जति। २. अह कामंधु...... णेव छज्जए–अथ कामान्धपुरुष यत विकारादिकभोगं न करोति तत् परं न शोभते। ३ णियच्छए–निरीक्षते, आकर्षति। णियंसण–वस्त्र, पटोलचीर, पीताम्बर। णीविबंधण–नीविबन्धन। ४. सकामयं पयंपए–सकामुकं वचनं प्रजल्पते। ८. दिण्हिं होट्ठ चप्पए–द्विजै [दन्तै] कृत्वा मनोरमायाः ओष्ठं अधरं चप्यते।

५-१०.

१ छुडु छुडु ... ...पवासिया–प्रभतकालस्य चिन्हं जातं। पचलिय पवासिया–प्रचलिताः पथिकाः। २ उट्ठिय कायसद्द–काकशब्दाः उत्थिताः। णिल्लुक्क कोसिया–अदृश्याः जाताः [कौशिकाः] घूका। ३ उडु ... ...उड्डासिणि–नक्षत्राण्येव कुमुदानि ऊर्द्धवं आश्रितानि। ४. उम्मूलिय पच्चूसमयंगे–[प्रत्यूषमातङ्गेन] प्रभात हस्तिना रात्रिरूपिणी कमलिनी पद्मिनी उन्मूलिता। ५ बहल ... ...अरि–बहुल अन्धकार एव गजेन्द्र शत्रु सूर्यः। ६ लीलाकमल–क्रीडाकमल। ७ सोहम्माई ....जोयहो–सौधर्मादिकल्पफलयोग्यस्य। गयणासोयहो–गगनाशोकस्य। दिणसिरि... ...कंदु व–दिवसलक्ष्मी तस्याः विद्रुमवल्लया कन्द इव सूर्यः। णहसिरि......बिंदु व–नभो लक्ष्म्या ललाटे केशरतिलक इव सूर्य। ८ वरइत्तहो–वरस्य। १२. तरुणि........हरणु–युवतीनां स्त्रीणां लोचन-हृदयहारी। जणदिहिकरणु–जनानां लोकानां सन्तोषकारकः। मयरद्धउ– मकरध्वजः] कन्दर्पः, कामः।

पुष्पिका — विरहकायरा–विरहकातरा।

सन्धि ६

६-१.

१ मोययसारं पमाणसिद्धं खु–मर्यादासहितं भोजनं आगमे निष्पन्नं। ३. परिमिउ–[परिमितः] मण्डितः। ६ करिविलग्गओ णं सुरेसो–करिचटित (आरूढ) इन्द्र इव। ८. अत्तागम.........सद्दहाणु–आप्तागमतत्त्वानां श्रद्धानं। १०. तच्चु वि परवाइयणयदुलंघु–मिथ्यादृष्टिवादिनां नयशास्त्राणां दुःसाध्य[ता]–दुर्लभ्यता[म्] आगम्य [तेषां परवादिनां तत्त्वश्रद्धान दुर्लभं]। १२. अक्खिय ए ए तहिं सच्च सव्व–एतानि तत्त्वानि आख्यानानि (एतैः) सत्यं सर्वं। १३. केवि–[केऽपि] मिथ्यादृष्टयः। १४. गउ तेण......मति–आन्ध्रदेशे धान्यकनगरः, राजा दत्त, संघश्री नाम मन्त्री, एकदा आवासोपरिराजा मन्त्रिणा विचारं कुर्वन् आकाशे चारणमुनि युग्मं दृष्ट्वा न श्रद्दधानः। १६. तं अकियत्थु जाइ–तपः कृतं निष्फलं भवति। १७. तरुवरहो मूलु–तरोर्मूलं यथा सारं। पंक्ति १४ पर उद्धरण :—

जलचन्द्रो मतः साङ्ख्यैः भौतिकं गृहदीपवत्।
चार्वाकैः पञ्चभूतात्मा विप्रैर्घट-चटकवत्॥

६-२.

१ सुहुमत्तससमिद्ध-[सूक्ष्मत्रससमृद्धा] सूक्ष्मजीवभृताः। २. णेय-नैव। ६. तं जो घोट्टए-यः पुमान मद्यं पिबति। ७ कविल-[कापिलः] चार्वाक् [साङ्ख्य]? ८. अभणिउ जंपइ-अयोग्यवचनं जल्पति। रंगइ-रङ्गते, क्रीडति। ९ माउ जि संगइ-मातृ सह संङ्गं करोति। ११. विहत्थहो-विक्लवः। १४. मंडल-श्वानः।

६-३.

३. सुक्कसोणिएहिं जाउ-शुक्रशोणिताभ्यां जातं। ४ विहत्थु-बीभत्स। दुगुंछु—[जुगुप्सितं] निन्दितम्। ६ एरिसं-ईदृशम्। असेइ-भक्षति। ८. एयचक्के जो पहाणु-एकचक्रपुरे बकराक्षसाभिधानः। ९. असंतु संतु-अश्नन् भक्षन् सन्। १० आसि विप्प वोमे जंतु-पूर्वं विप्राः व्योम्नि आकाशे यान्ति स्म।

६-४.

१. भयाणणे-भयानके। णियवि-दृष्ट्वा। महुयरीण छत्त-मधुकरीणां छत्रम्। ३. मच्छिय-मक्षिका। पेच्छिज्जइ-दृश्यति। चिलिसिज्जइ-दूष्यते। ५. अयाणु मइमोहिउ-मतिमोहित अज्ञानी। ६. जीहिंदियवसु-जिह्वेन्द्रिय [वशः] लम्पटः। ८. सुइ सुइ-[शुचि शुचि] अतिपवित्र। खउ गच्छइ-[क्षयं गच्छति] मरणं प्राप्नोति। ९. बारहगामडहणे जं कहियउ-(भागवते) उद्धरण :—

न ग्राह्याणि न देयानि षट्वस्तूनि च पण्डितैः।
अग्निर्मधु विषं शस्त्रं मद्यं मांसं तथैव च॥
सप्तग्रामेषु यत्पापमग्निना भस्मसात् कृते।
तस्यैतज्जायते पापं मधुविन्दृय भक्षणात्॥

११. आसि काले-पूर्वकाले, शास्त्रे पुराणे। संदरसियदुहमलि-[संदर्शित] दुःखमलिन-कारणं, पापकारणं।

६-५.

४ सिद्ध भवासियभेयहिँ—सिद्ध-भवाश्रितभेदाभ्यां, सिद्धजीवराशिः ससारी जीवराशिश्च। ६. भवासिणो-भवाश्रयिनः। १०. कम्मपयडिधम्मा-[कर्म प्रकृति धर्माः] कर्मसहिताः। १४. दुत्थो-दुस्थः, दुःखी। १५. ण कीरए-न क्रियते। १७. तसु काइं सीसए-तस्य किं कथ्यते। २० इयरहं-[इतराणाम्] त्रसानाम्। पिउ देवत्थु वि—पितृ-देवतानिमित्तम्।

६-६.

१. सपरहियरा-स्व-परहितकरा वाणी। ५-६. सिरिभूइ वणिवरहो रयणाइँ हरिवि-श्रीभूति[नाम्ना नृपतिः] समुद्रदत्तस्य [वणिग्वरस्य] पञ्चरत्नानि [हृत्वा] गृहीत्वा। ८. चडुल··· ·· भंजणं-चपलतरमनः प्रसारं परिभञ्जनं कुरु। ९. परिसेसणं-नाशनम्। १२. सब्भए-श्वभ्रे नरके। १६. रइभंजणं-[रतिभञ्जनं] प्रीतिनाश। १९ संखलु-[शृङ्खला] दोर।

६-७.

१. सल्लकसायगारवे-शल्यत्रय, गारवत्रय, कषायचतुष्कं। सम्मं-सामायिकं। २. समया चित्ते-समता चित्ते, सर्वे सावद्यविरतोऽस्मि। दोसमुक्कधम्मं-निर्दोषधर्मं स्मर्यते। ५. मयण-मदन। ६. सुहनिवाणु-पुण्यनिधानपात्रं।

६-८.

९. ऊसरछेत्त-ऊषरक्षेत्रे। १०. कंचणमणि-गणेहु सयणासणु ···उद्धरण :

गौर्हेमंगजवाजिनोभूमिमहिलादासी-तिलस्यन्दनम्।
सद्गेहं प्रतिबद्धमन्त्रदशधा दानं शठै. कीर्त्तितम्॥
तद्दाता कुगति प्रव्रजत्वा पुर···हिंसादिसंवद्धनात्।
··ज्ञेतापि वचं सदा त्यज बुधैः निन्द्यं कलङ्कास्पदम्॥

१२. चयवि-त्यक्त्वा।

६-९.

१. चइवि-चयुत्वा। ३ उवयरियइं खलयणे कि करंति-दुर्जनलोके उपकारं [कृतं] यथा वृथा याति। ७. तुंगीहिँ-रात्रिषु। ८ तहिँ समये-रात्रिसमये। ११. अडंति-अटन्ति गच्छन्ति जीवाः। ११. एविणु पतंति-आगत्य जीवाः पतन्ति। १४. सीलु विवज्जेवि-दयां वर्जयित्वा।

६-१०.

१. तणु······खिज्जए-तनुः दुर्बलो भवति। ३. महउ सुहभावणं-शुभभावनां ध्यान-जापादिकं करोतु वृथा। ५. कणखल-तीर्थे। ६ गुग्गुलं-कषायाम्बरम्। ७. णवउ-नमतु। ८. गोग्गहे-गोग्रहे। ६. देउ-ददतु। पेसणं-[प्रेषणं] आज्ञा। १०. कव्वक्खणं-काव्यपूजनं। ११. तणु जि परिखिज्जए एतै. कृत्वा शरीरं क्षीयते।

६-११.

१. के वि-मिथ्यादृष्टयः। ८. पंगु-मट-वामनः लोलः। १६. मग्गमाण-याचमानः। १७. पाठान्तर - चंडियाहि अग्गिमाहि ठेल्लिताहि-चण्डिकाभिः स्त्रीभिः [प्रेरिताः] ठेल्लिताः पतन्ति। २३. संतावइ-दुःखं प्राप्नोति।

६-१२.

१. कलुणाकारया-करुणाकारका। ७. पयंति-पचन्ति। ६. रिट्ठउ जिवंति-काकवत् जीवति। १२. सिय-श्री। १४. इय जाणेविणु···· वज्जहि-इति रात्रिभोजन[स्य] बहून् दोषान् ज्ञात्वा ये [रात्रिभोजनं] वर्जयन्ति। १५. पाठान्तरः—दिणयरु व्व वउ भासहि-वपुः भासन्ते, भास्कर इव शोभन्ते।

६-१३.

२. तियसपुज्जिया-[त्रिदशैः] देवैः पूज्याः। इंद उव्व-इन्द्रसदृशाः। विहुरसहासवज्जिया-[विधुर] कष्टानां सहस्र[वर्जिताः]रहिताः। ६. साउहभडेहिं-सायुध-

भटै । दप्पुब्भडेहि-[दर्पोद्भटैः] हुङ्कारमानैः । सेविज्जहिं-सेव्यन्ते । ७. आरुहहि-चटन्ति । १०. माणिज्जहि-भोग्यन्ते । ११ जियहो-जीवस्य । १२. अणत्थमियहो फलु-रात्रिभोजन[त्याग]स्य फलम् ।

६-१४.

जा जुवइ विविहरसं चयति-या युवतिः एवंभूतं रात्रिभोजनं त्यजति सा एवंभूता जायते । जह विसं-यथा विषं हालाहलं मुञ्चति तथा रात्रिभोजनं मुञ्चति । ३. कुडिलालय-कुटिलअलकाः । ४. सिद्धदसण-स्निग्धदशन । ५. भुय-भुजा । मज्झंकिस-मध्ये कृशा । ६. जणिय रइ-उत्पादित सौख्या । ७. वेल्लि व हलहलिय-फलफलितवेल्लीसदृशा । ८ बुहथणिय-बुधैः विद्वद्भिः स्तुता । ९. पाणपिय-[प्राणप्रिया]वल्लभा कान्ता । १४. सहयरिहि-सहचरीभिः । १५. सुहसयभुंजिवि-सुखशतानि भुक्त्वा । वइरायवंत तउ पालइ-वैराग्यवती भूत्वा तपः पालयति !

६-१५.

१-२ कुगुरुकुदेव...इत्यादि-याः युवत्याः रात्रिभोजनं कुर्वन्ति ताः एवम्भूताः भवन्ति ज्ञेया । १. मयपमत्तिओ-मद[प्रमत्ताः]मत्ताः । २ कंचाइणि सरिच्छओ-कात्यायनीसदृशाः ३ रयभुरकुंडिउ-रत[भार]विह्वलाः, भोगेन विह्वलाः, लम्पटाः भवन्ति । ४ चिब्बिरणासिउ-[चिपटी] नासिका । ५. विसरिसभालउ-विसदृश-[भालाः]मस्तका ११. पेसणसारिउ-परगृहवतार्याः[?] । विप्पियगारउ-विप्रिय-कारिकाः ।

६-१६.

२. उद्धंकियकरो-ऊर्ध्वकृतं शुण्डादण्डम् । ४. जा घिप्पइ...करिणा-यावत् [स नरः] गजेन गृह्यते । हरिणा-सिंहेन । ५ अडउ-अन्धकूपः । ७. अहो जोयइ-अधः विलोकते । ८. किण्हसियामूसय-कृष्णश्वेतमूशकौ । कुरुडहि-छेत्तुं लग्नौ १२. गलिउ-गलितम् । १३. तहो राओ-मधुकरीणां रवः । १५. खिल्लविल्लसंजोएं-हलन[चलन]संयोगेन । १६. जीहहो-जिह्वायाम् ।

६-१७.

१. महुयरी-[मधुकरी]मधुमक्षिर्वा । ४. मिच्चु-मृत्युः । ५. भायणु-भाजनं स्थानम् । ७ मइदक्ख-हे मतिदक्षः । ८ दुच्चलु-दुश्चलः । १२. जे-[येन] तपसा । भव भव णिण्णासइ-भवे भवे कृतं पापं निर्नाशयति ।

६-१८.

१. गयचरित्तउ-[गतचरित्रः] चारित्ररहितः दीक्षां विना । ४. संखित्तउ-संक्षिप्तः[संक्षेपतः] । ५. अणुजायउ-अनुजातम् । ६. अज्जलोए किज्जइ-आर्यलोके दाक्षिण्यं क्रियते । ८. मम्मिलहं छंदें वत्तिज्जइ-मर्मिणां छन्देन वर्तनम् । णियकज्जें...गणिज्जइ-स्वकीयकार्येण गर्दभः गुरु इव गण्यते । १०. पडुयउ-प्रकटम् । १३. मायारउ-[मायारतः] कपटी । १४. कासु वि पियारउ ण होइ-कस्यापि वल्लभः न भवति ।

६-१९.

१. जो मम्मइं ण भासए-यः पुरुषः परेषां मर्माणि दुःखकारी वचनं न भाष्यते। चलइ छंदु-नृणां छन्देन चलति। ४. थिए-स्थिते। १५. इट्ठदुगुंछणु-इष्टानां निन्दा। १८. परिसेसमि-त्यक्त्वा [त्यजामि ?]।

६-२०.

१. हयभवं-हतसंसारम्। २. णिवपसायं-नृपः प्रसादम्। ७. तुहुँ एक्कु सुहि एकः त्वं सुहृत् सज्जनः। सुहिहियय दिहिकरणु-अस्माकं [सुहृत] सज्जनानां त्वं हृदयसन्तोषकरः। १०. माय मग्गेइ-मातरं याचते। ११. अंगरुहु-पुत्रः। १४. जं वुत्तु-यत् कुलं कथितम्। २४. दिवि-स्वर्गे। २६. जणणी जणणु वि तउ करेवि-वृषभदास-अर्हद्दासी दीक्षां तप कृत्वा।

सन्धि ७

७-१.

१. सुरलीला-इन्द्रलीलया। ३. सुपुण्णु लितओ-पुण्यं उपार्जन् समीचीन पुण्यं गृह्णन्। मुणीण सत्थे-मुनीनां वृन्देषु। सुहयाण-शुभदानः। ७ सरसं—शृङ्गार-हास्य-करुणादि नवरससहितम्। णियंतओ-पश्यन्। सुहावहं...सुणंतओ-सुखावहं गीतस्वर शृण्वन्। ८. कीलाहरे-क्रीडागृहे। मणोज्ज दमतओ-मनोज्ञ आश्चर्येण भोगेन प्रियां मनोरमां हृपे सन्तोषं ददन्। ९. सुचाडु...तोसवंतओ मणोज्ज भोयेण सुहं जणंतओ इत्यपि पाठः। १२ समीहए-चेष्टते; छेलहए-छेकानां चतुराणां मध्ये सुदर्शनः शोभते। १३ सुविणोयहि-सुष्ठुविनोदैः। चरिमाणंगउ-चरमशरीरः चरमकामदेवो वा।

७-२.

१. वराए वाणीए तिलोयरंजया-यस्य सुदर्शनस्य विशिष्टतया वाण्या वचनैः कृत्वा त्रैलोक्यरंजितः। जसुत्तमा...संजया-यस्याग्रतः उत्तमा. शिष्याः संयताः यतयः भणन्ति। २. तहो...सीसए[तस्य]सुदर्शनस्य सौभाग्यं कथं वर्ण्यते। ४. अच्छउ वरएण वि-विशिष्टदर्शनेन तिष्ठतु। होइ णेहु...णिसुएण वि-केनापि[सह]श्रुतेन सति स्नेहो भवति, तर्हि तस्य सौभाग्यं कथं-वर्ण्यते। ६. आयामिय-पीडिता। ७. विहलंघलु-विह्वला। ८. णज्जइ-[ज्ञायते]नीयते, गण्यते। ९. दिसिहिं पधावइ-दिक्षु धावति। णावइ-इव। १०. अह ण...संताविउ-स्नेहेन कृत्वा कः लोकः न सन्तापितः। १२ पंच विसमसरु कामहो-[कामस्य] पञ्चमरागः कृतः।

७-३.

१ सुहस्स लुद्धए-सौभाग्यस्य लुब्धया। १-२. मुद्धए मुएवि णीसास-मुग्धया निःश्वासं मुक्त्वा। ५. णीसेसउ गणियउ-गणिका स्त्रीजनः समग्रस्त्रियः। पुप्फ .. वणियउ-पुष्पबाणैः येन सुदर्शनेन व्रणिता जर्जरिता।

७-४

२. वयंसि–[वयस्या] हे सखि। ५. गय–[गता] गत्वा। ६. तुह...वेयण–तव मित्रस्य कपिलस्य मस्तके वेदना वर्धते। ७. अवियप्पु–अविकल्पवशेन। १६. आहाणउ–आख्यानकम्। हियत्थें–हितार्थेन, सत्यार्थेन। १९. संढउ मई इह–अहं नपुंसकोऽस्मिन् भवे। २३. दूरयरपियाण–दूरतरप्रियाणाम्।

७-५

१. मलयद्दिमारुओ–[मलयाद्रिमारुतः] मलयाचलवातः। २. स माणिणीणं .. सुंभए–वसन्तः मलयाचलवायुर्वा अभिमानिनीनां युवतीनां अभिमानं टालयति। ४. जहि–वसन्तमासे। छप्पउ–भ्रमरः। ५. जो मंदार...कुप्पइ–यो मन्दारपुष्पे कुप्यति, यो मन्दारं त्यजति। पक्षे मृदु-कोमल-सरलस्वभावे पुरुषे यः कुप्यति। कुडा–कुटकोटकी पुष्पे। ६. केयइ–केतकी। ८. जिणहरेसु...सुचच्चरि–जिन[गृहेषु] प्रासादेषु प्रारब्धा पूजा। ११. अहिसारिहि ..गम्मइ–[अभिसारिकाभिः] कुल्टाभिः स्त्रीभिः सङ्केतस्थानं पुरुषं प्रति गम्यते। गयवईहि–गत[पतिकाभिः]भर्तृकाभिः स्त्रीभिः। १२. पिय–प्रिया। पहियहं डोलिज्जइ–पथिकानां कामदुःख उत्पद्यते, गमनं क्रियते। १४. णरवइ–धात्रीवाहन।

७-६.

२. सुप्फुल्लियं–फलितं पुष्पितम्। ३. धुमुधुमिय महलइं–गमनावसरं ज्ञात्वा एवंभूतानि वाजित्रैः [वादित्रैः] वाद्य-वाद्यानि [वाद्यानि वादितानि]।

७-७.

७ हिट्ठा–हृष्टा।

७-८.

१ °सरं–सरश्च शरः। पत्तविसेसभूसियं–पत्रं वाहनं पर्णानि च, नृत्यपात्रैः मण्डितः। सुहालयं शुभालयं, सुखालयं। सक्कइविंदसेवियं–शक्र-उपेन्द्रेण नारायणेन लक्ष्मणेन सेवितम्; पक्षे–पक्षिभिः [सत्कविवृन्दैर्वा] सेवितम्। २. सुणाययं–नागाश्च न्यायः। णिउ व्व–नृप इव। ३. रंभा ·····कोमल–कदलीवत् कोमलजङ्घा, उरुः वनपक्षे रम्भा कदलीवृक्षः,। ४. पवरलयाहर–कदलीगृहं रम्यं आवासम्। पसूण–[प्रसून]। णियंसण–वस्त्र। ६. सिहि–[शिखि] मयूर। ११. चंदण········ वण्णा–केशरचन्दनैर्मनोहरवर्णः। १२. बहुभुयंग सेविय–कामीपुरुषैः सर्पैः सेविता वा। हरिवाहण–अश्ववाहन, सिंहवाहनश्च। १३. सुमंड–बलात्कारः, पक्षे–स्थूलः। १४. तरु·········राएं–तत्र वने राज्ञा तरुराजिः वेश्या इव [दृष्टा] १७-१८. रायागमणेण अग्घंजलि व पयासइ–धात्रीवाहनराजा आगते वनश्रेणिवेश्या अर्घपात्रं प्रकाशत इव।

७-९.

१-२. वयंसीहि सायरसेणपुत्तिया सहेइ–सखीभिः सह मनोरमा शोभते। ४. उण्हाविय·· ··· ·· तृप्ति नीताः बान्धव–सुहृदां लोचनानि यया मनोरमायाः।

पुण्णवंत एह–एषा मनोरमा पुण्यवती पुत्रवती। ५ कविलाए पवुत्तउ-कपिलया ब्राह्मण्या अभया महादेवी प्रति उक्तम्। ७. मीणइ–मेनका। सइ–शची। ८. पुज्जइ–प्राप्नोति। ८. पुत्तु जणाणि·········रयणायरु–पुत्रैव मातु' मानः रत्नस्य रत्नाकरः १०. णियहि–जानीहि। १२. ते–[तेन] कारणेन। आयहि–एतस्या मनोरमायाः। णंदणवंतहि–पुत्रसंयुक्तायाः पइ–पति। १४. रायहे······ मइं सुउ—कस्यापि पार्श्वे मया श्रुतं [य] मनोरमाया. भर्त्तः षण्ढः वर्त्तते।

७-१०.

१. राणिया–राज्ञी। २. डंभिया–वंञ्चिता। ४. मज्झु·········हियउ केम–ममाग्रे हृदयं कथं गोपयसि।

७-११.

१. इमाहे कंतस्स–अस्याः मनोरमायाः [कान्तस्य] भर्त्तुः। २. वयंसिए अग्गए सख्या अग्रे। ४. पयलंतु–प्रज्वलन्तम्। ९. छुहेमि–क्षिपामि। १०. धुत्तीहि–धूर्त्ताभिः वाहिज्जइ–ड[द]ह्यते। पाणहिय–[उपानह] बुन्देली में पनही।

७-१२.

४. एत्थु–अस्मिन् भवे अहं ब्राह्मणी। ६. णिसुणंती न लज्जिया–श्रवणं कारयती अहं न लज्जिता। ८. ललिया–चतुरा, दग्धा। १० अइ छइल्ल तो जाणमि धूर्त्ता चतुरबुद्धि जानामि। ११. मयंध–मदान्ध। १४. कोड्डु–कौतूहलम्। २०. संचारिमणाइं–अन्य वार्त्ता उपायकर्त्तुं लग्ना। माउल्लिय–पण्डिता धात्री।

७-१३.

२ भावइ दीप्तिवती। धणुच्चा वम्महभल्लि–धनुषरहिता [मन्मथ] कन्दर्पस्य [भल्लि इव] ३. सारिउ–साराः। णारिउ–नार्य मनोरमा कपिलादि। ४. केण वि–केनापि पुंसां, णिय भाविणि–निज[भामिनी] स्त्री। ७. पिय तोसिज्जइ–भार्या भर्त्तृणा सन्तोष्यते। ८. मां–मा। ९. पायहि–स्त्रीणां पादयोः। १०. रत्तु–कामातुर-पुमान्। ण कि वि वियप्पइ–कि न करोति।

७-१४.

२. आण समीहमाणओ–आज्ञां वाञ्छन्। ३. थणवट्ट······सतुंग–स्तनवृत्तः [पीन] कठिन-स्थूल-उत्तुंगः। ५. कत्थइं छप्पउ–कुत्रापि षट्पदो। ६. काहे······ रोमराइ–कस्याः [अपि] वनिताया तुच्छोदरे रोमराजि। पायड–प्रकटीभूता। ६. मुद्ध–मुग्धा। ८. सा तेण······वसेइ–सा स्त्री कथयति हे प्रिय भर्त्तः तेन कारणेन मानसरोवरे वसति······। ९. अउव्वधाणुक्किणीए–[अपूर्वधानुष्किन्याः [अपूर्वभ्रूयुगलवत्याः]। १० अविद्धु विद्धु–अविद्धः पुरुषः विद्धः कटाक्षबाणैः। ११. पिय जाइ—भार्या युवती याति [गच्छति]। तहो ·····धावइ–भर्त्तुः मनः तत्र याति। १२. तहो ···णावइ–तस्य पुरुषस्य तया भार्यया अपूर्वमोहनं दत्तम्।

७-१५.

१. लया······णिरंधए-लतागृहे किं भूते वल्लीगृहे ? पीतवर्णे [रन्ध्र-छिद्ररहिते] ४. सा भणइ······असोउ-स्त्री भणति हे भर्त्तः स्वामिन् यः अशोकः शोकरहितः स [अवश्य] विकसति। वियसइ-[विकसति] हसति। ५. सिरिहलाइं-श्रीफलानि, नारिकेलफलानि, लक्ष्मीफलानि पुण्यफलानि मृष्टानि [मिष्टानि] भवन्ति। ६. वयहं-[बकानां] पक्षिणां। कहि ····हवंति-हे भर्त्तः स्वामिन् प्राणनाथ सरसैः रसयुक्तानां किं व्रतानि भवन्ति। ७. विसहरु-विषधरः ह्रदः, सर्पः। ८. को वि······काउ-कोऽपि भाषति हे प्रिये हे कान्ते कः क. कं कं [कृत्वा] भाषते। सुउ-श्रुतम्। कंठणाउ-कण्ठनादः। कंतारयाइं-वनानि, कान्तारतानि।

७-१६.

३. तो णिवेण······मणहरं-तदनन्तरं धात्रीवाहनराज्ञा समस्तलोकेन नन्दनवनमध्ये सरोवरं एवं विधं [मनोहरं] दृष्टम्। ६. कल-मनोज्ञः। ८ अणिलविहुय-[अनिलविधूत] वायधुनित। १०. करिरहंग-चक्रवाकः।

७-१७.

२ पवण्णिउं······तारिसा-तादृशी जलक्रीडां वर्णयितुं कोपि न शक्नोति। ७. तिसाइं-तृषाभिः। ९. ऊरु-स्तनौ। १०. काहि······दिण्ण-कस्या अपि स्त्रियाः [रमणे] भर्त्तरि दृष्टिर्दत्ता।

७-१८.

१. सुट्ठुद्धपत्तं-शोभनोर्द्धपत्रम्। दिय दत्त। २. कहि वि-कस्मिन् स्थाने। ४. अइतरल-अतीवचपलस्त्री। ६. तहि-रक्तहस्तपादेषु कमलं ज्ञात्वा। ७. घुसिणरस-केशररस। १०. मुहपरिमलं हरिसवसु······सयदलं-हर्षं प्राप्तः भर्त्ता हस्तात् कमलं क्षिप्त्वा स्त्रियाः मुखपरिमलं [पिबति] गृह्णाति। १३. को वि-[कोऽपि] पुमान्। १५. पियफरिसणं-प्रियस्पर्शनम्। १६. बहल ······रइगुणं-रतिगणं [°गुणं] बहुलभूतं श्रान्तः [श्रान्ता ?] सन् परिहरति। १७. तणुघट्टण-शरीरसंघट्टनेन स्त्री-भर्त्ताभ्याम्। १८. सहहि शोभते। २०. तो तरुणिहि······णियतणु-युवतीभिः सह अभया [सरोवरान्] निःसृता निजशरीरं प्रसाधयति मण्डनं करोति।

७-१९.

१. दुरेहु ···सत्तओ-जातिपुष्पकलिकायां सक्तः [द्विरेफः] भ्रमरः। ५. सिहिणहं उवरि-स्तनयोः उपरि। ७. महुसिरीहि-[मधु] वसन्तश्रियः। ७. थणहं ·········गुणवंतु वि-कठिनस्तनयोः अग्रे लोट्यमानः नमन् सन् [गुणवानपि हारः] मध्यस्थिति न लभते। ८. मेहलाए ·····संपाइउ-मेखलया यत् हुतभुक् सेवितः तपः कृत [तेन] तपसः फलेन अभयानितम्बः प्राप्तः। ९. मंजीर·········घोसइ, चलणजुवलुलद्धउदुलहउ ······भल्लउ--मया मञ्जीरयुग्मेन लब्धं समीचीनं [दुर्लभं] चरणयुग्मं [इति] घोषयति इव। १२ गउ णायणंदिउ पुरवरे-न्यायेन वर्द्धितः लोकः चम्पापुरे आगतः। पुष्पिका :-- पइण्णसंबंधयं-प्रतिज्ञासम्बन्धकम्।

सन्धि ८

८-१.

३. आसि–पूर्वं। सरसइए ·· ······कइंदाणं–सरस्वत्या प्रगोपित कवीन्द्राणाम्। ४. णयणाणंदो–लोचनानन्दकारी। रइस्सए जम्हा–यस्मात् रचयिष्यति। ७. मरुद्धुया धयावडीय–मरुद्धूतध्वजा [पताका] पटी [कः]। १५. विच्छाइय–निस्तेजः। १६. जुण्णदेव········· सरिस–जीर्णपुष्पकलिकासदृश, जीर्णदेवगृह वा जीर्णदेवमूर्त्तिः। पंडियए–पण्डिता नाम्न्या धात्र्या।

८-२.

१. सगुणविराइयए–चतुर [दग्धां] डाहां पुनः कलाविज्ञानप्राप्तां अभयाम्। ५. ण मुणेमि–न जानामि। कहहि–कथय। ८. णित्तुलिय–प्रतिज्ञा। ९. बुहिए मइ-वंतियए–बुद्धिमत्या पण्डितया। १०. पइं उग्गीरियउ–तवसा [उद्गीरितः–उद्गीर्णं] कथितम्।

८-३.

१ लच्छिए ···· अवरुंडिउ–प्रणयिन्याः लक्ष्म्याः मनोरमभार्यायाः शोभितः। २. अयसयम्मु–अपयशकर्मः–पापकर्मः, परस्त्रीगमनम्। किं ······पडि-वज्जइ–परस्त्रीं कथं अङ्गीकरोति। ३. किं ···गाइज्जइ–यथा [मृत्वा] मृतकाग्रे पञ्चम-रागादिकं वृथा तथा य. प्रीति स्नेहं न धरति तेन सह प्रीतिर्वृथा। ४. जो पुणु······ ···अवगण्णइ–यः सुदर्शनः अन्यनितम्बिनीं अवगणयति, अन्यस्त्रीणां सन्मुखं न पश्यति। ५. होउ··· ·····छिज्जइ–तेन सुवर्णेन पूर्यतां [अलं] भवतु येन कर्ण-युग्म [छिद्यते] त्रुट्यते, तथा तेन [सह] स्नेहेन भोगेन प्रीत्या [वा] किं क्रियते येन [यया प्रीत्या वा] लोकानां मध्ये अपयशः [ज्ञायते भवति वा]। ६ बेदिसेहिं····· पिछोवमु—[द्वाभ्यां दिशाभ्याम्] उभयोः पार्श्वयोः रक्त-मनोहर-रम्य-सुमनोरम-मयूरी पृच्छेव स्नेहः रम्यः। एक्क·········किं पेम्में–मयूरपृच्छोपमेन एकपार्श्वाभिरामेन प्रेम्णा किम्। ८. कहि······ सो–त्व रक्ता स विरक्तः। दूरट्ठियहो·· ····छंडइ–त्वत् अभया सकाशात दूरस्थितस्य सुदर्शनस्य स्नेहं-प्रेम मुञ्च [त्व] १० एत्तहि··· ····रुच्चइ–[अत्र] तव शिक्षावचनं रुच्यते [तत्र] सुदर्शनोऽपि रुच्यते किं बहुना।

८-४.

१. अव्वो–अम्बे। एइ–आगच्छति। आणेह–आनय। ३-४ ता लज्जा मओ...ण वियंभए जाम––कुल-माता-पिता-श्वसु लोकानां लज्जा-भयं-सुमर्यादा तावत् यावत् मदनो न [विजृम्भते] विस्तरति। ५. विरयइ ...पासेओ–यस्स सुदर्शनेन अदर्शनेन मम शरीरे[काम]दाहो विरच्यते शरीरं कामाग्निना दह्यते तस्य सुदर्शनस्य दर्शनेन प्रस्वेदः जायते। ६. णिव्वहइ–कथयति। ७-८. कोमल .पज्जत्तं–तस्य सुदर्शनस्य आलिङ्गनसौख्यं यद्यपि न भवति तथापि तं दृष्टे सति यत्सौख्यं नयनाभ्यां कृत्वा

जायते तेन किं किं न पर्याप्तम् न पूर्णम्। ६. सो को पि...पडिहाइ—स कः प्रियतमः भवति येन प्रियतमेन विना रतिसौख्यं कथमपि न [प्रतिभाति] प्रतिभासते। ११. जेणायण्णियमित्तें-आकर्णित-श्रुतमात्रेण येन सुदर्शनेन प्राणवल्लभेन। ण माइ-न माति। १२. संबंधं-आलिङ्गनम्। १४. विहु-विधु[सूर्यः]। लहइ.. पोमिणी-कमलिनी पद्मिनी सुखं लभते दृष्टे सति। १६. परिभाविऊण-[परिभावयित्वा] विचारं कृत्वा। १७. सुहावहु चिंतियउ-[सुखावहं] सुखप्रापकं च मनसि चिन्तनीयं वचनं। अच्चग्गलु-अत्यग्रम्, अत्यधिकम्।

८-५.

१. जाइ...कुलउत्तिहे कुलवन्तीनां शीलगुणसहितानां[कुल]पुत्रीणां एकैव [कान्तः]भर्त्ता भवति। २. देवहि...दिण्णउ—देवब्राह्मणसाक्षीकृत्वा याः परिणीताः ६ सेच्छ-स्वेच्छा। णाह-[नाथः]भर्त्ता। ७. तियहि-स्त्रियः। १०. ताहँ-तासां असतीनाम्। ११. तं खज्जइ...पावइ-तत् सौख्यं भुङ्क्ते यत्सौख्यं भर्त्तुः सकाशात् प्राप्यते। १३. मयरद्धउ-[मकरध्वजः] कामदेवः। १५. जं पइँ जंपिउ-यत् त्वया जल्पितम्।

८-६.

१. गुणगणसहिउ-सम्यक्त्वव्रतधारी। २. पर महु...परन्तु-[परन्तु]मदीयं हृदयं मम वशे नास्ति। ३. उवहाणई-दृष्टान्तानि। ४. को ण...उवएस कहंतु-परेषां उपदेशान् कथयन् कः पण्डितो न। १०. वाइ-वातः। १२. सुपइण्ण-सुप्रतिज्ञा। १७. रहसे...परिहरवि-एकान्ते शीलं त्यक्त्वा।

८-७.

१. पासिउ-पार्श्वस्थ। जुवइहे-युवतीनाम्। मंडणु-आभरणम्। २. णीय-नीता। ३. अणंतमइ-अङ्गदेशे चम्पापुरे श्रेणिक[स्य] प्रियदत्ता भार्या अङ्गवती पुत्री अनन्त-मती। ५. मायउ-मातरः। ७. जायउ-[जातः] जनितः।

८-८.

३. पलीविए-प्रज्वलितया। ४. सयाणउ-[सुजानकः] ज्ञाता, चतुरः। ५ हाहा-रउ-अपकीर्ति। १०. अइरेण-[अचिरेण] शीघ्रेण।

८-९.

१. पेयवणे-प्रेतवने। गिज्झु-गृद्ध-राक्षसः। ५. जोव्वणइत्ते-यौवनत्व। ८. ण फिट्टइ ·· ·····असगाहु-[अस्या]: एतेषां असद्ग्राहः न [स्फिटति] गच्छति।

८-१०.

१. अकज्ज-[अकार्य] पापकार्य, अधर्म। २. कवणु ·····पत्तिहे-[वसुधाधिप-पत्न्याः] धात्रीवाहनस्य भार्यायाः कः दोषः अपितु न। ५. ताए-तया पण्डितया। धीरी होहि-स्थिरा भवतु। ६. अच्छउ·········हारउ-सुदर्शनः तव हृदये [दोलाय-मानहारमिव वसतु] आलिङ्गनं ददतु। ७. पियइँ-प्रियाणि। गेहइँ-गृहाणि। पयावइ-

[प्रजापतिः] कुम्भकारः। ८. मट्टियवाउल्ला-मृत्तिकापुरुषाः। ६. जामिणिहे-[यामिन्याम्] रात्रौ। मयणहो वउ-मदन[स्य] व्रतम्। १०. तसु माहप्पें-[तस्य] मदनव्रतस्य माहात्म्येन।

८-११.

२. पडिहासहि-प्रतिभासन्ते, शोभन्ते। ३. हरिसियंग-हर्षिताङ्गाः, प्रमोदं प्राप्ताः। रमहि-रमन्ति, क्रीडन्ति। ४. तसहि-त्रस्यन्ते! ६. वियप्पु मुणहि-विकल्पं जानन्ति। ८. ताहै……रणहि-तस्याः अभयायाः मरणं कथयन्तीव। ९. संक परिसेसवि-शङ्कां [परिशेषयित्वा]त्यक्त्वा, निःशङ्कं भूत्वा।

८-१२.

तुण्हिक्किय थक्किय-[तूष्णींकृत मौनं कृत्वा स्थिता]। ६. रोसु फुरंतियए-रोषजाज्वल्यमानया। ७. रक्खवाल कुविय रक्षपालो कुपितः। ८. अणपुच्छवि-अपृष्ट्वा। ९ सकज्जविरयंतियहे-स्वकार्यं [विरच्यमानया], कुर्वन्त्या। १०. सुएहि-सुतैः।

८-१४.

२. आणमि-आनयामि। ४. कयडंभहि-कृतपाखण्डै।

८-१५.

२ छुट्ट बाल-विमुक्तकेश [कलापा]।

उद्धरणः- कहि……आदि— विमुक्तकेश-काषायैः नग्नेन्धन-बुभुक्षितैः।
कुब्जान्ध-वन्ध्या रजकै दृष्टै. सिद्धिर्न जायते॥

३. साणु-श्वान। ८. वामिय-वामन। १०. उप्पेक्खइ-अपशकुनानवगणयति।

८-१६.

४. साइणी-शाकिनी, डाकिनी। सणकेय भासणे-तासां संकेतकथनं यत्र [स्मशाने]। ६. थंभण-स्तम्भनम्। ९. अक्कमिउ-आक्रान्तः। १०. वसु-वशः

८-१७

१. कण्णियचूडुल्लउ-कर्णिकाभरणं २. अलिणयणउ-भ्रमरलोचनम्। ३. चक्कई-चक्रवाक्। इत्थियसंगु विवज्जिवि थक्कइं-[स्त्रीसङ्गं विवर्जयित्वा स्थितानि] चक्रवाकाः चक्रवाकीनाम सङ्गं त्यक्त्वा स्थितानि। अज्जवि-अद्यापि। कमु-अनुक्रमः।

८-१८

१. तासु-नभःश्रिया। १. पहिट्ठउ-प्रहृष्टा। ४. सवत्तिहिं-सपत्न्याः। केसग्ग-केशाग्रम्। ६. आलिंगणहँ-आलिङ्गनार्थं। खेड्डेण-हास्येन। ८. कासु वि-कस्यापि।

८-१९.

१. विड वेस णिएप्पिणु- [विटा.] कामीपुरुषाः वेश्यां निरीक्ष्य वेश्यार्थं युद्धं[कलहं] कुर्वन्ति। ४. कच्छहि धरवि-कक्षं धृत्वा। ५. चडुयम्महि-चाटुकर्मभिः। ६. विलेवए-विलेपनार्थम्।

८-२०.

१. तत्थ-तत्र स्मशाने। ४. णहि ..मंतेण-मेलापकं[सहसङ्गमं] अन्तरेण जीवाशा न भवति तस्याः।

८-२१

२ तहि.. सोहहि-तस्याः अभयायाः पादबद्धा अपि न शोभन्ते अप्सरसः। ४. तेहिय-तादृशी। ६. णईए-नद्या। १०. पुरुसा°...°कीरइ-पुरुषार्थत्वं[पौरुषत्वं] तावत् क्रियते ११. अवसु-अवश्यम्। १२. खाइहइ-खादिष्यति। १३. विणडेज्जंतु-विडम्बनं[क्रियमाणः]।

८-२२.

३. णिवविंदहो.. जुया-नृपवृन्दस्य नृपवन्द्यस्य वा धात्रीवाहनस्य[राज्ञ] अति[अनुराग] प्रीतियुक्ता। ४. णिरसिउ-[निरस्त] तिरस्कृतः। ६. कहि माए-कथय हे मातः।

८-२३.

१. विसेवि केयणं-प्रविश्य निकेतनं। २. तूलपंके-पल्यङ्के[पर्यङ्के]। ६. बुद्दीय-विदुष्या पण्डितया। १४. सुर......रंभे-देवमन्थनारम्भे।

८-२४.

१. पाउ आसवेइ-पापं आश्रवति। २. मज्जवाण-मद्यपान। १३. थूलसण्ह-पाणभूय-[स्थूल-स्लक्ष्ण प्राणभूताः] तरवः-द्वि-त्रि-चतुरिन्द्रियाः प्राणभूताः स्मृताः। जीवाः पञ्चेन्द्रियाः प्रोक्ताः। एषाः सत्त्वाः प्रकीर्त्तिताः। १४. सोय-श्रोत्र। १५. सुप्पइण्ण-[सु] प्रतिज्ञा। १७. उव्वरिउ-उद्वृत्तः [उद्धृतः]। जमकरणहो-[यमकरणात्] उपसर्गात्। १८. संहुए वासरे-[सम्भूते] संजाते दिने।

८-२५.

१. वयपुण्ण-व्रतपूर्णौ। २. णिवपत्ति-नृपपत्नी अभया महादेवी! ३. एहु मारु-एषः [मारः] कन्दर्पः। परिचत्तसिंगारु-[परित्यक्तशृङ्गारः] शृङ्गाररहितः प्रोषधस्थः एकवस्त्रे स्थितः। ५. केत्तडउ-कियन्मात्रम्। ६. सच्छेहि णिम्मीलि-अच्छेहि-[स्वच्छाभ्यां]निर्मलाभ्यां निमीलिताक्षाभ्यां। ७. उत्तत्तकणयाह—उत्तप्तकनकाभः। ८ मुहजित्तमयवाह-मुखजितमृगवाहः चन्द्रः। तियचित्त मयवाह-स्त्रीचित्तमृगव्याघ्रः। ९. णिपवित्ति-अतिपवित्रे। १०. करिऊण आयासु-जिनधर्मे [जिनधर्मपालने आयासं] क्लेशं कृत्वा। १२. माणि-मानस्व! १५. परजम्मु कि दिट्ठु-[परजन्मः] परभवं केन दृष्टम्। १६. पयपंति-पदपंक्ति।

८-२६.

१. सुहय जइ इच्छसे...इत्यादि, ता मइँ अणुहुंजहि–हे सुभगसुदर्शन यद्येवंभूतं मन्दिरं इच्छसि तर्हि मां अभयां प्रति रमस्व। ६. अलिणिह–अलिनिभ। १०. समाउलं–[समाकुलं] व्याप्तम्। १२. णिज्झरवंत गया–कपोले मदक्षरन्ताः गजाः।

८-२७.

१. सुउ– श्रुतं। कहिंमि–कुत्रापि। विक्खाउ–विख्यातम्। ३. गोवीहि लोणिमहे–नवनीतमयाभिः गोपाङ्गनाभिः सह श्रीनारायणो सुख-भोगं भुङ्क्ते। दणुयारि–दनुजारिर्नारायणः। हरि–गृहे। ६. मयअङ्क–[मृगाङ्क] चन्द्रस्य मृगः। सिरिविस्स-मित्तेण–श्री विश्वामित्रेण। ७. आहल्ल...इत्यादि उद्धरण :—

किमु कुवलयनेत्राः सन्ति नो नाकनार्यः
त्रिदशपतिरहिल्यां विप्रभार्यां स यासीत्।
हृदयतृणकुटीरे दीप्यमाने स्मराग्ना—
वुचितमनुचितं वा वेत्ति कः पण्डितोऽपि॥

७. हरि–इन्द्रः। ८. मइँ माणि–मामनुभव [मां भुङ्क्ष्व]। ९. दिट्ठंत सय–दृष्टान्त-शतानि। १०. खब्भालइ–क्षोभं करोति।

८-२८.

२. णियडए–[निकटे]समीपं आगत्य। ५. गोपइ–गोपयति। णाहि पलोवइ–स्वकीय नाभिप्रदेशं[प्रलोकयति]। ६. सिढिलइ–शिथिलयति। ११. समणिउं मम्मणु–कामोद्रेककारी वचनं जल्पति। १४. णं कट्ठी–काष्ठस्तम्भवत्।

८-२९.

१. दोच्छियउ–निर्भर्त्सितः। ३. पिसुणावयार–[पिशुन]दुर्जनावतार। ६. देवथाणु–ईश्वरः। ८. भइरवम्मि–भैरवझम्पायाम् [भृगुपाते]। १०. रइसुह-वहाहिं–रतिसुखावहाभिः[स्तनैः]। ११. घण–पाषाण। १४. कुरुखेत्ते गहणु–कुरुक्षेत्रे तीर्थे गमनम्। १५. हयास–हे दुष्टचित्त हताश। १६. गयकणखलम्मि–गजकनखले तीर्थे। १७. पियरपिंडु पाडिउ–पूर्वजेभ्योः पिण्डदानं पूर्णं दत्तम्। १८. पिहुलडहरमणि–[पृथुल] विस्तीर्ण[मनोज्ञ]कटिप्रदेशे। २१. उरु–हृदय। २६. असगाहु–[असद्ग्रह] दुराग्रहः। सल्लइ–शल्यति। मेल्लहि–मुञ्च[स्व]।

८-३०.

३. अहवा...भञ्ज–अथवा[कथं]मम अनादरः करोषि अद्य। ५. पग्गि द्रोपदी(?)। 'हउँ पग्गि व पइं वइसेवि जाय' वा पाठः। ७. तियढवुसु–स्त्रीसाहस। ८. सयणि सुहाविणि–सुखकारी[शयने]शय्यायाम्। ९. णिप्फंद–[निष्पन्द]-निश्चला।

८-३१.

६. अवहेरमि अडयणसाहसु–स्त्रीसाहसं अनादरं करोमि पापसमूहं नाशयामि वा।

८-३२.

१. सुलहउ–सुलभः। ६. सावण्णे जणे–साऽवज्ञे मूर्खे दुर्जने मिथ्यादृष्टि पुंसि। कसाउ–कषायः।

८-३३.

२. तइं–तदा। ४. सा भावण–कुभावना। जाए–[यया]भावनया कुवासनया। ६. असगाह–असदाग्रह, कदाग्रह। ८. एम वि–एतेन प्रकारेण। ९. परयार–[परदार] परस्त्रीभोक्ता [पुरुष], परपुरुषलम्पटा स्त्री।

८-३४.

२ बाहुडिय–निवृत्ता। ३ चंदणहि–चन्द्रनखा, शूर्पनखा। लक्खण–लक्ष्मण। ५ बीइंदुयारसूईमुहेहि–द्वितीयाचन्द्राकारशूचीमुखैर्नखैः। ९. लहहंगइं कोमलङ्गानि!

८-३५. ८-३६.

१-२ वोमे विहयहं पायमग्गु जइ कह व दीसइ–व्योम्नि विहगानां पादमार्गः यदि कथमपि दृश्यते। सलिले जलयरहं गमणागमणायारहं–सलिले जलचराणां जीवानां गमनागमनकारकानाम्। ४ पारय–पारद। सूइमुहे–शूचीमुखे। ८. मिससएहि–मिषशतै. छद्मपाखण्डशतैः। मुहियइं–मोहितान् सुहतान्। ९. पयडेइ–प्रकटयति। ११ णीयरय–नीचरता, [नदी] पक्षे निम्नगा। १२. उहयपक्ख–उभयपक्ष, उभयतट। १९-२० आयहं पासिउ……सुरयच्छलेण–यथा एतेषां पार्श्वे वक्रता तथा स्त्रीणाम्; वक्राभिः स्त्रीभिः कामी [पुरुषः] तृणवत् गण्यते; कामीपुरुषः सुरतमिषेन हन्यते। अब्भहिउ वंकिम–अभ्यस्ता[अभ्यधिक]वक्रता। तिण विहियउ–तृणकृतः। २४. कवडें सव्वइ करेइ–सर्वमपि यत् कार्य करोति तत् कपटेन। २९-३०. इय समलु वि ···भण्णइ केम, पाउसगिरिणइ जेम–सकलमेतन् मर्यादा रहित-पावस गिरि नदी सदृश न मन्यते। ३८. वसुहवीढ–[वसुधापीठ] पृथ्वीमण्डल। ४०. पयारए–प्रकारेण। ४५. णउ पुणु अणुमित्तु वि तियहे जाइज्जइ वीसासु–स्त्रीणां स्तोकं परमाणुमात्रमपि विश्वासः नोत्पद्यते न क्रियते! ४५. सब्भावदोहिय–सद्भावेन द्रोही। ४९-५० जो तहि पत्तिज्जेइ सो दुक्खावलियं–ईदृशी युवतीस्त्रीणां यः पुमान् प्रतीति विश्वासं करोति सः दुखश्रेणीं प्राप्नोति। ५४. णवणायसहस्स बलु–वणिक्पुत्रस्य सप्तसहस्रभटाः। ५६ जेम······दिट्ठीए–यथा एते वक्राः तथा स्त्रियः हृदये वक्राः। ६१. ससरु-सचाउ–[सशरः सचापः]चाप-सहितः धनुः। ६२. तडितरलु–विद्युत्करवालः।

८-३७.

४. अरि को वि...विग्गहे–कि कोऽपि शत्रुः ममोपरि अग्रतः प्राप्तः। ५. नडवेक्खणं–नटप्रेक्षणं। ६. वम्मासिया–मर्माश्रिता, कदर्थिता, विडम्बिता। १३.

कुलिससूइ–[कुलिश]वज्रशूची, वज्रमयशूली। घासए–ग्रासयेत्। १६. छलेण... भुंजए–पाखण्डेन पराक्रमेण बलात्कारेण कः समर्थः मदीयां भार्यां भुङ्क्ते [भोक्तु]। १८. ण सो सुइरु णंदए–स पुमान् दीर्घकालं[सुचिरं]न नन्दते न तिष्ठति। १९. सुदुष्टनरनिग्रहं, सज्जनप्रतिपालनं। २०. जइ भूसयं–जगतिभूंषणं।

८-३८.

३. असिधेनुय-असिधेनुका–छुरिका। ६ हत्थ...वियरेसमि–हस्त-प्रहस्तवान् विस्तारयामि[विचरिष्यामि]। इंद इव्व...धरेसमि–इन्द्रजितवत्, यथा इन्द्रजितेन हनुमन्तः धृतः तथा अहं सुदर्शनं धरेमि। ७. अज्जुणु व्व...लग्गेसमि–यथा अर्जुनः सयामे[संग्रामे]कर्णनरेन्द्रेण लग्नः तथा अहं सुदर्शनेन लग्नामि। १०. गज्जि किं गर्जना किम्। विरले...साहिज्जइ–विरलेन पुरुषेण स्वामिनः कार्यं क्रियते[साध्यते]; १२. साणहिं–श्वानैः।

८-३९.

१. जा.. लियउ–यावत् मारणार्थं स्मशाने ग्रहीत.[नीतः]। ५. सिहिण –स्तनौ ६. मणिप्पलंब–मणिप्रालम्ब।

८-४०.

८. एहउ-ईदृक्। ९. जाणमि संढु–अहं जानामि त्वं परस्त्रियां पण्ढ. नसपुंकः। छुडु...रक्खिउ–हे कान्तः त्वं शीलवान[एवं] ज्ञात्वा[अपि कथं] केनापि न रक्षितः।

८-४१.

३. असड्ढलउ–दृढम्। ८. मम्मणमणिय–मणितः कामोद्रेकशब्दः। वीलणउ–पीडनं। १४. चाडुएहिं संबोहिय–[चाटुकैः सम्बोधिता] चाटुकारवचनैः कृत्वा मानयिता। १६. सुइपूरणु...मंजरिय–[श्रुति कर्णं पूर्णं कृतं [भ्रमरगुञ्जित] अशोक-वृक्षस्य मञ्जर्या आरोपिता [इति स्मरामि]। २१. खउ कि ण जासि–क्षयः किं न यासि। २२. णिहि दक्खालेवि–निधि निदर्श्य।

८-४२.

१. जइ...णोत्थरंति–यदि चेन् मेघाः गगने न भवन्ति, न वर्षन्ति, तर्हि त्वं परस्त्रीगमनं करोसि। ६. पावेवि णिमित्त परस्त्रीनिमित्तं प्राप्य।

८-४३.

६. लोइ–लोके। ७. वयहलेसु–व्रतफलेपु। १०. तमु जि दिवायरवियरणे–[दिवाकरविचरणे]सूर्योदये प्रकाशे यथा अन्धकारं न दृश्यति तथैव जिनस्मरणे भव्यानां पापसमग्र[समूह]मपि न दृश्यते [नावशिष्यते]

८-४४.

१. अंजणपव्वय–अंजनाचल [°पर्वत]। २. सदप्पु करि–[सदर्पः]करीन्द्रः मदोन्मत्तः गजः। ३. पसुत्तु-समुट्ठिउ–प्रसुप्तः समुत्थितः। २०. किवाणु–[कृपाणः] खड्गः।

संधि—९

९-२.

१. गोंदले-संग्रामे। १०. जुयखए-युगक्षये क्षयकाले।

९-३.

८. मुसइ-मृषति व्याप्नोति। पुसइ-स्पृशति। ९. उसइ करहुओ -उच्छ्वसि, त्रस्यति। करभः उष्ट्रः शब्दं करोति। ११ रइभमो-रजोभ्रम। १४ रहइ-क्षुण्णति।

९-४.

णिवसाहणहो-नृपसैन्यात्।

९-५.

३. विहुणिउ-विधूनितः, रज उड्डापिता। कडत्थि-कटि।

९-६.

३. गाहावलिय-मध्यावली। ४. खगपरियरिय—[खगपरिचरित] पक्षिणां कोलाहलेन परिवारिता। १०. रुहिरणइहे-रुधिरनद्याम्।

९-७.

८. संचारिममहीहरा-[महीधरौ] अञ्जनाचलौ पर्वतौ चलितौ। १३. दिंति उरे उरत्थलं-उरसि उरस्थलं-हृदयेन हृदयं ददतौ। १७. णिवदंतिए-नृप [दन्तिना] हस्तिना। रयण-[रदन] दन्त।

९-८

३. हुइ-भूता, जाता। ४. दोच्छिउ-दुगुञ्छितः [जुगुप्सितः]। ८. भेक्खसु--भयकृत्।

९-९.

९. रत्ततिम्मिरा-[रक्त] रुधिरादि—क्षरतौ भूतौ। १३. करिपवलु—महान् हस्ति।

९-१०.

१. मरट्ट—अहंकार। थोह—समर्थौ। आहवे पयट्ट—[आहवे प्रवृत्तौ] संग्रामे प्रविष्टौ। ५. अंगाहिव - [अङ्गदेशाधिप] धात्रीवाहन। ८. अहि-पासहिं—अभिपार्श्वैः। मच्छ-मत्स्य।

९-११

२. धगधगियमणियरे—[धगधगितमणिकरैः] रत्नकिरण जगमगाहट ! ३. मणुजवपयट्टए—मनोवेगी घोटकौ योक्तितौ, पवनवेगीरथः, वायुवेगेन प्रवृत्ते रथे

९-१२.

२. जणहियथरामेण—[जनहृदयरामेण] लोकानां हृदयप्रियः। ८. सुयवि—श्रुत्वा।

९-१३.

४. सुरहँ--राक्षसात्। ५ णिसियरु राएं णिज्जिउ—[निशाचरः] व्यन्तरः राज्ञा [निर्] जितः। मणि सकसाएं—क्रोधसहितेन चित्तेन। ९. वेविर—कम्पित। १५. इय कह जक्खणे—ईदृशी वार्त्ता आकाशे वर्त्तते यत् क्षणे यदा। १८ घुडुक्कउ—घटोत्कचः।

९-१४

२. वणंतु—व्रणयन्। ५. कवोउ—कपोत। ८ दुरेहु—भ्रमरः। १०. मइंदु—मृगेन्द्रः।

९-१५.

१. अक्खु—उंदुरः। २. विरालओ—[बिलारः] मार्जार। ९. चित्तभाणु—[चित्रभानु] वैश्वानरः।

९-१६.

भल्लिएँ…मुच्छाविउ—राक्षसेन भल्लेन [कुन्तेन] हत्वा राजानं मूर्च्छितः। ३. लहिवि चेट्ठ—[चेष्टा] चेतनां प्राप्य, सावधानं भूत्वा तंबेरमु—मृग। ६. दोहाइउ—द्विधाकृतः।

९-१७.

४. गिंभागमे—यथा [ग्रीष्मागमे] ग्रीष्मकाले ज्येष्ठ आषाढे। ५. दिव्वु—देवः। ६. णिय—राजा, मेल्लाविउ भडयणु—सुभटजनाः मोचाविताः।

९-१८.

१६. मित्ती पहाणरेहा इव—सत्पुरुषानां मैत्री पाषाणरेखा वत्अचला [दृढा]।

९-१९.

२. सुमणु--[सुमनः] निर्मलचित्तम्। ३. छारें-भस्मना। ६. सेय आवज्जणु—श्रेयावर्जकः। १०. सुरधणु छायापयासिरेण रज्जें—सूर्योदये छाया-सदृशेन राज्येन।

९-२०.

११. सव्वया—सर्वदा; विद्धु—वृद्धः।

९-२१.

विद्धत्तें—वृद्धत्वेन; ढिल्लु —शिथिलम् । ४. णवइ—नमति । दिण्णुण्ण-यमहिगोमय अमेज्झु-विष्टायाः उन्नति ददाति । ६. जोव्वणु पडिउ महियलु जिएइ —यौवनं पतितं निरीक्ष्यते । पए पए खलेइ—पदे पदे स्खलति । ७ दुप्पुत्तुव—दुष्टपुत्रवत्; सुइवयणु ण सुणंति—वृद्धावस्थायां कर्णेभ्यो न शृणोति । जुज्झंति जाम डिंभय भणंति—यावत् डिम्भका न वदन्ति, वृद्धावस्थायां पुत्रपौत्रादिकाः कलहं कुर्वन्ति । १०. देसु—द्वेष । ११. पण्णा—प्रज्ञा, बुद्धिः ।

९-२२.

२. तणुरुह—भरत-बाहुबलि आदि । ८. णिग्गंथु—निर्ग्रन्थः । ४. सणकुमारु—सनत्कुमार. चतुर्थ चक्रवर्ती ।

९-२३.

४. जणु-अन्ये लोकाः, वामोह-स्त्रीसमूह । ६. संपत्त वि चएवि—सम्पदा राज्यं त्यक्त्वा । १०. विउसि—[विदुषी] पण्डिता । ११. °गणि-गौतम [गणधर] ।

सन्धि–१०

१०-१.

२. गयतामसे-[गततामसे भावे] निर्मलचित्ते । ४. दुव्वाय-दुर्वात् । ११. जं णहो व्व-यत् जिनालयं आकाशवत् शोभते । रोहिणीमणो-हरं-नि श्रेणिस्त्वधिरोहिणीत्यमरः । १२. सरुव्व-सरोवरवत् ।

१०-२.

६ धाउरहिय-सप्तधातुरहित । कामतणु-देदीप्यमानशरीरम् । अक्खया-[अक्षय] क्षयरहित । ९. मयाहिवा-मृगाधिपा । १०. अकरण-शुभाशुभ कर्त्तव्यरहितः । १२. दोसया-द्वेष । १४. पारु को वि चक्कम्मइ-अलोकाकाशस्य पारं प्राप्नोति । १५. तुह गुण वण्णिवि सक्कइ-तव गुणान् वर्णयितुं शक्नोति ।

१०-३.

१. खुहइ खलयणु-[क्षुभति खलजनः] हे जिन तव नाम्ना दुर्जनाः क्षुभ्यन्ति तव सेवकाः भवन्ति । ९. मयाणभट्ठु—अष्टमदात् भ्रष्ट । णेत्तइट्ठु —भव्यानां लोचनानां इष्टः वल्लभः । जल्ललित्त गत्तओ-सर्वाङ्गमलविलिप्तः । १०. देसु--द्वेषः । ११. तिलोयबंधु—[त्रैलोक्यबन्धु] त्रैलोक्यानां प्राणिनां हितकारकः । १२. अलंघसत्ति-पञ्चाचारप्रकटनकारी । १४. पंकउद्धरो-भव्यानां पापकर्दमात् उद्धरण. निष्कासनः । १६. पसण्णमुत्ति-[प्रसन्न]

आदेयमूर्त्तिः। सुज्जदित्ति—द्वादशादित्यतपिततेजः। १७. पमायणासु—प्रमादनाशकः। कंदभासु—मेघ [गर्जन] वत् भाषा, स्वरगर्जना। १८. सत्तु—शत्रु। १९. धीसु—धीमान् त्रिज्ञान सहितान्।

१०-४.

२ अहिणंदेवि—वन्दित्वा। ३. सो रहसु ण···सयलु कहइ—मुनिः सुदर्शनस्य रहस्यं [भेदं] न रक्षति, [सकलं] यथार्थं कथयति। रायसीहवारे··· पुक्करंतु—सर्वलोक फूत्कारं कुर्वन् राजसिंहद्वारे प्राप्तः। ११. पत्थिवेण—[पार्थिवेन] भूमिपालेन। १३ विक्कमिल्लु विक्रमवान्। १४. पसत्तु-प्रसक्त। २२. सो—भिल्लः व्याघ्रः।

१०-५.

कलुणु—[करुण] कारुण्योत्पादक.। ४. दंडाहिउ—दण्डाधिप। अणत्तु—आज्ञप्त। ५. गंजोल्लियगत्तु—उल्लसित—रोमाञ्चित शरीर [गात्रः]। ६. पहुत्तो अणंतो—अनन्तसैन्यैः सहगतः; पुलिंदेण—व्याघ्रेण। १३. सिआल-शृगालः। २१ असिअसियउ—[असिअसितः] खड्गच्छिन्न। विहिविहियउ—[विधिविहित] कर्मणाकृतः। मरेवि समरु समरंगणे—रणभूते संग्रामे व्याघ्रभिल्लः मृतः।

१०-६.

१. गोट्ठिए—[गोष्ठ्यां] गोकुले, गोवृन्दगोपालगृहे। ६ भलहुल्लु—श्वान। ८. सीहपियाहिँ—सिंह नाम्ना पुरुष, भार्या सिंही, तयोः पुत्रः सुभग नाम्ना गोपः। ९. कुलक्खयकम्मकरतु—कुल क्षय [कारी] कर्म कुर्वन्। खलोव्व—खल इव। ११. सुदसणु तंसि हुओ—त्वं सुदर्शनो जात। १४ °पिय—कुरङ्गी।

१०-७.

१. रजयसामलहो—श्यामलनाम्ना रजकस्य यशोवती भार्या, तयोः पुत्री वत्सिनी। २. विहव - विधवा। अणत्थमिउ—[अनस्तमितं] रात्रिभोजन [विरति] नियमं ग्रहीत्वा। ३ सा हुय—मनोरमा जाता। ४. जाएसइ सुरणरसुहइं भुंजिवि मोक्खु णिरुत्तु—सुरनरसुखानि भुक्त्वा निश्चिततया मोक्षं गमिष्यति—प्राप्स्यति। ६. पसत्तु—विमलवाहनमुनिः सुदर्शनाग्रे कथयति [यत्] जीव पञ्चेन्द्रियाणां वशवर्त्ती सन् संसारे भ्रमति एकैकेन इन्द्रियेण जीवः दुःखं प्राप्नोति। समासलग्गत्तु करंतु पसंगु-मंसिलगात्रः हस्ती प्रसङ्ग हस्तिन्या सह स्पर्शभोगं करणार्थं वनमध्ये बन्धनं प्राप्नोति। ७ पलम्मि—मांसे। ९. पयंगु—पतङ्गः चक्षुरिन्द्रियवशवर्त्ती सन्। १०. °अणंते- वने; सम्मत्तु—समाप्तः। १२. दुहसारए—दुःखानां [सारे] समूहे।

१०-८.

२. सुभउमु—सुभौमचक्रवर्ती: णिव-नृपः। ५. अंगारछड्डणउं—अङ्गाराकर्षणं करोति। ६. गया खउ देव—देवाः अपि क्षयं गताः। चित्तवसिल चित्तस्य-वशवर्त्तिनः। ७. थेरु-[स्थविरः] तपस्वी-ब्रह्मा। ८. गोवहं गोविउ-गोपानां गोपिकाः। ६. सुरसिंधु-गङ्गा। १० असेस ''सूलु-एवम्भूतो रावणः मनोवशर्वात्ति-[त्वात् क्षयं-विनाशं प्राप्तः]। धराहरमूलु-[धराधरमूलः] कैलाश-पर्वतः। १२ राम-रामा। १५ भरहेसहो णंदणु-[भरतेशस्य नन्दन] अर्ककीर्त्ति। सुलोयण-सुलोचना जयकुमारेण वरिता [विवाहिता]। १६. घणणाएं-[घनवन्नादेन-स्वरेण] जयकुमारेण।

१०-९.

४ दोवइ-द्रौपदी। १३ विमाणे मान-सङ्ख्या रहितं।

१०-१०.

१ हवइ'''पव्वयहँ—यथा पर्वतानां [मध्ये] मेरुः सारो भवति, तथा। ३. णरजम्मु जम्महं जन्मनां मध्ये नरजन्म एव सारम्। २ अइरावउ कुंजरहं—यथा कुञ्जराणां मध्ये एरावणो सार; सुरगेहु हम्मह—हर्म्याणां मध्ये सुरगृह [सार]। ७ छणम्मि छणम्मि चडेइ-[क्षणे क्षणे] रात्रि-दिवसे धनार्थं कान्तार्थं प्रहृष्टः सन् भ्रमति। ८. तुमं हवेइ-त्वं चिरजीवी-दीर्घायु. भवतु [इति] केनापि एव कथितेन प्रहृष्ट भवति। १०. मयाइणु मृगाजिनः मृगचर्म। गडय अत्थि-गण्ड-कास्थि। १४. हियत्थे-हितार्थे, आत्मार्थे। १५ लेहु—गृह्णीध्वं ण जम्मणकूवे पडेहु—यथा जन्मकूपे न पतति। १८-१६ जो-णयणंदियसासणु सकलाहरु—यः पुमान् नयनन्दि. जिनेश्वरः तस्य शासनमङ्गीकरोति स कलाधारी-ज्ञानवान् भवति। १९. कुवलयपिउ—पृथ्वीवलयः प्रियम्।

सन्धि-११

११-१.

१७ हुओ खंधिव्वउ तासु पियाउ—धात्रीवाहनस्य राज्ञ वल्लभा. आर्यिका जाता। १८. मउडाहिय दिक्खिय-मुकुटाधिपा. राजानः दीक्षाङ्किताः। १९ अवरहिं'''पडिवज्जिउ—अपरैः कतिपयैः लोकैः तान् वैराग्यं प्राप्तवान् दृष्ट्वा श्रावक-व्रतानि गृहीतानि।

११-२.

२ चउत्थु उपवासः। ४ ण वि गारउ-न गर्व। पेम्म-प्रेम, मोहन। ५ उच्च णिच्च गेहु—उच्च-नीच-गृहम्। ६. रिक्खए'''णहंगणए-यथा चन्द्रमा नक्षत्रे नक्षत्रे भ्रमन् क्रमेण शोभते आकाशे तथा सुदर्शनः मुनिः गृहे गृहे भ्रमन् शोभते।

१०. पंडु—नपुंसक। छम्मिय-छलिता वञ्चिता। १७. भिसं-भृशं, अतिशयेन। १८.-जेग्गु… कामरसं-येन स्त्रीकथान्तरेण कामरसं उत्पद्यते। १९.-सेसिउ हासु-हास्यं मुक्तम्। हासु-रईभरणं-हास्येन अवलोकनं स्त्रीपूर्वरतस्मरणम्।

११-३.

३. किदियम्मु-[कृतिकर्म] क्रियाकाण्ड। ७. चउदह मल-णह-रोम-जंतु-अट्ठि-कण-कुंडय-रुहिर-मंस-चम्माणि फल-फुल्ल-बीय-मलोच्छिन्नमला चोद्दसा होंति॥

११-४.

३. परमतच्चु-[परमतत्त्व] जीवस्वरूप शुद्धं निर्मलस्वरूपं केवलज्ञान-केवलदर्शनस्वरूपम्। ४ तणु सल्लु व पाडइ वा पाठ। ११. सत्तारह असंयम—

पंचासव वेरमणं पंचेदियणिग्गहं कसाअजओ।
तिहि दंडेहिं विरत्तो सत्तारसयमो भणिओ॥

संपराय अट्ठारह—

जइ दसधम्मा पवयणमादट्ठरस संपरायगुणा।
तेहितो जि विरमणं असंपराइं त्ति णिद्दिट्ठं॥

११-५.

९. हिउ-पुरोहितः। ११. संढउं-नपुंसक। १३. सखेड्डु-सहास्यम्।

११-६.

९. सिय-श्री। १०. °मय-मृता। १२. विअक्खण-विचक्षणा।

११-७.

११-८.

२ सण्ण-संज्ञया। ८. मरणहो चुक्कु-मरणाच्च्युतःमुक्तः।

११-९.

कि मित्तें कवडपयासिरेण-कि साहुण इंदियलंपडेण-कपट प्रकाशकेन मित्रेण कि तथा इन्द्रियलम्पटेन साधुना किम्।

११-१०.

१. विहुर-कष्ट। ३. ताम दिदिरि-पार्वतीचरणकमलभ्रमरी। ४. खम-वासहो-क्षमास्थानकस्य। ८. हियत्थवयणु-हितार्थवचनं अथवा स्तनौ मुखं।

११-११.

५. आवेल्लणु-आवेष्टनम्। १०. तीए-तया।

११-१२.

३. वित्तियथूहए-षष्ठुलस्तूपे। ५. दुवारए-द्वारे; सारए-सारे। ११ अमरंगण-[अमराङ्गना] व्यन्तरी।

११-१३.

३. भायचित्तु–कायरस्य चित्तम्। ४. जिह…जिणवरे–यथा मानभङ्गः जिनेन प्रवर्त्तते; सउण्णे सपुण्ये। ९ मणुसोत्तरम्मि…गमणु–मानुषोत्तरपर्वते यथा मनुष्यगमनं नास्ति।

११-१४.

८. भद्दिओ–भाद्रेयः कृष्णः। ४ तोलियो–त्रोटित।

११-१५.

६. पायव–पादपा वृक्षा.। ८. घुघुव–घूवड। १३. मुणिहें–मुनेः सुदर्शनस्य।

११-१६.

१२. गतवत्थइँ–[गतवस्त्राणि] नग्नानि।

११-१७.

१ समण्णु–श्रमण दिगम्बर। २. अमरपव्वओ–[अमरपर्वत] मेरु। ४ जलपंकिय–[जलपङ्कित] चिकृत। वणयरहं–वनचराणाम्। १०. जलयसरु–जलदस्वरः। १२ णियसुयहि सहुँ पियहि–निजसुहृदभिः [तथा] प्रियाभिःसह।

११-१८.

८. वेयंड–गजा.।

११-१९.

१ सवणु–[श्रमणः] मुनि : १-२ तरणि गयणयलहो, उवसमु तवहो भूसणं –यथा सूर्यः गगनस्य भूषण, तथा तपस' भूषणं [उपशम.] क्षमा। ३. सुयधरहो–श्रुतधरस्य। ६ पंचेणइ संगमे–पञ्चनदीसङ्गमे, संजउ–संयतः, मुनि। ८-९ विसवि अट्ठावउ तुलियउ–प्रविश्य अष्टापदस्तुलितः। १०. खिल्लहि–कीलकै। २४. समग्गइं–समग्रतः।

११-२०.

५.–लेमि–लात्वा। ९. णग्गयस्स कज्जि–नग्नस्य कार्ये। १४. पाणिभाए–पाणिभागे। २४. °शरु–बाण। सिसिरु–चन्द्रबाण।

११-२१.

११-२२.

१. पलयसिहिसण्णिहु–[प्रलयशिखिसन्निभः] प्रकृष्टाग्निसदृशः। १८. णेसरहो–सूर्यात्।

पुष्पिका सुरदत्ता–देवदत्तया वेश्यया।

सन्धि–१२

१२-१.

३. सुरपहाणु–[सुरप्रधान] इन्द्र । ५. आसइँ–आस्यानि मुखानि; णेत्तइँ–नेत्राणि । ६. जलयर सहंत–जलचरा शोभन्त । १२. चलगवि–चटित्वा।

१२-२.

३ दढहयसर–दढहतस्मर–[दढतया-समूलतया हत स्मर येन केवलिना सुदर्शनमुनिना]। ५. कयकय-दयवह–कृतकृत्य, दयावह। ६. णयवणवह–न्यायजलप्रवाह. । ७ *मह–मथ [नः] णयसयमुह–नतशतमुखः ।

१२-३.

३. गंभीरो तं पारावारो–समुद्रात् गम्भीरः । ५ दुज्जो–दुर्जयः ।

१२-४.

१२-५.

४. पारावारए–समुद्रे ।

१२-६.

१५. ताउ–द्वे पण्डिता, देवदत्ता । २० सुद्धद्धणक्खत्ते–[शुद्ध] आर्द्रा नक्षत्रे ।

१२-७.

१२-८.

७. दिहिसेणें–धृतिसेनेन ।

१२-९.

१२-१०.

३ दुद्धर–दुर्द्धर ।

शब्द-कोश

(यहाँ केवल विशिष्ट शब्दों का संग्रह किया गया है)

'अ'

अंगारय—अङ्गारक, अंगारा २ ११ १
अंगिय—अङ्गिका, अङ्गदेशीया स्त्री ४ ६ ४
अंतयड—अन्तकृत (केवली) १ २ ६
°णाणि—अन्तकृत् केवल ज्ञानी १ २ ८
अंबुल-मातृ ८.६ २
अंसय—अंश + क ४.५.४
अग्गिल-अग्गला ब्राह्मणी ६ ८ १
अच्छर—अप्सरा ७ ६ ७, ८ २७ ४
अच्छरिअ—आश्चर्य १२ ६ ७
√अच्छिज्जमाण—आ+छिद्+शानच् १ ६ ८
अड—कूप ६ १६ ६
अडय—कूप+क ६ १६ ११
अडयग—(दे) कुलटा, व्यभिचारिणी ८.३१ ६
अणथमिअ—अनस्तमित (व्रत) १० ७ २
अणह—अनघ, निष्पाप १.११ ३
अत्थड्ढ—अर्थाढ्य, अर्थप्रचुर २ ५ ८
अद्धजाइयचित्त—अर्धजातिकचित्रछन्द ८ २४ १६
अब्बुयवासिणि—अर्बुदवासिनी (स्त्री) ४ १६ १
अब्बो—मातृ (सम्बोधने) ८ ६ १०
अब्भहिअ—अभ्यधिक ३ ५ ४
अमरपुरसुंदर—छन्द ६ १० १३;
°री ९ ११.१०
अरुह—अर्हन्, अर्हन्त ८ ३१.१०
अलीढा—(दे) मिथ्याचारिणी कुलटा ८ ३६.३७
अल्लल्लअ—आर्द्र + आर्द्र + क ८ ३७ ११
अवडयदिट्ठंत—अवड (= कूप) दृष्टान्त ६.१५ २०
अवरत्तअ—(दे) अनुताप, पश्चात्ताप ९.२३.७
√अवरुंड—(दे) आलिङ्ग °इ ८.३५ ४
(हि० पु० एक०) ८.३.८
अवरुंडिअ—(दे) आलिङ्गित, °हि व्याप्त २ १ ११
अवहत्थिय—अपहस्तित, परित्यक्त ८ ३६.४८
√अवहेर—अवहेलय °हि ५ २.८
अविणीय—अविनीत २.४.५
अविरोल—अविरल ३.४.७
अव्वो—मातृ (सम्बोधने) ८.४.१
असगाह—असद्ग्रह, कदाग्रह ३ ३.६
असड्ढलय—असाध्य + क, ८ ४१ ३
असमच्छर—असम (अनुपम) + अप्सरा, १.४८
असराल—(दे) कराल १०.६.१५
असारिय—असार + क, निस्तेज ११ २०.२३
अहम्म—अधर्म ८.३१.७
अहासी—आभाषिता ४ ५ ६
अहिवाअ—अभिप्राय ४.५.२
अहिहविय—अभिभूत ४.३.३

'आ'

आढत्त—आरब्ध ३.४ ५; १०.१.१७
आणंद—आनन्द (छन्द) ४.१२ १६, ११ २२ २०
√आणव—आ + ज्ञापय् °वेइ १२.१ ४
आणा—आज्ञा १ १०.८
आभिट्ट—(दे) भिडना °इ ६.४.१
आमेल्लिय—आ + मुक्त ६.४ ६
आलि—वयस्या, सखी १२.२ १५
आवली—छन्द ८.२६ १२
आवेल्लण—आवर्तन, शरीर को मटकाना ११ ११.५
आसासण—आश्वासन १ १०.३
आसि—आसीत् १०.६.६

आसिकाल—आसीत् + काल,
(भूतकाल) ६ ४ ११
आहाणअ—आख्यानक ७ १२.६
√आहुंज—आ + भुज् °जेइ ५.६.२

'इ'

इंगल—इङ्गाल, कोयला ६ १५ ७
इंगाल—अङ्गार, कोयला ११ ३ ९
इंदिदिर—भ्रमर ५ ३ ५
इंदिदिरि—भ्रमरी ११ १० ३
इड्ढिवंत—ऋद्धिवन्त २ ९.९
इलरक्ख—इला (भूमि) रक्षक
खेत का रखवाला २ १३ ५
इहरत्त—इह + अत्र, अस्मिन् संसारे १२ ७ ५

'ई'

ईरिअ—ईरित, कथित २ १ ८
ईसरसंगउ—ईश्वरसङ्गत, महेश्वर
सङ्गतः २.४ ६
ईसास—ईर्ष्यालु ८.३२.६

'उ'

उंद—वाद्य ७ ६ ५
उंबर—उदुम्बर फल ६ २.१
√उग्गोव—उत् + गुप् °इ ११.४.१५
उग्घाडइ—उत् + घट् + णिच्
°इ ४.१०.६; ८.२८.४
उच्छंग—उत्सङ्ग, क्रोड, गोद ९ १८ ४
√उच्छल—उत् + चल् °लैवि
(क्त्वा) ७ १८ १३
उच्छल्लण—उछलना ३ ११ १२; ९ १० ८
उच्छल्लिअ—उच्छलित १.६ १२; ९.२ १०;
°य १.१.७; ७ १२.११, ११ १५ १२
उच्छल्लिया—(स्त्री०) उच्छलिता ११.१८.१८
उजाड—(दे) उजाड २ १४ ७
उड्डाण—उड्डयन, उडान, उडना २ ६ ९
उण्हिया—ऊष्णिका (छन्द) ८.२३.११
उत्तसिअ—उत्त्रस्त, भयभीत १.१ ९
उत्तहु—(दे) तत्र, उधर ८.३.१०
√उत्थरंत—अव + स्तृ + शतृ ९.१५.७
उद्धसिय—उत् + हसित १.१.८
उप्पाडिय—उत्पाटित ८.४१.१२
उप्पेक्ख—उत् + प्र + ईक्ष् °इ ८.१५.१०
उब्भिज्ज—उद् + भृ (कर्मणि) °इ ५.४.६
उब्भिय—ऊर्ध्वित ५,५ ३
उमा—(तत्सम) पार्वती ४.४.५
उम्मायउ—उन्मादित ८.७.७
उम्माह—उन्माथ, उमाह, उत्साह ४.३ १
उम्माहिअ—उन्माथित, उन्मत्त ८.३५.२१
°य ११.६.२०
उम्मी—ऊर्मी २.१२.६
उल्लल—उत् + लल् °इ ९.४ ९
उल्लव—उत् + लप् °वइ २.१ ३
उवरोहिअ—उपरोधित २१.५.९
उवहाण—उपाख्यान ८.६.३
√उव्वर—उद् + वृ °रेमि ८.३१ ३
उव्वरिअ—उद्वृत्त ८.२४.१७
उव्वसी—उर्वशी (छन्द) ७.७ १०
उव्विविर—उद्विग्न २.१४.६
उव्विव्विअ—उद्विग्न ११.१.१७
उव्वेल्लिअ—उद्वेल्लित ११.१९ १०
उव्वेविरू—उद्विग्न ४.३.७
√उस—उत् + श्वस् °इ ९.३.९

'ऊ'

ऊरं उर् ११.९ ८
ऊसरछेत्त—ऊषरक्षेत्र ६.८ ९; ११.९.५

'ए'

एक्कसि—एकश, एकवार ७.१३.८
एक्कासिअ—एकाश्रित, एकपक्षीय ५ १.११
एण्हि—इदानीम् ११.१८ ९
एत्तहि—(अप) इतस्, इधर ७ ४ ८
एत्तहे—(अप) इतस्, इधर ८.३.१०
एयचक्क—एकचक्र (नगर) ६ ३ ८
एवड—(अप) इयत्, इतना ८,३९.४

'ओ'

ओणल्लिया—(दे) अपनुदित, भिदा हुआ ११.२१.३
√ओलग्ग—अव + लग् °० (आत्मने) ६.१६.४
√ओवडंत—अव + पत् + शतृ ११.१८.१७
ओसर—अप + सृ °मि ११.१६.२४
ओसरिअ—अपसृत १.१.८
ओहामिअ—अध. (अधम) कृत, तिरस्कृत ४.२.४
ओहामिया—(स्त्री०) अध कृता तिरस्कृता ७.७ ६
ओहासिय—उपहसित ४ ३ ६

'क'

कइत्थ – कृतार्थ ११.११.६
कइयण (i) कपिजन (ii) कविजन २.३ २
कउलागमे—कौलागम ८.२५ १५
कंकेल्ली—कङ्केलि, अशोकवृक्ष ४.३.२
कंचाइणि—कात्यायनी ६ १५.२
कंतिल्ल—कान्ति + मतुप् २ ६.२
कंद—(दे) मेघ १०.३.१७
कक्कड—कर्कट, कर्कश ८.१५ ८
कक्कड—(i) कर्कट (ii) कर्कराशि (कर्कनक्षत्र) २ १४.२
कक्खउ—कक्ष, (हि० कोख) ८ २८ ८
कच्चोलअ—कच्चोलक (सं० कचेलक), प्याला, कटोरा ८.१७,१०
कट्ठीहर—काष्ठधर, पहरेदार ८.१२ ५
√कडकड—कडकड (ध्वन्या०) °डंति ११.१५.६
कडक्ख—कटाक्ष ४.८ ६
कडिदोरय—कटिदोरक, कटिसूत्र ३ ७.८
√कड्ढ—कृष् °ड्ढेइ ८.१५.३, °ड्ढेवि ८.१८ ४
कणकणिय—कणक्वणित (ध्वन्या०) ७ ६.३
कणभरिय—कणभृत २.३.३
कणिअ—क्वणित (ध्वन्या) ३ ७.८
कण्ण—कण ३.८.४
कण्णमाणु—(i) (दे) विनयशील, कान (लज्जा) युक्त (ii) कर्ण+मान (सम्मान) २ ३.३
कण्णाडी—कर्णाटी स्त्री ४ ६ ६
कत्थई—कुत्रचित् ७ ५.१०, ८.३५ ६
कत्थइ—कुत्रचित् १० ६.६
कप्पविहूइ—कल्पविभूति २ १.१२
√कप्प – क्लृप् , काटना °प्पेवि ८.३७.२२
√कप्पिज्ज – क्लृप् (कर्मणि) °ज्जेइ ८.३६.५०
कब्बाड—(दे) कबाडीपन ६.२३ ५
कयरोल—कृतरोल, कृत कोलाहल ४ १२,६
करजोडण—करयोजन, हाथ मिलाना करण—प्रेमाचार ४.५.११; ८.४१ ४
करड—वाद्य ३.४.३
करडोह – करड+ओघ, करड वाद्य समूह ७ ६ ६
करयर—करकराय (ध्वन्या) °रंति ११.१५ ६
करयरिउ—करकरायित (ध्वन्या) ८.१५ ७
कलंतरिल्ल—कलान्तर + मतुप् व्याजयुक्त ११.२०.२०
√कल—कलय् °इ ४.६.२
कलुण—करुण ६.१२.१
कल्ल—कल्य, आगामी कल ८.२४.१८:८ ३०.३
कवडकूड – कपटकूट ८.३५ ५
कव्वुरं—कर्बुर, चित्र-विचित्र ८.१ ७
कस्सीरय—कश्मीरज, केशर ८.२६.३, °अ ८.३२.३
कहाणअ—कथानक ७.१०.६
कामवाण— छन्द ३,६.१६ ; ६ ११.२२
कामलेह—कामलेखा (छन्द) ७ ८ १६
कालिंगी—कलिङ्ग देशवासिनी स्त्री ४ ६.६
किडि—किरि, शूकर ११.२१.१०
कित्तिअ—कियत् , कितना ८ ६ ८
किदियम्मु—कृतिकर्म ११.३.३

किराड—किरात ८ २१.३
किरिकिरिरि—ध्वन्या० ७ ६.१२
√किलिकिल—किलकिलय (ध्वन्या०)
°लंति ११.१५.४
√किलिकिलंत—किलकिलय्
(ध्वन्या) + शतृ ८.१६.३
कुंट—कुष्ट, हस्तरहित ६.११ ९
कुंटिउ—कुष्टित, टूंटी स्त्री ६ १५.९
कुड्डंतरिय—कुड्यान्तरित ३.१२.२
√कुण—कृ °इ ९.३.१५
कुप्परु—कूर्पर कुहनी मारना
(नामधातु) धक्का देना
कृत् ९.१०.७, १० १०.५
√कुरुड—कृत्, काटना °हिं ६.१६ ९
कुलकुल—कुरुकुराय् (ध्वन्या०)
°लंति ११.१५.१०
कुवलयमालिणी—छन्द ११.१६.१८,
११.१९.२२
√कुवार—(दे) पूकार मचाना °रेवि
(क्त्वा) ११.१८.८
कुसढ—कु + शठ ११.१९.१९
कुसुमविलासिया दुवइ—कुसुमविलासिका
द्विपदी छन्द ९.३.१६
कूडम—कूट, भूठा ८ १९ ३
कूडसाखि—कूटसाक्षी, भूठी साक्षी ८ २४ ७
कूवार—(दे) पुकार ८.३५ १
√कूवार—(दे) पुकार मचाना
°रेवि (क्त्वा) ११.६ ५
केत्तडउ—कियत्, कितना ८.२५ ५
केयग—केतन, ध्वजा १.९.४
केवट्टिणंदिणि—कैवर्त्तनन्दिनी १० ९ २
केहउ—कीदृक्, कीदृश् २.१.१५; ८.१२ ११
कोंकणवासिणी—कोंकणवासिनी स्त्री ४ ६ ८
कोच्छर—(दे) कुत्सित ४.६.९; १२.१ १०
कोच्छर—(दे) कुशल ९ ९ ४, १२.१० ७
कोट्टिम—कुट्टिम, बंध भूमि ८.६ ७
कोट्टय—कोष्ठक, कोठे १.९.५
कोडिय—(दे) पिशुन ३ १ ७
कोड्डु—(दे) कौतुक ७ १२ १४
कोढ—कुष्ठ रोग, कोढ ८.५.८
कोढिअ—कुष्ठिन्, कोढ़ो ८.१५.४
कोसलि—कोशल देशवासिनी स्त्री ४ ६.३

'ख'

खंच—कृष् °चेवि २.१५.९
खंभ—स्तम्भ ७ ३.२
खजा—खाद्य, खाजा ५.६.६
खडक्क—खटत्कृत (ध्वनि) २.१०.२०
खप्पर—कर्पर, कपाल ४.३ ८ : ८.६.१८
√खब्भालम—क्षोभय् °इ ८,२७.१०
खम—क्षमा ११.१०.४
खरि—खरी (स्त्री विशे०) ४ ५ १४
खलखलिय—खलखलित (ध्वन्या०) ९.१२.६
खवालिउ—क्षोभित ८ २८ १३
√खा—खाद् °इहइ ८ २१ १२
खासण—कास्, खासना ६.१९ ९
खासण—(विशे०) कासन, खासने
वाला ८ ५.३
√खिज—क्षि, क्षीण होना °ए
(आत्मने०) ५.२.१
खिल्ल—कील ११ १९.१५
खिल्लविल्ल—(दे) खल्वाट-बिल्बन्याय ६.१६.१५
खिल्लिम—कीलित ९.१८.९
√खिव—क्षिप् °इ ७ १८.१०
खीलय—कीलक ८ ६.१६
खीसण—(दे) खींसना, भूरना ८.२४.१०
खुंट—(दे) खूंट, ठूंठ २ १४.५
खुडिअ—क्षुद् + क्त त्रुटित ५ ७.१५
खुण्ण—क्षुण्ण, भग्न ७ १७.१०
खुत्त—क्षुण्ण, निमग्न, आसक्त ८.६.६
खुत्तम—(देखो ऊपर) ७ २.१४
खेड्ड—खेल, कीडा ८.१८.६
खोणि—क्षोणि, पृथिवी ७.९.२

खोसला—(दे०) दन्तुल स्त्री ४.१४.८
खोहिय—क्षोभित ११.२.६

'ग'

गउडि—गौड देशवासिनी स्त्री ४.६.५
गंजण—गर्जना ६.१२.५
गंजाविय—गञ्जावित, अपमानित ११.१८.८
गंजिय—गञ्जिता, तिरस्कृता ८.१४.३
गंजिय—गञ्जित, पीडित ८.३४६
गंजोलिय (दे) रोमाञ्चित २.१२६
गंजोलिय—(दे) रोमाञ्चित १०५५
√गडयड—गडगडाय (ध्वन्या०)°इ ११२२६
गड्डुरियपवाह—(दे) गड्डुरिका
प्रवाह, भेडधसान ६६.५
गयकणखल—गजकनखल (तीर्थ)
६.१०.५ ; ८.२६१६
गयगयल—गगनतल १८.१०
गलगंडरोय—गलगण्डरोग, गण्डमाला १२.७.७
गलगज्जिय—गलगर्जित ११.६१६
गलडाहय—गलदाह ८.३६.८
गहिल—ग्रहिल, भूताविष्ट ४.४.६
गारव—गौरव १२.२.४
गाली—गालि, गाली ६.२०.६
गिंभ—ग्रीष्म ११.४.१
गिंभागम—ग्रीष्मागम ६१७४
√गिल—गिल् निगलना °लंति ६.६.८
√गिलिगिल—गिलगिलाय् (घन्या)
°इँ १२.१७१५
√गिलिज्ज—गिल् (कर्मणि) °इ ५७.२१
गुग्गुल—गुग्गुल ६१०६
गुज्जरि—गुर्जरी, गुर्जर देशीया ४६.७
गुज्झ—गुह्य ४.११.७
√गुणगुण—गुनगुनाय् (ध्वन्या०)
°णति ११.१५.७
√गुमगुम—गुमगुमाय् + शतृ ११.१२६
गुमगुमिय—गुमगुमायित ६.११.४
गुरुक्कउ—गुरु + क (स्वार्थे) महान् ११.१३.१२
गुरुक्किय—गुरुकृत, महान् ८.७३
√गुलगुल—गुलगुलाय् °लंति ११.१५.१०
√गुलगुलंत—गुलगुलाय् + शतृ ६.१६.२
गुलिय—√ग्लै, मथित, विलोडित ६.१६.१२
गोंदल—(दे) समूह ? ६२.१
गोट्ठि—गोष्ठी १०.६१
गोत्तंकली—गोत्रकलह ३.१.६
गोल्ली—गौल्य देशीया ४.६६
गोह—भट, योद्धा ५१.७
गोहग्गाह—गोधग्राह, गोह की पकड ८८.११

'घ'

घग्घर—घर्घर (ध्वनि) ३.७.७ १०.१.१३,
११.१२.३
घट्टण—घर्षण ८.२८.१० ; ६.११ १०
घट्ठ—घृष्ट, घर्षित ७.६.१
√घल्ल—(दे) क्षिप् °इ ५.१.३,
°ए आत्मने ५.६.६
√घल्लंत—(दे) क्षिप् + शतृ ३.७.३
घल्लिय—(दे) क्षिप्त ८.३४२
√घल्लिज्ज—(दे) क्षिप् (कर्मणि)
°इ ८.३३.१०
घवघव—घवघवय् (ध्वन्या०) ३.७७
√घवघवंत—घवघवय्+शतृ ११ १२.३
√घास—ग्रस् °ए (स्वार्थे आत्मने०)
८.३७१३
घित्त—क्षिप्त ६.१५६
√घिप्प—ग्रह् °इ ४.७.२२;
°ए (आत्मने०) ४.१०१०; ६.१६.४;
८३६.३७
घिरिहोल—(दे) मक्खी ६.६.१०
√घुग्घु—घुघुय् (ध्वन्या०)
घु घू ध्वनि °वति ११.१५.८
घुट्ठु—घुष्ट ३.५२; ११.१४.७
घुण—घुण, घुन ८.४०.७
√घुम्मिर—घुर्ण् + इर (ताच्छील्ये)
६.१३.७ ; ६.६.६

√घुरहुर—घुरघुराय् (ध्वन्या०)
°रंति ११.१५.६
√घुरुहुरंत—घुरघुराय् + शतृ ८.१६.१
√ घुल—घूर्ण् °इ ६.३.७
√घुलंत—घूर्ण् + शतृ ८.१०.६
घुलिय—घूर्णित २.१२.१
घुसिरा—घुसृरा, कुंकुम, केशर
५.४ ७; ८ ३२.३
घूवड—घूक, उल्लू ११.१५ ८
√ घोट्ट—पा, पान करना °इ ६.२ ५

'च'

चउमाणथंभ—चतुर्मानस्तम्भ १ ६.४
चउवग्ग—चतुर्वर्ग-धर्म, अर्थ, काम,
मोक्ष १.१.४
चंग—(दे) सुन्दर, चंगा ६.२१.१३
चंडवालु—चण्डपाल (छन्द) ८.२६ ४
चंदलेह—चन्द्रलेखा (छन्द) ५.७ १६ ;
६.१२.१३ ; ८.२६.२४; १२.४.११
चंदवेज्झ—चन्द्रवेध्य (शस्त्र विद्या) ३.६ ११
चदोवडंबर - चन्द्रोपक + आडम्बर
चंदोवा युक्त ११.१२.८
चपिय—(दे) आक्रान्त, चापा हुआ ६.२१ ५
चक्कल—चक्राकार ३ १०.१३
चच्चर—चत्वर २ १०.२७
चच्चारि—चर्चरी (नृत्य) ७ ५ ६
चट्टणु—(दे) चाटना ८.२८.१०
√चड—(दे) आ + रुह् °उ
(विधि०) ६.१०.४
√ चड—(दे) आ+रुह् चडेइ ७.१७ ४
चडेमि ६.२१ ८
√ चडाविय—आ + रुह्+क्त्वा १०.१०.१५
चडिय—आरूढ ६.१०.५; ६.११ ७,
°य २.५.८; ६.८.६; ११.१२ ११
चडियउ—आरूढ ३ ६.२०
चडिणा - आरूढ ५ ५ ३; ११ १६.११
चडुयम्म—चाटुकर्म ८.१६ ५

चत्त—त्यक्त ६ १ ६
√चमक्क—चमत्+कृ० °इ ७.१२ १६
चमक्क—चमत्कार, आश्चर्य २.१३.५
चलझलक्क—चञ्चल+झलक ३.१२.२
√ चव—वच् °इ ८.३३ २ ; ११.१७.६
√ चवंत—वच्+शतृ ७.१ १०
चविअ—उक्त ८.२.६
चवेड—चपेटा, तमाचा ४ ५.२१
चहुट्ट—(दे) निमग्न, लीन ८.६.५
चाअ—त्याग १.१.१४
चाइउ—त्यागी ३.२.४
चाडुय—चाटुक, प्रशंसा १.८ ५ , ४.१०.६
चारुदत्त—व्यक्ति नाम २.१०.१७; ६.२.१७
चारुपयपंति—चारुपदपंक्ति छंद
८.२५.१७ : ६ १२.१२

√ चाह—वाञ्छ् °इ ७ १४.४
चिधइय—चिह्नित, लाञ्छित ८ २६ १२
चिक्कारियं चीत्कृतं ११.१८ १६
√चिजंत—चि+शतृ, चीयमान ६.१.१५
चिण्ण—चीर्ण, आचरित, अनुष्ठित
३.१२.६ · ८ २६.२०

चित्तलेहपद्धडिया चित्रलेखा
पद्धडिया छन्द २.६.१२
चित्त —चित्र (छन्द) ८.२४.१६
√चिलिसिज्ज—(दे) घृणा करना
°इ (कर्मणि) ६.४.३
चिहूर—चिकुर, केश ४.११.११ ; ७.१८ ११
चुंधल—(दे) चुन्धापन (अक्षिरोग)
युक्त ६.१५ ६
चुक्क—(दे) भ्रष्ट ११.८ ८
चुक्किय (दे) भ्रष्ट २.७.११ ; ८.७.३
चूडुल्ल—(दे) चूडाबन्ध ८.१७.१
√चूरेवि—चूरय्, चूर्णय् + क्त्वा ६.१२.७
√ चेवंतु—(दे) जागृ+शतृ,
जागते हुए २.७.२

चोज्ज—(दे) आश्चर्य, चमत्कार ८.३७.५; ११.१३.१२; ७.१.८
चोल्लय—चौलक, चन्दोवा ३.८.८

'छ'

छइल्ल—(दे) विदग्ध, चतुर ७.११.७; ७.१२.१०
√ छंड—छर्द, मुच् °इ ११.४.११, °हि ८.३.८; °मि ८ ८.७
छंडिय—छर्दित, मुक्त, परित्यक्त ८.२३.२
√ छंडिवि—छर्द् + क्त्वा ८ ३५ ६
छक्कम्म—वैदिक षट्कर्म ४ १.४
√ छज—(दे) राज्, शोभना °इ १.३,६; २.२.६; ७ ६.६; १०.८ ११; °ए (आत्मने०) ५.६.२; ७ १२.१३
छम्म—छद्म, छल ११.८.५
छम्मिय—छद्मित, छलित ११ २ १०
छरहरिय—(दे) छरहरित २ ११.१०
छाइय—छादित ७.१६ ६
छावासय—षट् आवश्यक (कर्म) ११.३.४
छाहि—(दे) छांह, छाया १ ६.१०
छिछइ—(दे) असती, कुलटा ४ १४ ४
छिक्क—छीत्कृत, छींक ८.१५ १
√ छिज—छिद् °इ ८.३.३
√ छिव—(दे) स्पृश् °इ ७ १६ ८, छिवंति १० १० १२
छिव्वर—(दे) चिपटी ६ १५ ४
छुट्ट—(दे) छुटित, मुक्त ८.१५ २; ११ ५ ११
√ छुट्ट—(दे) छुट् °इ ६.१७.६; ६ २० ११ छुट्टेममि ६.२२ ६
छुट्टकेस—मुक्तकेश २ १०.१८
छुडु—(दे) यदि १.२.४
छुद्ध—(दे) क्षिप्त ११.८.६
छुट्टहीरा—(दे) मणिखचितहीरा ७.७.५
√ छुब्भ—क्षुभ् °हि ८.१४.४
√ छुह—क्षिप् छुहेमि ७.११ ६
छूढउ—क्षिप्त ६.१० १
छूढु—क्षिप्त २.१०.२५
छेइल्ल—छेक, चतुर, विदग्ध ७.१०.७
छेयल्ल—छेक ४.१४.४; ५.६.११
√ छेर—(दे) चिल्लाना °इ ६ २ १२
छेल—छेक ७.१ १२
छोट्टिय—(दे) छोटी ६.१५.६
√ छोड—(दे) छोटय् °इ ४.१०.६; ४.१५.२; °इ ८.२८.७
छोडण (दे) छोड़ना ८.४१.१०, ६.१०.७
छोडिय (दे) छोटित, मुक्त ५.१०.६
छोत्ति—(दे) छूत ८.२२.७
छोल्लिय—(दे) छोटी सी छोकरी ५.५.१२

'ज'

जंगल—जङ्गल २.१० ११, ८.१६.२
√ जंप जल्प् °इ ५.३.५
जंपणउ—जल्पनम् ८.४१.६
√ जप्पिज्ज-जल्प (कर्मणि) °इ ८.८.३
√ जपिर—जल्प् + इर (ताच्छील्ये) ६.६.५
जभाइय—जृम्भायित, जृम्भित, जंभाई ४.११.४
जंभारिस जृम्भनशील, आलसी १२.७.६
जगहर—जग + गृह २.१.१५
√ जग्ग जागृ, जग्गेसइ ८.२२.३; जग्गेसए ८ १३.२
जग्गिय—जागृत १.१.८
जमाइम—जामातृ °क (स्वार्थे) जामाता, जमाइ ५.५ ३
√ जलजल—ज्वल्ज्वल् °लंति ११.१५.१३
जलमउ—(i) जलमय (ii) जडमति २.४.१
जाई—जाति ४.५.४
जाउहाण—जातुधान, राक्षस ६.१६.५
जामहि—यावत् ६.१६.६
जामाइउ—जामातृ °क ५.४.१०
जावहाण—जातुधान ६.१०.४

√ झिगझिगंत— झिगझिगाय् (ध्वन्या०) + शतृ ६.१६.४
√ झिगिझिगंत — झिगझिगाय् + शतृ ११.१२ ५
√ झिण—जि, झिणेइ ६.२१.१२
जुइवलय :— द्युतिवलय १.११.१०
√ जुंज—युज् जुंजेइ २.११ ६;
जुंजहि ११.२ १४
जुण्ण—जीर्ण, जूना, पुराना ८ १ १६
जुहिट्ठिल्ल - युधिष्ठिर २.१०.६
√ जूर—जूर्, झूरना °इ ८ ८.८, ८ १८ ६
√ जूर - जृ, जूरेइ २.११ ७
जेमिय—जेमित ५.७.३
जेहउ — (अप०) यादृक्, यादृश् ८ १२ १२ : ६ २३.३
√ जोअ—(दे) दृश्, जोएइ ६.२०.५
√ जोय—योजय् °इ ४ १५ ६
जोवणइत्तिय—यौवनवती ११ २ ८
जोविय—(दे) दृष्ट २ १३ ७

'झ'

झंकोलिय—(दे) झकझोरित ११.१८ २०
√ झंप—आ + च्छादय् °इ ४ ११ १२
√ झंप—झम्प्, गोता लगाना २.१४.४
झंपड—(दे) विकराल, विशाल ८.४४.५
√ झंपंतिय—आ + च्छादय् + शतृ (स्त्री० विशे०) ८.२.६
झडप्पिय—(दे) झडप, झपट १ ७ १२
झडा—(दे) झडप, झपट २.१३ १
झणझणिय—झणझणित (ध्वन्या०) ३.७ १२
√ झलझल — जाज्वल् °इ ११.१७.१३, °लंति ११.१५ १२
झलझलिय— जाज्वलित ६ १२.७
झत्ति—झटिति, झटपट ४.७ २०
झाण—ध्यान ११.३ १०
√ झिंझित—(ध्वन्या) झनझनाते हुए ७.६.१०
√ झिल्लिरि—वाद्य ७ ६.१०
√ झिज—क्षि °इ १०.६.१५
√ झिजिवि—क्षि + क्त्वा ४.५.१६
झिमिझिमिय - झिमिझिमित (ध्वन्य०) ७.६.१३
झीणी — क्षीणा (स्त्री० विशे०) ७.४.११
√ झुंबिर—(दे) प्रा + लम्ब् + इर (ताच्छील्ये) ११.१२.८
झुणि—ध्वनि १.११.१३, ११.१३.५
झुम्मुक्क – (दे) झूमका ११.१२.८
√ झूरिज—(दे) स्मृ, (कर्मणि °इ ८.१०.१

'ट'

टणटणिय—टनटनित (ध्वन्या०) ६.११.३
√ टरटर—(ध्वन्या० / टरटराना °रंति ८.१६.१
टलटलिउ—टलटलित ११.१४.१६
टलटलिय—टलटलित ६.१२.६
टलटलियउ —टलटलायित, ११ ६
टिविल — वाद्य ३ ४.३

'ठ'

√ ठ - स्था, ठंति ६.७.१३
ठग—ठक, ठग, धूर्त्त ८.३६.४३
√ ठव —स्थापय् °वंति १२ १.१०
ठविया स्थापिता ८.११.१

'ड'

√ डंक—दश् °इ ८.२८.३; ८.४४.१०
√ डंडंत—(ध्वन्या०) डमडमायमान ७.६.८
डंभ —दम्भ ८.१३.१; ८.२४.८, °सील-दम्भशील ३.६.५
डंभिया—दम्भिता, छलिता ७.१०.२
डक्क—वाद्य ३.४.३
डमडमिय—(ध्वन्या०) डमडमित ७.६.८
√ डर - (दे) दर् त्रस् डरेमि ७.१५.७
डर—दर, भय, त्रास २.११.६
डरिय—त्रस्त ६.१२.४
√ डस—दंश्, डसंति १२.७ ८
डसिया—दष्टा (स्त्री० विशे०) ५ ६ ११
डहण—दहन ६.४.६

डाहु—दाह, जलन ८.३१.५, ८.३२.१
डिंड—(दे) फेन ६.६.४
डिंमय—डिम्भकाः (बहु०) बालक ६.२१.८
डुल्लसिय—दोलायित, क्षोभित ६.६.३
डेड—(दे) ढेड, कौवे के समान दुष्ट पुरुष ३ १.७
डोड्डि—(दे) दुष्टा ब्राह्मणी ८ ३३.२
√डोलिज—दोलय् (कर्मणि) °इ ७.५ १२
डोल्लिय—दोलित ११ १४ ३
डोल्लिय - (दे) डोली, शिविका, पालकी (स्त्री० विशे०) १.६.१२
डोलिया—दोलिता ११.१८.१७

'ढ'

√ढक—(दे) छादय् °इ २.१३.३ ६.५ ५
ढंकण—(दे) छादन, ढकना ८.६ १८
ढंकिअ—(दे) छादित ११ ६.८
√ढंढंत —(ध्वन्या०) डमडमाता हुआ ७ ६ ५
ढड्ढसु—(दे) ढाडस, साहस ११.२.१२
ढढ्ढर—(दे) राक्षस, पिशाच ६.१३.१५
√ढाल—(दे) ढालना, नीचे गिराना ६.१४.१६
ढुक्क—ढौकित, उपस्थित ६.६.८; ६.१० ७, ११.८.८
ढुक्कउ—ढौकित ३.३.१७, ६.१३.१३
ढुक्किय—ढौकित २.७.१०
ढोइअ—ढोकित, अर्पित ११ १.१५; °य ५ ६ ६
ढोर—(दे) बैल, ढोर ५.५.६, ७ १७ १०

'ण'

√णज—ज्ञ °इ (आत्मने०) २.२.१०; ७.२.८
√णड—नट् °इ ११.१२.६, णडेइ २.१०.१३
√णडंति—नट् + शतृ (स्त्री०) २.१२.४
णडिअ—(दे) वञ्चित, विप्रतारित, खेदित २.११.४; °य ४.५.१६
णल—नल (व्यक्तिवाचक) २.१०.७
°णाण—°ज्ञान १.१.११
णायवंत—(i) नागवन्त (ii) न्यायवन्त २.३.७
णायवियारण—(I) नागविदारणः (ii) न्यायविचारण. २.४.७
णावइ—(अप) इव २.११.१७; ७.१७.१२
√णिअ—नी °इ (आत्मने०) ४.१०.८
√णिड्डह—निर् + दह् °इ ३.२.७
√णिड्डार—(दे) आँखें फाडना °रवि (क्त्वा) ६.१६.१
णितुल्ल—निष्तुल्य, अनुपम ३.२.१४
णित्तुलिय—(दे) निश्चय से ८.२.८
णित्थार—निस्तार (क) २.७.५
√णिद्धाड—निर् + धाटय् °इ ११.४.४
√णिप्पील—निष्पीड् °लंति ६.४ २
√णियति—(दे) दृश् + शतृ (स्त्री०) २.१२.२; °हे (षष्ठी) ८ १०.७
√णियच्छ—(दे) दृश् °च्छिवि ४.३.१४; °च्छेवि ८.२०.१
णियच्छिअ—(दे) दृष्ट ५.५.८
√णियड्ड—नि + कृष् °ए (स्वार्थे आत्मने०) ५.६.३
णिरू—(अप)नितरा, निरन्तर १ ११.१६; ४.१५ ५
णिरंभ—निरुद्ध, आच्छादित ७.१७.६
√णिरूंभइ—नि + रुध् °भेइ ११.१४.५
णिरुत्तउ—(दे) निश्चित + क (स्वार्थे) ८.२.१३
णिरुत्तिय—(दे) निश्चित रूप से ७ ८.१५
णिल्लुक्क—(दे) निलीन ५.१०.२
√णिवड—नि + पत् °डेइ ८.३६.१०
√णिव्वह—निर्व+हृ °इ ८.४.६
√णिव्वाह—निर् + वह् °इ ११.४.७
णिव्वियडि—निर्विकृति, निर्विकार ६.७ ४
√णिसुंभ—नि + शुम्भ् °इ ११.४.५
णिसुंभण—निशुम्भनः, नाश करने वाला ३.३.१०

णिसुंभियं—निशुम्भित ११ २२.२
णिसुंभिया—निशुम्भिता (स्त्री०) ६.१.८
णिसेणि—निः श्रेणि छन्द १०.१.१५
√णिहाल—निभल् °इ ११ ४ ६
णिहालअ—निभालक (i) दृष्टिवाला
(ii) देखने वाला २.४.३
णिहालण—निभालन १ १०.८
णिहाली-णिभाली, देखने वाली ४.५.१६
णीयरय—नीचरत ८ ३६.११

'त'

तंबेरम—स्तम्बेरम, हस्ती ६.१६.३
तक्कर—तस्कर ८.४४.१२
तक्खड—(दे) अक्खड, उद्धत ६ ६ १
तखेतखिखे—(ध्वन्या०) तक्खा
वाद्यध्वनि ७ ६ ११
तटखुंद—वाद्य ७ ६.१२
√तडतड—तडतडाय् (ध्वन्या०)
°इंति ११.१५ ६
√तडयड—तड्तडाय् °इ ११.१७ ५,
११.२२.१०
तत्तिय—(दे) तत्परता, चिन्ता ८.२२.५
तरट्टि—(दे) प्रगल्भ स्त्री, प्रौढा
नायिका ५.४.११ ५ ८ ५
तामहि—(अप०) तावद् ६.१६.६
ति-इति ३.१०.२०
तिउल—वाद्य ७ ६ ५
तिड्डिक्क—(दे) स्फुलिङ्ग ११.१८ १
तित्ति—तृप्ति १.१ ५
तिपवणवलय—त्रिपवनवलय २.१ ६
तिम्मण—(दे) अचार-चटनी ५ ६ १०
√तिम्मिर—तिम्+इर (ताच्छील्ये)
आर्द्र, लथपथ ६.६ ६
तियदढदसु—स्त्रीढाढस, स्त्रीसाहस ८ ३० ७
तुंगी—(दे) रात्रि ६.६.७
तुट्टम—त्रुटित ६.१.१५
√तुट्ट—त्रुट् °टंति १०.३.४

तुंड—तुण्ड, मुख ११.१८.६
तुण्हिक्किय—तूष्णीक ८.१२.१
तुरुतुरिय—तुरुतुरित (ध्वन्या०)
तूरध्वनि ७.६.१५
तेत्तहि—(अप०) तत्र ७.४.८
तोडणअ—त्रोटनक छन्द २.१३.८ ; ४.४.१०
तोडगो—त्रोटन , भेदन करने वाला १०.३.१८
तोडिअ—त्रोटित ११.१४.४ ; °य ८.४१.२१
तोणअ—तोणक छन्द ६.१५.२४
तोमरेह—तोमरेख छन्द ६.३ १२

'थ'

√थ - स्था, थंति १० ६.६
थंभिय—स्तम्भित ६.१.६
थक्क—(दे) स्थित ३ ६.१८ ; ३.१२.२ ;
६.१२.६ ; १२ १.७
√थक्क—(दे) स्था °इ २.१३.१ ; १२.५.७ ;
°इं ५.८.६ ; ८.१७ १३ ; °ए (स्वार्थे
आत्मने०) ६ ११.६
थक्कउ—(दे) स्थित २.१.६ , ६.३ १८
११ ८ ७ ; ११.१३.११
थक्किय—(दे) स्थित ८.१२.१
थगेदुगेगे—(ध्वन्या०) ७.६.११
थड—(दे) ठठ, यूथ, समूह १०.५.५
थडा—(दे) यूथ, दल २ १३.१
थड्ढ—स्तब्ध, निश्चल, गर्विष्ठ ७.१६.७
थण—स्तन ८.२६.७ ; ८.२८.४
थणवट्ट—स्तनवृत्त ७.१७.११
थत्ति—स्थिति १०.१०.१२
थरथरिरे—(ध्वन्या०) ७.६.६
√थरहर—(दे) थर्राना °इ ४.६ ४,
°रेइ ३.११.७ ; °रेवि ११.१३.१.
°रेवि ११.१३.११
√था—स्था °इ ८.१८.६ ; °हि
(आज्ञा०) १०.२०.४
थाम—स्थान ८.१२.३
थाम—बल, पराक्रम ६.१२.२ , ११.१४.८

थाल—स्थाल, बड़ी थाली ५.६.३
थिअ—स्थित ८.२५.१
थी—स्त्री ४.१२.१८; ८.२४.११
थुइ—स्तुति १०.१.१७
√थुक्किज—थूत् + कृ (कर्मणि) °इ ६.४.४
√थुण—स्तु °हिं ८.११.७ ; थुणेइ ६.२१.१२
√थुणंत—स्तु+शतृ ७ १.४
√थुणहुँ—स्तु+तुमुन् १.१० १०
थुणिय—स्तुत ६.१४.८
थुत्थुक्कारियअ—थूत् थूत्कारित ८.२.१०
√थुव्व—स्तु °इ १२.१ १२
थूलसण्ह—स्थूल + श्लक्ष्ण ८.२४.१३
थूह—स्तूप ११ १२.३
थोट्टु—(दे) ठूंठा ६.१०.१
थोत्त—स्तोत्र ६ २०.२२
थोव-स्तोक ७.१ १०
थोवअ—स्तोक, थोड़ा २.१३.६
थोवड—(दे) स्थूल ११ ६ ११

'द'

दइयबरिय—दैगम्बरिक, दिगम्बरी ६ २२.१०
√दड-दलय् दडेइ ७.१७.४:
दड—(दे) दरकना, काम्पना °इ २.११.१०; ६ ३.१३; ११ २२.११
√दड—(दे) गिड़गिड़ाना, दडंति ६ ११.१८
दडत्ति—(दे) झटपट, तुरन्त ८.३४.२
√दडदड—(दे) दड़दड़ाना °डति ११.१५ ५
दमयंति—दमयन्ती (देवी) ४.४.४
दर—ईषत् ४.१५.४; ६.६.१२; १०.५.३
दहछहसयलु—दशषट्सकल, सोलह, १.५.८
दहियट्टु—दधियूथ, दही का थक्का ५.६.१३
दाइजय—देयक, दायज, दहेज ५.५.१४
दाढिय—दंष्ट्रिन, दाढ़वाला ८.३६.४२
√दाव—दर्शय् °इ ४.११.११
दावेइ २.११.७
√दाव—दापय् °मि ८.३० ६
√दाविज—दर्शय् (कर्मणि) °इ ६.१८.७
दिणमणि—दिनमणि छन्द ७.१८.१८
दिविडि—द्रविडी, द्रविड देशीया ४.६.४
दिहि—धृति (देवी) ४.४.२
दिहि—धृति ४.१५.७
दिहिकरणु—धृतिकरण०, धृतिकारक ६.२०.७ ; °गारउ-धृतिकारक ६.१६.८
दुंदुमिय—दुंदुमित (ध्वन्या०) ७.६.५
√दुगंछ—जुगुप्स् °इ ११.४.१८ ; दुगुंछइ ११.३.११
दुगंछु—जुगुप्सनीय, घृणित ६ ३.४
दुगुंछण—जुगुप्सा, घृणा ६.१६.१५
दुघोट्ट—(दे) हस्ती ६.१०.१
दुट्ठिय—दु:स्थित १.१०.३
दुमदुमिय—(ध्वन्या०) दुमदुमित, दुंदुभी शब्द ७.६ ४
दुमियंग—दावितागा, (स्त्री० विशे०) पीडितांगा ४.१२.१०
√दुम्म—दू, दावय् °इ ८.८.१२
दुहंड—द्विखण्ड ३ १०.३
दूणिय—द्विगुणित १२.१.५
दूवड—दूत ८.३६.४३
दूहव—दुर्भगा, अभागिनी ८.१८.६
देउल—देवकुल २.११.८
देवुत्तर-कुरु—देवकुरु एवं उत्तर कुरु (पौराणिक भोगभूमियाँ) १ २.१२
देसि—देशी छन्द ३.६ ३
देसिअ—देशित, कथित ४.५.४
दोच्छिअ—(दे) फटकारा गया ८.२६.२५, °यउ ६.८.४
दोहंडिय—द्विखण्डित ६.१६.६
दोहय—दोधक छन्द ३.६.८
दोहाइउ—द्विधाकृत, द्विखण्डित ६ १६.६
दोहिय—द्रोहिका, द्रोहिणी नारी ८.३६ ४८

'ध'

√धगधग—धगधगाय् °इ ११.२१.६
धड—(दे) धड ६.१.१७

घणा—धन्या, पत्नी ४.४११
घवक्कुउ—(दे) समूह ११.१०.५
√धवल—धवलय् °लिति ३.११.४
धाउवाय—धातुवाद ३.६.१४
धाणुक्किणी—धानुष्किनी, धनुषधारिणी ७.१४.६
धाहाव—(दे) हाहाकार मचाना °इ ६.५ ६
धाहावियउ—(दे) हाहाकार मचाया ६.१८ ७
√धुण—धू + शतृ (स्त्री०) ६.१२ १०
√धुण—धू °हि ८.११.६
धुत्तिय—धूर्त्ता ४ ७.१०
धुत्ती—धूर्त्ता ७.११ १०
धुमुधुमिय—(ध्वन्या) धुमधुमित ७ ६ ३
√धुव्विर—धू+इर (ताच्छील्ये) ८.१.७
√धोविज्ज—धाव् (कर्मणि) °इ धोना ६ ८ ६

'प'

पइज्ज—प्रतिज्ञा, पैंज ७.१२.१६ ; ८.८.७
पइण्ण—प्रतिज्ञा ८ २२.६
√पइसर—प्र + विश् °रेवि ७.१७ ३
पईह—प्रदीर्घ ४.१३ २
पउम—पद्म, बलराम १.१२.१२
पउलीदुवार—प्रतोलीद्वार ८ २२ ८
पचचामर—छन्द १०.३.२१
पच-णमोक्कार—पञ्चनमस्कार ११.३
पगाम—प्रकाम, अत्यर्थ, अत्यन्त ५ ७ ६
पगेण्हिय—प्रग्रहीता (स्त्री०) ११.१ १०
पग्गिव—प्राक्+इव ८.३०.५
पच्चल—(दे) समर्थ, शक्तिशाली ६.६ १३
पच्छुत्ताअ—पश्चात्ताप ६.१८.१३
पट्ठविय—प्रस्थापित १.१.१०
√पड—पत, पडेमि ६.२१.८
पडिहास - प्रति + भास् °इ ३.८.१
पढुंक्किय—प्रढौंकित ११ १०.४
पण्णा—प्रज्ञा ६.२१ ११
√पत्तिज्ज—प्रति + इ (कर्मणि)
प्रतीतिकरना, विश्वासकरना °इ ८.३६.४६
पद्धडिया—छन्द ८.३० ७ ; ८.३१ ८, ८.३२.१० ८.३३.१०, ८.३४.८
पद्धडिया—बंध—पद्धडिया छन्द १.२.३
पमाणिया—प्रमाणिका छन्द १.७.१४
√पमेल्ल—प्र+मुच् °इ ८.३२.१४
√पयंप प्र+जल्प् °पंति (बहु०) ४.६.८
पयक्ख प्रत्यक्ष ६.१८.१२
पयविसम—पदविषम, विषमपदी छन्द २.६.१२
√परिघोल—परि+घूर्ण् °इ ७.१६.५
√परिघोलिर—परि+घूर्ण्+इर
(ताच्छील्ये) १.४.३
परिचइअ—परित्यक्त १२.६.६
परिचत्त—परित्यक्त ८.२५ ३
√परिसक्क—परि+ष्वष्क् °इ ७.१२.२० ;
°ए (आत्मने) ६ ११ ६
पलास—(१) पल+अश राक्षस २.१४.५
पलित्त—प्रदीप्त ११.१५.२
पलित्तओ—प्रदीप्त, क्रुद्ध ६.१.१२
√पवियंभ—प्र + विजृम्भ् °इ ६.७.१२ ·
°भेइ ५.१ ७
पसर—(दे) प्रात. ३ १.१३
पहराहअ—प्रहार + आहत ५.७.२०
पहिल्लअ—(दे) प्रथम, पहला २.१ १३
√पहुच्च—प्र + भू पहुँचना °हि
(बहु०) ४.२.६
पहुत्तअ—प्रभूत ; प्राप्त ७ ६.१५
पहुत्तियऊ—प्रभूता, प्राप्ता (स्त्री०) २.१३.७
पहुत्तिया—प्रभूता, प्राप्ता ७.१३.१
पहुत्तु—प्रभूत, प्राप्ता ८ ३४.८ ; ६.८.८
पहुल्लियवत्तु—प्रफुल्लितवक्त्र ५.५.११
पाडलिया—पाटलिका, पाटलिपुत्र-
वासिनी ४.६.१०
पाडिअ—पातित: ८.२६ १७
पायफुट्ट—पादस्फुटित, फटे पाव ६.११.८
पायाउलय—पादाकुलक छन्द
१.१२.१८, ४.५.२३
पारंदिया पद्धडिया छन्द ८.१०.८ ; ८.३८.१० ;
८.३६.८, ८.४०.८

पारद्धिया पद्धडिया—छन्द ९.१६.१०
पारयत्ति—पारियात्री, पारियात्र
देशीया नायिका ४.६.१०
पिंचुय—पिचुक , वस्तु विशेष) ८.३.६
पित्तल—पित्त + ल (मतुप्)
पित्त प्रकृति नायिका ४.७.७
पियारअ —प्रियतर, प्यारा ५.४.१० ; ६.१८ १४
√पिल्ल—क्षिप् °ए (स्वार्थे आत्मने०) ५ ९.२
पिसल्ल—पिशाच ९.८.१ ; ११.२० ७
पिहु—पृथु विस्तीर्ण १ २ १०
पुंडरिय—पुण्डरीक (१) व्याघ्र
(२) कमल २ ४.८
पुंडुच्छु—पुण्ड् + इक्षु ३.१.२
√पुक्करत—पूत् + कृ + शतृ १० ४ ८
√पुक्कार—पूत् + कृ °रिवि (क्त्वा) ८ २६ ५९
√पुज्ज—पूरय °इ ७ ९.८
पुरएउ—पुरादेव, आदिनाथ तीर्थंकर १ १० ११
पुरिसायउ—पुरुषायत, विपरीत रति ४ ६ १०
पूयहल - पूगीफल ५ ७ ५
पेट्ट—(दे) पिट्टय् , पीटना °इ २ १३ १
पेल्लंत —प्र + ईरय् + शतृ ९ ५ ४
पेल्लिअ—प्रेरित १ ७.११
पेल्लिय—प्रेरिता (स्त्री०) ४ ८.७
पोमरय - पद्मरज, पराग २ २.५

‘फ’

फंसण—स्पर्शन ३.११ ५
√फरहरंत —फरफराय्+शतृ ११ १२ ५
फरुस—परुस ४.१४ ९
√फाड—पाटय्, स्फाटय्, फाड़ना
°डिवि ९.१८.७
फाडिअ—स्फाटित ८.३४.५ , ११.१४ ५
फिक्कर—(दे) फिक्कर (कठूमर) ६.२ १
√फिक्कर—फेत् + कृ, फेत्कार
करना °रंति (बहु०) ११.१५.११
√फिट्ट—भ्रंश् °इ ८.९.१ ; फुट्टेइ ११.२१.११
°ट्टंति (बहु०) १०.३.५
फुट्ट—स्फुटित ८,४१.१९

√फुड—स्फुट् , भ्रंश् °इ ११.२२.११
फुड—स्फुट, स्पष्ट, व्यक्त ८.२५.१६
फुडहत्थ —स्फुटहस्त (व्यक्ति नाम) ६ ६.१२
√फेक्कर—फेत्+कृ शृगाल की
फेत्कार °रंति (बहु०) ८.१५.८
फेक्कार—फेत्कार ८.१६.३
√फेड—स्फेटय् °डिवि (क्त्वा) ५.५.५
√फोड—स्फोटय् °डेवि (क्त्वा) ८ १३ १
फोडण - स्फोटन ६ १९.७
फोडिय—स्फोटित ११.६.२

‘ब’

बदण हत्ति—वन्दना + भक्ति ६ १.६
बंभयत्तु—ब्रह्मदत्त (एक चक्रवर्ती) २.१० २२
बगाहिहाण—बक + अभिधान
बक नामक राजा ६ ३.८
बप्प—(दे) मूर्ख ११.२०.८
बप्पडउ—(दे) बेचारा ६.१६ ५
बाहुडिय—(दे) लज्जित, भयभीत ८ ३४.२
√बुज्झ—बुध् + उ (विधि०) ४ ११.८
बुड्डुउ—ब्रुडित, मग्न २.१४.३
√बोक्किज्ज—(दे) वम् (कर्मणि)
°इ उल्टी करना ६.४.४
√बोटिज्ज—(दे) भुज + णिच्
अन्न प्राशन कराना °इ ३ ७.४
√बोल्लंति—वद् + शतृ ति (स्त्रियाम्) ३.३ ३
√बोल्ल—वद् °हि (द्वि० पु० एक०) ८ २६.२५
बोल्लिअ - उक्त ७.११.८, °य ११ १४.३ ,
व्या (स्त्री०) ११.१२.३
√बोलिज्ज—वद् (कर्मणि) °इ ५.३.७

‘भ’

भंभा—वाद्य ७.६.१४
भद्दा—भद्रा नायिका ४.५.६
भरह—भारत, भरत क्षेत्र १.२.११
भलहुल्ल—(दे) भौंकने वाला
अर्थात् कुत्ता १०.६ ६
भल्लअ—भद्र + क ७.१९.१०

भमरपद—छन्द ८.२६.८
भाडि—भाटिका, शुल्क, भाडा ८.१६.४
भाणवी—(दे) शनिश्चर ११.१४.७
भिउड—भृकुटी ८.१२.७
√भिड—(दे) भिडना °डेवि (क्त्वा) ६.२.१
भिडिग्र—(दे) भिड गया ६.१.१, ६.५.१ २२. °य ६.८.१०, ६.१६.४
√भिडु—(दे) भिड जाग्रो (ग्राज्ञा) ६ ८.८
भुंभुरभोलग्र—(दे) ग्रत्यन्त भोला २.६.६
भुंभुरभोलिउ—(दे) ग्रत्यन्त भोली ८ २६ ६
भुयगप्पयाअ — भुजङ्गप्रयात छन्द १.६ १०
भुरकुडिअ—(दे) लम्पट (स्त्री०) ६.१५.३
भुल्लउ—भ्रष्ट भूला हुआ ७.५.७
√भुल्लिजइ—भ्रंश्, भ्रम् (कर्मणि) भूलना °इ ७.५.१२
भेक्खस—(दे) राक्षस-रिपु, भयदाता ६.८.८
भेटचित्तु—(दे) भीरुचित्त, कायर ११.१३.३
भेरूंड—(दे) भेरूण्ड, चीता ११.१६ ५
भेसअ—भेषक, डरानेवाला १.७.३
भोग्ग—भोग पदार्थ ८.३१ ६

'म'

मइराकिर—मकराकृति छन्द ११ २ २२
√मइल—मलिनय् °इ ८ १७ २
मइल—मलिन, °कुचेलिउ मैली कुचैली ६.१५.१३
मउड—मुकुट १० २ १
मंगलदव्वट्ठ—मङ्गलद्रव्य + ग्रष्ट १.६.६
मंट—(दे) बौना ६ ११ ६
मंटिउ—(दे) बौनी ६.१५.६
मंड—(दे) रोकना, मनाना °ए (स्वार्थे ग्रात्मने०) ८ १८ ५
मंड—(दे) बलात्कार ८ ३७.१६, ६ ५.५
मंडय—(दे) माडा, छपाती ५ ६.६
मंडलिल्ल—मण्डल + इल्ल (मतुपार्थे) गोलाकार ५.६.६
मंडिग्र—मण्डित, शोभित २.१.११
मंदयार मन्दचार छन्द ६.६.१८
मंदरु — मन्दर पर्वत २.१.१५
मंदा—मन्दा नायिका भेद ४.५.६
मंदारदाय—छन्द ११ १८.२२
मंदोअरि—मन्दोदरी ४.४.४
मच्छ मत्स्य ३.११ १२
मज्झएसतिय—मध्यदेश स्त्री मध्यदेशीय नायिका ४.६ ११
मज्झम्म—मध्यम छन्द २ ४.६
मडय—मृतक मुर्दा ८ १६ ५
मणिथूह—मणिस्तूप १ ६ ५
मणिगाइई—मणियुक्त, मणिमय ८ १४.८
मणिसहर—मणिशेखर छन्द ११.२१ १२
√मण्णाव—मन् + णिच् °इ ६ ८ ३, ६ १८.१३, °विवि (क्त्वा) ८ १८ ३
मण्णावण—मनावन, मनाना ८ ४१ २
मण्णाविग्र—मानित, मनाया ११.१८ ७, °य ८.१४.४
√मण्णिज मन (कर्मणि) °इ (विधि०) ६.५ ८
मत्तमायग मत्तमातङ्ग छन्द ३.५.६
मम्मग—मन्मन, अव्यक्त वचन ८ ४१.८, ११ ६ १४
मम्मग—(दे) राग ८.२८.११, ११.११.५
मम्मिल्ल मर्म + इल्ल (मतुपार्थे) मर्मी जन ६ १८.६
मयण—मदन छन्द ४ ७ २३; ६ १६ १६ ८ २८ १५; ६.१३ १६
मयणावयारो—मदनावतार छन्द ४ ६ ८ ६ २०.२४, ८.२७.८
मयणविलासा मदनविलासा द्विपदी छन्द ४.१ ११
मयरी मकरी नायिका भेद ४.५.१४
मरट्ट—(दे) गर्व, अहंकार, मान ५.६.१३, ८.६.५

मरहट्टि — महाराष्ट्री, महाराष्ट्र देशीया
नायिका ४.६.८
√मल — मृद्, मलना, मर्दन करना
°लेवि (क्त्वा) ६.६ १२
√मलवल — (दे) (मुंह) बनाना °इ ६ ४.४
महकइकहबंधु — महाकवि कथाबन्ध २.५ ८
महल्ल — महत् २.६.८
महारउ — अस्माकम् ८.४१.१६
महिसी — महिषी नायिका भेद ४ ५ १४
महुबिंदुय — मधुबिन्दु + क (स्वार्थे) ६.४ ११
माइय मात, समाया हुआ ७ १६ ११
मागहणक्कुडिया — मागधनक्कुटिका छन्द ७ ८ २२
माणंसणी — मानस्विनी, मानिनी ३ ८ ५
माणिणी — मानिनी छन्द ११ २० २३
मारुयपणइणि — मारुतप्रणयिनी,
वात प्रकृति वाली नायिका ४.७ १
मालविणी — मालविनी, मालवदेशीया
नायिका ४ ५ २४
मालिणी छन्द -- मालिनी छन्द ३ ४ ८
माहप्प — माहात्म्य ६ ८.२ ११ १४ १
मिगि — मृगी नायिका भेद ४ ५ १४
मिच्चु — मृत्यु ८ ३१ ८
मुंड - मुण्ड, शिर ११ १५ ५
√मुडिज — मुण्डय् (कर्मणि) °इ ३.७ ४
मुखंगलीलक्खखंडक — छन्द ८ २६.१०
?√मुस - मृष्, स्पृश् °इ ? ६ ३ ८.
√मुसुमूरइ — भञ्ज् °इ ११ ४ १७
मेर — (दे) मिरा, मर्यादा १.३ ४
√मेल्ल मुच् °इ ८.३५.६, मेल्लइ ३ ५.३,
°ए (आत्मने०) ७ १२.४, °मि ८ ३० १,
°हि (विधि०) ८.२६ २६
√मेल्लंत — मुच् + शतृ ३ ७.३
√मेल्लंतियए — मुच् + शतृ °तिय
(स्त्रियाम्) ८.१२.३
मेह — मेघ २.४.१
मोग्ग — मूक ६.२३.१

मोट्टिउ — (दे) मोटी स्त्री ६ १५.६
मोट्टियारू — मोटे आकार वाला १०,४.१५
√मोड — मोटय् °इ २ १३ ३, ३.१२.३,
४.१० ६ ४.१५ २, ८.३६.२३
मोत्तियदाम — मौक्तिकदाम छन्द ५.५.१५,
८.६.८
मोर — मयूर ८.२६.४

'र'

रइडंबर — रजाडम्बर, धूलि बवण्डर ६.१५ ३
रंडिअ — रण्डिता विधवाकृता २ १.७
√ रक्ख — रक्ष् °मि (उ० पु०) २ १ ७
रच्छ — रथ्या २ १०.१३
√ रड — रट् °इ ३.७.१०, ११ १२.६,
°डेवि (क्त्वा) ८.३६ ५६
रडिय — रटित, रटन ११.१६ ११
√ रण — रण् (ध्वनि) °हि (बहु०) ८.१८.८
√ रणझणंत — रणझणाय् + शतृ
७ १६.६ ११.१२.४
रणझणिय — रणझणित ७.६.७
रणरण — रणरण (ध्वनि) ५.१ ४
√ रणरणंत — रणरणाय् + शतृ ११.१२.४
रण्ण — रण्या (देवी) ४.४ ३ ५.५ ६
रण्ण — अरण्य २ ७.७ ८.२७.४
√ रम्प — रम् °इ ४.६.३
रमणी — छन्द ३.१.१७
रयडा -- छन्द ८ १८ ८, ८.३०.७, ८.३१.८,
८.३२.१०, ८.३३.१०, ८.३४.८
रयणमाल पद्धडिया — रत्नमाला
पद्धडिया छन्द ६.१४.१४
रयणियरु — रजनीचर, राक्षस २.४ २
रवण्ण — रमणीक ८ २६.२०, १०.६.५
रसारिणी — छन्द २ ८.८
√रह — (दे) रह् (वस्)
रहना °इ ४ १२.१८, ६.३.१४,
१०.४.३
√ रह — (दे) रक्ष् छिपाना °हि
(द्वि० पु० एक०) ८.२.५

रहस—रहस्य १०४.३
√ रहिय—(दे) रहा, ठहरा १०६३
रामण - रावण दशमुख २ ११ १२
राम बलराम १ १२ १२
रासाउलअ - रासाकुलक छन्द ८.४१ २०
√रिक - (दे) रेंकना (ध्वन्या)
°इ ६.२.१०
रिंधि—ऋक्षी, स्त्री भालू ८.२७.४
रिट्ठ—रिष्ट, कौवा ८.१५.७
रिट्ठी—रिष्टी नायिका भेद ४.५.१४
रिणिउ—(१) ऋणी (२) ऋण ६.७.१८
रीणउ—रीण क्षरित, पीडित ६.१५.१२
√रूंजंत—रु + शतृ ११ १८ १५
रुंड रुण्ड, धड ८.१६ ७ ११ १५.५
रुंद—(दे) विशाल,विस्तीर्ण २ ३ ४
३ १० ६ ६ १५.१५ १० १ ११
रु भिय—रुद्ध ६ १ ६
√ रुंरुंजत—रुरु (ध्वन्या०)
+ शतृ ११ १६ २
√ रुज्झंत—रुद् + शतृ २ ७ १
√ रुण—(ध्वन्या) रुणरुणाना °इ ६-३.१५
√रुणरुण—देखो ऊपर रुणरुण °णंति
११ १५ ७
√रुणरुणंत—रुणरुणाय् + शतृ
भ्रमरों का रुणरुणाना ४ ३ १३
रुद्दत्त—रुद्रदत्त २ १० ४
√रुल - (दे) लुठ् °इ ६ ३ ११
रुसण—रोषण, रोष करना ११.१६ १
√रेह—राज् °हंति (बहु०) १२ ४.१०
रोल—(दे) कोलाहल ८ ४४.७
रोसिंगिय—रोष + इङ्गित ४ ११ ६

'ल'

लइ—ले, अच्छा, ठीक ८.२.५
√लइ—ला, लइयउ-आक्रान्त· ६.१७.२,
ग्रहीत, ११.१ २
लंछि—(दे) प्रदेश १०.४.६
लंजिय—लज्जिता (स्त्री०) ८ १४.३
लंजिय - (दे) लूली, लंगडी ४.१४.५
लंजिया—लज्जिता (स्त्री०) ७ १२ १७
√लग्ग—लग् °इ ६ २ ६,
लग्गेसइ (भवि०) ८ ३६ ५५
लडह—(दे) रम्य, सुन्दर ४.२.४ ५ ४ ६,
८ २६.१८, ८.३४.६
√लढ—(दे) रट लगाना, लढेइ ४ १५ ८
लय—लता नायिका भेद ४ ५ ६
लयाकुसुम—लताकुसुम छन्द ११ २ २२
√लल—लड्, विलास करना °इ ४ ८ १०
√ लल्लक्क—(दे) ललकारना °इं
(बहु०) ११ १६.१६
लहु—लघु, शीघ्र ८ ३ ४ १
√ला— लागय् °इ (विधि०) २ ११.५
लाडिय—लाटदेशीया नायिका ४ ५ ६
लुक्कमुट्ठि—लुप्तमुष्टि-विद्या ३ ६ ४
लुक्ख- रूक्ष, रूखा ६ ७ ४ ६ १२ ३
√ लुणंत—लू + शतृ २ १ ४ ४
√लुल— लुठ् °इ ११ २१ १०
√लुह—मृज् , पोंछना, कुचलना
°हमि ७.११ ६ ? (दे)
√ लूड—लुण्ट् लूटना °इ २ १३ ३
लेयम्म—लेप्यकर्म ३ ६.१३
√लोट्ट—लुठ्, स्वप् लोटना °इ
२ १३.१, ६ २ ५
लोणिय - लावण्य, सौन्दर्य ८.२७ ३
√लोल—लुठ्, कल्लोल करना °इ ७ १६.५
ल्हसिय—स्रस्त ६ १० १०
ल्हसियउ—स्रस्त ३.१२.७, ५ ७ १८
√ल्हिक्क- -(दे) लुप् , नि + ली छिपना
°इ २ १३.१ °एवि (क्त्वा) ८.१८.६

'व'

वइट्ठउ उपविष्ट १.११ १८, ५.५ ३
वइयर- व्यतिकर, प्रसङ्ग, वृतान्त ११ १२.२
वइरायरे—वज्राकर, वज्र की खान ८.३२ २

वव—ववा नामक करण (ज्योतिषीय) ३ ३.७
वंसत्थु—वंशस्थ छन्द ७.१ १२
√वञ्च—व्रज °हिं (बहु०) ४ २.६
√वजर—(दे) वच् °इ ३ ८ १२
वजरिम—कथित ५ ३ १२
वजरी—कथिता ६.११ १०
वडुविहारु—(दे) बडा विहार १२ १० ५
वड्डिम—(दे) बडाई, श्लाघा ८ ३६ २८
वढ—(दे) मूक मूर्ख ८ ३३ ३
वणरक्खस—वनराक्षस २ १० ११
वयंसि—वयस्या ७ ११ २
वरमक्कय—वर (सुन्दर) + संस्कृत १ १० ३
वरियाण—वरियाण, ज्योतिषीय योग ३ ३ ७
√वरिसण—(दे) हाहाकार ध्वनि करना °हिं (बहु०) ८ ११ ८
वलइल्लउ—वलयाकृत, वलयाकार वेष्टित २.१.१३
वलग्ग—आरूढ १ ६ ७
वसंतचच्चर—वसन्तचत्वर छन्द ५ ६ १० ८ ११ ८
वहाइय—वाहिता (स्त्री०) वहायी गयी ८ ७ ४
वाउल्ल—(दे) पुतला ८ १० ८
वाउल्लअ—(दे) पुतला ८.१३ १ ८.२२ ३ ''य ११ ६ १
वाउल्लिय—व्याकुला, बावली (स्त्री०) ७.१२ २०
वामो—व्यामोह, मोह ६.२३ ४
वाराणसिय—वाराणसी नगर ४ ५.२५
वारिरुंभ—जलस्तम्भन विद्या ३.६.१५
वाविर—वापित, बोया हुआ ११ ६ ५
वासारत्त—वर्षाऋतु ३ ७.१०
वासारत्तु—वर्षाऋतु २ ५.५
√वाह—व्या + हृ+ऊण (क्त्वा) ७ ११ २
√वाहिज्जइ—वह् (कर्मणि) धारण करना, ले जाना, ढोना °इ ७ ११.१०
विउण—द्विगुण, दुगुना ६.१६.२
विछिय—वृश्चिक, बिच्छू १२.७.८
विभय—विस्मय ४.३.१०
विछुट्ट—वि + छुटित, छूट गया ८.३७.२
विज्जुला दुवइ—विज्जुला द्विपदी छन्द ६ ७.१६
विज्जुलेह—विद्युल्लेखा छन्द २.१०.२६
विज्जमाल—विद्युन्माला छन्द १२ ३.८
विट्टल—विटाल, दूषित ६ २१ १४
विडगुरुसत्थ—विटगुरुशास्त्र, वात्स्यायन कामशास्त्र ४.५.३
√विढप्प—अर्ज् °इ १.१ १४
विणडिअ—विनटित, विडम्बित ६ ८ ५, ११ ६ १७, ''य १०.६.५
√विणडेज्जत—वि + नटय् (कर्मणि) + शतृ ८.२१.१३
वित्थारणय—विस्तारण + क २ ११ ११
विद्दाण—विद्राण, म्लान, खिन्न ८.२०.३
विप्फइ—(दे) विशाल ४.२.३
विबुहवइ—विबुधपति, बृहस्पति, इन्द्र २.४ ३
विरालअो—बिडाल, मार्जार ६ १५.२
विराव—वि + रञ्ज्, विरक्त होना °इ ३ ११ ११
विरुयार—विरूप + आचार, विरुद्ध आचरण ८ ३३ ६
√विरह—वि + राज्, विरेहंति (बहु०) १.६ ६
विलक्ख—विलक्ष, लज्जित, व्याकुल ८.३२ १२
विलासिणि—विलासिनी छन्द ७ १६ ११, ८.१६.८ ६.१ १८, १० २ १३; ११.१२.१०
विसट्ट—(दे) विकसित ४ १ १०; १२.१.१०
विसट्टअ—(दे) विकसित ७.७ २, ६.१.१५
विसिलोय—छन्द ६.६ ८
विद्धंसणु—विध्वंसन, नाश १ १०.५
√विहट्ट—वि + घट्टय् °इ (आत्मने) ८.४४.१६
विहत्थ—बीभत्स ६.३.४
विहत्थअ—विहस्त, व्याकुल, व्यग्र ६.२.११
विहप्फइ—बृहस्पति ४ २.३

विहलंघल—विह्वलाङ्ग. व्याकुल २.१०.१३; ७.२.७; ८.४.४
विहुणिअ—विधूत, उन्मूलित, उखाड़ा हुआ, उड़ा हुआ ६.५.३
विहुरं—विधुर, विकल, व्याकुल ३.१.५
विहुर विधुर, विपत्ति, विह्वलता ८.१६.७, ८.२३.१३
वीरागम—वीर (महावीर तीर्थंकर) + आज्ञा १.१२.३
वीलणअ—पीडन, मर्दन ८.४१.८
वुच्चंत—वद् + शतृ ३.७.१
वुडिय—बुडित, डूबे हुए, अर्थात् पिचके (कपोल) ६.१५.५
॰वेज्झ—॰वेध्य (विद्या) ८.४४.२
√वेढ—वेष्ट् ॰वि (क्त्वा) ५.४.११; ॰ढिवि २.१.६; ८.३३.१२
वेढिअ—वेष्टित ६.१७.१ ॰य ६.१६.१२
वेल्लि—वल्ली, लता ८.१७.८
वेसर—वेसर, अश्वतर, खच्चर १.७.१२
वोल्लिय—व्युत्कान्त, उल्लंघित ११.१८.१६
वोलीण—गत, व्यतीत ३.५.७
वोल—(संज्ञा) उल्लंघन करने वाला ८.४४.७
√वोलेवए—बोडय् (डुबाना)+ (तुमुन्) ८.१६.६
√वोल्ल—वद् ॰ल्लेइ ८.३६.२१
वोल्लिअ—व्युत्कान्त, उल्लंघित १.७.११

'स'

सइत्तिय—सती स्त्री २.११.१७
सउट्ठउ—स + प्रोष्ट + क ८.३८.४
सउह—शपथ ८.३६.३४
संखल—शृङ्खला ६.६.१६
संघसिरि—संघश्री नामक मंत्री ६.१.१४
संठिय—संस्थित ८.४.१३
संतट्ठिय—संत्रस्त (स्त्री॰) ६.२३.८
√संथुण—सं + स्तु ॰णेवि (क्त्वा) १२.६.१०
संथुय—संस्तुत, कथित ४.११.१४
√संपूस सं + पोषय् ॰इ ६.४.७
संभडिय—(दे) संभिडित, भिड़े हुए ८.१६.१
√संभर—सं + स्मृ ॰इ ११.२२.२१
√संभरंत—सं + स्मृ + शतृ २.८.१
सभरणु—संस्मरण १.२.४; ४.१०.३
√संभरि—सं + स्मृ (आज्ञा॰) ८.४३.२
√सभरिज्ज—सं + स्मृ (कर्मणि) ॰ए ६.७.२
सवरिउ—विस्तृत ? १२.१.११
सक्कार—सत्कार ११.३.१२
सखेड—स + खेल, क्रीडापूर्वक ११.५.१३
सग्गिणी—स्रग्विणी छन्द ११.१४.१०
सच्चाउल - सत्य + त्याग + ल (मतुप) सत्य एवं त्यागवन्त २.५.६
सच्चिलग्ग—सत्य + लग्न (वत्) सचा ८.२६.१४
सडिय—शटित, सडा हुआ ८.१६.२
सणेहल—स्नेह+ल (मतुप्) स्नेही ४.७.१७
सण्ह—श्लक्ष्ण १०.७.१०
सत्त—सत्व ४.५.४
सब्भ—श्वभ्र, नरक ६.६.१२
समरट्ट—स + गर्व, दर्पयुक्त ६.१०.१
समरट्टिय—स + गर्व (स्त्री॰) मानिनी ५.४.११
समसीसी—(दे) स्पर्धा, बराबरी ६.८.७
समागिय—समानिका छन्द ३.१०.२०
समागिया—समानिका छन्द ६.२०.१०
समारोडिअ—(दे) रौंदा गया ११.१४.४
समुप्पेल्लिअ—समुत्क्षिप्त, समुत्पीडित १.६.५
सम्मइ-जिणहो—सन्मति जिन, महावीर तीर्थंकर १.१.१२
सयभिस—शतभिषा नक्षत्र ३.३.७
सयमह—शतमख-इन्द्र १.११.१
सयसक्कर—शतशर्कर, शतखण्ड ४.२.६
सयाणअ—स + ज्ञान + क, सुजान ८.८.४
सराढ—शरड, कृकलास, गिरगिट ८.३६.१८
सलग्घ—श्लाघ्य ६.१.१०
√सलसल—(दे) सलबलाना, ॰लंति (बहु॰) ११.१५.११

सलसलिय—(ध्वन्या०) सलसलित,
सलसलाना ७ ६ ६; ६.१२.७
√ सलहिज्ज—श्लाघ् (कर्मणि) °इ ८.७ ८
सलहिय—श्लाघित ७ ६.३
√सल्ल—(दे) प्रिय लगना °इ ४.६ ७ ?
सवडम्मुह (दे) सम्मुख ८ १५ ६;
६ ३ १८; ६ ७ १३
सविलक्ख—स + वैलक्ष्य ८ ३३ ११
ससज्झय—स + साध्वस ६ ४.१०
ससि—शशि-नायिका भेद ४.५.१४
ससितिलअ—शशितिलक छन्द १.११ १६,
११.१७ १८
√सह—राज् °इ १.२ ५
√सहलिज—सफलय् (कर्मणि) °उ
(विधि०) ३ २ १४; ७ १३ ६
सहेल्लि—सहेली, सखी ७ ३ २
? सहाच्छिय—स + उत्थित, महोन्नत
स्वास्थ्य ८.५ ११
साइणी—शाकिनी (व्यन्तरी) ८ १६.४
साडणी—शाटन, विनाश करने वाला
१० ३ १६
सादि—स्वाद्य पदार्थ ११ ३.२
सारसि—सारसी-नायिका भेद ४ ५.१४
सारीय—छन्द ८ २० ८
साल—वाद्य ध्वनि ३.४ ३
सालहंजिया—शालभञ्जिका छन्द ७ १२ १८
सालिसित्थो—शालिसिक्थ (मत्स्य) ६ ५ १४
सासुइअ—स + श्रुतिक, ज्ञानवान् ८.८ ४
√साहार—सं + धारय् °इ ८ ४०.१
√साहार—सं + धारय् °हु (आज्ञा०)
८ ३७.२१
साहालअ—(दे) दधिशाला युक्त २ २ ४
सिंधवि—सैन्धवी, सिन्धु देश की नायिका ४ ६ २
सिभलपयइ—श्लेष्मप्रकृति, (स्त्री०)
कफ प्रकृति वाली नायिका ४ ७ १५
सिंहलि—सिंहली, सिंहल देश की नायिका ४ ६ ३
सिग्गिरि—(दे) सिग्गिरि सिक्किरि,
सीका ६ ६ १७ (?)
√सिढिल—शिथिलय् °इ ८.१७ २ ८ २८ ६
सिढिल—शिथिल ८.२६ २
? सिद्ध—सिद्धक छन्द ६ ६ १२
√सुंघ—(दे) सूंघना °घेवि (क्त्वा) ६ २ १५
सुकइकहा—सुकविकथा २ ६ ३
सुकइत्त—सुकवित्व १.१०.७
सुखाण—सु + खादन, सुन्दर खाना ११ ३ २
सुखेड—स + क्रीडा, विलासपूर्वक,
रतिपूर्वक ११ २.१६
सुखेड्ड— ७ ६.१
सुडोर—सु + दोर-सुन्दर लड़ियाँ ११.२ २०
√सुण—श्रु °इ १ १२ ३
√सुणड—सु + नट °इ ३ ७.१०
सुदंसण—सुदर्शन नायक १ १२.११
सुद्दयड—सूत्रकृत, सूत्रकृताङ्ग ११ ४ १४
सुपइण्ण—सुप्रतिज्ञा ८ ६ १२
सुपाहुड—सु + प्राभृत १०.६.११
सुपील—सु + गज, सुन्दर हस्ति ५ ५.७
सुमोत्तियदाम—सु + मौक्तिकदाम छन्द
६ १४.१६
√सुम्मइ—श्रु °इ (आत्मने०) ८.८ ११
सुरोल—सु+रोल, कोलाहल ३ ४ ७
सुहवत्त—सुभगत्व, सौभाग्य ४.१३ १६
सूर—(१) शूर (२) सूर्य २.४.२
√सूसुव—(ध्वन्या) सू सू करना
°वंति (बहु०) ११.१५ ८
सूहव—सुभग, सौभाग्यशालिनी ८ १८ १०
सेयंस—श्रेयांस (नृपति) ६ ८ ३
सोमराई—सोमराजी छन्द १० ५ १६
सोयड्ढ—शोकाढ्य, शोकाकुल ४ १२ १२
सोरट्ठि—सौराष्ट्री, सौराष्ट्र देश की
नायिका ४ ६.७
सोलहदहकलअ विसमपअ पायाउलअ—षोड—
शदशकलाविषमपद पादाकुलक, १६
मात्राओं का विषमपदी पादाकुलक छन्द
५ ३.६; ६ १६ १४

ह

हंसी—हंसी नायिका भेद ४ ५ ६; ४.५ १४

हक्क—(दे) हाँक, हुंकार ११.१६.१६

√हक्क—(दे) हांकना, पुकारना
°क्किऊण (क्त्वा) १० ५ १६

हक्कार—(दे) आकारण हाँक ८ ३३ ९

हक्किया—आहूता (स्त्री०) ११ २० ६

√हडहड—(ध्वन्या०) हडहडाय,
हडहड ध्वनि करना °डंति
(बहु०) ११ १५ ५

हड्ड—(दे) हाड, अस्थि ६ १५ ७

हत्थपहत्थवंत—हस्त-प्रहस्त + वन्त
(वान्) हाथोहाथ ८ ३८ ६

हम्म हर्म्य, गृह, प्रासाद १० १० २

√हम्मइ—हन् इ ८ ३६ २०; ९ १८ ८

हरहाइ—(दे) चरागाह ८.३५.१०

हरिसोल्लिअ—हर्ष+उल्लिग्न (दे)
उल्लसित ५ ३ ९

हलहल्लिय – (दे) कम्पित,
लहलहाती हुई ६ १४ ७

हला—हला, सखी ३.८ १

√हिंड—हिण्ड् भ्रमण करना °इ ८ ३५.४;
°डिवि (क्त्वा) ८ ३५.१०

√हिडंत—हिण्ड + शतृ ३.१२.१२, ४.१ ३

हिंडंती—हिण्ड + शतृ + °ती
स्त्रियाम् २ ७.११

हिंडिय—हिण्डित, भ्रमित ८ १६.७

हिमवंतिणि—हिमवन्तिनी, हिमवान
देश की नायिका ४ ६.११

हिलिहिलिय—(दे) हिनहिनाते
हुए (घोड़े) ९ ११ ६

हुरुहुल्लरु (दे) हुरं + हुल्ल हर्ष ध्वनियाँ ३ ७ १

हुल्लि – (दे) फुल्लि पुष्पवती (बेल) १०.३ १५

हूलिय—(दे हूलित, हूला गया,
शस्त्रों से भेदा गया ११ १९ १३

हूहुइय – (दे) शंखों की हू हू ध्वनि ७ ६ १५

हेट्ठ—अधस्, नीचे २ १ १०

हेला-दुवइया—हेला नायक द्विपदिका
छन्द ६ ५ १८

होट्ठ—ओष्ठ ३ १० ८; ५ ९ ८

(९)

सुखी रहें सब जीव जगत के कोई कभी न घबरावे,
बैर, पाप, अभिमान छोड़ जग नित्य नये मङ्गल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञान-चारित्र उन्नत कर अपना मनुज जन्मफल सब पावें।

(१०)

ईति-भीति व्यापे नहीं जगमें वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्म निष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे।
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शांति से जिया करे,
परम अहिंसा-धर्म जगत में फैल सर्वहित किया करे॥

(११)

फैले प्रेम परस्पर जग में मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय-कटुक कठोर शब्द नहिं कोई मुख से कहा करे।
बनकर सब "युगवीर" हृदयसे देशोन्नति-रत रहा करें,
वस्तु स्वरूप विचार खुशीसे सब दुख संकट सहा करें॥

चौदह नियम

१. सचित—सजीव वस्तु

२. द्रव्य—स्वाद तथा नाम पलटे खानेपीनेकी वस्तु

३. विगय—दूध, दही, घी, तेल, मीठा

४. पन्नी—जूता, मोजा, खड़ाऊँ वगैरह

५. तंबोल—मुखवास, सुपारी, पान वगैरह

६. वस्त्र—पहनने ओढ़ने के कपड़े

७. कुसुम—सूंघने की वस्तु फूल इत्र प्रमुख

८. वाहन—घोड़ा, घोड़ी, जहाज, रेल, मोटर, गाड़ी

९. शयन—खाट, पलँग, बिछौने

१०. विलेपण—तेल, पीठी, शरीर के लगानेकी वस्तु

११. बंभ—ब्रह्मचर्य, कुशील की मर्यादा

१२. दिशा—ऊँची, नीची, तिरछी दिशा

१३. नाहण—स्नान करने, वस्त्र धोनेकी वस्तुयें साबुन